

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_178818

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—881—5-8-74—15,000.

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. **H 83/T 12 G** Accession No. **H 835**

Author

Title

This book should be returned on or before the date last marked below.
~~22~~

गोरा

—:०:—

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

प्रकाशक—

आदर्श हिन्दी पुस्तकालय

४१६ अद्वियापूर इलाहाबाद

१ थम संस्करण]

अगस्त १९४८

[मूल्य ६) रुपया

प्रकाशक—

सुश्रील कृष्ण शुक्ल
आदर्श हिन्दी पुस्तकालय
४१६ अहियापुर इलाहाबाद

मुद्रक—

पंडित मणिशङ्कर, मालवीय
अभ्युदय, प्रेस
प्रयाग

गोरा

गोरा

[१]

श्रावण का महीना और प्रातःकालका समय था । बर्सातके दिन होने पर भी इस समय आकाशमें बादल नहीं थे । निर्मल स्वच्छ धूपसे कलकत्तेका आकाश साफ दिखाई दे रहा था । कालेजकी सारी परीक्षाओंको पास करके भविष्यके लिये आगे कोई बात निश्चय न कर विनय भूषण अपने घर पर ही फुरसतका समय बिता रहा था । सड़कके सामने बरांडे पर अकेला खड़ा हुआ रास्तेकी भीड़का दृश्य देखकर अपने मनको बहला रहा था । अभीतक उसे संसारका कोई ज्ञान न था । न तो उसका विवाह ही हुआ था और न उसे घर गृहस्थी की चिन्ता ही थी । कोई काम न रहनेसे कभी कभी सभा समितिमें प्रवेश कर तथा समाचार पत्रोंमें लेख आदि लिखकर अपना समय काट लेता था । पर इतनेसे ही उसको सन्तोष न था, वह कोई बड़ा काम करनेकी बातको सोचा करता था ।

आज सबेरेसे उसके पास कोई काम न होनेसे उसका मन चंचल हो उठा था, बहुत कुछ सोच करके भी वह कुछ निश्चय न कर सका कि क्या करूँ । इतनेमें ही देखा सामने दूकान पर खड़ा हुआ एक भिखारी गा रहा था —

“खांचार भितर आचिन् पाखी केमने आसे जाय ।

धर्ते पालें मने बेड़ि दितेम् पीखीय पाय ॥”

विनयकी इच्छा हुई कि उस भिखारी को बुलाकर यह अपरिचित चिड़ियावाला गीत लिख लेवें, किन्तु जैसे ही उसने उस भिखारीको अपने पास

बुलानेका विचार किया कि ठीक उसी समय उसके घरके सामने ही एक किरायेकी गाड़ीके ऊपर किसी रईसकी बढिया गाड़ीके छोड़े आपड़े और किरायेकी गाड़ीका एक पहिया तोड़ते हुये बड़ी तेजीसे निकल गये, किरायेकी गाड़ी बिलकुल उलट तो नहीं गई पर टूट कर जहाँकी सहाँ ढेर हो गई। जिस रईसकी गाड़ीसे यह घटना हुई उसने नजर उठाकर इधर देखा तक भी नहीं।

विनय चटपट बरांडे से नीचे उतर कर सकड़ पर गाड़ीके सामने आ खड़ा हुआ, उसने देखा गाड़ीके भीतरसे एक १७-१८ सालकी लड़की उतर आई है और भीतरसे एक अधेड़ भद्र पुरुष उतरनेकी चेष्टा कर रहे हैं, विनयने सहारा देकर उन्हें गाड़ी के बाहर निकाला और उनके मुखकी ओर देख कर पूछा:—“आपको चोट तो नहीं लगी।” उन्होंने—“नहीं चोट तो नहीं आई” कहकर हंसने की चेष्टाकी परन्तु वह हंसीकी रेखा वैसे ही विलीन हो गई जब वह अचेतसे होकर गिरने लगे। विनयने उनको पकड़ लिया और उस घबड़ाई हुई लड़कीसे कहा:—“यह सामने ही मेरा घर है। भीतर चलिये कोई चिन्ताकी बात नहीं है।”

वृद्धको बिछौने पर लिटा चुकनेके बाद लड़कीने एक बार इधर उधर नजर घुमाकर देखा। एक कोनेमें सुराही रक्खी थी। सुराहीसे गिलासमें पानी लेकर वह वृद्धके मुँह पर जलके छीटे देकर पंखा हाँकने लगी। लड़कीने विनयसे कहा—यदि आप कोई डाक्टर बुला सकें तो बड़ी कृपा होगी।

विनयके घरके पास ही एक डाक्टर रहते थे। विनयने अपने नौकरको उन्हें बुला जानेके लिये भेजा। कमरेके भीतर एक मेज़ पर एक बड़ा आइना, तेल, शीशी, कंभी, ब्रश आदि सामान रक्खा हुआ था, विनय आइनेके सामने कुर्सी पर बैठी उस लड़कीके पीछे खड़ा मंत्र मुग्धकी तरह एक टक उस आइनेमें उसके रूपको देखने लगा।

बिनयने लड़कपनसे ही कलकत्तेमें किरायेके मकानमें रहकर पढ़ा लिखा है। संसारके साथ अब तक उसका जो कुछ परिचय हुआ है सो केवल पुस्तकोंके ही साथ। किसी भले घरानेकी बहु बेटीके साथ कभी किसी दिन उसकी जान पहचान या मेल मुलाकात नहीं हुई थी।

आइने पर दृष्टि डालकर उसने देखा कि उसमें जिस मुखका प्रतिबिम्ब दिखाई देता है वह बहुत ही सुन्दर है। उसकी आँखोंमें इतना ज्ञान नहीं था कि उसके सुन्दर मुखकी प्रतीक रेखाको अलग अलग करके देखती, केवल उस धराये हुये स्नेहके मारे झुके हुये उस तरुणीके तटस्थ मुखकी कोमलता मंडित उज्ज्वलता भरको ही बिनय देख सका और जो उसे सृष्टिके तत्काल प्रकट हुये एक नवीन आश्चर्यकी तरह जान पड़ी।

थोड़ी देरके बाद वृद्धने धीरे धीरे आँखें खोलीं और “बेटी” कहकर लम्बी सांस छोड़ी। लड़कीकी आँखोंसे आँसू छलक आये। उसने वृद्धसे पूछा—“पिताजी ! मुझें कहां चोट लगी है।”

“यह मैं कहांआ गया” कहकर वृद्धने उठनेकी इच्छा प्रकट किया, पर बिनयने उसी क्षण उन्हें रोककर कहा—“अभी आप उठियेगा नहीं कुछ देर ठहरिये डाक्टर साहब आते होंगे।”

तब वृद्धको उस दुर्घटनाकी याद आई। उन्होंने कहा—“सिरमें यहाँ पर कुछ पीड़ासी हो रही है पर चोट भारी नहीं है। डाक्टरको बुलानेकी तो कोई आवश्यकता न थी।”

कुछ देरके बाद डाक्टर साहब अपने डाक्टरों साज सामानके साथ कमरेमें दाखिल हुये। वृद्धकी शारीरिक अवस्थाको देखकर उन्होंने कहा—“विशेष कोई बात नहीं है। गर्म दूधके साथ थोड़ीसी ब्रान्डी मिलाकर पिछानेसे सब ठीक हो जायगा।” यह कह दवाकी एक छोटीनी शीशी देकर डाक्टर साहब चले गये। उनके जाते ही वृद्ध अत्यन्त संकुचित और व्यग्र हो उठे। लड़की उस वृद्धके मनके भावको समझकर कहने लगी—“पिता जी ! आप चिन्तित क्यों होते हैं। डाक्टरकी फीस और दवाके दाम घरसे भेज देंगे।”

इतना कहकर उस लड़कीने विनयके मुखकी ओर देखा। वे आखें कैसी विचित्र थीं। उन्हें देखकर यह बात मन हीमें नहीं आती कि वे आखें बड़ी हैं या छोटी, काली हैं या भूरी। पहली नजर पड़ते ही जान पड़ता है कि इस दृष्टिमें एक ऐसा भाव है जिसमें सन्देहका लेशमात्र नहीं है। उस दृष्टिमें संकोच नहीं है दुविधा नहीं है। वह दृष्टि एक स्थिर शक्तिसे पूर्ण है।

वह लड़की विनयकी मुंहकी ओर ताक रही थी इसलिये विनय कुछ कहना चाहता था पर मनके भावको स्पष्ट शब्दोंमें प्रगट नहीं कर सका। वृद्धने विनयसे कहा—“देखिये मेरे लिये ब्रान्डीकी जरूरत नहीं है।” लड़कीने बीच हीमें रोक कर कहा—“क्यों पिताजी डाक्टर साहब तो कह गये हैं।”

वृद्धने कहा—“डाक्टर लोग यों ही कहा करते हैं। उनकी तो ऐसी आदत ही है। मुझमें कुछ कमजोरी आ गई है वह केवल गर्म दूधके पीनेसे ही जाती रहेगी, और अब विनय बाबूको क्यों तकलीफ देती हो। हमारा घर तो पास ही है। टहलते टहलते चले चलेंगे।

लड़कीने कहा—“नहीं पिताजी यह नहीं हो सकता।”

वृद्ध इसके बाद फिर कुछ न कह सके। विनय स्वयं जाकर गाड़ी ले आया। गाड़ी पर चढ़नेसे पहले वृद्धने विनयसे पूछा—“आपका नाम क्या है।”

विनयने कहा—“मेरा नाम विनय भूषण चट्टोपाध्याय। और आपका।

वृद्धने कहा—“मेरा नाम परेश चन्द्र भट्टाचार्य है। पास ही ७-नं० वाले मकानमें रहता हूँ; कभी फुरसत होने पर मेरे घर पधारियेगा तो मुझे बड़ा प्रसन्नता होगी।”

लड़कीने विनयके मुखकी ओर अपनी दोनों आखें उठाकर सुपचाप इस अनुरोधका समर्थन किया, विनय उसी समय उस गाड़ी पर बैठकर उन लोगोंके घर जानेको तैयार था पर ऐसा करना शिष्टाचारके अनुकूल

होगा या नहीं यह ठीक निश्चय न कर सकनेके कारण वह जहाँका तहाँ खड़ा रहा। गाढ़ा रवाना होते समय उस लड़कीने दोनों हाथोंसे विनयको प्रणाम किया। विनय इस नमस्कारके लिए बिस्कुल ही तैयार नहीं था, इसी कारण वह हतबुद्धि सा होकर उसके उत्तरमें कुछ न कहा सका। इतनी सी अपनी त्रुटि लेकर, घरमें लौट आ कर, वह बारबार अपनेको धिक्कार देने लगा। विनयने इन लोगोंसे मुलाकात होनेके समयसे बिदा होनेके समय तकके अपने आचरण की आलोचना करके देखा—उसे जान पड़ने लगा कि आदिसे अंत तक उसके सारे व्यवहार में केवल असभ्यता ही प्रकट हुई है। किस समय क्या करना चाहिए था, क्या कहना चाहिए था, इन्हीं बातोंको लेकर वह मन ही मन केवल धृष्ट आन्दोलन करने लगा। उसने अपने कमरेमें लौट आ कर देखा, जिस रूमाल से उस लड़कीने अपने पिता का मुँह पोछा था, वह रूमाल बिस्तर पर पड़ा था। विनयने चटपट वह रूमाल उठा लिया। उसके मन में वही भिक्षुक का गीत ध्वनित होने लगा—

“खाँचार भितर अचिन् पाखी केम्ने आसे जाय।”

दिन चढ़ चला, वर्षा की धूप तेज़ हो उठी, गादियों का ताँता तेज़ी के साथ आक्रिसों की ओर जाने लगा। विनय अपने दिनके किसी भी काममें मन नहीं लगा सका। उसकी दृष्टिमें उसका यह छोटा सा घर और चारों ओर विस्तृत कुत्सित कलकत्तापुरी किसी मायापुरी की तरह हो उठी। इस वर्षा ऋतु के प्रभात की प्रदीप्त आभा ने उसके मस्तिष्कके भीतर प्रवेश किया, वह उसके रक्तमें प्रवाहित हो उठी—उसके अन्तःकरण के सामने एक ज्योतिर्मय पर्दा सा पड़ गया, जिसने उसके प्रतिदिनके जीवन-की सारी शुद्धता को ढंक दिया।

इसी समय विनयकी दृष्टि सबक पर पड़ी। उसने देखा, एक सात आठ वर्ष का लड़का खड़ा हुआ उसके घरका नम्बर देख रहा है। विनयने ऊपरसे कहा—यही है, यही घर है। उसके मनमें इस बारेमें बिस्कुल

सन्देह नहीं हुआ कि लड़का उसीका घर ढूँढ़ रहा था। विनय चटपट सीढ़ियों पर स्लीपर चटचट करता हुआ नीचे उतर गया, अत्यन्त आग्रह के साथ लड़केको भीतर ले जा कर उसके मुँह की ओर देखने लगा। लड़केने कहा—दीदी ने मुझे भेजा है। इतना कह कर उसने विनयके हाथमें एक पत्र दिया।

विनयने पत्र लेकर पहले लिफाफे पर दृष्टि डाली। साफ स्पष्ट स्त्रियों की लिखावट से अंगरेज़ी अक्षरों में उसका नाम लिखा था। भीतर चिट्ठी पत्री कुछ न थी, सिर्फ कई एक रुपये थे।

लड़का जानेको उद्यत हुआ, लेकिन विनयने उसे किसी तरह नहीं छोड़ा, उसे प्रेमसे हाथ पकड़ कर दूसरे खण्ड में ले गया।

लड़केका रङ्ग बहनकी अपेक्षा कुछ साँवला था, लेकिन मुखका ढङ्ग बहुत कुछ मिलता जुलता था। उसे देख कर विनयके मनमें आप ही आप एक तरह का स्नेह और आनन्द उत्पन्न हुआ।

लड़का खूब तेज था। उसने कमरेमें प्रवेश करते ही दीवारमें एक चित्र देखकर प्रश्न किया—यह किसका चित्र है ?

विनय ने कहा—यह मेरे एक मित्रका चित्र है।

लड़केने कहा—मित्रका चित्र है ? आपके मित्र कौन हैं ?

विनयने हँस कर कहा—तुम उन्हें नहीं पहचानते। मेरे मित्रका नाम गौरमोहन है। हम लोग उन्हें गोरा कहकर पुकारते हैं। हम दोनों मित्रोंने लड़कपन से एक साथ ही पढ़ा है।

लड़का—अब भी पढ़ते हैं ?

विनय—ना, अब नहीं पढ़ता।

लड़का—आप सब पढ़ चुके ?

विनय इस छोटेसे बालकके आगे भी गर्व करनेके प्रलोभन को न समर्पित सका। बोला—हाँ, सब पढ़ चुका।

लड़केने आश्चर्य चकित होकर एक साँस ली। शायद उसने या

विनय—तुम्हारा नाम क्या है भाई ?

लड़का—मेरा नाम श्रीसतीशचंद्र मुखोपाध्याय है ।

विनय ने विस्मित होकर—मुखोपाध्याय ?

उसके बाद धीरे धीरे सब परिचय प्राप्त हुआ । परेश बाबू इन लोगों के पिता नहीं हैं । उन्होंने इन दोनों भाई बहनोंको लड़कपनसे ही पाखा है । लड़केकी बहनका नाम पहले राधारानी था, परेशबाबू की स्त्री ने उसे बदल कर सुचरिता नाम रक्खा है ।

देखते ही देखते विनय के साथ सतीश की खूब घनिष्टता होगई । सतीश जब घर जाने को उद्यत हुआ, तब विनय ने कहा—तुम अकेले चले जा सकोगे ?

बालकने गर्वके साथ कहा—मैं तो अकेले ही आया हूँ, जा क्यों न सकूँगा ?

फिर भी विनयने कहा—मैं तुमको घर तक पहुँचा आऊँ, चलो ।

उसकी शक्तिके ऊपर विनयका यह सन्देह देखकर सतीश लुब्ध हो उठा । उसने कहा—क्यों, मैं अकेला जा सकता हूँ । इतना कहकर वह अकेले आने जानेके अनेक आश्चर्यजनक उदाहरणोंका उल्लेख करने लगा । किन्तु अब भी विनय उसके घरके दरवाजे तक साथ क्यों गया, इसका ठीक कारण बालककी समझमें बिल्कुल ही नहीं आया ।

सतीशने द्वार पर पहुँच कर पूछा—आप भीतर नहीं चलेंगे ?

विनय ने कहा—और किसी दिन आऊँगा ।

घर लौट आकर विनयने वह सरनामा लिखा हुआ लिफाफा जेबसे निकाल कर बहुत देर तक देखा—हर एक अक्षरकी रखाई जैसे उसके हृदयमें अंकित होगई । उसके बाद मय रुपयोंके वह लिफाफा उसने बड़े यत्नसे अपने बक्समें रख दिया । इन रुपयोंको किसी दुःसमयमें भी खर्च करनेकी संभावना नहीं रही ।

वर्षाकृतुकी संध्या में आकाशका अंधकार जैसे भीग कर भारी होगया है। वर्षाहीन वैचित्र्यहीन मेघ निःशब्द शासनके नीचे कलकत्ता शहर एक बड़े भारी निरानन्द कुत्तेकी तरह दुममें मुंह ढाले कुंडली बना कर चुपचाप पड़ा हुआ है। कल शामसे लगातार बूँदाबांदी हो रही है। उस वृष्टिने सड़कों पर कीचड़ तो कर दी है, लेकिन उस कीचड़को धोकर वहा लेजानेका बल नहीं प्रकट किया है। आज चार बजेसे बूँदोंका गिरना बंद है, लेकिन मेघका रङ्ग-ढङ्ग अच्छा नहीं है। इस तरहकी जल्द होनेवाली वर्षाकी आशंका होने पर, संध्याके समय निर्जन घरके भीतर जब मन नहीं लगता और बाहर भी आराम नहीं मिलता, ठीक ऐसे ही समयमें दो आदमी एक तिमंजिले घरकी छत पर दो बेतके मोढ़ों पर बैठे हुए बातचीत कर रहे हैं।

ये दोनों मित्र जब छोटे थे, तब स्कूलसे लौट आकर इसी छत पर दौड़े धूपे और खेले कूदे हैं; परीक्षाके पहले दोनों चिह्ना चिह्ना कर अपने पाठको रटते हुए इसी छत पर पागलोंकी तरह घंटों टहले हैं; गर्मियों में कालेजसे लौट आकर रातको इसी छत पर भोजन किया है, उसके बाद तक करते करते कभी कभी रातको सो गये हैं, और सबेरेके समय मुँह पर धूप पड़ने पर चौंककर जाग कर देखा है कि रातको वहीं चटाई पर दोनों सो गये थे। जब कालेजकी पढ़ाई बिस्कुल समाप्त होगई, तबसे इसी छत पर महीनेमें एक बार करके जिस हिन्दूहितैषी-सभाके अधिवेशन होते आरहे हैं इन दोनों मित्रोंमें एक उसका सभापति है और दूसरा उसका सेक्रेटरी है।

जो सभापति था, उसका नाम गौरमोहन है और उसके आत्मीय व मित्र लोग उसे संक्षेपमें गोरा कहते हैं। वह जैसे अपने चारों ओरके

लोगोंसे बिल्कुल ही मेल नहीं खाता। उसकी लम्बाई-चौड़ाई भी आश्चर्यजनक है। कालेजके संस्कृताध्यापक उसे रजतगिरि कहकर पुकारा करते थे। उसका रङ्ग कुछ उभ्र प्रकारका गोरा है—सुनहलो आभाके अभावने उसे कुछ भी स्निग्ध कोमल नहीं होने दिया है। वह सिरसे प्रायः छः फुट लम्बा है। उसके हाड चौड़े हैं दोनों हाथोंकी मुठियाँ बाघके पंजे की तरह बड़ी हैं। गलेकी आवाज़ भी ऐसी मोटी और गंभीर है कि अचानक कान में पड़नेसे मनुष्य चौंक पड़े। उसके मुखकी गठन भी आवश्यकतासे अधिक बड़ी और दृढ़ है। भौहें और ठोड़ीकी हड्डी जैसे दुर्गंदार के दृढ़ अंगल (जंजीर) की तरह हैं। आँखोंके ऊपर भौहोंकी श्याम रेखाएँ जैसे हैं ही नहीं, और वहाँ परका कपाल कानोंकी तरफ चौड़ा होगया है। दोनों ओठ पतले और सदा बंद रहनेवाले हैं। उनके ऊपर नाक खाँड़े की तरह झुकी हुई दोनों आँखें छोटी, किन्तु तीक्ष्ण हैं। उसकी दृष्टि जैसे तीरके अग्र भागकी तरह अति दूर अदृश्य की ओर लक्ष्य किये हुए हैं, साथ ही दम भरमें भी लौट आकर पासकी चीज़ पर भी बिजली की तरह चोट कर सकती है। गौर को देखने से सुश्री नहीं कहा जा सकता, यह सही है। लेकिन उस पर ध्यान गये बिना नहीं रहा जा सकता। हजारोंके घीचमें भी आदमीकी नजर उस पर अवश्य ही पड़ेगी।

और, उसका मित्र विनयभूषण एक सधारण बंगाली शिक्षित भद्र पुरुषकी तरह नम्र, किन्तु उज्ज्वल है। स्वभावकी सुकुमारता और बुद्धिकी तीव्रताने मिलकर उसके मुखकी श्रीमें एक विशेषता उत्पन्न कर दी है। वह कालेजमें बराबर ऊँचे नम्बर और स्कालरशिप पाता रहा है। गोरा पढ़ने में और उसके फलमें किसी तरह विनयके साथ नहीं चल पाता था। असल बात यह है कि पढ़नेके विषयोंमें उस तरह उत्तना गोराका मन ही नहीं लगता था। वह विनयकी तरह न तो जल्दी समझ ही पाता था, और न याद ही रख सकता था। विनय

ही उसका बाहन होकर कालेजकी परीक्षाओंमें अपने पीछे खींचखाँच कर उसे पार कर लाया है ।

उस समय गोरा कह रहा था—जो मैं कहता हूँ, सो सुनो । अविनाश ब्रह्मसमाजियोंकी निन्दा करता था, उससे यह समझ पड़ता है कि वह खूब सुस्थ स्वाभाविक अवस्थामें हैं । तुम उसकी इस हरकतसे एकाएक इस तरह पागलोंकी माफिक बिगड़ क्यों उठे ।

विनय —कैसा आश्चर्य है । मैं तो यह खयाल भी अपने मनमें नहीं ला सकता था कि इस सम्बन्धमें कोई प्रश्न चल सकता है ।

गोरा—अगर यह बात है तो तुम्हारे मनमें कुछ दोष होगया है । एक दलके लोग समाजके बन्धन को तोड़कर सब विषयोंमें उलटी चाल चलेंगे, और समाजके लोग अविचलित भावसे उनके प्रति सुविचार करेंगे, यह स्वभावका नियम नहीं है । समाजके लोग उनके बारेमें भ्रान्त धारणा अवश्य ही धारण करेंगे, वे लोग सरलभावसे जो कुछ करेंगे, वह इनकी दृष्टिमें अवश्य ही देढ़ा प्रतीत होगा उनका भला इनको बुरा ही जान पड़ेगा यही होना उचित है । इच्छाके अनुसार समाजको तोड़कर उससे निकल जानेके जितने दण्ड हैं, उन्हींमें यह भी एक है ।

विनय—मैं नहीं कह सकता कि जो स्वाभाविक है वही भला है ।

गोरा कुछ गर्म होकर कह उठा—मुझे भलेसे कुछ काम नहीं है । पृथ्वी पर ऐसे भले अगर दो-चार आदमी हों तो रहें किन्तु बाकी सब स्वाभाविक ही बने रहें । मैं यही चाहता हूँ ! नहीं तो काम भी नहीं चलेगा जान भी नहीं बचेगी ! ब्राह्मसमाजी होकर बहादुरी दिखानेका शौक जिन्हें है उन्हें यह दुःख सहना ही होगा । जो ब्राह्म नहीं हैं वे उनके सभी कामोंको भूल समझ कर उनकी निन्दा करेंगे ही । वे लोग भी अपनी बहादुरी पर छाती फुलाये धूमेंगे, और उनके प्रतिपत्नी भी उनके पीछे पीछे उनकी बाहवाही की प्रशंसा के गीत गाते चलेंगे, यह सुमकिन नहीं जगत्में ऐसा कहीं नहीं होता और अगर होता भी तो जगत् के लिए सुविधा न होती ।

बिनय—मैं दलकी निन्दा के बारे में नहीं कहता मैं व्यक्तिगत निन्दा की बात कहता हूँ ।

गोरा—किसी एक दलकी निन्दा तो निन्दा ही नहीं है । वह तो मतामतका विचार है । व्यक्तिगत निन्दा ही चाहिए । अच्छा साधुपुरुष जी—“ब्राह्मोंकी पहले तुम निन्दा नहीं करते थे ?”

बिनय—करता था । खूब ही करता था—लेकिन उसके लिए मैं अब क्षाप्त हूँ ।

गोरा ने अपने दाहिने हाथ की मुट्ठी खूब कड़ी करके कहा—ना बिनय, यह नहीं होगा किसी तरह नहीं ।

बिनय ने कुछ देर चुप रहकर कहा—क्यों क्या हुआ ? तुम्हें भय काहेका है ।

गोरा—मुझे स्पष्ट ही दिखाई पड़ रहा है कि तुम अपने हृदयको दुर्बल बना रहे हो ।

बिनयने कुछ उत्तेजित होकर कहा—दुर्बल ? तुम जानते हो, मैं चाहूँ तो अभी उन लोगोंके घर जा सकता हूँ—उन्होंने मुझे बुलाया भी था लेकिन मैं नहीं गया । क्या इसे दुर्बलता कहोगे ?

गोरा—किन्तु यह बात तुम किसी तरह नहीं भूल सकते हो कि तुम नहीं गये, यही दुर्बलता है । दिन रात केवल यही सोचते हो कि मैं नहीं गया—लेकिन मैं नहीं गया । इसकी अपेक्षा चले जाना ही अच्छा ।

बिनय—तो क्या तुम जाने के लिए ही कहते हो ?

गोरा ने अपनी जाँघ पर हाथ मार कर कहा—ना, मैं जाने को नहीं कहता । मैं तुमसे सत्य कहता हूँ, जिस दिन तुम उनके घर जाओगे उस दिन एकदम पूर्णरूप से जाओगे । उसके दूसरे ही दिनसे उनके घर खाना पीना शुरू कर दोगे और ब्राह्मसमाजके रजिस्टरमें नाम लिखा कर एकदम दिग्विजयी महोपदेशक हो उठोगे ।

बिनय—कहते क्या हो ! उसके बाद ?

गोरा—उसके बाद और क्या मसल है, मरने को कहने से बढ़कर

कोई गाली नहीं ! ब्राह्मण के लड़के होकर तुम चढ़खाने में मरोगे, तुम्हारा आचार विचार कुछ नहीं रहेगा । जिसका कम्पास टूट गया है उस जहाज के कप्तानकी तरह तुम्हारा पूर्वपश्चिमका ज्ञान लुप्त हो जायगा तुम्हें उस समय जान पड़ेगा कि जहाजको बन्दरगाहमें ले जाना ही कुसंस्कार है संकीर्णता है । केवल नाहक सागरजल में बहते रहना ही यथार्थ जहाज चलाना है, समझे ? किन्तु इन सब बातोंको लेकर बकबक करनेमें मेरा धैर्य नष्ट हो जाता है । मैं कहता हूँ, तुम जाओ ! इस तरह अधःपातके मुखके सामने पैर बढ़ा कर खड़े खड़े हम सब को भी वयों भय के आवर्त में डाल रखता है ?

विनय हँस उठा बोला—यह बात नहीं है कि डाक्टरके आशा छोड़ देने पर सब समय रोगी की मृत्युही हो जाती हो । मुझे तो ऐसी धार्मिक मृत्युके निकटवर्ती होने का कोई लक्षण अपने में नहीं देख पड़ता कमसे कम मैं नहीं देख पाता ।

गोरा—नहीं देख पाते ?

विनय—न ।

गोरा—तुम्हें नाड़ी छूटती नहीं जान पड़ती ?

विनय—ना, मेरी नाड़ी खूब सबल है छौर ठीक चल रही है ।

गोरा—यह नहीं जान पड़ता कि वे श्री हाथ अगर परोसें, तो ग्लेच्छका अन्नही देवताका प्रसाद है ?

विनय अत्यन्त संकुचित हो उठा । उसने कहा—गोरा बस अब चुप रहो ।

गोरा—इसमें तो इज्जत-आबरूकी कोई बात नहीं है । वे श्री करकमल असुरार्धंश्य (जिन्हें सूर्य तक न देख सकें) तो हैं ही नहीं । जिस समाज में स्त्रियाँ मर्दोंसे हाथ मिला सकती हैं उस समाजके सुपवित्र कर-पल्लवोंका उल्लेख तक जब तुमसे सहा नहीं जाता तब कहना ही पड़ता है कि ' तदा न संशे मरणाय संजय । '

विनय—देखो गोरा, मैं स्त्रीजातिको भक्तिकी दृष्टिसे देखता हूँ ।
हमारे शास्त्र में भी ऐमा ही लिखा है ।

गोरा—तुम जिस भावसे स्त्रीजातिको भक्तिकी दृष्टिसे देखते हो,
उसके लिए शास्त्रकी दुहाई न दो । उसे भक्ति नहीं कहते । उसे जो कुछ
कहते हैं वह अगर जवान पर लाऊँगा तो शायद तुम मारने ही दौड़ोगे ।

विनय—यह सब तुम शारीरिक बलके जोर पर कह रहे हो जबर्दस्ती
कर रहे हो ।

गोरा—शास्त्रमें स्त्रियोंके लिए कहा है—‘पूजार्हा गृहदीप्तयः ।’
स्त्रियाँ पूजा के योग्य हैं । कारण, वे गृहको प्रकाशित करती हैं । किन्तु
मर्दोंके हृदयको प्रकाशित या प्रदीप्त कर देती हैं, इसलिए विलायती
विधान से उन्हें जो मान दिया जाता है उसे पूजा न कहना ही अच्छा है ।

विनय—किसी किसी जगह ऐसी विकृति देखी जाती है, इसीलिए
क्या एक ऊँचे दर्जेके भाव पर इस तरहका कटाक्ष करना उचित है ?

गोराने अधीर हो कर कहा—विनय, इस समय जब तुम्हारी विचार
करनेकी बुद्धि चली गई है, तब मेरी बात मान ही लो । मैं कहता हूँ,
विलायती शास्त्र में स्त्री जातिके सम्बन्धमें जो सब अत्युक्तियाँ हैं, उनके
भीतरकी बात है वासना (विषय-भोग लालसा) । स्त्रीजातिकी पूजा
करनेका स्थान है माताका घर, सती लक्ष्मी-स्वरूपिणी गृहणीका आसन ।
उन्हें वहाँसे हटा ला कर जो उनकी स्तुतिकी जाती है, उसके भीतर
अपमान निहित है, उसको निन्दास्तुति भी कह सकते हैं । जिस कारणसे
तुम्हारा मन पतङ्गकी तरह परेश बाबूके घरके इर्दगिर्द चक्कर गगा रहा
है, उसे अंग्रेजी में ‘लव’ (प्रेम) कहते हैं । किन्तु मैं चाहता हूँ कि ऐसा
पागलपन तुम्हारे सिर पर सवार न हो जाय कि अंगरेजोंकी नक़ल करके
उस ‘लव’ को ही संसारमें चरम या परम पुरुषार्थ मान कर उसीकी
उपासना करनी चाहिए ।

विनय कोढ़की चोट खाये हुए बछेड़ेकी तरह उछल पड़ा, और
बोला—आः गोरा बस रहने दो, बहुत हो गया ।

गोरा—कहां बहुत हो गया ! कुछ भी नहीं हुआ ! हमने औरत और मर्दको उनकी अपनी जगह पर खूब सहज भावसे देखना नहीं सीखा इसीलिए हम लोगोंने कुछ कवित्व जमा कर लिया है ।

विनय—अच्छा मैं मानता हूँ कि स्त्री पुरुषका सम्बन्ध ठीक जिस जगह पर रहनेसे सहज हो सकता, उस सीमाको हम प्रवृत्तिकी भोंकमें नाँव जाते हैं और उसे मिथ्या कर डालते हैं, किन्तु यह अपराध क्या केवल विदेश ही का है ? इस सम्बन्धमें अंगरेजोंका कवित्व अगर मिथ्या है तो हम लोग जो यह कामिनी-काञ्चनके त्यागकी बात ले कर सर्वदा बढ़ बढ़ कर बातें मारते हैं वह भी तो मिथ्या ही है ! मनुष्यकी प्रकृति जिसे लेकर सहज ही आत्मविस्मृत हो जाती है, उसके हाथसे मनुष्यको बचानेके लिए कोई तो प्रेमके सौन्दर्य-अंशको ही कवित्वके द्वारा उज्जवल कर देता है—उसके बुरे अंशको लजा देता है, और कोई उसके बुरे अंश या पहलूको ही बढ़ा बनाकर कामिनी-काञ्चन-त्यागकी व्यवस्था देता है । ये दोनों केवल दो भिन्न प्रकृतियोंके लोभोंकी भिन्न प्रकारकी प्रणालियाँ हैं । एककी अगर निन्दा करते हो, तो दूसरीके साथ भी रियायत करनेसे काम नहीं चलेगा ।

गोरा—ना, मैंने तुमको शल्लत समझा था । तुम्हारी हालत अभी वैसी खराब नहीं हुई है । जबकि अभी तक फ़िलासफ़ी तुम्हारी मस्तिष्कके भीतर मौजूद है, तब तुम निर्भय हो कर लव (प्रेम) कर सकते हो । लेकिन हितैषी बन्धुओंका यही अनुरोध है कि समय रहते अपने को संभाल लेना ।

विनयने व्यस्त होकर कहा—आः तुम क्या पागल हो गये हो ? मैं लव (प्रेम) करूँगा ! मगर हाँ, यह बात मुझे स्वीकार करनी ही होगी कि परेश बाबूके परिवारका जो कुछ मैंने देखा है और उनके सम्बन्धमें जो कुछ सुना है, उससे उन लोगोंके प्रति मेरे मनमें यथेष्ट श्रद्धा उत्पन्न हो गई है । जान पड़ता है इसीसे यह जाननेके लिए मेरे हृदयमें एक प्रकारका आकर्षण उत्पन्न हो गया था कि उनके घरके भीतरका जीवन कैसा है ।

गोरा—अच्छी बात है। उस आकर्षणको ही सम्भाल कर चलना होगा। उन लोगोंके सम्बन्धमें प्राणिवृत्तान्तका अध्याय न-हो अनाविष्कृत ही रहने दो। खासकर वे लोग ठहरे शिकारी जीव, उनके भीतरके मामलातको जानने जाकर अन्तको यहाँ तक भीतर जा सकते हो कि तुम्हारी यह चोटी तक देखनेका कोई उपाय न रह जाय।

विनय—देखो, तुममें एक बड़ा दोष है। तुम समझते हो कि जो कुछ शक्ति है वह सब ईश्वरने केवल तुमको ही देदी है। और हम सब दुर्बल प्राणी हैं।

विनयकी यह बात गोराको सहसा जैसे नई सी जान पड़ी। उसने उत्साहके वेगमें आकर विनयकी पीठमें एक हाथ मारकर कहा—ठीक कहा, यही मुझमें दोष है—बड़ा भारी दोष है !

विनय ओः !—इससे भी बढ़कर एक और दोष है ! कौन मनुष्य तुम्हारे हाथका कितना वेग सह सकता है इसका खयाल तुम बिल्कुल नहीं करते।

इसी समय गोराके वैमात्र बड़े भाई महिम अपना स्थूल शरीर लिए हाँफते-हाँफते ऊपर आये। आते ही पुकारा—गोरा !

गोरा तुरन्त उठ खड़ा हुआ और बोला—जी, क्या आज्ञा है ?

महिम—आज्ञा कुछ नहीं है, देखने आया हूँ कि बरसातीबादल क्या हमार छत पर उतरकर गरज रहा है।—आज मामला क्या है ? शायद अंगरेजोंको इतनी देरमें भारत सागरकी आधीरात नँचा आये हो ? अंगरेजोंकी तो इससे कुछ विशेष हानि नहीं देखपड़ती, हाँ—नीचे कोठरीमें तुम्हारी भाबज सिरके दर्दकी तकलीफसे बेहाल पड़ी हैं, उन्हींको इस सिंहनादसे विशेष कष्ट पहुँच रहा है। इतना कह कर महिम नीचे उतर गये।

गोरा और विनय दोनों छतसे नीचे उतर ही रहे थे, इसी समय गोराकी माँ ऊपर आकर उपस्थित हुई। विनयने उनके पैर छू कर प्रणाम किया।

गोराकी माँका नाम आनन्दमयी था। वह इकहरे बदनकी थीं, लेकिन हाथ-पैर गठे हुए थे। बाल कुछ पक गये थे, लेकिन अधिकांश बाल काले होनेके कारण बाहरसे देख नहीं पड़ते थे। एकाएक उन्हें देखनेसे जान पड़ता था, उनकी अवस्था चालीस सालसे भी कम होगी। मुख मँडल अत्यन्त सुकुमार था। नाक, ओठ, ठोड़ी और मस्तक आदि देखनेमें भले मालूम होते थे। चेहरेमें एक सफ़ाई और सतेज बुद्धिका भाव प्रतीत होता था। रंग साँवला था—गोराके रङ्गके साथ कुछ भी मेल नहीं खाता था। उनको देखते ही एक चीज पर सबकी नज़र पड़ती थी—वह साड़ीके साथ ही शेमीज पहने रहती थीं। अब तो खियोंमें शेमीज पहननेका रवाज हो गया है, लेकिन हम जिस समय का जिक्र कर रहे हैं, उन दिनों यद्यपि नये सभ्य समाज में औरतों ने कुर्ता या शेमीज पहनना शुरू कर दिया था, लेकिन साधारणतः स्त्री-समाजमें कुर्ता या शेमीज पहनना घृणाकी दृष्टिसे देखा जाता था। प्रयोगा प्रौढ़ा गृहणी इसको बिल्कुल ही कूस्तानी पहनावा कहा करती थीं। आनन्दमयीके स्वामी कृष्णदयाल बाबू कमसरियटमें नौकर थे। आनन्दमयी लड़कपनसे उनके साथ पश्चिमोत्तर प्रदेश में रही थीं। इसी लिए इस संस्कार या धारणाने उनके मनमें स्थान नहीं पाया कि अच्छी तरह अंग ढकनेवाले कपड़ोंका पहनावा लज्जा या हँसीकी बात है। सबरे उठकर वह घर बुहारतीं—साफ़ करतीं—और रसोई करती थीं। फिर सोना-परोना गिरस्तीके और काम धंधे करना, उनका नित्यकर्म था। उसके बाद अपने

पास-पड़ोसियोंकी खबर लेती थीं। अगर कोई बीमार हुआ तो उसकी दवा आदि का प्रबंध करती थीं। इतना सब करके भी उनका बहुत सा समय बच रहता था, वह मानों काम काजकी साक्षात् मूर्ति थी। उन्हें देखकर मनमें उनके प्रति भक्ति और श्रद्धा होती थी।

गोराकी मां ने ऊपर आकर विनयसे कहा—कहो भैया ! तबियत तो अच्छी हैं न। इधर कई दिनसे तू आया क्यों नहीं ?

विनयने कुछ कुंठित होकर कहा—नहीं अम्मा तबियत तो खराब नहीं थी—इधर कई दिनसे पानी बरस रहा था इसीसे नहीं आसका।

गोरा कह उठा—यही तो बात है ! इसके बाद जब पानी न बरसेगा तब विनय कहेंगे कि धूप बड़ी कड़ी थी। अमल मनकी बात तो वह अन्तर्यामी ही जनते हैं।

विनयने चिढ़ कर कहा —गोरा यह तुम क्या व्यार्थ बकते हो।

आनन्दमयीने कहा—सच तो है गोरा, इस तरहकी बात न कहनी चाहिए। मनुष्यका मन कभी अच्छा रहता है, कभी नहीं रहता। सब समय एक सी तबियत नहीं रहती। इस बात को लेकर अधिक झेड़ झाड़ करना दूसरेका दिल दुखाना है।—आ विनू, मेरी दालानमें चल, मैंने तेरे लिए कुछ खानेका सामान तैयार कर रखा है।

गोराने जोरसे सिर हिला कर कहा—ना मा, यह न होगा। तुम्हारी दालानमें मैं विनयको खाने न दूंगा।

आनन्दमयीने कहा—क्यों गोरा ? तुझसे तो मैं किसी दिन खानेके लिए नहीं कहती ! तुम बाप-बेटे दोनोंका अजब हाल है। उधर तेरे बाप भा तो एक दम भयंकर शुद्ध आचारके पक्षपाती हो उठे हैं। कुछ दिन से अपने हाथका बनाया आपही खाते हैं। लेकिन विनू मेरा बहुत ही सीधा लड़का है। उसमें तेरी तरह कट्टरपना नहीं है। तू ही उसे मटर सदाचार का ढोंग सिखाता है—जबर्दस्ती अपनी चाल पर चलाना चाहता है।

गोरा—हाँ यह ठीक है, मैं जबर्दस्ती ही उसे अपनी चाल पर चला-

जैगा । तुम जब तक अपनी इस दासी लछ्मियाको, जो ईसाई हो गई थी अपने यहाँ रखोगी, तब तक तुम्हारे दाखानमें मैं या विनय कोई नहीं, खा सकता ।

आनन्दमयी—अरे गोरा, तू ऐसी बात मुंहसे मत निकाल । लड़कपन में सदा तू उसीके हाथसे खाता पीता था, सच पूछो तो लछ्मियाने ही तुझको पाल पोसकर इतना बड़ा किया है । अभी कुछ ही दिन हुए, लछ्मियाके हाथकी बनी हुई चटनीके बिना तू भोजन ही नहीं करता था । बचपनमें जब तेरे चेचक निकली थी, तब लछ्मियाने जैसी सेश करके तेरी जान बचाई है, उसे मैं कभी नहीं भूल सकती ।

गोरा—उसे पेंशन दो, ज़मीन खरीद दो, घर बनवा दो, जो जी चाहे सो मलूक करो, लेकिन उसे घरमें रखनेसे काम नहीं चलेगा मा !

आनन्दमयी—गोरा, तू समझता है कि रुपये दे देनेसे सभी तरहके कष्टोंसे उद्धार हो जाता है ! वह न रुपये चाहती है, न जमीन चाहती है, न घर चाहती है । चाहती है केवल तुझे देखना । वह तुझे न देख पावेगी तो मर जायगी ।

गोरा—तुम्हारी खुशी है, उसे रखो । लेकिन विनय तुम्हारे दाखानमें नहीं खाने पावेगा । जो नियम है वह मानना ही होगा । किसी तरह उसके खिलाफ़ नहीं हो सकता । मां तुम इतने बड़े प्रसिद्ध पण्डितके वंशकी लड़की होकर सदाचारका पालन नहीं करती हो, यह तो एक बड़े आश्चर्य और खेदकी बात है ।

आनन्दमयी—अरे बेटा, तुम्हारी मां पहले बहुत कुछ कष्टर थी और सदाचारका पालन करती थी । इस आचार पालनके लिए ही बहुधा मुझे रोना धोना तक पड़ता था । उस समय तुम थे भी नहीं । मैं रोज़ शिवकी मूर्ति बनाकर पूजा करने बैठती थी, और तुम्हारे पिता जब देख लेते थे, तब मूर्तिको उठाकर फेंक देते थे । उस ज़मानेमें तो अपरिचित ब्राह्मणके भी हाथकी बनी रसोई खानेमें घिन मालूम होती थी । तब रेजगादी दूर दूर तक नहीं फैली थी । तुम्हारे बापके साथ यात्रामें बैल-

गाड़ी, घोड़ागाड़ी, पालकी, ऊंट वगैरह पर चढ़कर जाना पड़ता था, और ऐसे अवसरों पर अक्सर दो दो दिन मैंने भूखे प्यासे ही बिता दिए हैं। तुम्हारे पिता क्या सहजमें मेरे आचार विचारको छुड़ा सके थे? उसके लिए उन्होंने बहुत दिनों तक चेष्टाकी थी। वह स्त्रीको साथ लेकर सर्वत्र जाते थे, इसीलिए साहब लोग उनकी तारीफ़ करते थे। उनकी तनख्वाह भी बढ़ गई। अब तो बुढ़ापेमें नौकरी छोड़कर खूब रुपये जमा करके, वह खुद एकाएक कट्टर सदाचारी हिन्दू बन गये हैं। लेकिन मुझसे अब फिर यह नहीं हो सकता! मेरे सात पोढ़ियोंके संस्कार एक एक करके जड़से उखाड़ डाले गए हैं, अब वे फिरसे नहीं जम सकते।

गोरा—अच्छा, तुम अपने पूर्व पुरुषोंकी बात जाने दो। वे तो अब कोई आपत्ति करने नहीं आते। किन्तु हम लोगोंकी खातिरसे तो तुमको कुछ बातें मानकर चलना ही पड़ेगा। न हो शास्त्रका मान न रखो, स्नेहका मान तो रखोगी!

आनन्दमयी—अरे तू इस तरह इतना क्या मुझे समझाता है! मेरे मनकी क्या दशा है, सो मैं ही जानती हूँ! मेरे स्वामो, मेरे लड़के, अगर मेरे कारण, मेरे आचरणसे, पग पग पर केवल बाधा ही पाते हैं, तो फिर मुझे सुख काहेका? किन्तु तू यह नहीं जानता कि, तुझे गोदमें लेनेके दिनसे ही मैंने सब आचार विचार छोड़ दिया है। छोटे लड़केको गोदमें उठा लेनेसे ही समझमें आता है कि पृथ्वी पर कोई मनुष्य जाति लेकर नहीं पैदा होता। जातिकी कल्पना केवल कल्पनामात्र है। यह बात जिस दिन मैंने समझी उसी दिनसे मुझमें निश्चय हो गया है कि मैं अगर क्रिस्तान समझकर, नीच जाति समझकर, किसीसे घृणा करूंगी तो ईश्वर तुझे भी मेरी गोदसे छीन लेंगे। तू मेरो गोदको, मेरे घरको, सुशोभित किये रह, मैं पृथ्वी भरकी सभी जातियोंके हाथका पानी पिऊंगी।

आज आनन्दमयीकी बातें सुनकर विनयके मनमें एकाएक किसी एक अस्पष्ट संशयका आभास दिखाई दिया। उसने एक बार आनन्द-

मयीके और एक बार गोराके मुखकी ओर दृष्टि डाली। किन्तु वैसे ही मनसे सब तरहके संदेहात्मक तर्कके उपक्रमको ठेल कर बाहर कर दिया।

गोरा ने कहा—माँ तुम्हारी युक्ति अच्छी तरह मेरी समझमें नहीं आई। जो लोग आचार मानते हैं, जातिका विचार रखते हैं, शास्त्रको मानकर चलते हैं, उनके घरमें भी तो लड़के जीते जागते रहते हैं, फिर तुम्हें यह बुद्धि किमने दी कि ईश्वर तुम्हारे ही संबन्धम इस विशेष नियमसे काम लेंगे?—

आनन्दमयी—जिन्होंने मुझको तुम्हे दिया है, उन्होंने ही यह बुद्धि भी दी है। उसके लिए मैं क्या करूँ, तू ही बता। इसमें मेरा कोई वश नहीं है। किन्तु अरे पागल, मैं सोचकर भी नहीं ठीक कर पाती कि तेरा पागलपन देख कर मैं हंसू या रोज़ूँ। खैर, इन बातोंको छोड़—तो फिर विनय मेरे यहाँ नहीं खायगा?

गोरा—वह तो मौक़ा पावे तो अभी दौड़ा जाय, खानेका लोभ तो उसके मनमें सोलहो आने है। किन्तु माँ, मैं उसे नहीं जाने दूँगा। दो मिठाई देकर उसे यह भुलानेसे काम नहीं चलेगा कि वह ब्राह्मणका बालक है। उसे बहुत कुछ त्याग करना होगा, प्रवृत्तिको संभालना पड़ेगा, तभी वह अपने ब्राह्मण जन्म के गौरवकी रक्षा कर सकेगा—लेकिन अर्माँ तुम कुछ बुरा न मानना, मैं तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ।

आनन्दमयी—मैं भला तेरी बातका बुरा मानूंगी! तू कइता क्या है। मगर यह मैं तुझसे वहे देती हूँ कि तू यह जो कुछ कर रहा है, उसके बारेमें तुम्हे ज्ञान नहीं है। मुझे यह बात अवश्य कष्ट पहुँचाती है कि मैंने तुम्हे पाल पोस कर इतना बड़ा किया सही, लेकिन—खैर वह चाहे जो हो, तू जिसे धर्म कहता फिरता है, उसे मानकर मुझसे नहीं चला जा सकता। तू मेरे चौकेमें मेरे हाथ की बनी रसोई न खायगा, न सही, तुम्हे मैं अपनी आँखोंके आगे तो रख सकूंगी—यही मेरे लिए बहुत है।—बेटा विनय, तुम उदास न होओ। तुम्हारा मन नरम है, तुम समझते हो—गोराकी बातोंसे मुझे दुःख हुआ। लेकिन

असलमें मुझे कुछ भी दुःख नहीं है भैया । और किसी दिन शुद्ध ब्राह्मणके हाथसे रसोई बनवा कर तुम्हें खिला दूंगी । तुम क्यों खिन्न होते हो ? मगर हाँ, देखो, सबसे कड़े रखती हूँ कि मैं लछमियाँके हाथका जल पिऊंगी ।

गोरा की माँ उतर कर नीचे चली गई । विनय चुप चाप कुछ देर तक खड़ा रहा, उसके बाद उसने धीरे धीरे कहा—गोरा, यह तो मुझे कुछ ज्यादाती जान पड़ती है ।

गोरा—ज्यादती ! किसकी ?

विनय—तुम्हारी ।

गोरा—ना, रत्ती भर भा नहीं । जहाँ जिसकी सीमा है, उसे उसीके भीतर रखकर मैं चलना चाहता हूँ । किसी बहानेसे सुईकी नोक भर भी भूमि छोड़ना शुरू करनेसे अन्तको फिर कुछ भी नहीं बाक़ी रहता—समझ ?

विनय—लेकिन फिर भी वह माँ हैं ।

गोरा—माँ किसे कहते हैं, माँका क्या महत्व है, सो मैं खूब अच्छी तरह जानता हूँ । मुझे क्या इसकी याद दिलानेकी ज़रूरत होगी ! मेरी माँ जैसी कितने लोगोंकी है ! लेकिन जो मैं सदाचारको न मानना शुरू कर दूँ । तो शायद एक दिन माँको भी न मानूंगा । देखो विनय तुम से एक बात कहता हूँ, याद रखो—हृदय एक अच्छी चीज़ है, लेकिन सवोपरि नहीं है ।

विनयने कुछ देर बाद ज़रा संकोचके साथ कहा—देखो गोरा, आज माँकी बातें सुनकर मेरे हृदयके भीतर एक तरहकी हलचल सी हो रही है । मुझे जान पड़ता है, माँके मनमें कोई बात ऐसी है, जिसे वह किसी कारणसे खोलकर हमें समझा नहीं सकती, और इसके लिए उन्हें कष्ट हो रहा है ।

गोरा ने अधीर होकर कहा—अः विनय, कल्पनाको लेकर उसके

साथ इतना न खेलो—उसमें केवल समय ही नष्ट होता है, कुछ फल नहीं होता ।

विनय—तुममें यही तो दोष है कि तुम पृथ्वीकी किसी चीज़की ओर कभी अच्छी तरह नहीं देखते ! इसीसे जो तुम्हें नज़र नहीं आता उसीको तुम कल्पना कहकर उड़ा देना चाहते हो । किन्तु मैं तुमसे कहता हूँ कि मैंने कितने ही बार देखा है कि माने जैसे न जानें किसके लिए

चिन्ता हृदयमें रख छोड़ी है, जैसे कोई बात ऐसी है जिसे वह ठीक मेलसे नहीं मिला पातीं । उसी कारण उनको गृहस्थीके भीतर एक प्रकारका दुःख पीड़ा पहुँचाता है । गोरा, तुम उनकी बातोंको ज़रा कान लगाकर ध्यान देकर सुनो ।

गोरा—कान लगा कर और ध्यान देकर जितना सुना जा सकता है, उतना मैं सुना करता हूँ । उससे अधिक सुननेकी चेष्टा करनेसे गलत सुननेकी संभावना है, इसीलिए मैं उसको चेष्टा नहीं करता ।

गोराके घरसे निकल कर अपने घरको लौटते समय विनय वर्गा ऋतुके संध्यामें जब वह कीचड़को बचाकर धीरे धीरे रास्तेमें जा रहा था तब पिछले दिन की गोरा और आनन्दमयीके बीच हुई बातें उसके हृदयमें एक हलचल मचा दी थी ।

समाज अगर इस ज़मानेके प्रकट और गुप्त आघातसे आत्मरक्षा करके चलना चाहे तो, छुआछूत और खाने-पीनेके बारेमें उसे विशेषरूपसे सावधान होना होगा, इस मतको विनयने गोराके मुखसे सुनकर बहुत ही सहजमें ग्रहण कर लिया था । इसी मतको लेकर उसने विद्वद् लोगोंके साथ तीखे भावसे अनेक बार बहस भी की है ।

किन्तु आज जो गोराने उसे आनन्दमयीके घरमें खानेसे रोका उससे उसके हृदयको कड़ी चोट पहुँची । वह चोट भीतर ही भीतर उसे व्यथित करने लगी ।

विनयके बाप नहीं थे । माँ भी बचपन हीमें उसे छोड़कर स्वर्ग सिधार गई थी । चाचा थे, सो वह गाँवमें रहते थे । विनय बचपनसे ही कलकत्तेमें पढ़ने लिखनेके लिये अकेले घरमें रहा है । गोराके साथ मित्रता होनेसे जिस दिन विनयने आनन्दमयीको देखा उसी दिनसे उसने उनको अपनी सगी माँकी जगह समझ लिया । अक्सर आनन्दमयीके घर जाकर उसब नेलकैंकी तरह ऊधम मचाया है । आनन्दमयीको यह अपवाद लगा कर कि माँ तुम तो गोरा को भोजन का अधिक अंश देकर उसके प्रति पक्षपात करती हो अनेक बार उसने बनावटी ईर्ष्या प्रकटकी है ! विनयको अच्छी तरह मालूम था कि वह अगर दो चार दिन नहीं जाता

तो आनन्दमयी कितना उत्कण्ठित हो उठती हैं, उसको पास बिठाकर खिलानेकी प्रत्याशासे वह अक्सर उन लोगोंकी बात चीत खतम करके उठनेकी प्रतीक्षा उत्सुकताके साथ किया करती हैं। वही विनय सामाजिक घृणाके कारण आनन्दमयीकी दालानमें जाकर भोजन नहीं करेगा इसे क्या आनन्दमयी सह सकती हैं, या विनय हीसे यह सहा जायगा ?

उस समय माँ आनन्दमयीने हँसकर अवश्य यह कहा था कि वह अब किसी अच्छे कुलीन ब्राह्मणके हाथसे रसोई बनवाकर उसे खिलायेंगी; किन्तु इससे उनके हृदयका कैसा मर्म भेदी दुःख प्रकट हो रहा है। विनय अपने मनमें बार-बार यही सोचता हुआ अपने घरमें पहुँचा।

कमरेमें अन्धकार था। दियासलाई खींचकर विनयने लैम्प जलाया। कमरेमें पहुँच कर विनयका दम जैसे घुटने लगा। मनुष्यके संग और स्नेहके अभावने आज उसके हृदयको जैसे असह्य भारसे पीड़ा पहुँचाना शुरू किया। देशोद्धार, समाज रक्षा आदि सब कर्तव्योंको वह किसी तरह स्पष्ट और सत्य नहीं बना सका—उसे इनकी अपेक्षा अधिक सत्य वही “अचिन पाखी” (अपरिचित चिड़िया) प्रतीत होने लगी, जो एक दिन सावनके उज्ज्वल सुन्दर प्रातः कालमें पिजड़ेके पास आकर फिर उस पिजड़ेके पासस उड़ गई। किन्तु उस ‘अचिन पाखी’ की बातको विनय किसी तरह अपने मनमें न आने दगा—किसी तरह नहीं। इसी कारण मनको आश्रय देनेके लिए वह आनन्दमयीके उसी घरका चित्र अपने मनमें अंकित करने लगा, जहाँसे गोराने उसको लौटा दिया है।

वह सोचने लगा, पक्का सफ़ेद पत्थरका फ़र्श चमचमा रहा होगा एक तरफ तख़्तके ऊपर सफ़ेद बगुलेके परकी तरह सफ़ेद कोमल बिछौना बिछा होगा। बिछौनेके पासही एक छोटोसे स्टूलके ऊपर रेड़ीके तेलका दिया जल रहा होगा। माँ अनेक रंगके डोरे लेकर उसी दीपकके पास झुकी हुई सुजनीके ऊपर सुईका काम बना रही होगी। लछमियाँ नीचे फ़र्श पर बैठी अटपट उच्चारणके साथ बंगलामें लगातार तरह तरहकी चर्चा कर रही होगी; माँ उनमेंकी अधिकांश बातों पर ध्यान ही नहीं

देती होंगी ! माँको जब मन में कोई कष्ट होता है, तब वह कोई न कोई शिल्प का काम लेकर बैठ जाती हैं । उनके उसी काम में लगे हुए चुपचाप मुखके चित्रको विनय अपने मनमें देखने लगा । उसने अपने मनमें कहा—इस मुखकी स्नेहपूर्ण दीप्ति मेरे मनके विक्षेपसे मेरी रत्ना करे—मेरे मनके इस उचाट भावको दूर करे । यह मुखही मेरे लिए मानुषभूमिकी प्रतिमा हो, मुझको कर्त्तव्यकी ओर लेजाय और कर्त्तव्यके पालनमें दृढ़ रखे । उसने मनही मन एक बार आनन्दमयीको माँ कह कर पुकारा, और कहा कि मैं इस बातको किसी भी शास्त्रके प्रमाणसे स्वीकार नहीं कर सकता कि तुम्हारा दिया हुआ भोजन मेरे लिए अमृत नहीं है ।

कमरेमें सज्जाटा था । केवल बड़ी धड़ीके चलनेका खटखट शब्द हो रहा था । उस कमरेमें बैठना विनयके लिए अप्रिय हो उठा । लैंपके पास ही दीवाल पर एक छिपकली किसी कीड़ेको पकड़नेकी घातमें लगी हुई थी—उसकी ओर कुछ देर ताकते रह कर विनय उठ खड़ा हुआ और छाता लेकर घर से निकल पड़ा ।

उस समय भी विनय यह कुछ निश्चय न कर सका था कि कहाँ जायगा, क्या करेगा । जान पड़ता है आनन्दमयीके पास फिर जाना ही उसके मनका अभिप्राय था । किन्तु बीच हीमें एक बार उसे खयाल आ गया कि आज रविवार है, ब्राह्मसमाजमें बाबू केशवचन्द्र मेनका व्याख्यान होगा, उसे सुनना चाहिए । इस खयालका आना था कि वह फौरन सब दुबिधा दूर करके जोरसे पैर बढ़ाता हुआ उधरही चला । यह उसे मालूम था कि केशव बाबूका व्याख्यान अब समाप्त हो चुका होगा, क्योंकि देर अधिक हो गई थी, तो भी उसका संकल्प विचलित नहीं हुआ ।

व्याख्यानके स्थान पर पहुँच कर देखा, उपासक लोग उपासना इत्यादि करके मन्दिरके बाहर निकल रहे हैं । वह सिर पर छाता लगाए रास्ताके किनारे एक कोने में खड़ा हो गया—उसी समय शान्त प्रसन्न मुख परेश बाबू मन्दिरके भीतरसे निकले । उनके साथ चार पाँच आदमी थे । विनयको उनमेंसे केवल एक आदमीका तरुण मुख, रास्तेके गैसके

प्रकाशमें, एक झलक देख पाया। उसके बाद गाढ़ीके पहियोंका शब्द हुआ, और दम भरमें वह दृश्य अन्धकारके महासमुद्रमें, पानीके एक बुल्लेकी तरह गायब हो गया।

विनयका फिर गोराके घर जाना नहीं हुआ। मनमें अनेक बातोंकी उधेड़ बुन करता हुआ विनय घरको लौटा। दूसरे दिन तीसरे पहर जब वह घरसे निकलकर घूमते घूमते अन्तमें गोराके घर पहुँचा, तब वर्षा समाप्त हो चुकी थी, और सन्ध्याका अन्धकार घना हो आया था। गोरा उसी समय रोशनी जला कर लिखने बैठा था।

गोराने विनयकी ओर बिना देखेही, कागज़ परसे दृष्टि बिना हटाएही कहा—क्यों जी विनय हवा किस रखकी है ?

विनयने उस बातको जैसे सुनाही नहीं, इस तरह कहा—गोरा, मैं तुमसे एक बात पूछता हूँ—भारतवर्ष क्या तुम्हारे नज़दीक खूब सत्य है ? खूब स्पष्ट है ? तुम तो दिन रात उसे अपने मनमें रखते हो, किन्तु मैं पूछता हूँ कि किस तरह मनमें रखते हो ?

गोराने लिखना छोड़ कर अपनी तीक्ष्ण दृष्टि ढाल कर विनयके मुखकी ओर ताका। उसके बाद क्रमको रख कर कुर्सीकी पीठके सहारे सीधे हो कर उसने कहा—जहाज़का कप्तान जब यात्रा करता है तब जैसे खाते पीते कामके समय और विश्रामके समय समुद्र पारके बन्दरगाहको अपने मन में रखता है, वैसेही मैंने भी अपने भारतको मनमें रखा है।

विनयने पूछा—तुम्हारा वह भारत कहाँ है ?

गोराने छाती पर हाथ रख कर कहा — मेरे यहाँके कंपासका कांटा दिन रात जिधर फिरा रहता है वहाँ है; तुम्हारे माशमैन साहबकी हिस्ट्री आफ इण्डियामें नहीं है।

विनयने कहा तुम्हारे कंपासका कांटा जिधर है उधर क्या कुछ है भी ?

गोराने उत्तेजित होकर कहा—है नहीं तो क्या ? मैं राह भूल सकता हूँ, डूब कर मर सकता हूँ, किन्तु मेरा वह लक्ष्मीका बन्दरगाह मौजूद है। वही मेरा पूर्णस्वरूप भारतवर्ष है। वह भारतवर्ष जो धनसे भरा

ज्ञानसे संपन्न और धर्मसे परिपूर्ण है, कहीं भी नहीं है ! है केवल चारों ओरका यह मिथ्या ! यही तुम्हारा कलकत्ता शहर, यही आफ्रिस, यही अदालतें यही कुछ एक ईंट काठके बने बुदबुद !—छीः !

यों कह कर गोरा कुछ देर तक एक टक विनयके मुंहकी ओर जाकता रहा । विनय कुछ उत्तर न देकर सोचने लगा । गोराने कहा—यही जहाँ हम पढ़ते लिखते हैं, नौकरीकी उम्मेदवारीमें घूमते फिरते हैं, दससे पाँच बजे तक नृतकी तरह जुट कर मेहनत करते हुए क्या करते हैं—उसका कुछ ठिकाना नहीं । इस जादूगरके मिथ्या भारत वर्षको हमने सत्य समझ लिया है, इसीसे हम इकतीस करोड़ मनुष्य मिथ्या मानको मान मान कर, मिथ्या कर्म को कर्म मान कर, दिन रात विभ्रान्त हुए फिरते हैं इस महामरीचिकाके भीतरसे क्या हम किसी तरहकी चेष्टासे प्राण बचा सकेंगे ! इसीसे तो हम प्रति दिन भूखे मरते हैं । भैया, एक सत्यका भारतवर्ष—परिपूर्ण भारतवर्ष है, उस जगह स्थिति हुए बिना हम लोग क्या बुद्धिमें और क्या हृदयमें यथार्थ प्राण रसको खींच नहीं ले सकते । इसीसे कहता हूँ कि और सब भूल कर—किताबी विद्या, खिताबका मोह, उल्लूवृत्तिका प्रलोभन, यह सब फिटकेसे तोड़कर फेंक देना होगा और अपने जहाजको उसी बन्दरगाहकी तरफ ले जाना होगा, उसमें डूबना होगा तो डूब जायेंगे, मरना होगा तो मर भी जायेंगे । क्या मैं यों ही भारतवर्षकी सत्य मूर्तिको, पूर्ण मूर्तिको, किसी दिन भूल नहीं सकता !

विनय—क्या ये सब केवल उत्तेजनाकी बातें नहीं हैं ? क्या तुम यह सब सत्य कह रहे हो ?

गोराने बादलकी तरह गरज कर कहा—मैं सत्य ही कहता हूँ ।

विनय — अच्छा जो लोग तुम्हारी तरह नहीं देख पाते ?

गोराने सुट्टी बांध कर कहा—उन्हें दिखा देना होगा । यही तो हमारा काम है । सत्यकी मूर्ति स्पष्ट देखे बिना लोग किस उपछायाके

आगे आत्मसमर्पण करेंगे ? भारतवर्षकी सर्वाङ्गीन पूर्ण मूर्ति सबके आगे खड़ी कर दो, तो लोग उसके लिए पागल हो उठेंगे। तब क्या दरवाजे दरवाजे देशोद्धारके लिए चंदा उगाहते फिरना पड़ेगा ? तब देशके लिए प्राण देनेको लोगोंमें रेल पेल मच जायगी ?

विनय—या तो मुझे संसारके और दस आदमियोंकी तरह बहते हुए चले जाने दो, और या मुझे भारतकी वह मूर्ति दिखाओ।

गोरा—उसके लिए पहले साधना करो। अगर मनमें विश्वास है तो तुम उस कठोर साधनामें ही सुख पाओगे। हमारे जो शौक्तीन पेट्रियट (देश-भक्त) हैं, उनमें सच्चा विश्वास बिल्कुल नहीं है, इसीसे वे अपने और पराए निकट जोरके साथ कुछ भी दावा नहीं कर सकते। स्वयं कुबेर अगर उन्हें खुश करने या वरदान देने आवें, तो जान पड़ता है, शायद वे लाट साहबके चपरासीकी गिलटकी चमचमाती हुई चपराससे अधिक कुछ मांगनेका साहस ही नहीं कर सकेगे ! उनमें आत्मविश्वास नहीं है, इसीसे भरोसा भी नहीं है।

विनय—देखो गोरा सबकी प्रकृति एक सी नहीं है। तुमने अपना विश्वास अपने हृदयके भीतर ही पाया है और तुम अपने आश्रयको अपने ही जोरसे खड़ा कर रख सके हो, इसीसे दूसरेकी हालतको ठीक समझ नहीं सकते। मैं कहता हूँ कि तुम मुझको चाहे जिस किसी एक काममें लगा दो दिन रात मुझसे काम कराओ, नहीं तो जब तक मैं तुम्हारे पास रहता हूँ तब तक जान पड़ता है, जैसे कोई चीज़ मैंने पाई उसके बाद तुमसे अलग दूर जाने पर ऐसी कोई चीज़ मुझे अपने हाथके पास नहीं मिलती जिसे पकड़ लर मैं रह सकूँ।

गोरा - कामकी बात कहते हो ? इस समय हम लोगोंका एक मात्र कार्य यही है कि जो कुछ स्वदेशका है, उसीके प्रति संकोच और संशयसे रहित सम्पूर्ण श्रद्धा प्रकट करके देशके अविश्वासी लोगोंके मनमें हम उसी श्रद्धाका सञ्चार कर दें। देशके सम्बन्धमें लज्जा कर करके हमने अपने मनको दासताके विषसे दुर्बल कर डाला है; हममें से हर एक जब अपने

दृष्टान्तसे उसका प्रतिकार करेगा, तब उसके उपरान्त हम काम करनेके ठीक मैदानको पावेंगे। इस समय हम जो कोई काम करना चाहते हैं, वह केवल इतिहासकी स्कूलकी किताब पकड़ कर पराए कामकी नकल हो उठता है। उस झूठे काममें क्या कभी हम सत्यभावसे अपने संपूर्ण हृदय और मन को लगा सकेंगे उससे तो अपनेको केवल हीन ही बना देंगे।

इसी समय एक हुका हाथमें लिए महिम बाबूने मृदुमंद गति और आलस भावसे आकर उस कमरेमें प्रवेश किया। नित्य आफिससे लौट कर जल-पान का आवश्यक काम समाप्त करके एक पान मुंहमें दबा कर, पाँच छः पान बिलहरेमें रख कर, सड़कके किनारे बैठकर तमाखू पीना ही महिमका इस समयका काम है। और कुछ देरके बाद ही एक एक करके महल्लेके इष्ट मित्र महिमके पास आकर जुट जायेंगे, तब सदर फाटकके पास की बैठकमें एकसी महफिल लग जायगी।

महिमके कमरेमें दाखिल होते ही गोरा कुर्सी छोड़कर उठ खड़ा हुआ। महिम तमाखू धुवाँ खींचते खींचते बोला—भारत का उद्धार करनेमें लगे हो, मगर फिलहाल पहले भाईका तो उद्धार करो !

गोरा महिमके मुँहकी ओर तारुने लगा। महिमने कहा—हमारे आफिसमें जो नया बड़ा साहब (मैनेजर) आया है, उसका चेहरा बिल्कुल शिकारी कुत्तेके ऐसा है। वह बड़ा पाजी है ! बाबुओंको बेबून (एक प्रकार का बन्दर) कहता है। किसीके माँ बाप भी मर जायें तो भी वह छुट्टी नहीं देता, कहता है, सब झूठ है। किसी महीनेकी पूरी तनखाह किसी हिन्दुस्तानी बाबूको नसीब नहीं होती। ज़रा ज़रा सी बातके लिए जुर्माना कर करके लगभग आधी तनखाह काट लेता है ! अज़बबारमें उसकी शिकायतकी एक चिट्ठी छपी थी। चिट्ठीमें लेखकका नाम बनावटी था। उस सालेको विश्वास है कि वह मेरा ही काम है। उसका यह खयाल एकदम ग़लत भी नहीं है। सो अब मैं जो अपने नामसे उसका एक कड़ा प्रतिवाद लिखकर नहीं छपवाऊंगा तो वह मुझे वहाँ टिकने न देगा। तुम दोनों मित्र तो रह जाओ जो युनिवर्सिटी सागरको मथ

कर निकले हो। एक चिट्ठी तुम्हें ज़रा मन लगागर अच्छी तरह लिख देनी होगी। उसमें even handed justice, never failing generosity king courteousness इत्यादि इत्यादि की खूब भरमार कर देनी होगी।

गोरा चुप बैठा रहा। विनयने हँस कर कहा—दादा इतनी झूठी बातें एक साँसमें चला दोगे ?

महिमने कहा—सुना नहीं, “शठे शास्त्र्यं समाचरेत्” बहुत दिन उन लोगोंकी सङ्गतमें रहा हूँ; कुछ मुझसे छिपा नहीं है। वे लोग झूठका रङ्ग ऐसा जमा सकते हैं कि उसके लिए उनकी तारीफ़ करनी पड़ती है। दरकार होने पर वे झूठ बोलनेमें भी नहीं हिचकते। एक अगर झूठ बोलें तो सभी गोरे सियारोंकी तरह उसी सुगमें हुआ हुआ कर उठते हैं। हम लोगोंकी तरह एक आदमी दूसरेको झूठा साबित करके वाहवाही लूटना नहीं चाहता। यह निश्चय जानो कि अगर झूठ पकड़ लिया न जा सके, तो उन लोगों को प्रतारित करनेमें कुछ पाप नहीं है।

इतना कह कर महिम हँसने लगा। विनयसे भी हँसे बिना नहीं रहा गया। माहिमने कहा—तुमलोग उनलोगोंके मुँह पर सच्ची बात कहकर उन्हें अप्रतिभ करना चाहते हो ! भगवान् अगर तुम्हें ऐसी बुद्धि न देंगे तो फिर देशकी ऐसी दुर्दशा कैसे होगी ? तुम लोगोंको यह तो समझना चाहिए कि जिसके शरीरका जोर है, उसकी चोरीको बहादुरी करके दिखाने की चेष्टा करो तो वह लज्जासे सिर नहीं झुका लेता। वह उल्टे अपने सेंध लगानेके औज़ारको उठाकर बड़े भारी साधु हीकी तरह हुमक कर मारने दौड़ता है। बोलो सच है कि नहीं ?

विनय—सच तो है ही।

महिम—उसकी अपेक्षा झूठी बातोंकी घानीसे मुझका जो तेल निकलता है, वही एक आध छुट्टाक लेकर उसके पैरोंमें मालिश करके अगर कहें कि “साधुजी परमहंस बाबा दया करके ज़रा अपनी झोली झाड़ दो, उसकी धूल पाकर भी मैं कृतार्थ हो जाऊंगा,” तो शायद तुम्हारे घरके

मालका कमसे कम कुछ हिस्सा मुमकिन है कि तुम्हारे घरमें लौट आवे । उधर ऐसा करनेसे शांति भङ्गका भी खटक नहीं रहता । अगर विचार कर देखो, तो इसीको असल पेट्रियाटिज़्म (देशभक्ति) कहते हैं । किन्तु मेरे भैया साहब (गोरा) चिढ़ते हैं । यह जबसे सनातन हिन्दूधर्मको मानने लगे हैं, तबसे मुझे दादा (बड़ा भाई) कह कर बहुत मानते हैं । इनके सामने आज मैंने जो कुछ कहा है, वह ठोक बड़े भाईकी सी बात नहीं हुई । लेकिन करूँ क्या, भैया, झूठ बातके सम्बन्धमें भी तो सत्य ही बोलना होगा ।—विनय, तो फिर वह लेख मुझे चाहिए । अच्छा ठहरो, मेरे पास उसके नोट लिखे हुए हैं, उन्हें ले आऊँ ।

यह कह कर तमाखू पीते पीते महिम वहाँसे चले गये ।

गोराने विनयसे कहा—विनय, तुम दादाके कमरेमें जाकर वहाँ उन्हें थोड़ा रोक रखो, मैं तब तक यह लिख डालूँ ।

“अजी सुनते हो ? डरो नहीं, मैं तुम्हारी पूजा की कोठरी में नहीं आऊंगी । सन्या पूजा समाप्त करके ज़रा मेरी दालान में आना तुमसे कुछ कहना सुनना है । मैं जानती हूँ कि दो नए सन्यासी आये हुए हैं, इसी लिए कुछ समय तक तुम्हारे दर्शन दुर्लभ रहेंगे, इसीसे तुमसे यह कहने के लिए आना पड़ा । भूलना नहीं, ज़रा हो जाना ।” यह कह कर आनन्दमयी गिरस्ती के काम काज करने चली गई ।

कृष्णदयाल बाबू का रङ्ग साँवला है । दोहरी हड्डी का शरीर है । माथा विशेष लम्बा नहीं है । चेहरे में उनके बड़े बड़े दोनों नेत्र ही एक ऐसी चीज़ हैं, जिसपर विशेष रूपसे दृष्टि पड़ती है । बाकी सब चेहरा दाढ़ी मूछों के खिचड़ी वालों से ढका हुआ है । यह सदा गेरुवा रङ्गा हुआ रेशमी वस्त्र धारण करते हैं । हाथ में पीतल का कमंडल और पैरों में खड़ाऊँ रहती हैं । सिर पर सामने के हिस्से के बाल गिर गए हैं—बाकी हिस्से के बड़े बड़े बालों को गाँठ लगाकर एक जटाजूट सा बना रक्खा है ।

एक ज़माना था, जब यह पछाँह में रहते थे, और इन्होंने पट्टन के गोरों की मोहबत में मद्य-माँस का सेवन करके सब एकाकार कर दिया था । उस समय यह देश के पुजारी, पुरोहित, पंडे, वैष्णव और सन्यासी श्रेणी के लोगों के गले पड़कर उनका अपमान करने को परम पौरुष (मर्दानगी) समझते थे । किन्तु इस समय हिन्दू धर्म की ऐसी कोई चीज़ नहीं है, जिसे यह न मानते हों । समय का फेर इसी को कहते हैं । इस समय यह हाल है कि किसी नये सन्यासी को देखते ही उसके पास कोई नवीन साधना का मार्ग सीखने बैठ जाते हैं । मुक्तिके निगूढ़ मार्ग और योग की निगूढ़

प्रणालीके लिए इन्हें बेहद लोभ है। कृष्णदयाल बाबू तांत्रिक साधनाका अभ्यास करनेके इरादेसे कुछ दिनसे उसके सम्बन्धका उपदेश ले रहे थे, इसी समय एक बौद्ध पुरोहितका पता मिल गया, और इस समय उसी ओर चलनेके लिए इनका मन चंचल हो उठा है।

इनकी पहली स्त्री एक लड़का पैदा होनेके बाद मर गई थी। उस समय इनकी अवस्था तेईस वर्षकी थी। लड़केकी माताकी मृत्युका कारण मानकर कृष्णदयालने क्रोधके मारे उसे अपनी सुसरालमें छोड़ दिया, और आप प्रबल वैराग्यकी भोंकमें एरुदम पछाँह चले गये। परन्तु छः महीनेमें ही वैराग्यका नशा उतर गया। उन्होंने काशोबासी सार्वभौम महाशयकी पोती पितृहीना आनन्दमयीसे ब्याह कर लिया।

पछाँहमें कृष्णदयालने नौकरी खोज ली, और अनेक उपायोंसे अपने मालिकोंको प्रसन्न भी कर लिया। इसी बीचमें सार्वभौमकी मृत्यु होगई। और कोई आभिभावक न होनेके कारण स्त्रीको अपने पास ही लाकर रखना पड़ा।

उधर इसी अवसरमें सिपाही-विद्रोह होगया। कृष्णदयालने कौशलसे दो-एक ऊँचे अंगरेजोंकी जान बचाई, जिसके बदलेमें इन्हें यश और जागीर भी मिली। शहरके कुछ दिन बाद ही इन्होंने नौकरी छोड़दी और बच्चे गोराको लेकर कुछ दिन काशीमें रहे। गोरा जब पाँच सालका हुआ, तब कृष्णदयाल काशीसे कलकत्ते चले आये। बड़े लड़के महिमको भी उसकी ननिहालसे बुला लिया। महिमको पाल पोसकर पढ़ा लिखा कर आदमी बनाया। इस समय महिम अपने पिताके मिलने वाले मुरजियोंके अनुग्रहसे सरकारी खजानेमें नौकर है, और खूब तेजोंके साथ अपना काम कर रहा है।

गोरा लड़कपनसे ही अपने मुहल्लेके और स्कूलके लड़कोंकी सरदारी करता था। मास्टर और पण्डितके जीवनको असह्य बना देना ही उसका प्रधान काम और खेल था। वह उनके नाकमें दम किए रहता था। कुछ सयाना होते ही वह छात्रोंके क्लबमें “स्वाधीनताहीन होकर कान जीना

चाहता है' और 'बीस करोड़ मनुष्य जहाँ रहें, वहाँ क्या नहीं किया जा सकता' इत्यादि भावोंकी कविताएँ सुनाकर, अंगरेजीमें गर्मागरम लेकचर देकर छुद्र विद्रोहियोंका दलपति (सरदार) हो उठा। अंतमें जब एक समय छात्रसभा स्वरूप अंडेके खोलको तोड़कर गोराने सयानोंकी सभामें कल-काकली (बच्चोंका शब्द) सुनाना शुरू किया, तब कृष्ण-दयाल बाबूको वह एक अत्यन्त कौतुकका विषय ही जान पड़ा।

देखते देखते बाहरके लोगोंमें गोराकी प्रतिष्ठा बढ़ने लगी मगर घरमें उसे कोई कुछ नहीं गिनता था। महिम उस समय नौकरी करता था। उसने गोराको कभी "पेट्रियटू दादा" और कभी "हरिशमुखजी दि सेकिंड" कह कर व्यंग्यके द्वारा दबानेकी चेष्टाकी थी। उस समय अक्सर बीच-बीचमें दादाके साथ गोराकी हाथापाई हो जानेकी नौबत आ जाती थी। आनन्दमयी गोराके अंगरेजी-वद्वेषको देखकर व त चिन्तित होती थी—उसे अनेक प्रकारसे शांत करनेकी चेष्टा करती थीं, लेकिन कुछ फल न होता था। गोरा रास्तेमें, बाज़ारमें कहीं कोई मौका पाकर किसी अंगरेज़के साथ मारपीट कर सकता तो अपने जीवनको धन्य समझता।

इधर बाबू केशवचन्द्र सेनके व्याख्यानों पर रीझ कर गोरा ब्राह्म-समाजकी ओर विशेष रूपसे आवृष्ट हो गया। उधर कृष्णदयाल बाबू इसी समय बहुत ही अधिक आचारनिष्ठ हो उठे। यहाँ तक कि गोरा अगर उनके कमरेमें चला भी जाता था, तो वह व्यक्तिव्यस्त हो उठते थे। दो तीन कोठरी-कमरे लेकर उन्होंने अपनी जगह घरमें अलग कर ली। उस अपने स्वतंत्र आश्रमके द्वार पर एक बोर्ड लटका दिया, जिसपर "साधनाश्रम" लिखा हुआ था।

बापकी इन हरकतोंसे गोराका मन विद्रोही हो उठा। उसने कहा—मैं यह सब मूढ़ता सह नहीं सकता—यह मेरे लिए चत्तशूल है। इसी उपलक्षमें गोराने अपने बापके साथ सब तरहका सम्बन्ध तोड़ कर एकदम घरसे बाहर हो जानेका उपक्रम किया था। आनन्दमयीने किसी तरह समझा बुझा कर बहला कर उसे रोक रक्खा।

बापके पास जिन ब्राह्मण पण्डितोंका आना-जाना होने लगा, उनके साथ मौका मिलते ही गोरा बहस करने लगता था। उसे बहस नहीं, बल्कि घूसेबाजीके लगभग कहना ही ठीक होगा। उन ब्राह्मण पंडितोंमें अधिकांश ऐसे थे, जिनमें पांडित्यकी मात्रा तो अत्यन्त साधारण ही थी, मगर धनका लोभ अपरिमित था। वे बहसमें गोरासे पेश नहीं पाते थे, और इसी लिए उससे वैसे ही डरते थे जैसे कोई बाघसे डरे। उनमें केवल हरिचन्द्र विद्यावागीश ही ऐसे थे, जिनके ऊपर गोराके मनमें श्रद्धाका भाव उत्पन्न हुआ।

वृष्णदयालने विद्यावागीश जी को वेदांत चर्चा करनेके लिए नियुक्त किया था। पहले ही इनके साथ उद्गतभावसे वाग्बुद्ध करनेके लिए जाकर गोराने देखा, उनसे उस तरह युद्ध नहीं किया जा सकता। वह केवल पंडित ही नहीं थे, उनके मतकी उदारता भी अत्यन्त अद्भुत थी। गोरा इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता था कि केवल संस्कृत पढ़ कर ऐसी तीक्ष्ण और प्रशस्त बुद्धि हो सकती है। विद्यावागीशके चरित्रमें क्षमा और शान्तिसे पूर्ण ऐसा एक अविचलित धैर्य और गम्भीरता थी कि उनके निकट अपनेको सम्मत शान्त न बनाना गोराके लिए असम्भव था। गोराने हरिचन्द्रके पास वेदान्त पढ़ना शुरू कर दिया। गोरा किसी कामको अधूरा नहीं करता था, इसी कारण वह दर्शनशास्त्रकी तह तक पहुँचनेके लिए उसकी आलोचनामें एकदम डूब गया।

दैवसंयोगसे इसी समय एक अंगरेज पादरीने किसी समाचार पत्रमें हिन्दू शास्त्र और हिन्दू समाज पर आक्रमण करके देशके आदमियोंको तर्क युद्धके लिए ललकारा। गोरा तो एकदम आगबबूला हो उठा। यद्यपि वह खुद अवकाश पाते ही शास्त्र और लोकाचारकी निन्दा करके विरुद्ध मतके आदमीको जितनी तरहसे हो सकता था, पीड़ा पहुँचाता था, तथापि हिन्दू समाजके प्रति एक विदशी आदमीकी अवज्ञा उसके जिसे बर्छी सी लगी।

गोराने समाचार पत्रमें लेख लिख कर तर्क युद्ध छेड़ दिया। दूसरे

पढ़ने हिन्दू समाज पर जितने दोष लगाए थे, उनमेंसे एक भी या ज़रा सा भी दोष गोराने स्वीकार नहीं किया। दोनों ओरसे अनेक उत्तर प्रत्युत्तर छपे। उसके बाद संपादकने कह दिया—बस, अब हम इस की चिट्ठी पत्री नहीं छापेंगे।

किन्तु गोराको उस समय धुन लग गई थी। अपने “हिन्दू धर्म” नाम देकर अंगरेज़ी में एक किताब लिखना शुरू कर दिया। उसमें अपनी शक्ति भर सब युक्तियाँ देकर और सब शास्त्रोंको मथ कर वह हिन्दू धर्म और हिन्दू समाजकी अनन्दनीय श्रेष्ठताका प्रमाण समग्रह करने लगा।

इस तरह पादरीके साथ झगड़ा कर गोराने धीरे धीरे अपनी बकालतके निकट आप ही हार मान ली। गोराने कहा—हम अपने देशको विदेशीकी अदालतमें अभियुक्तकी तरह खड़ा करके विदेशीके आईनके अनुसार उसका विचार करने ही न देंगे। काट छांट करके चिन्तायतके आदर्शके साथ उसका मेल करके हम लज्जित न होंगे और गौरवका अनुभव भी नहीं करेंगे। जिस देशमें जन्म लिया है, उस देशके आचार, विश्वास, शास्त्र और समाजके लिए अपने और दूसरों के निकट ज़रा भी संकुचित होकर नहीं रहूँगा। देश का जो कुछ, अच्छा या बुरा है, वह सभी बल और गर्वके साथ शिरोधार्य करके देशको और अपनेको अपमानसे बचाऊँगा।

यह कह कर गोरा नित्य गंगा स्नान और संध्या पूजा करने लगा, शिखा रखाई, खाने पीने और छुआ छूतके बारेमें विचार करके चलने लगा। अबसे वह नित्य सबेरे उठ कर माता पिताके पैर छूता है, जिस महिमको वह बात बातमें अंगरेज़ी भाषामें “कैड” और “स्लैब” कहता था, उसे देखकर उठ खड़ा होता है, प्रणाम करता है। महिम इस सहसा उत्पन्न होने वाली भक्तिके लिए उसे जो मुँहमें आता है वही कहता है, किन्तु गोरा उसका कुछ भी जवाब नहीं देता।

गोराने अपने उपदेश और आचरणसे देशके लोगोंके एक दलको

जैसे जगा दिया वे जैसे एक प्रकार की खींचतानके हाथसे छुटकारा पागए। वे दम लेकर कह उठे—हम भले हैं या बुरे, सभ्य हैं या असभ्य, इसके लिए किसीके आगे जवाबदेही करना नहीं चाहते। हम सोलहो आने केवल स्वयं अनुभव करना चाहते हैं कि हम हम ही हैं !

किन्तु कृष्णदयाल बाबू गोरामें इस नवीन परिवर्तनसे खुश हुए नहीं जान पड़े यहाँ तक कि उन्होंने एक दिन गोरामें बुला कर कहा—“देखो भैया, हिन्दूशास्त्र बहुत ही गंभीर पदार्थ है। ऋषि लोग जिस धर्मकी स्थापना कर गये हैं उसकी तह तक पहुँचना, उसे पूर्णरूपसे जानना, हर एकका काम नहीं है। मेरी समझ में बिना समझे धर्मको लेकर आंदोलन न करना ही अच्छा है। तुम अभी लड़के हो, अब तक अंगरेज़ी ही पढ़ते रहे हो तुम जो ब्रह्मसमाजकी तरफ झुके थे, सो तुमने ठीक अपने अधिकार के माफिक ही काम किया था। इसी कारण उसके लिए मैं तुम पर नाराज़ नहीं हुआ था, बल्कि खुश ही हुआ था। किन्तु इस समय तुम जिस राह पर चले हो, वह मुझे तुम्हारे लिए ठीक और अच्छा नहीं जान पड़ता। यह मार्ग ही तुम्हारा नहीं है।”

गोरामें कहा—आप कहते क्या हैं बाबू जी ? मैं हिन्दू हूँ। हिन्दू धर्मके गूढ़ मर्मको आज न समझूंगा तो कल समझूंगा। और, अगर कभी न समझूँ तो भी चलना तो इसी राहसे होगा। हिन्दू समाजके साथ पूर्व जन्मके सम्बन्धको तोड़ नहीं सका, इसीसे तो इस जन्ममें ब्राह्मणके घर पैदा हुआ हूँ। इसी तरह अनेक जन्मोंमें हिन्दू धर्म और हिन्दू समाजके भीतर होकर ही अंतको इसकी चरम सीमामें उत्तीर्ण होऊंगा। अगर कभी भूलसे अन्य मार्गकी ओर ज़रा झुक गया, तो फिर दुगने बेगसे इधर लौटना ही होगा।

कृष्णदयालने केवल सिर हिलाते हुए कहा—लेकिन, भैया हिन्दू कह देनेसे ही हिन्दू नहीं हुआ जा सकता। मुसलमान होना सहज है, क्रिस्तान हर कोई हो सकता है—लेकिन हिन्दू ! बस भैया ! यह बड़ी कठिन बात है !

गोरा—सो तो ठीक है, किन्तु मैं जब हिन्दू होकर हिन्दूके घर पैदा हुआ हूँ तब तो फाटक पार हो आया हूँ, अब ठीक तौर पर साधना करता रहूँगा तो थोड़ा आगे बढ़ सकूँगा।

कृष्णदयाल—भैया बहसके द्वारा मैं तुमको ठीक ठीक नहीं समझा सकूँगा। मगर हाँ, तुम जो कहते हो वह भी सत्य है। जिसका जो कर्मफल है, निदिष्ट धर्म है, उसे एक दिन घूम फिर कर उसी धर्मके मार्गमें ही आना होगा—कोई रोक नहीं सकेगा। भगवान् की इच्छा ! हम क्या कर सकते हैं, हम तो केवल उपलब्ध मात्र हैं !

कर्मफल और भगवान् की इच्छा, सोऽहंवाद और भक्ति तत्त्व सभी कुछ कृष्णदयाल बाबू समान भावसे ग्रहण करते हैं—इसका अनुभव भी नहीं करते कि इनमें परस्पर किसी प्रकारके समन्वय या सामंजस्यका प्रयोजन है।

आज पूजा पाठ आदि नित्य कर्म और स्नान-भोजनसे छुट्टी पाकर कृष्णदयाल बहुत दिनोंके बाद आनन्दमयीके कमरेके फर्श पर अपने कम्बल का आसन बिछा कर वेफिक्रीसे जैसे अलग होकर बैठे।

आनन्दमयीने कहा—अजी सुनते हो, तुम तो तपस्या करते हो, घरकी बात कुछ सोचते नहीं, किन्तु मैं गोराके लिए सदा डरते डरते अधमरी हो रही हूँ।

कृष्ण०—क्यों, भय काहे का है ?

आनन्द०—सो तो मैं ठीक बता नहीं सकती। मगर मुझे जान पड़ता है गोराने आजकल जो हिन्दू आचारसे चलना शुरू किया है, वह उसके लिए अभी अच्छा न होगा, उसे नहीं फलेगा। मेरा मन कहता है कि इस ढङ्गसे चलते चलते अन्तमें कोई एक विपत्ति अवश्य उपस्थित होगी। मैंने तो तुमसे तभी कहा था कि उसका जनेऊ न करो मगर उन दिनों तो तुम हिन्दू धर्मको कुछ भी मानते नहीं थे। तुमने कहा—गलेमें एक सूत पहना देने से किसी का कुछ बग़ता विगड़ता नहीं। लेकिन केवल सूत ही तो नहीं है—अब उसे किस तरह संभालोगे, किस तरह रोकोगे ?

कृष्ण०—खूब ! सब दोष शायद मेरा ही है। शुरूमें तो तुमने ही ग़लतीकी। तुमने उसे किसी तरह छोड़ना ही नहीं चाहा। उन दिनोंमें मेरा भी गंवारू ढङ्ग था—धर्म कर्म का कुछ ज्ञान तो था ही नहीं। आजकलका ज़माना होता, तो क्या मैं ऐसा काम कर सकता !

आनन्द०—लेकिन चाहे जो कहो, मैं यह किसी तरह नहीं मान सकती कि मैंने ऐसा करके कुछ अधर्म किया। मुझें तो याद ही होगा लड़का होनेके लिए मैंने क्या नहीं किया। जिसने जो बताया, वही

किया। कितने ही तावीज गंधे मंत्र मानता करके थक गई। एक दिन सपनेमें देखा, जैसे एक डलिया भर बेलेके फूल लाकर ठाकुरजी की पूजा करने बैठी हूँ—फिर देखा तो डलियामें फूल नहीं हैं, फूलोंकी जगह फूल सा गोरा एक छोटा सा लड़का था। आहा, वह क्या देखा था, क्या बताऊँ—मेरी दोनों आँखोंसे आनन्दके आँसू बहने लगे। बस, चटपट उस लड़केको गोदमें उठा लेनेका इरादा किया कि आँखें खुल गईं। उसके बाद दस दिन भी नहीं बीतने पाये कि गोराको मैंने पाया। वह तो मेरे ठाकुरजी का दान है। वह क्या और किसीका है कि मैं किसीको फेर देती ! दूसरे जन्ममें उसे गर्भमें धारण करके शायद मैंने बहुत कष्ट पाया था, इसीसे इस जन्ममें वह मुझे माँ कहने आया है। तुम्हीं सोच कर देखो वह कहाँसे किस तरह आया था ! उन दिनों चारो ओर मार काट खून खराबी मची हुई थी हम लोग अपने ही प्राणोंके लिए भयसे अधमरे हो रहे थे कि एक दिन आधी रातको एक गर्भवती मेम आकर हमारे घरमें छिप रही। तुम तो मारे भयके उसे घरमें ही रखना न चाहते थे—मैंने तुमसे छिपाकर उस बेचारीको एक एकान्त कोठरी में रख दिया। उसी रातको उसके लड़का पैदा हुआ और वह मर भी गई। उस बे माँ बापके लड़केको अगर मैं न पालती तो क्या वह जिन्दा रह सकता ! तुम्हारा क्या ! तुमने तो उसे पादरीके हाथमें सौंप देना चाहा था। क्यों पादरीको क्यों देने जाँय ? पादरी क्या उसका मा-बाप है, या पादरीने उसके प्राण बचाए हैं ? इस तरह जो मैंने लड़केको पाया, तो क्या वह गर्भमें रखकर पानेसे कम है ! तुम चाहे जो कहो इस लड़केका जिन्होंने मुझे दिया है, वही खुद अगर न लेलें तो मैं अपने प्राण रहते यह लड़का और किसीको नहीं लेने दूंगी।

तृष्ण०—सो तो जानता हूँ। तुम अपने गोराको लेकर रहो। मैंने तो उसमें कभी कोई रुकावट नहीं डाली। समाजमें अपना लड़का कहकर उसका परिचय देने पर जनेऊ किए बिना बात नहीं बनती थी, इसीसे जनेऊ करना ही पड़ा—उसके लिए तो लाचारी थी। अब केवल दो बातें

सोचनेकी हैं। न्यायसे मेरी सारी जमा और जायदाद महिमको ही मिलनी चाहिए—वही ।

आनन्द—तुम्हारी जमा और जायदादका हिस्सा कौन लेना चाहता है। तुमने जो रुपए जमा किए हैं सो सब तुम महिमको दे जाना—गोरा उसमेंसे एक पैसा भी नहीं लेगा। वह मर्द बचा है, लिखा पढ़ा है, खुद मेहनत करके कमा खायेगा—वह पराए धनमें हिस्सा लगाने क्यों जायेगा। वह जीता रहे, यही मेरे लिए बहुत है—मुझे और किसी संपत्ति की दरकार नहीं है।

कृष्ण० ना मैं उसे कुछ भी न दूँ, यह न होगा। जागीर उसी को दे दूंगा। किसी समय उसका मुनाफ़ा एक हजार रुपए साल तक हो सकेगा। अब चिन्ताकी बात सिर्फ़ यह है कि उसके व्याहका क्या होगा। पहले जो कुछ मैंने किया सो किया, लेकिन अब तो हिन्दू मतके अनुसार ब्राह्मणके घर उसका व्याह नहीं कर सकूंगा—इसमें चाहे क्रोध करो या चाहे जो करो।

आनन्द०—हाय हाय ! तुम समझते हो कि मैं तुम्हारी तरह पृथ्वी भर पर गङ्गाजल और गोबरसे चौका नहीं लगाती फिरती, इस लिए मुझे धर्मका ज्ञान भी नहीं है। ब्राह्मणके घरमें उसका व्याह क्यों करूँगी। और नाराज ही क्यों हूँगी।

कृष्ण०—कहती क्या हो ! तुम तो ब्राह्मणकी लड़की हो।

आनन्द०—ब्राह्मणकी लड़की हूँ तो क्या हुआ ! ब्राह्मणके आचारका पालन करना तो मैंने छोड़ ही दिया है। महिमके व्याहके अवसर पर भाई बिरादरी और नातेदार लोगोंने मेरी क्रिस्तानी चाल बता कर काम बिगाड़ना चाहा था, इसीसे अपनी खुशीसे मैं अलग हो गई, कुछ नहीं कहा। दुनिया भरके लोग मुझे क्रिस्तान बताते हैं, और भी न जाने कितनी कौन कौन सी बातें कहते हैं। मैं उनकी सब बातें माने लेती हूँ। मेरा कहना यह है कि क्रिस्तान क्या मनुष्य नहीं हैं ! तुम हिन्दू ही अगर इतनी ऊँची जातिके हो, और भगवान्‌के इतने आदरकी चीज़ हो, तो फिर

वही भगवान कभी पठानोंके, कभी मुगलोंके और कभी क्रिस्तानोंके पैरोंमें इस तरह तुम्हारा सिर क्यों झुका दे रहे हैं ?

कृष्ण०—ये सब बड़ी और बहुत बातें हैं, तुम स्त्रीकी जाति उन सब बातोंको नहीं समझ सकोगी । किन्तु हमारा समाज एक है, यह तो समझती हो, उसे तो मान कर चलना ही तुमको उचित है ।

आनन्द० मुझे यह सब समझानेसे कुछ मतलब नहीं है । मैं यही समझती हूँ कि जब मैंने गोराको अपना लड़का मान कर पालापोसा है, तब आचार-विचारका आडंबर करनेसे, समाज रद्द या न रहे, धर्म नहीं रहेगा मैंने केवल उसी धर्मके भयसे किसी दिन कुछ छिपाया नहीं । मैं कुछ भी नहीं मानती, यह बात सबको जानने देती हूँ, और सबकी घृणा बटोर कर चुपचाप पड़ी रहती हूँ । मैंने केवल एक ही बात छिपाई है और उसके लिए भयके मारे अधमरी हो गई हूँ कि ठाकुर जी न जाने कब क्या करें देखो मैं सोचती हूँ गोरासे सब हाल खुलासा कह दूँ, उसके बाद जो भाग्यमें बदा होगा, वही होगा ।

कृष्णदयाल घबराकर कह उठे—ना ना, मेरी जिन्दगीमें किसी तरह यह नहीं हो सकता । गोराको तो तुम जानती ही हो । नहीं कहा जा सकता कि वह यह बात सुनकर क्या कर बैठेगा । उसके बाद समाजमें एक हल चल मच जायगी । सिर्फ इतना ही न होगा, उधर गवर्नमेंट यह खबर पाकर क्या करेगी सो भी नहीं कहा जा सकता । यद्यपि गोराका बाप लड़ाईमें मारा गया है, और यह भी मैं जानता हूँ कि उसकी माँ भी मर गई है, किन्तु सब हंगामा खतम हो जाने पर हमें मजिस्ट्रेटके यहाँ इसकी खबर देना उचित था । इस समय अगर इस बातको लेकर कुछ गड़बड़ उठ खड़ी हुई तो मेरा साधन भजन सब मिट्टीमें मिल जायगा, और और भी क्या आक्रुत सिर पर आवेगी सो कुछ कहा नहीं जा सकता ।

आनन्दमयीने कुछ उत्तर नहीं दिया, चुप चाप बैठी रहीं । कुछ देरके बाद कृष्णदयालने कहा—मैंने गोराके व्याहृके बारेमें मन ही मन एक

उपाय सोचा है। परेश भट्टाचार्य मेरे साथ ही पढ़ते थे। स्कूल इन्स्पेक्टरों के कामसे पेंशन लेकर वह इस समय कलकत्ते में ही आकर रहे हैं। वह कट्टर ब्रह्म समाजी हैं। सुना है उनके यहां कई लड़कियाँ भी हैं। गोराको उनके घरमें आकर आने जाने दिया जाय, तो वहां आते जाते संभव है कि उनकी कोई लड़की गोराको पसंद आ जाय। उसके बाद जैसी ईश्वरकी इच्छा होगी।

आनन्द०—कइते क्या हो ! गोरा एक ब्राह्म के घर आवे जायगा ? उसका अब वह समय नहीं है। अब वह कट्टर हिन्दू है—ब्राह्मोंसे उसे घोर घृणा है।

बात पूरी भी नहीं होने थी कि खुद गोरा अपने मेघ गर्जन सदृश स्वरसे “मां” कह कर वहां आ गया। कृष्णदयालको वहां बैठे देख कर उसे कुछ आश्चर्य हुआ। आनन्दययी चटपट उठकर गोराके पास गईं और दोनों आंखोंसे स्नेहकी वर्षा करती हुई बोलीं—क्यों बैठा क्या चाहिए ?

ना, कोई खास बात नहीं है, इस समय रहने दो !—कहकर गोराने लौट जानेका विचार किया।

कृष्णदयालने कहा—जरा बैठ जाओ, तुमसे एक बात कहनी है। मेरे एक ब्रह्म मित्र अभी कलकत्ते आये हैं। वह हेदोतला मुहल्लेमें रहते हैं।

गोरा—परेश बाबू तो नहीं ?

कृष्ण०—तुमने उन्हें कैसे जाना ?

गोरा—विनय उनके घरके पास ही रहता है। उसी से मैंने उनका हाल सुना है।

कृष्ण०—मेरी इच्छा है कि तुम उनसे मिलकर उनकी खैर खबर ले आओ।

गोराने—अपने मनमें जरा सोचा उसके बाद एकाएक कह उठा—
ब्रह्मा मैं कल ही जाऊँगा ?

आनन्दमयीको इससे कुछ आश्चर्य हुआ ?

गोराने जरा सोचकर फिर कहा—ना कल तो मेरा जाना न हो सकेगा ?

कृष्ण—क्यों ?

गोरा—कल मुझे त्रिवेणी जाना है।

कृष्णदयालन विस्मित होकर कहा—त्रिवेणी ?

गोरा—जी हाँ कल सूर्यभ्रमणका नहान है।

आनन्द०—तेरी तो अजब बातें हैं गोरा। स्नान करना चाहता है तो कलकत्ते की गङ्गा है। त्रिवेणीके बिना तेरा स्नान ही न होगा ? तू तो देश भरके आदमियोंसे बड़ा जाता है।

गोरा इसका कुछ उत्तर न देकर चला गया।

गोराने जो त्रिवेणीमें स्नान करनेका विचार किया उसका कारण यही था कि वहाँ अनेक तीर्थ यात्री एकत्र होंगे गोरा जहाँ जरा भी मौका पाता है, वहीं वह सब संकोच और पूर्व संस्कारको बलपूर्वक त्याग कर देशके सर्वसाधारण लोगोंके साथ समान क्षेत्रमें खड़े होकर जीसे कहना चाहता है कि “मैं तुम लोगोंका हूँ और तम लोग मेरे हो !”

सबेरे उठकर विनयने देखा प्रातःकालका प्रकाश दुधमुँहे बच्चे की हँसीकी तरह निर्मल होकर खिल उठा है ! दो एक सफेद बादल बिलकुल ही बिना प्रयोजनके आकाशमें ध्वर उधर उड़ रहे हैं ।

बरामदेमें खड़ा हो वर और एक निर्मल प्रभातके स्मरणसे जिस समय वह पुलकित हो रहा था इसी समय उसे देख पड़ा परेश बाबू एक हाथ में लाठी और दूसरे हाथमें सतीशका हाथ पकड़े सड़क पर धीरे धीरे चले जा रहे हैं । सतीशने जैसे ही बरामदेमें विनयको देख पाया वैसेही खुशीसे ताली बजाकर विनयका नाम लेकर चिल्ला उठा । परेश बाबूने भी सिर उठा कर देखा बरामदेमें विनय खड़ा हुआ था विनय चटपट ऊपरसे नीचे उतरा वैसे ही सतीशको लिए हुए परेशने भी उसके द्वार में प्रवेश किया ।

सतीशने विनयका हाथ पकड़ कर कहा—विनय बाबू आपने उस दिन हमारे घर आनेके लिए कहा था—मगर आये नहीं ?

स्नेहपूर्वक सतीशकी पीठ पर हाथ रख कर विनय हँसने लगा । परेश बाबू सावधानीके साथ अपनी लाठी को टेबिलके सहारों खड़ा करके कुर्सी पर बैठ गए और कहने लगे—उस दिन आप न होते तो हम लोगोंके लिए बड़ी मुश्किल होती । आपने हमारा बड़ा उपकार किया ।

विनयने व्यस्त हो कर कहा—आप कहते क्या हैं ! मैंने किया ही क्या ?

सतीश अचानक उससे पूछ बैठा—विनय बाबू आपके कुत्ता नहीं है ?

विनयने हँसकर कहा—कुत्ता ? ना कुत्ता नहीं है ।

सतीशने फिर पूछा - क्यों, आप कुत्ता क्यों नहीं रखते ?

विनयने कहा—कुत्तेके पालनेका कभी खयाल नहीं आया ।

परेशने कहा— सुना उस दिन सतीश आपको यहाँ आया था। जान पड़ता है आपको बहुत परेशान कर गया है ? यह इतना बकता है कि इसकी दीदीने इसे बवितयार खिलजीका टाइटिल दे रक्खा है।

विनयने कहा— मैं भी खूब बक सकता हूँ इसीसे हम दोनोंमें खूब हेल मेल हो गया है। क्यों सतीश बाबू ?

सतीशने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया; किन्तु पीछे कहीं उसके नवीन नामके कारण विनयके निकट उसका गौरव घट न जाय, इसी लिए वह व्यस्त हो उठा। वह कहने लगा—खूब तो है, अच्छा तो है— बवितयार खिलजी नाम बुरा क्या है ! अच्छा विनय बाबू बवितयार खिलजीने तो लड़ाई लड़ी थी ? उसने तो बंगालको जीत लिया था ?

विनयने हँसकर कहा—पहले वह लड़ाई लड़ा करता था। लेकिन अब लड़ाईकी ज़रूरत नहीं पड़ती, इसलिए इस समय वह सिर्फ़ लेक्चर ही देता है और बंगालको जीत भी लेता है।

इसी तरह बहुत देर तक बात चीत होती रही। परेश बाबूने सबसे कम बातें कहीं—वह प्रसन्न शान्त मुखसे बीच बीचमें केवल हँस देते थे। दो-एक बातोंमें बोले भी, मगर बहुत थोड़ा। विदा होनेके समय कुर्सीसे उठ कर उन्होंने कहा—हमारे घर का नंबर अठत्तर है यहाँसे बराबर दाहने हाथकी तरफ़ जाकर—

सतीश बीच ही में बोल उठा—वह हमारा घर जानते हैं। उस दिन मेरे साथ हमारे दरवाजे तक गये थे।

इस बातसे लज्जित होनेका कोई प्रयोजन न था—किन्तु विनय मन ही-मन लज्जित हो उठा। जैसे उसकी कोई चोरी पकड़ ली गई।

वृद्धने कहा—तब तो आप हमारा घर जानते हैं। खैर फिर कभी अगर आपका...।

विनय—उसके लिए आपको कहना नहीं पड़ेगा—कलकत्ता जैसा शहर होनेके कारण ही अबतक हमारी आपकी जान पहचान नहीं हुई थी।

विनय सड़क तक परेशबाबू को पहुँचा आया। दरवाजे के पास वह कुछ देर तक खड़ा रहा। परेशबाबू लाठी टेकते हुए धीरे धीरे चले—और सतीश लगातार घाँटें करता हुआ उनके साथ साथ चला।

विनय अपने मनमें कहने लगा—परेशबाबू बाबू के समान ऐसा वृद्ध मैंने कोई नहीं देखा—देखते ही मनमें भक्तिका संचार होता है और पैर छूने को जी चाहता है ! और सतीश लड़का भी कैसा अच्छा और तेज भविष्यमें एक योग्य पुरुष होगा—जैसी बुद्धि है, वैसा ही भोलपन है।

वह वृद्ध और बालक, दोनों चाहे जितने भले हों, उतनी थोड़ी देर के परिचयसे उनके सम्बन्धमें इतनी भक्ति और स्नेहका उमड़ पड़ना साधारणतः कभी सम्भव न हो सकता। किन्तु विनयका मन ऐसी हालतमें था कि उसने अधिक परिचयकी अपेक्षा नहीं रखी।

उसके बाद विनय अपने मनमें सोचने लगा—परेश बाबू के घर जाना ही होगा। न जाना शिष्टाचार और भद्रता के विरुद्ध होगा।

किन्तु गोरा के मुख द्वारा उसके दिल का भारतवर्ष उससे कहने लगा कि वहाँ तुम्हारा आना-जाना नहीं हो सकता। खबरदार !

विनयने पग पग पर अपने दिल के भारतवर्षका निषेध माना है—अनेक समय मनमें दुबधा आने पर भी माना है ; किन्तु आज उसके मनमें एक प्रकार का विद्रोह दिखाई दिया। उसे जान पड़ने लगा, भारतवर्ष जैसे केवल निषेधकी ही मूर्ति है।

नौकरने आकर खबर दी, भोजन तैयार है—किन्तु विनयने अभी तक स्नान ही नहीं किया। बारह बज गए थे। अचानक विनयने ज़ोरसे सिर हिला कर कहा—मैं नहीं खाऊँगा। तुम लोग जाओ। यह कह कर छाता कंधे पर रख कर वह घरसे बाहर निकल गया।

सीधा गोरा के घर आकर पहुँचा। विनय जानता था कि अग्रहस्ट्रीटमें एक मकान किराए पर लेकर हिन्दू-हितैषी कार्यालय स्थापित हुआ है। नित्य दोपहरको गोरा उस कार्यालयमें जाकर बंगाल भरमें उसके दिल के लोग जहाँ-जहाँ हैं उन सबको सजग और तत्पर रखने के लिए अपने

हाथसे पत्र लिखता है वहीं उसके भक्त लोग उसके मुखसे उपदेश सुननेके लिए आते हैं, और उसके सहकारी होकर अपनेको धन्य मानते हैं ।

उस दिन भी गोरा उस समय उसी कार्यालयमें काम करने गया था । विनय एक दम जैसे दौड़ कर ही आनन्दमयीके कमरमें पहुँचा ! आनन्दमयी उस समय भोजन करने बैठी थीं और लछमिया उनके पास बैठी हुई पंखेसे हवा कर रही थी ।

आनन्दमयीने आश्चर्यमें आकर कहा — क्योंरे विनय, आज तुझे हुआ क्या है ?

विनय उनके सामने बैठ गया, और कहने लगा—मा बड़ी भूख लगी है, मुझे खानेको दो ।

आनन्दमयी व्यस्त हो उठी बोलतीं—तब तो तूने मुश्किलमें डाल दिया । रसोई बनानेवाला महाराज तो चला गया — तुमलोग फिर ।

विनयने कहा मैं क्या महाराजके हाथकी रसोई खाने आया हूँ ? महाराजके हाथकी रसोई खाना होता तो घरके महाराजने क्या दोष किया था ? मैं तुम्हारी थालीका प्रसाद खाऊँगा माँ । लछमिया ला एक गिलास पानी तो दे ?

लछमिया जैसे पानी ले आई वैसेही विनय एक साँममें घट घट उसे पी गया । तब आनन्दमयी ने और एक थाली मंगा और स्नहपूर्वक अपनी थाली का अन्न रख दिया । विनय जैसे बहुत दिनोंका भूखा था इस तरह बैठ कर खान लगा ।

आनन्दमयीके मनकी एक वेदना आज दूर होगई । उसके मुखकी प्रसन्नता देखकर विनयको छाती परका एक बाँझ जैसे उतर गया आनन्दमयी तर्कियेका गिलाफ बैठकर सीने लगतीं । विनय आनन्दमयीके पैरोंके पास ऊपर उठे हुए एक हाथ पर सिर रखकर लेट गया और संसारका और सब कुछ भूलकर ठीक पहलेके दिनोंकी तरह आनन्दपूर्वक बातें करने लगा ।

आनन्दमयीके घरसे निकल कर विनय रास्तेमें जैसे एकदम उड़ता हुआ चला जा रहा था; उसके पैर जसे जमीन पर ही नहीं पड़ते थे। उसका जी चाहने लगा कि मनकी जिस बातवो लेकर वह इन कई दिनों तक संकोच से पीड़ित हुआ है उसका आज फिर ऊंचा करके सबके आगे कह दे।

विनय जिस घड़ी ७८ नम्बरके घरके दरवाजेके पास पहुँचा ठीक उसी समय परेश बाबू भी दूसरी तरफ से आकर उपस्थित हुए।

“आओ आओ विनय बाबू मैं बहुत खुश हुआ।” यह कह कर परेश बाबू विनयको भीतर ले गए और सड़कके किनारे ही जो उनकी बैठक थी उसमें बिठलाया। एक छोटी टेबिल रखी थी उसके एक तरफ पीठदार बेंच और दूसरी तरफ काठ और बेंतकी दो कुर्सियाँ थी। दीवालमें एक तरफ ईसाका एक रंगोल चित्र और दूसरी तरफ केशवचंद सेनका फोटो लगा हुआ था। टेबिलके ऊपर दो चार दिनके अखबार तह किए हुए रखे थे। कोनेमें एक छोटी आलमारी थी जिसके ऊपर एक ग्लोब कपड़ेसे ढका हुआ था।

विनय बैठा। उसका हृदय चंचल हो उठा, जान पड़ने लगा, मानो उसकी पीठकी तरफके खुले हुए दरवाजेसे कोई बैठकके भीतर आकर प्रवेश कर रहा है।

परेश बाबूने कहा— सोमवारको सुचरिता मेरे एक मित्रकी लड़कीको पढ़ाने जाती है। वहाँ सतीशकी हमजोलीका एक लड़का है, इसीसे सतीश भी उसके साथ गया है। मैं उन्हें पहुँचाकर अभी लौटा आ रहा हूँ। और ज़रा देर होजाती तो फिर आपसे मुलाकात न होती।

परेश बाबूके साथ खुलकर उसकी बात चीत होने लगी । बाँते करते करते एक एक करके परेश बाबूको आज विनयका सब हाल मालूम हो गया । विनयके माँ बाप कोई नहीं है ; चाचीके साथ चाचा गाँवमें रह कर ज़मीन जायदाद देखते हैं । दो चचेरे भाई उसके साथ एक ही घरमें रह कर कलकत्तेमें पढ़ते थे । उनमेंसे बड़ा भाई वकालत पास करके उस जिलेकी अदालतमें वकालत करता है, और छोटा भाई कलकत्तेमें ही हैजेकी बीमारीसे मर गया । चाचाकी इच्छा है कि विनय डिपुटी कलेक्टरीके लिए कोशिश करे, लेकिन विनय कोई भी कोशिश न करके अनेक व्यर्थके कामोंमें लगा हुआ है ।

इस तरह लगभग एक घंटा बीत गया । बिना कामके और अधिक देर तक ठहरना ठीक न समझकर विनय उठ खड़ा हुआ । उसने कहा—बंशु सतीशके साथ मेरी भेंट नहीं हुई, इसका दुःख है ; उससे कह दीजिएगा कि मैं आया था ।

परेश बाबूने कहा—और जरा देर ठहरते तो उन लोगोंसे भेंट हो जाती । उनके लौटनेमें अब अधिक देर नहीं है ।

इसी बात पर निर्भर करके फिर बैठ जानेमें विनयको लज्जा मालूम हुई । और जरा आग्रह करनेसे वह बैठ सकता था—किन्तु परेश बाबू, अधिक बोलने या आग्रह करनेवाले आदमी ही नहीं थे, इससे चल ही देना पड़ा । परेश बाबूने कहा—आप फिर आँखें तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी ।

सड़क पर आकर विनयने अपने घरकी तरफ लौटनेकी कोई जरूरत नहीं देखी । वहाँ कोई काम न था । विनय अखबारोंमें लिखा करता है । उसके आँगरेजी लेखकी लोग खूब तारीफ करते हैं । किन्तु पिछले कई दिनोंसे जब वह लिखने बैठता था तो कुछ सूझता ही नहीं था । टेबिलके सामने अधिक समय तक बैठना ही मुश्किल होता था मन उचाट और व्याकुल सा हो जाता इसीसे आज वह अकारण ही उलटी तरफ चला ।

दो-चार कदम जाते ही एक बालक-कण्ठकी ध्वनि सुन पड़ी—
“विनय बाबू ! ओ विनय बाबू !”

सिर उठा कर देखा, एक गाड़ीकी खिड़की पर झुका हुआ सतीश उसे पुकार रहा है। गाड़ीके भीतरकी गद्दी पर थोड़ी सी साड़ी और थोड़ी सी सफेद चूर्तेकी आस्तीनको देखकर उसे यह समझनेमें कुछ भी संदेह नहीं रहा कि उसमें कौन बैठा है।

बंगाली भद्रताके अनुसार गाड़ीकी तरफ देखना विनयके लिए कठिन हो उठा। इसी बीचमें वहाँ गाड़ीसे उतर कर सतीशने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा—चलिए हमारे घर।

विनयने कहा—मैं तो तुम्हारे ही घरसे अभी आ रहा हूँ।

सतीशने कहा—बाह, हम लोग तो ये ही नहीं, फिर चलिए।

सतीशकी जिद्दको विनय टाल नहीं सका। विनयको लेकर घरमें प्रवेश करते ही सतीशने उच्च स्वरसे कहा बाबा, विनय बाबूको लाया हूँ।

बुद्धने घरसे निकल कर ज़रा दूर कर कहा—बड़े बड़े हाथ पड़ गये हैं आप, जल्दी छुटकारा न पाइएगा।—सतीश अपनी दीदीको बुला दे।

विनय घरमें आकर बैठ गया, उसका हृदय तेजसे धड़कने लगा। परेश बाबूने कहा—जान पड़ता है, आप थक गये। सतीश बड़ा उधमी लड़का है।

घरमें सतीशने जब अपनी दीदीको लेकर प्रवेश किया, तब विनयने पहले एक हलकी सुगंधका अनुभव किया—उसके बाद सुना, परेश बाबू कहते हैं—राधे, विनय बाबू आये हैं, इनको तो तुम जानती ही हो।

विनयने चकित हो सिर उठा कर देखा, सुचरिता उसे नमस्कार करके सामनेकी कुर्सी पर बैठ गई। अबकी विनय उसके प्रति नमस्कार करना नहीं भूला।

सुचरिताने बुद्धसे कहा—वह रास्तेमें जा रहे थे। सतीश उन्हें देखने ही फिर रोके नहीं सका। वह गाड़ीसे उतरकर उन्हें पकड़कर खींच लाया।

फिर विनयकी ओर देख कर कहा—आप शायद किसी कामसे जारहें थे विनय बाबू ?—आपको कोई असुविधा तो नहीं हुई ।

सुचरिता विनयको सम्बोधन करके कोई बात कहेगी, विनयने इसकी प्रत्याशा ही नहीं की थी । वह कुंठित और व्यस्त हो उठा, कहने लगा—ना, मुझे कुछ भी असुविधा नहीं हुई

सतीशने सुचरिताका कपड़ा खींचकर कहा—दीदी, चाभी लाओ न । अपना वह आर्गन (बाजा) लाकर विनय बाबूको दिखाऊँ ।

सुचरिताने हँसकर कहा—यह लो शुरू हो गया । जिसके साथ बक्तियारकी दोस्ती होगी, उसकी फिर जान नहीं बच सकती—आर्गन तो सुन्ना ही पड़ेगा—और भी अनेक तरहसे आपको तंग करेगा विनय बाबू, आपका यह मित्र छोटा है, किन्तु इसकी मित्रताका उत्पात बहुत बड़ा है । मालूम नहीं, उसे आप सह सकेंगे या नहीं ।

विनयने गंभीर भावसे उत्तर दिया—ना, आप कुछ भी खयाल न करें । मुझे यह सब खूब अच्छा लगता है ।

सतीश अपनी दीदीके पाससे चाभी लेकर आर्गन बाजा और कुछ खिलौने उठा लाया । और बहुत देर तक अपने अभ्यास किये हुये अनेक खेल और बाजेसे सबोंका मनोरंजन करने लगा ।

कुछ देर बाद लीलाने वहाँ आकर कहा—बाबू जी मैं तुम लोगोंको ऊपर बुला रही हूँ ।

ऊपर बरामदे में एक टेबिल पर सफ़ेद कपड़ा बिछा हुआ था—टेबिल के चारों ओर कुर्सियाँ रखी थीं। रेलिंग के बाहर कानिफ के ऊपर छोटे छोटे टबों में पाम और अन्य फूलों के पेड़ थे। बरामदे के ऊपर से रास्ते के किनारे के मौलसिरी और कृष्णचूड़ा वृक्षों की पवित्र स्निग्धता दिखाई पड़ती थी।

सूर्य उस समय भी अस्त नहीं हुआ था—पश्चिम आकाश में लाली धूप सीधी होकर बरामदे के एक किनारे में आ पड़ी थी।

उम समय छत पर कोई नहीं था। दम भर बाद ही सतीश एक सफ़ेद और काले रङ्ग के छोटे कुत्ते को लेकर उपस्थित हुआ। उस कुत्ते का नाम था—टेनी। टेनी में जितनी और जितने प्रकार की विद्या थी, सो सब सतीश ने विनय को दिखा दी। कुत्ते ने एक पैर उठा कर सलाम किया, फिर दो पैर से खड़ा हो कर नाचने लगा।

किसी एक कमरे से बीच बीच में लड़कियों के गले की हँसी की खिल-खिलाहट और कौतुकपूर्ण कंठ स्वर और उसके साथ ही एक मर्द की आवाज़ भी सुनाई पड़ रही थी। वह थोड़ा बहुत दास्य कौतुक का शब्द विनय के मन के भीतर एक अपूर्व मधुरता के साथ साथ जैसे एक प्रकार की ईर्ष्या की वेदना भी ले आया। विनय जब से सयाना हुआ तब से अपने घर के भीतर लड़कियों के गले की ऐसी आनन्द की कलध्वनि इस तरह कभी नहीं सुनी। यह आनन्द की माधुरी उसके इतने निकट उच्छ्वसित हो रही है, तो भी वह उससे इतना दूर है! सतीश विनय के कानों के पास न जानें क्या क्या कहता जाता था, मगर विनय जैसे उसे सुन ही नहीं रहा था। उसका मन और ही तरफ था।

परेश बाबू की स्त्री अपनी तीनों लड़कियों को साथ लिये छत पर

आई' । साथमें एक युवक भी आया, वह उनका दूरके नातेका कोई आत्मीय था ।

परेश बाबूकी स्त्रीका नाम बरदासुन्दरी है । उनकी अवस्था कम नहीं है, किन्तु उन्हें देखते ही यह समझमें आ जाता है कि वह विशेष यत्नके साथ सजावट करके आई' हैं । अधिक अवस्था दिह तनी औरतोंकी तरह बिता कर एक दम एक समयसे वह एक नये जमाने के साथ चलनेके लिए व्यस्त हो पड़ी हैं । इसी कारण उनकी रेशमी साड़ी जरा अधिक खस खसाती है, और ऊँची एड़ीका जूता खूब खट खट बोलता है । पृथ्वीमें कौन चीज़ ब्राह्म है और कौन अब्राहम है, इसीके भेदको ले कर वह नदी अ-गन्त चौकसी रहती हैं । इसी कारणसे तो उन्होंने राधारानीके नामको बदल कर सुचरिता रख दिया है ।

उनकी बड़ी लड़कीका नाम लावण्य है । वह खूब मोटी ताजी और हंसमुख है । लोगोंमें बान चीत अधिक करना पसंद करती है । उसका चेहरा गोल, दोनों आँखें बड़ी और रङ्ग उज्ज्वल श्याम है । साज सिंगारके बारेमें वह स्वभावसे ही कुछ ढीली ढाली है, लेकिन इस मामलेमें उसे अपनी माँका आज्ञा मान कर चलना होता है । ऊँची एड़ीका जूता पहननेमें उसे सुविधा नहीं मालूम होती, तब भी पहनना ही पड़ता है । तीसरे पहर सिंगार करनेके समय माँ अपने हाथसे उसके रुंहमें पाउडर और गालोंमें रङ्ग लगा देती हैं । वह जरा मोटी है, इसलिए बरदासुन्दरी उसका शलूका ऐसा कमा बनवानी हैं कि लावण्य जब पहन ओढ़ कर बाहर निकलती है, तब जान पड़ता है जैसे उसे पाटके बारेकी तरह कलमें दबाकर कसकर बांध दिया गया है ।

मँभली लड़कीका नाम ललिता है । उसे बड़ी लड़कीके विपरीत कहना ही ठीक होगा । अपनी बहनकी अपेक्षा उसका सिर लम्बा है, रोगीसी जान पड़ती है, रंग जरा और साँवला है, बातचीत अधिक नहीं करती । वह अपने मनके माफ़िक चलती है । जी चाहे तो कड़ीसे कड़ी

बातें सुना दे सकती है ; बरदासुन्दरी जैसे उसे मनमें डरती है सहज ही उससे बात करनेका साहस नहीं करता ।

छोटी लड़कोका नाम लीला है । उसकी अवस्था दस सालके लगभग होगी । बड़ दाढ़ धूप और उपद्रव करनेमें खूब तेज़ है—सतीशके साथ धक्कें धक्का और सदा मारपीट किया करती है ।

बरदासुन्दरीक आते ही विनय उठकर खड़ा हो गया फिर उसने झुक कर उन्हें प्रणाम किया । परेश बाबूने कहा—इन्हींके घरमें उस दिन हम लोग...

बरदासुन्दरीने कहा—ओह ! आपने बड़ा उपकार किया—आपको मैं हृदयसे अनेक धन्यवाद देती हूँ ।

यह सुनकर विनय इतना संकुचित होगया कि ठोक तारसे उत्तर भी न दे सका ।

लड़कियोंके साथ जो युवक आया था, उसके साथ भी विनयका परिचय हो गया । उसका नाम था सुधीर । वह कालेज में बी० ए० क्लासमें पढ़ता है । उसका चेहरा देखनेमें सुन्दर और ग्यारा मालूम होता था । रंग गोरा था । आँखोंमें सुनहरी कमानीका चश्मा था । स्वभाव अन्यन्त चंचल था । वह घड़ी भर भी स्थिर बैठना नहीं चाहता—कुछ न कुछ करनेके लिए व्यग्र रहता है । सदा लड़कियोंके साथ ठट्टा करके खिल्लाकर उन्हें अस्थिर किए रहता है । लड़कियों के साथ सुधीरका संकोचहीन दोस्ताना बर्ताव और हेल मेलका भाव विनयको बिल्कुल नया और आश्चर्यजनक जान पड़ा । पहले उसने इस तरहके व्यवहारकी मनही मन निन्दा ही की, लेकिन फिर उस निन्दाके साथ जैसे कुछ ईर्ष्याका भाव मिलने लगा ।

बरदासुन्दरीने कहा—ख़याल आता है, मैंने जैसे आपको एक दो बार समाज-मंदिरमें देखा है ।

विनयको ज्ञान पड़ा, जैसे उसका कोई अपराध पकड़ लिया गया ।

उसने अनावश्यक लज्जा प्रकट करके कहा—हाँ, कभी कभी केशव बाबूकी वक्तृता सुनने जाता हूँ ।

वरदासुन्दरीने पूछा—आप शायद कालेजमें पढ़ते हैं ?

विनयने कहा—ना, अब कालेज में नहीं पढ़ता ।

वरदाने पूछा—आपने कालेजमें कहाँ तक पढ़ा है ?

विनयने कहा—एम ए० पास कर चुका हूँ ।

यह सुनकर उस बालकके ऐसे चेहरेवाले युवकके ऊपर वरदासुन्दरीके मनमें श्रद्धा उत्पन्न हुई । उन्होंने एक साँस लेकर परेशबाबूकी ओर देखकर कहा—मेरा मनुआ अगर होता, तो वह भी आज एम० ए० पास कर चुका होता ।

वरदासुन्दरीकी पहली संतान मनोरंजन नौ बरसकी अवस्थामें ही मर गया था । वरदासुन्दरी जिस किसी युवकको कोई बड़ा दर्जा पास करते, बड़ा पद पाते, अच्छी किताब लिखते या कोई अच्छा काम करते देखतीं सुनती तो उन्हें उसी समय यह जान पड़ता कि उनका मनुआ अगर जीता होता तो वह भी ठीक यही सब कर चुका होता । खैर, जब वह नहीं है, तब इस समय जनसमाजमें अपनी तीनों लड़कियोंके गुणोंका प्रचार करना ही वरदासुन्दरीका एक विशेष कर्तव्य हो उठा था । वरदाने विनयको विशेष रूपसे यह बात बताई कि उनकी लड़कियाँ खूब पढ़ती-लिखती हैं और बहुत ही तेज़ हैं । विनयसे यह भी छिपा नहीं रहा कि मेमने लड़कियोंकी बुद्धि, गुण और निपुणताके बारेमें कब क्या कहा था । यह भी विनयने सुना कि जब गर्लस्कूलमें इनाम देनेके मौके पर लेफ्टिनेन्ट गवर्नर और उनकी लेडी आई थीं, तब उन्हें हार पहनानेके लिए स्कूलकी सब लड़कियोंमें लावण्य ही ख़ास करके चुनी गई थी ।

अन्तमें वरदाने लावण्यसे कहा—जिस सिलाईके कामके लिए तुमने इनाम पाया था, वह ले तो आओ बेटी ।

एक रेशमकी कामदार तोतेकी मूर्ति इस घरके परिचित आत्मीय

बन्धुओंके निकट विशेष विख्यात हो उठी थी। बहुत दिन हुए जब लावण्यने मेमकी सहायतासे यह अद्भुत वस्तु बनाई थी। इस रचनामें लावण्यका अपना कुछ विशेष हाथ तो नहीं था, किन्तु जिससे नई नई जान पहचान होती थी। उसीको यह नुमायशी तोता अवश्य दिखाया जाता था। यह एक निश्चित बात हो गई थी। उस तोतेकी रचनामें जो कारीगरी दिखाई गई थी, उसके लिए जिस समय विनयके नेत्र विस्मयसे देख रहे थे, ठीक उसी समय नौकरने आकर एक चिट्ठी परेश बाबूके हाथमें दी।

चिट्ठी पढ़ कर परेश बाबू प्रफुल्ल हो उठे। बोले — बाबूको ऊपर ले आ।

वरदाने पूछा — कौन है ?

परेश बाबूने कहा — मेरे बचपनके मित्र वृष्णदयालने अपने लड़केको हम लोगोंके साथ परिचित कराने के लिए भेजा है।

एकाएक विनयका हृदय उछल पड़ा और उसका मुख विवर्ण होगया। किन्तु उसके बाद ही वह मुट्ठी बांधकर खूब जी कड़ा करके बैठ गया, जैसे वह किसी प्रतिकूल पक्षके विरुद्ध अपनेको दृढ़ रखनेके लिए तैयार हो उठा। गोरा इस परिवारके लोगोंको अश्रद्धाके साथ देखेगा और अश्रद्धा हीके साथ उनका विचार करेगा, इस खयालने जैसे पहले हीसे विनयको कुछ उत्तेजित कर दिया।

एक तरतरीमें कुछ मिठाई और चाय आदि सब सामान सजाकर एक नौकरके हाथमें दे सुचारिता द्रुतके ऊपर आ बैठी, उसी समय दरवानके साथ गोरा भी वहाँ आ पहुँचा। उसका लम्बा ढील ढील गोबर शरीर और हिन्दुस्तानी लिबास देखकर सभी विस्मित हो उठे।

गोराके माथेमें गोपी-चन्दनका तिलक लगा था। मोटे कपड़ेकी धोती, अंगरखा, मोटे सूतकी चादर, और पैरमें देशी जूता, यही सब उसका पहनावा था। वह मानो वर्त्तमान कालके विद्ध एक मूर्तिमान् विद्रोहकी भाँति आ उपस्थित हुआ। उसका ऐसा भेय विनयने भी इसके पूर्व कभी नहीं देखा था।

आज गोराके मनमें एक विरोधकी आग विरोध रूपसे जल रही थी। उसका कारण भी था।

अङ्गण-स्नानके उपलक्ष्यमें कोई स्टीमर कल सुबेरे यात्रियोंको लेकर त्रिवेणी को रवाना हुआ था। रास्ते में जहाँ-जहाँ स्टीमर ठहरता था, वहाँ वहाँ अधिकाधिक स्त्रियाँ दो एक अभिभावक पुरुषोंके साथ त्रिवेणी जाननेके लिए जहाज़ पर सवार हो जाती थीं। जहाज़में अधिक यात्री हो जानेके कारण, और कहीं बैठनेको जगह न रहनेसे, लोगों में धक्का मुक्की होने लगी एक दूसरेको ठेलने लगा। कीचड़ भरे पैरोंसे, जहाज़ पर चढ़नेके तख्ते पर यात्रियोंकी भीड़ होनेके कारण, कोई लड़खड़ाकर नदीके जलमें गिरता था, किसीको खलासी ढकेलकर जहाज़से बाहर कर देता था, और कोई किसी तरह जहाज़ पर चढ़ भी जाता तो अपने साथीके पिछड़ जानेसे वह व्याकुल होता था। बीच बीचमें क्षणिक वृष्टि आकर उन यात्रियोंको भिगो देती थी। जहाज़में उन सबोंके बैठनेकी जगह कीचड़से भर गई। उन सबोंके चेहरे पर एक आस भरी दीनताका भाव छा गया था। वे लोग ऐसे सामर्थ्यहीन और अभाग्य थे

फि जहाज़ के मल्लाह से लेकर कप्तान तक किसीसे भी अपने दुःखमें सहायता की आशा नहीं करते थे, और यह जानकर वे चेष्टासे एक कातर भाव और भय प्रकाशित कर रहे थे। ऐसी अवस्थामें गोरा अपने भरसक यात्रियोंकी सहायता कर रहा था। ऊपर फ्रस्ट क्लास के डेक पर एक अंगरेज़ और एक नई रंशनीके बंगाली बाबू जहाज़का रेलिङ्ग पकड़े परस्पर हास्यालाप करते और चुरचुरा धुआँ उड़ाते हुए तमाशा देख रहे थे। बीच बीचमें किसी यात्रीकी कोई विशेष दुर्गत देख अंगरेज़ हँस उठता था और बङ्गाली बाबू भी अपनी निर्दयतासूचक हँसीसे उसका साथ देता था।

दो तीन स्टेशन इस प्रकार पार हो जाने पर गोराको यह दुर्दशा सहन न हो सकी। उसने ऊपर आ गरज कर कहा—'विकार है तुम लोगोंको, ज़रा शरम तक नहीं आती! अंगरेज़ ने कहा दृष्टिसे गोराको सिरसे पैर तक देखा। बङ्गालीने कहा—'शरम कैसी। देशके इन पशु समान मूर्खोंके हाँ लिए शरम।'

गोराने मुँह लाल कर कहा—'मूढ़की अपेक्षा वह बड़ा भारी पशु है, जिसके हृदय नहीं है; जिसके मनमें दया नहीं है।'

बङ्गालीने खिसियाकर कहा—'यह तुम्हारी जगह नहीं है, यह फ्रस्ट क्लास है, तुम नीचे जाओ।'

गोराने कहा—'ठोक है, तुम्हारे साथ रहनेकी थह जगह कदापि मेरे योग्य नहीं। मेरी जगह इन यात्रियोंके साथ है। किन्तु मैं कहे देता हूँ, तुम फिर मुझे अपने इस फ्रस्ट क्लास के आनेके लिए मत कहना यह कहकर गोरा नेज़ीसे नीचे चला गया।'

चन्दननगर पहुँचकर जहाज़से उतरते समय साहबने सहसा गोराके पास जा अपने सिरसे टोपी उठाकर कहा—'मैं अपने निर्दय व्यवहारके लिए क्षमा माँग रहा हूँ। आशा करता हूँ आप क्षमा करेंगे।' यह कह वह झटपट चला गया।

किन्तु शिक्षित स्वदेशवासी बाबू साधारण लोगोंकी दुर्गति देख विदेशीके साथ मिलकर अपनी श्रेष्ठताके अभिमानसे हँसता है, यह पैशा-चिक लीला गोराको जताने लगी। देशके सर्वसाधारण लोगोंने इस प्रकार अपनेको सर्वथा अपमान और दुर्व्यवहारके अधीन कर रखा है। इन्हें पशुवत् समझने पर भी वे अपना पशुत्व स्वीकार करते हैं और सबके यहाँ यह बात स्वाभाविक और संगत समझी जाती है। इस विचारकी जड़में जो एक देशव्यापी गहरा अज्ञान भरा है, उसके लिए गोरा का हृदय मानो फटने लगा। किन्तु सबकी अपेक्षा अधिक खेद उसके मनमें यह हुआ कि देशके इस चिरकालिक अपमान और दुर्गति को पढ़े-लिखे लोग अपने ऊपर न लेकर अपनेको निष्ठुर भावसे अलग रखनेमें निःसंकोच हो अपनी इज्जत समझते हैं। इसीसे शिक्षित लोगोंकी पढ़ी हुई विद्या और नक़ल करनेके संस्कारकी एकदम उपेक्षा करनेही के लिए आज गोरा माथे में गोपी-चन्दनका तिलक लगा और देशी जूता पहन छाती फुलाकर ब्राह्मसमाजीके घर आया है।

विनय मन ही मन समझ गया कि गोराका आजका यह पोशाक साधारण नहीं, सामारिक है। गोरा क्या जाने क्या कर बैठे, यह सोचकर विनयके मनमें कुछ भय, संकोच और विरोध का भाव उदित हुआ।

बरदासुन्दरी जब विनयके साथ बातचीत करती थी तब सतीश छतके एक कोनेमें लट्ठ घुमाकर खेल रहा था। गोरा को देखकर उसका लट्ठ घुमाना बन्द हो गया। वह धीरे धीरे विनयके पास खड़ा होकर टकटकी बाँध गोराकी ओर देखने लगा और विनयके कानमें धीरेसे कहा—
क्यों यही तुम्हारे मित्र हैं ?

विनय—हाँ।

गोराने छत पर पहुँचते ही एक बार विनयके मुँहकी ओर इस तरह देखा, मानो उसे देखा ही नहीं। परेश बाबूको नमस्कार करके वह मेज़के पाससे एक कुरसी खींचकर बैठ गया। लड़कियोंको यहाँ एक तरफ़ बैठी हुई देखना गोराने मर्यादाके विरुद्ध समझा।

वरदासुन्दरी इस असभ्यके पाससे लड़कियोंको ले जाना चाहती थी, इसी समय परेशबाबूने उसकी ओर देखकर कहा—इनका नाम गौरमोहन है, ये मेरे मित्र कृष्णदयाल बाबूके लड़के हैं।

तब गोराने उनकी ओर देखकर प्रणाम किया। यद्यपि विनयके मुँहसे प्रसंगवश सुचरिताने गोराकी बात पहलेही सुनी थी तो भी इस बात का उसे विश्वास न हुआ कि यही विनय का मित्र होगा। गोराका भेष देखतेही सुचरिताको उसपर कुछ घृणा उत्पन्न हुई। अगरेजों पढ़े-लिखे किसी आदमी में बनावटी हिन्दूपन देखकर उसे सहन कर सकनेका संस्कार या सहिष्णुता सुचरितामें न थी।

परेश बाबूने गोरासे अपने लड़कपनके साथी कृष्णदयालका कुशल समाचार पूछा। फिर अपनी छात्रावस्थाकी बातको सोचकर बोले—उस समय कालेजमें हम दोनों एक मतके थे। दोनों मनमौजी थे। हमलोग आचार व्यवहार कुछ न मानते थे—होटलमें बैठकर मौजसे खाना ही हम लोगों का काम था। हम दोनों कभी कभी शामको गोलदिग्घीमें मुसलमान की दूकान पर बैठकर कबाब खाया करते थे, और फिर आधीरात तक बैठकर हिन्दू-समाज के सुधारकी समालोचना किया करते थे।

वरदासुन्दरीने पूछा—अब वे क्या करते हैं ?

गोरा—अब वे हिन्दू आचार विचारका पालन करते हैं।

हिन्दू आचार विचारका नाम सुनते ही वरदासुन्दरीका सारा शरीर क्रोधसे जल उठा। वह बोली—उन्हें लज्जा नहीं आती ?

गोराने मुसफ़राकर कहा—लज्जा करना दुर्बल स्वभावका लक्षण है। कोई कोई बापका परिचय देने हीमें लजाते हैं।

वरदा०—पहले तो वे ब्राह्म थे न ?

गोरा—मैं भी तो किसी समय ब्राह्म था।

वरदा०—अब आप साकार उपासना में विश्वास करते हैं ?

गोरा—मेरे मनमें ऐसा कुसंस्कार नहीं है कि मैं साकार पर बिना

कारण अश्रद्धा करूँ । आकारकी निन्दा करनेसे क्या वह छोटा हो जायगा ? आकारके रहस्यका मेद कौन पा सका है ?

परेश बाबूने नम्रभावसे कहा—आकार तो नाशवान् है, उसका अन्त अवश्यम्भावी है ।

गोरा जिसका आदि होगा उसका अन्त भी अवश्य होगा, इसमें आश्चर्य क्या है ? अन्त न रहनेसे प्रकाश न होगा । अतन्त ब्रह्मने अपने को प्रकाशित करने हीके लिए अन्तका आश्रय ग्रहण किया है । अन्त उसी अनन्तके अन्तर्गत है । अन्त ही उसके प्रकाशका विनाशक है । उदय अस्तके भीतर ही प्रकाशकी स्थिति है । किसी वस्तुके प्रकाशसे ही सम्पूर्णताका बोध होता है । वाक्यके भीतर जैसे भाव रहता है वैसे ही आकारके भीतर निराकार भी सम्पूर्ण रूपसे मौजूद है ।

वरदासुन्दरीने कहा—निराकारसे बढ कर आकार है, यह आप क्या कहते हैं ?

गोरा—अगर मैं न भी कहूँ तो इससे कुछ न होता । जो जैसा है वह वैसा ही रहेगा । संसारमें आकार मेरे कहनेके ऊपर निर्भर थोड़े ही है । यदि निराकारकी ही यथार्थ परिपूर्णता होती तो आकारको कहीं जगह न मिलती ।

सुचरिता मन ही मन कहने लगी, कोई ऐसा होता जो इस उदण्ड युवकको विवादमें एकदम हराकर इसे ऐसा गिराता कि फिर यह कभी आकारका नाम न लेता । विनयको सुपचाप गोराकी बातें सुनते देखकर वह भीतर ही भीतर कुढ़ने लगी । गोरा इस उत्तेजना के साथ बातें कर रहा था कि उस उत्तेजनाको दबा देनेके लिए सुचरिता मनही मन उत्तेजित हो उठी ।

इसी समय नाँकर चाय बनानेके लिए केटलीमें गरम पानी लाया । सुचरिता उठकर चाय तैयार करने लगी । विनयने बीच-बीच में दो एक बार चकित दृष्टिसे सुचरिताके मुँहकी ओर देखा । यद्यपि उससनाके सम्बन्ध में गोराके साथ विनयका विशेष मतभेद न था तो भी गोरा जो इस ग्राह्य

परिवारके बीच बिना बुलाए आकर बड़ी ठिठार्ईके साथ विरहू मतकी आलोचना कर रहा है, इससे विनयका जी दुखने लगा। गोराकी इस उद्दण्डताके आगे परेश बाबूके प्रशान्त भाव और सब प्रकारके तर्क वितर्कसे रहित उनकी गम्भीर प्रसन्नताकी झलकने विनयके हृदयको भक्तिसे भर दिया। वह मनमं कहने लगा—मतामत कुछ नहीं है, मनके भीतर पूर्ण आनन्दका विकास और शान्त भावही सबकी अपेक्षा दुर्लभ है। क्या सच है और क्या झूठ, इस बातके विषयमें लोग भूलेही वाद-विवाद करें, परन्तु जो सत्य है सो सदा सत्य है। परेश बाबूका स्वभाव था कि सब प्रकारकी कथा-वार्ता में एकाध बार बीच में आँखें मूँदकर अन्तःकरण में प्रस्तुत-विषयका अनुशीलन कर लेते थे। उनके उस समयके ध्याननिमग्न प्रसन्न मुखको विनय टकटकी लगाकर देख रहा था। गोरा जो इस समय परेश बाबू के प्रति भक्ति न करके बढ़ बढ़कर बातें कहता ही जा रहा था, इससे विनयके मनमें बड़ी चोट लग रही थी।

सुचरिताने कई ग्याले चाय बना करके परेश बाबूके मुँहकी ओर देखा। किससे वह चाय पीनेका अनुरोध करें और किससे न करें, इस दुविधामें उसका मन पड़ा था। वरदासुन्दरी गोराके मुँहकी ओर देखकर सहसा बोल उठी—आप तो यह सब कुछ न खायगे ?

गोरा०—जी नहीं।

वरदासुन्दरी—क्यों ? जाति चली जायगी ?

गोरा०—जी हाँ।

वरदा०—आप जाति पाँतिको मानते हैं ?

गोरा०—जाति क्या मेरी बनाई है जो उसे न मानूँगा ? जब समाज को मानता हूँ तब जा तको भी जरूर मानता हूँ।

वरदासुन्दरी—तो समाजकी सभी बातें माननी ही होती हैं ?

गोरा०—जी हाँ, न मानना समाज तोड़ना हुआ।

वरदा०—समाज तोड़नेमें दर्जही क्या है ?

गोरा०—जिस ढाल पर सब लोग बैठे हों, उसको काट गिरानेही में क्या दोष है ?

सुचरिता मनही मन कुढ़कर बोली—माँ भूठ मूठ इनके साथ क्यों बहस कर रही हो ? ये हम लोगोंके हाथका छुआ न खायेंगे ।

गोराने सुचरिताकी ओर एक बार देखा । सुचरिताने विनयकी ओर देखकर कुछ सन्देह मिले स्वरमें कहा—क्या आप—

विनय कभी चाय न पीता था । सुसलमानकी बनाई पावरोटी और बिस्कुट खाना भी उसने, बहुत दिन हुए, छोड़ दिया है; किन्तु आज सुचरिताके हाथकी चाय कैसे न पियेगा उसने कहा—हाँ, क्यों न पिऊंगा ! यह कहकर उसने गोराके मुँहकी ओर देखा । गोराके हाँठोंमें कुछ व्यङ्गकी हँसी दिखाई दी । विनयकी चाय पीनेमें कुछ अच्छी न लगी । किन्तु उसने पीना न छोड़ा । वरदासुन्दरीने मनही मन कहा—अहा, यह विनय लड़का बड़ा अच्छा है ।

तब वह गोराकी ओरसे मुँह फेरकर विनयकी ओर स्नेहकी दृष्टिसे देखने लगी । यह देखकर परेश बाबू धीरे-धीरे अपनी कुरसी खिसकाकर गोराके पास ला उसके साथ बातचीत करने लगे ।

इसी समय रास्तेमें से चीना बादामवाला गरम चीनाबादामको आवाज़ लगाता हुआ जा रहा था । चीना बादाम का नाम सुनतेही लीलावती ताली बजाती हुई उठ खड़ी हुई और बोली—सुधीर भैया, चीना-बादामवालेको पुकारो ।

यह सुनतेही छतके बरामदेसे जाकर सतीश चीनाबादाम वालेको पुकारने लगा ।

इतनेमें इस मंडलमें एक सज्जन और वहाँ आकर उपस्थित हुए । सबने पानू बाबू कहकर उनसे सम्भाषण किया पर उनका असली नाम हारान चन्द्र नाग है । समाजमें इनकी विद्वत्ता और बुद्धिमत्ताके कारण इनका विशेष यश फैला है । यद्यपि स्पष्ट रूपसे कोई यह बात नहीं कहता था, तथापि इन्हींके साथ सुचरिताके ब्याह होनेकी भावना लोगोंके मनमें

न जाने क्यों बँधी थी। पानू बाबूका हृदय सुचरिताकी ओर आवृष्ट था, इसमें किसीको कुछ सन्देह नहीं था और इसीसे सखियाँ सुचरितके साथ हँसी किया करती थीं।

पानू बाबू हरिश्चन्द्र स्कूलमें मास्टरी करते थे। बरदासुन्दरी उन्हें स्कूलका मास्टर जानकर उनपर कुछ विशेष श्रद्धा नहीं रखती थीं। वह अपनी चेष्टासे बराबर दिखाती कि पानू बाबू जो उसकी किल्ली लड़की पर अनुराग प्रकट करनेका साहस नहीं करते, सो यह अच्छा ही करते हैं। उसके भावी जामाता लोग डिपुटी मैजिस्ट्रेटी लक्ष्यबेधरूपी अत्यन्त कठिन प्रणालीसे बंधे हैं अर्थात् वह अपने जमाईके योग्य उसीकी चुनेगी जो कम से कम डिपुटी होनेकी हैसियत रखता होगा।

सुचरिताको पानू बाबूके आगे एक प्याला चाय रखते देख लावण्य दूरसे उसके मुँहकी ओर देख कुछ मुँह टेढ़ा करके हँसी। वह हँसी विनयसे छिपी न रही। बहुत थोड़े समयमें ही दो-एक बातोंमें विनयकी दृष्टि बढ़ी तेज़ और सतर्क हो गई है। किसी चीज़को देखकर उसके तत्त्वा-विधानमें पहले वह इतना चतुर न था।

ये हारान बाबू और सुधीर इस घरकी लड़कियोंके साथ बहुत दिनोंसे परिचित हैं और इस परिवारके साथ ऐसे मिल-जुल गये हैं कि ये इन लड़कियोंके बीच परस्पर ईर्ष्याके विषय हो पड़े हैं। यह देखकर विनयके हृदय में विधाता का अविचार गढ़ने लगा।

इधर हारान बाबूके आगमनसे सुचरिताका मन कुछ आशान्वित हो उठा। गोराको कोई किसी तरह तर्कमें हरा दे तो सुचरिताको प्रसन्नता हो। अन्य समय हारानबाबूके मत-सम्बन्धी वाद-विवादसे वह कई दफे झ्रफ़ा हो चुकी है किन्तु आज इन तर्क वीरको देखकर उसने बड़ी खुशीके साथ चाय और पावरोटी देकर उनका सत्कार किया।

परेश बाबूने कहा—पानू बाबू ये हमारे—

हारान—मैं इनको भली भाँति जानता हूँ। ये किसी समय हमारे ब्राह्मणसमाज के बड़े उत्साही युवक थे।

यह कह कर और गोराके साथ कुछ गप शप न कर हारान बाबूने चायके प्याले की ओर मन लगाया ।

उस समय दो-एक इने-गिने बङ्गाली सिविल सर्विस परोबा में उत्तीर्ण होकर इस देश में आये थे । सुधीरने उन्हींमें से एक व्यक्ति की अभ्यर्थना की बात छेड़ी । हारान बाबूने कहा—परोबा में बङ्गाली चाहे कितना ही पास करले, किन्तु उनके द्वारा कोई काम न होगा ।

कोई बङ्गाली मैजिस्ट्रेट या जज ज़िले का भार लेकर कभी काम न चला सकेगा, इसको साबित करनेके लिये हारान बाबू बङ्गालियोंके चरित्र-सम्बन्धी नाना दोष और दुर्बलताकी व्याख्या करने लगे ।

सुनते-सुनते गोराको भौहें चढ़ गईं, मुँह लाल होगया । उसने अपने सिहनादको यथा साध्य रोककर कहा—यदि सत्य ही यह आपका मत है तो आप आरामसे कुरसी पर बैठे बैठे पाव रोटी किस मुँहसे चबा रहे हैं ?

हारानबाबूने भौहें सिकोड़कर कहा—तो आप क्या करनेको कहते हैं ?

गोरा—हो सके तो बङ्गालियों के चरित्रगत दोषों को दूर कीजिए, नहीं तो गले में फाँसी लगाकर मर जाइए । हमारी जाति के द्वारा कभी कुछ न होगा, यह बात क्या यों ही सहज कह देने की है ? यह बात कहते समय आपके गले में रोटी क्यों न अटक गई ?

हारानबाबू—सच बोलने में क्या डर है ?

गोरा—आप क्रोध न करें, यदि यह बात आप यथार्थ में ही सच-सच जानते तो इस प्रकार अहंकारसे न बोलते । आप हृदयसे इस बात को असत्य जानते हुए भी किसी कारणवश सत्य मान बैठे हैं, इसी से इतनी शीघ्र यह बात आपके मुँहसे निकल गई । हारानबाबू, झूठ पाप है, झूठी निन्दा और भी बड़ा पाप है; अपनी जातिकी झूठी शिकायतसे बढ़कर तो शायद ही कोई पाप होगा ।

हारानबाबू क्रोधसे अधीर हो उठे । गोराने कहा—क्या आप ही एक

अपनी समग्र जातिकी अपेक्षा बड़े हैं ? आप क्रोध करेंगे, और हम लोग आपके मुँहसे अपने बाप-दादों की निन्दा सुनेंगे !

इसके बाद हारानबाबूको चुप होकर बैठे रहना और भी कठिन हो गया। वह और भी बुलन्द आवाजसे बङ्गालियोंकी निन्दा करने में प्रवृत्ति हो गये। उन्होंने बङ्गाली समाजकी अनेक प्रकारकी कुप्रथाओंका वर्णन करके कहा कि इन कुप्रथाओं के रहते बङ्गाली जातिकी उन्नतिकी कोई आशा नहीं।

गोराने कहा—आप जिसे कुप्रथा कहते हैं वह केवल अंगरेजी किताब पढ़कर कहते हैं, आप उस सम्बन्धमें स्वयं कुछ भी नहीं जानते। अंगरेजोंकी समस्त कुप्रथाओंकी भी जब आप ठीक इसी तरह अवज्ञा करें तब आप इस सम्बन्धमें बात करें।

परेश बाबूने इस प्रसङ्गकी बातें बन्द कर देनेकी चेष्टाकी, किन्तु क्रोधमें भरे हारान बाबू निवृत्त न हुए। इसी समय सूर्यास्त हो गया। पश्चिम आकाश में सर्वत्र लालिमा छा गई। चिड़ियोंने अपने घोंसलोंका रास्ता लिया। इस जातीय समालोचनासे विनयके मनमें भाँति-भाँतिके बेसुरे तार बजने लगे। परेश बाबू अपनी सायङ्कालीन उपासनाके लिए छतसे उतर कर बाग़के बीच एक पत्थरके बने चबूतरे पर जा बैठे।

वरदासुन्दरीका मन जैसे गोरामें फिर गया था वैसे ही वह हारान बाबूसे भी कुछ विशेष प्रसन्न न थी। इन दोनोंका वाद-प्रतिवाद जब उसे एकदम असह्य हो गया तब उसने पुकारकर कहा—चलो विनय बाबू, हम लोग उस कमरे में चलें।

वरदासुन्दरीका यह सस्नेह पक्षपात स्वीकार करके विनयको छत छोड़ कर उसका साथ देना पड़ा। वरदासुन्दरीने अपनी लड़कियोंको बुला लिया।

अब वरदासुन्दरी विनयको अपनी बेटियोंका गुण सुनाने लगी। लावण्यसे कहा—बेटी उठो, तुम अपनी वह कापी लाकर विनय बाबूको दिखाओ तो।

घरमें नये आने वाले लोगोंको कापी दिखानेका लावण्यको अभ्यास

सा हो गया था। किसी नये व्यक्तिके आते ही वह समझ जाती थी कि वह कापी दिखलानी होगी, बल्कि वह इसके लिये प्रतीक्षा करने लगती थी। आज तककी बातोंमें उलझ जानेसे वह उदास हो गई थी।

विनयने कापी खोलकर देखा, उसमें कवि मूर और लॉगफ्रेलो की अंगरेजी कविता लिखी थी। अक्षर खूब बना बनाकर लिखे गये थे। कविताओं के शीर्षक और आरम्भ के अक्षर रोमन अक्षरों में लिखे गये थे।

यह लिपि देखकर विनयके मनमें बड़ा ही आश्चर्य हुआ। उन दिनों मूरकी कविताको कापीमें हाथसे लिख डालना स्त्रियोंके लिए कम बहादुरीकी बात न थी। विनयके मनको यथार्थ रूपसे समाविष्ट देख वरदासुन्दरीने अपनी मंमली बेटी ललितासे कहा—मेरी लक्ष्मी, बेटी ललिता, सुनारी वह कविता—

ललिता धीरे स्वरमें बोल उठी—“नहीं माँ, यह मुझसे न होगा, मुझे ठीक ठीक याद भी तो नहीं है।” यह कहकर वह एक खिड़कीके पास खड़ी हो सड़ककी ओर देखने लगी।

वरदासुन्दरीने विनयको समझा दिया, इसको सब कुछ याद है, किन्तु इसकी प्रकृति बड़ी गूढ़ है। अपने गुणको छिपाये रहती है। किसीके निकट अपनी विद्याका प्रकाश करना नहीं चाहती। यह कहकर उसने ललिताकी विचित्र विद्या-बुद्धिके परिचयके प्रमाणस्वरूप दो एक घटनाएँ विस्तार पूर्वक कह सुनाई कि ललिता बचपनसे ही ऐसी है। यह किसीके साथ बहुत बोलचाल नहीं करती। शोकके अवसर पर भी शायद किसीने इसकी आँखोंमें आँसु न देखे होंगे। इस सम्बन्धमें पिताके साथ इसका साक्षात्कृत्य बताया गया अर्थात् इस लड़कीमें यह गुण पिताके अनुरूप ही है।

अब लीलाकी बारी आई। उससे कुछ पढ़नेका अनुरोध करतेही वह पहले खूब जोरसे खिलखिला उठी, पीछे प्रामोक्षिकी तरह बिना कुछ अर्थ समझे “Twinkle-Twinkle little stars” कविता एक ही दममें पढ़ गई।

अब संगीत विद्याका परिचय देनेका समय आया जान ललित। उस कमरेसे बाहर हो गई।

बाहरकी छत पर तब खूब जोर-शोरकी वहस चल रही थी। हारान बाबू मारे क्रोधके तर्क छोड़कर गाली देने पर उद्यत हो गये थे। उनकी असहिष्णुतासे लज्जित और क्रुद्ध होकर सुचरिताने गोराका पत्त ले लिया। यह भी हारानके लिए कुछ सान्त्वना या शान्तिदायक न हुआ।

सन्ध्याके अन्धकार और सावनके बादलोंसे आकाश घिर गया। बेला चमेली की मालाओंसे सड़कको सुवासित करता हुआ फेरीवाला चला गया। सामनेकी सड़क पर मौलसिरीके पत्तों पर जुगनुण जगमगाने लगीं। पासके बागीचेवाले तालाब पर गहरा अन्धकार छा गया।

सन्ध्याकी ब्रह्मोपासना करके परेश बाबू फिर छत पर आ उपस्थित हुए। उनको देखकर गोरा और हारान बाबू दोनों लज्जितहो कर चुप हो गये। गोरा उठकर खड़ा हुआ और बोला—रात हो गई, अब मैं जाता हूँ।

विनय भी कमरेसे निकल कर छत पर आया। परेश बाबूने गोरासे कहा—जब तुम्हारी इच्छा हो, यहाँ आया करो। कर्मण्डयाल मेरे भाईके बराबर हैं। उनके साथ अब मेरा मत नहीं मिलता, भेट भी नहीं होती, पत्र व्यवहार भी बन्द है, किन्तु लड़कपनकी मित्रता रक्त-मांस में मिल जाती है, वह क्या कभी छूट सकती है? दृष्टि बाबूके सम्पर्कसे तुम्हारे साथ मेरा बहुत निकट का सम्बन्ध है।

परेश बाबूके शान्ति और स्नेह भरे स्वरसे गोराका इतनी दूरके तर्कसे सन्तप्त हृदय मानो ठंडा हो गया। उसके हृदयकी जलन बुझ गई। पहले आकर गोराने परेश बाबूको कुछ विशेष श्रद्धा या भक्तिसे अभिवादन न किया था। किन्तु जाते समय उसने सच्ची भक्तिके साथ उनको प्रणाम किया। चलते समय गोराने सुचरितासे कुछ भी न कहा। सुचरिताने, जो सामने खड़ी थी, यह स्वीकार करना ही एक प्रकारकी अशिष्टता समझी। विनयने परेश बाबूको विनयपूर्वक प्रणाम करके सुचरिताकी ओर देखा

और उसे नमस्कार करके कुछ लजाता हुआ वह झटपट गोराके पीछे हो लिया ।

हारान बाबू इस समय वहाँ न थे । वह पहले ही वहाँ से हट कर कमरेके भीतर चले गये और टेबलके ऊपरसे एक ब्रह्म संगीत की पोथी ले उसके पन्ने उलटने लगे ।

विनय और गोराके चले जाने पर हारान बाबू फिर झट छत पर आये । उन्होंने परेश बाबूसे कहा—देखिए सभीके साथ बहू-बेटियों को बातचीत करने देना मैं अच्छा नहीं समझता ।

सुचरिता पहले ही से भीतर ही भीतर बहुत ख़फ़ा थी । इसीसे वह वह अपने मनको रोक न सकी, बोली—अगर बाबूजी इस नियमको मानते तब तो आपके साथ भी हम लोगोंकी बातचीत न हो सकती ।

हारान०—बातचीत या मेल-मुलाकात अपने समाज के भीतर ही होना ठीक है ।

परेश बाबूने हँसकर कहा —आप पारिवारिक अन्तःपुरको और कुछ बढ़ा करके एक सामाजिक अन्तपुर बनाना चाहते हैं । किन्तु मैं समझता हूँ कि नाना मतके सज्जनोंसे लड़कियोंका मिलना उचित ही है, इससे उनकी बुद्धिका अच्छा विकास होता है । इसमें बाधा देनेसे वे संसारकी बहुतेरी अच्छी बातोंको नहीं जान सकतीं । इसमें भय या लज्जाका कोई कारण हम नहीं देखते ।

हारान—भिन्न मतके लोगोंके साथ बहू-बेटियाँ न मिलें, यह मैं नहीं कहता, किन्तु इनके साथ कैसा व्यवहार करना होता है, उस शिष्टताको तो ये लोग नहीं जानते ।

परेश —नहीं, नहीं ! यह क्या कहते हैं ! आप जिसे भद्रताका अभाव कहते हैं, वह एक संकोचमात्र है । पराई बहू-बेटियों के साथ बातचीत करनेमें बहुत लोग सकुचाते हैं । स्त्रियोंके साथ हेलमेल किये बिना वह संकोच मिट नहीं सकता ।

उस दिन गोराको बहसमें हराकर सुचरिताके सामने अपनी विजय-पताका उड़ानेकी हरान बाबूको बड़ी इच्छा थी। शुरू में सुचरिताको भी इसकी आशा थी। पर दैवयोगसे ठीक इसका उल्टा हुआ। धर्म-विश्वास और सामाजिक मतमें सुचरिताके साथ गोराका मेल न था, किन्तु स्वदेशके प्रति ममता और स्वजाति के लिए दुःखका अनुभव उसके लिए स्वाभाविक था। यद्यपि देशकी बातोंके विषय में वह कभी विशेष आलोचना नहीं करती थी ता भी उस दिन अपनी जातिकी निन्दा सुनकर गोरा जब एकाएक गरज उठा तब सुचरिताके मनमें उसके अनुकूल प्रतिध्वनि होने लगी। ऐसे ज़ोरसे, ऐसे दृढ़ विश्वासके साथ, देश के सम्बन्धमें उसके आगे कियोने आज तक ऐसी बात न कही थी।

इसके बाद जब हारान बाबूने गोरा और विनयके परोक्षमें सामान्य ईर्ष्या-वश उन पर अभद्रताका दोषारोपण किया तब भी सुचरिताको इस अन्यायके विरुद्ध गोरा और विनयका ही पक्ष लेना पड़ा।

इससे यह न समझना चाहिए कि गोराके विरुद्ध सुचरिताके मनका विद्रोह एकदम शान्त हो गया। नहीं, गोराका गजे पड़ा उद्धत हिन्दुत्व अब भी सुचरिताके मनमें आघात पहुँचा रहा था। वह एक प्रकारसे यह समझ रही थी कि इस हिन्दूपनके भीतर अवश्य कुछ प्रतिकूलताका भाव है। यह अपने भक्ति विश्वास में पर्याप्त नहीं है। यह दूसरेको दबानेके लिए सदा ही उग्र भावसे उद्यत रहता है।

उस दिन शामको सब बातोंमें, सब कामोंमें भोजन करनेके समय जीजासे बात करते समय, सुचरिताके मनमें किसी तरहकी 'एक पीड़ाकष्ट' देने लगी। वह किसी तरह उसे दूर न कर सकी। काँटा किस जगह गड़ा

है यह जानने पर काँटा निकाला जा सकता है। मनके काँटेको खोज निकालनेके लिए वह रातको छत पर अकेलो बैठा रही।

उसने अपने मनके अकारण तापको उसी अन्धकारकी निर्मल धारासे धो डालनेकी चेष्टाकी, किन्तु कोई फल न हुआ। अपने हृदयके एक अनिर्दिष्ट बोझके लिए उसने रोना चाहा; किन्तु रुलाई न आई।

एक अपरिचित युवक माथेमें टीका लगाकर आया, किसी ने उसे तर्कमें हराकर उसका वमंड न चूर किया इसीलिए सुचरिता इतनी देर तक खेद कर रही है। फिर उसने सोचा कि इससे बढ़कर हँसीकी बात और क्या हो सकती है, इसलिए इस कारणको सर्वथा असम्भव जान उसने मनसे दूर कर दिया। तब उसे असल कारण याद हो आया और याद होते ही उसे बड़ी लज्जा हुई। आज तीन-चार घंटे तक सुचरिता उस युवक के सामने ही बैठी थी और बीच बीच में उसका पल लेकर कुछ बोलती भी थी; परन्तु उस युवकने एकबार भी उसकी ओर न देखा, जाते समय भी उसने सुचरिता की ओर नजर तक नहीं डाला। इस कठोर उपेक्षाने सुचरिताके मनमें गहरी चोट पहुँचायी इसमें सन्देह नहीं। पराये घरकी स्त्रियोंके साथ मिलने जुलनेका अभ्यास न रहनेसे जो एक प्रकार का संकोच उत्पन्न होता है उस संकोचका परिचय दिनयके व्यवहार में पाया जाता है पर उस संकोचके भीतर कुछ नम्रता भी है। किन्तु गोराके आचरणमें उस संकोचका चिह्नमात्र भी न था। उसकी वह कठोर और प्रबल उदासीनता सहन करना या उसको हँसीमें उड़ा देना सुचरिताके लिए आज क्यों ऐसा असम्भव हो गया? इतनी बड़ी उपेक्षाके सामने भी उसने जो अपनेको न रोक कर तर्कमें योग दिया था इसलिए अपनी वाचालताके कारण वह मरी जा रही थी। हारान बाबूके अनुचित तर्कसे जब सुचरिता एक बार अन्यन्त उत्तेजित हो उठी थी तब गोराने उसकी ओर देखा था। उस दृष्टिमें संकोचकी गन्धमात्र न थी। किन्तु उस दृष्टि के भीतर क्या था यह भी जानना कठिन था। तब क्या वह मन ही मन कह रहा था—यह छी बड़ी निर्लज्ज है अथवा इसको अभिमान कुछ कम नहीं

है ? पुरुषोंके वाद-विवादमें यह बिना बुलाए योग देने आती है । अगर उसने ऐसा ही सोचा हो तो इसमें क्या आना जाना है ? भले ही इसमें कुछ हानि लाभ की बात न हो तो भी न मालूम सुचरिता क्यों मन ही मन विशेष कष्टका अनुभव करने लगी । इन सब बातोंको मनसे टाल देनेके लिए उसने बड़ी चेष्टा की परन्तु किसी तरह वह टाल न सकी । गोराके ऊपर उसका क्रोध बढ़ने लगा । गोराको कुसंस्कार-प्रभृत उद्धत युवक समझ कर मनके सर्वतोभावेसे उसने उसका निरादर करना चाहा; किन्तु उस कनक-भूधराकार शरीर वज्र-कण्ठ पुरुषकी उस निःपङ्कोच दृष्टिका अनुसरण होते ही सुचरिता मन ही मन सकुचा गई । वह किंपा तरह उस पुरुष-सिंहके आगे अपने गौरवकी रक्षा न कर सकी ।

इस प्रकार मनके साथ लड़ते-झगड़ते रात बहुत बीत गई । चिरागा बुझाकर घरके सब लोग सोने लगे । सदर दर्वाजा बन्द होनेका शब्द सुन पड़ा । उससे ज्ञात हुआ कि दरबान भोजन करके अब सोने को जा रहा है । इसी समय ललिता अपने रातके कपड़े पहिनकर छत पर आई । सुचरिता से बिना कुछ कहे वह उसके पास से जा छतके एक कोनेमें रेलिंग पकड़कर खड़ी हुई । सुचरिता मन ही मन कुछ हँसी, वह समझ गई कि ललिताने मुझ पर कोप किया है । ललिताके साथ आज उसके सोनेकी जो बात थी सो एकदम वह भूल गई । किन्तु भूल जानेकी बात कहनेसे ललिताके निकट अपराध क्षमा नहीं हो सकता । क्योंकि भूल जाना ही उसके आगे सबसे बढ़कर भारी दोष है । वह समय पर प्रतिज्ञाकी बात याद दिला देनेवाली लड़की नहीं । इतनी देर तक वह पत्थरकी तरह कठोर होकर बिछौने पर पड़ी थी । जितना ही समय बीतता जाता था उतना ही उसका कोप बढ़ता जाता था । आखिर जब क्रोध नितान्त अमर हो गया तब वह चारपाईसे उठकर चुपचाप यह जतानेको आई कि मैं अब तक जाग रही हूँ ।

सुचरिता क्रुरसीसे उठ कर धीरे-धीरे ललिताके पास जाकर उसके गलेसे लिपट गई और बोली — मेरी लक्ष्मी, बहिन ललिता, क्रोध न करो ।

ललिताने उसका हाथ हटाकर कहा—नहीं, क्रोध क्यों करूँगी ?
तुम बैठो न ।

सुचरिताने उसका हाथ पकड़ कर खींचा और कहा—चलो बहिन,
सोने चलें ।

ललिता कुछ उत्तर न दे चुपचाप खड़ी रही । अन्तमें सुचरिता
उसको ज़बर्दस्ती खींचकर सोनेके कमरे में ले गई ।

ललिताने अनख कर कहा—तुमने क्यों इतनी देर की ? जानती
नहीं, ग्यारह बज गये । मैं बड़ी देर तक तुम्हारे आनेकी राह देखती
रही ! तुम न आईं तब द्वार कर मैं उठी और छत पर गई । अब तो
तुम सो रहोगी ।

सुचरिताने ललिताको अपनी छातीसे लिपटा कर कहा—बहिन,
आज मुझसे भारी अन्याय हो गया । क्षमा करो ।

इस प्रकार सुचरिताके अपराध स्वीकार करने पर ललिता के मनसे
क्रोध जाता रहा । वह एकदम विनीत होकर बोली—बहिन तुम
इतनी देर तक अकेली बैठकर किसकी बात सोच रहीं थीं ? हारान
बाबूकी बात तो नहीं ?

सुचरिता उसके गालमें हलका सा तमाचा मार कर बोली—दुर् !
हारान बाबूसे ललिता की नहीं बनती थी, यहाँ तक कि उसकी अन्य
बहिनोंकी तरह हारान बाबूकी बात छेड़कर सुचरिता के साथ ठठोली
करना भी ललिताके लिये असाध्य था । हारान बाबू सुचरिता से ब्याह
करना चाहते हैं, इस बातका स्मरण होनेसे भी उसे क्रोध हो जाता था ।

कुछ देर चुप रह कर ललिता फिर बोली—अच्छा, बहिन, बिनय
बाबू तो अच्छे जान पड़ते हैं ?

सुचरिता के मनका भाव जानने ही के अभिप्रायसे शायद यह प्रश्न
किया गया था ।

सुचरिता—हाँ, बिनय बाबू अच्छे क्या, बड़े अच्छे हैं ।

ललिताने जिस आशासे यह पूछा था, वह पूर्ण रूपसे फलित न हुई। तब उसने फिर कहा—अच्छा, कहो तो बहिन, गौरमोहन कैसा था ? मेरे मनमें तो वह अच्छा न लगा। उसका चेहरा और भेष विचित्र था। तुम्हें वह कैसा जान पड़ा ?

सुचरिता—उसके रोम रोम में हिन्दूपन भरा था।

ललिता—नहीं, नहीं, हमारे मौसा महाशय भी तो बड़े भारी हिन्दू हैं परन्तु उनकी चाल और ही प्रकार की है। इसकी चाल कैसी है यह मैं न जान सकी।

सुचरिता ने हँसकर कहा—“कैसी ही हो !” यह कहते ही उसके ऊँचे चमकीले माथे पर दिये हुए तिलकका स्मरण कर सुचरिता को क्रोध हुआ। क्रोध करने का कारण यही था कि इस तिलक के द्वारा गोराने मानो अपने माथे पर बड़े-बड़े अक्षरों में यह लिख रक्खा है कि मैं तुम लोगों से अलग हूँ। यदि उस विभिन्न भावके प्रचण्ड अभिमानको सुचरिता मिट्टीमें मिला सकती तभी उसके अङ्गकी ज्वाला मिटती।

धीरे-धीरे करके दोनों सो गईं। जब रातके दो बज गये तब सुचरिताने जागकर देखा, बाहर खूब पानी बरस रहा है। बीच-बीचमें उसकी मसहरीसे होकर बिजलीकी छटा चमक जाती है। घरके कोनेमें जो चिराग रक्खा था वह बुझ गया। उस रातके सन्नाटे गाढ़े अन्धकार और अविश्राम वर्षाके भर-भर शब्दसे सुचरिताके हृदयमें एक प्रकारकी पीड़ा सी मालूम होने लगी। उसने कभी इस करवट, और कभी उस करवट बदल कर सोनेकी चेष्टा की। पास ही ललिताको गहरी नींदमें निमग्न देख उसे ईर्ष्या हुई, पर किसी तरह उसको नींद न आई। अन्तमें वह रुठकर बिछौनेसे उठी और बाहर आई। खुली खिड़कीके पास खड़ी होकर सामने छतकी ओर देखने लगी। बीच-बीचमें हवाके झोंकेसे पानीके छींटे उसके बदन पर पड़ रहे थे। घूम-फिरकर फिर वही सन्ध्या समय की सब बातें उसके मनमें एक-एक कर आने लगीं। सूर्यास्त समय

के रागसे रञ्जित गोराका चमकता हुआ चेहरा स्पष्ट चित्रकी भाँति उसके स्मृति-पथ पर प्रकट हो गया। गोराका गंभीर कण्ठस्वर उसे स्पष्ट सुनाई देने लगा—“आप जिन्हें अशिक्षित समझते हैं मैं उन्हींके दलमें हूँ। आप जिसे कुसंस्कार कहते हैं, मैं उसीको संस्कार कहता हूँ। जब तक आप देशको प्रिय न समझेंगे, देशके लोगोंके साथ एक जगह आकर खड़े न होंगे, जब तक उनके दुःखमें सहानुभूति प्रकट न करेंगे तब तक मैं आपके मुँहसे देशकी निन्दाका एक अक्षर भी न सुन सकूँगा।” इसके उत्तरमें हारान बाबूने कहा—“ऐसा करनेसे देशका सुधार कैसे होगा?” गोराने गरजकर कहा—“सुधार। सुधार दूरकी बात है। सुधारसे भी बढ़कर स्वदेश प्रेम है—स्वदेशी वस्तुओं पर श्रद्धा है। जब हम लोगोंक एक मत होगा, एक विचार होगा तब समाजका सुधार आप ही आप हो जायगा। आप तो अलग होकर देशको अनेक खण्डोंमें बाँटना चाहते हैं। इससे देशका सुधार होना कब संभव है! आप कहते हैं, देशके लोग कुसंस्कारसे जकड़े हैं अतएव हम सुसंस्कारी दलवाले अलग हो रहेंगे। मैं यह कहता हूँ कि मैं किसीकी अपेक्षा श्रेष्ठ होकर किसीसे अलग न हूँगा, यह मेरी बड़ी इच्छा है। इसके बाद एक हो जाने पर कौन संस्कार रहेगा और कौन संस्कार न रहेगा, यह मेरा देश जाने य देशके जो विधाता हैं वे जानें।” हारान बाबूने कहा—“देश में ऐसी कुप्राय और कुसंस्कार छाया है जो एक होने नहीं देता।” गोराने कहा—“यदि आप यह सोचें कि पहले उन सब प्रथाओं और संस्कारोंको एक एक कर दूर कर लेंगे तब देश एक होगा, तो यह आपकी समझ वैसी ही है जैसे कोई समुद्रको उल्लूककर उस पार जाना चाहे। ‘अपमान और अहंकार को दूर करके नम्र होकर सबको अपना सा समझना’ इस सर्व प्रियताके सामने सैकड़ों त्रुटियाँ और अनैक्यताएँ मल मारेंगी। सभी देशोंके समाजोंमें कुछ न कुछ त्रुटि और अपूर्णता अवश्य है किन्तु देशके लोग जबतक स्वभावतः प्रेम-सूत्रमें बँधे रहते हैं तब तक वे त्रुटियाँ कुछ विशेष हानि नहीं पहुँचा सकतीं! सड़ानेका कारण हवा में है।

जीवित दशामें हम उससे बचे रहते हैं किन्तु मरते ही सब जाते हैं । यदि आपमें स्वदेशानुराग नहीं है तो आपसे देशकी त्रुटियोंका संशोधन होना कदापि सम्भव नहीं । इस प्रकार समाजसे विरुद्ध हो आप संशोधन करना चाहेंगे तो यह बात हम लोग सख्त न करेंगे, चाहे आप लोग हों या पादरी हों ।” हरान बाबूने कहा — ‘क्यों न कीजिएगा ?’ गोराने कहा—“न करनेका कारण है—माँ बापकी नसीहत सख्त की जाती है किन्तु पढ़ेवाले नौकरकी नसीहतमें फलकी अपेक्षा अपमान बहुत बढ़कर है । वैसा संशोधन स्वीकार करनेमें मनुष्यत्व नष्ट होता है । पहले आप आत्मीय हो लें पीछे संशोधक हों, नहीं तो आपके मुँहकी भली बातसे भी हमारा अनिष्ट ही होगा ।” इस प्रकार गोरा और हरान बाबू के बीच जो बातें हुई थीं वे एक एक कर सब सुचरिताके मनमें आने लगीं । और इसके साथ साथ उसे एक अनिदिष्ट दुःखका अनुभव भी होने लगा । थककर वह बिछौने पर लौट आई और इन चिन्ताओंको मनसे दूर कर सोनेकी चेष्टा करने लगी पर उसे नींद न आई ।

विनय और गोरा, दोनों परेश बाबूके घरसे निकल कर सबक पर आये । विनयने गोराको तेजीसे चलते देखकर कहा—गोरा, ज़रा धीरे धीरे चलो भाई—तुम्हारे दोनों पैर हमारे पैरोंसे बहुत बड़े हैं । अगर अपनी चाल ज़रा कम न कगेगे, तो तुम्हारे साथ चलने में मैं तो थक जाऊंगा ।

गोराने जाते-जाते कहा—मैं अकेले ही जाना चाहता हूँ । मुझे आज बहुत कुछ सोचना विचारना है ।

इतना कहकर वह अपनी स्वाभाविक चालसे तेजीके साथ चला गया ।

विनयके हृदयको चोट लगी । उसने आज गोरा के विरुद्ध विद्रोह करके नियमको तोड़ा है । इसके बारे में अगर गोरा उसका तिरस्कार करता तो वह खुश होता और जैसे उसकी छाती पर का बोझा हलका हो जाता ।

गोरा जो विनयका साथ छोड़ कर नाराज हो कर चला गया, उस नाराज़गीको विनय अन्याय नहीं समझ सका । इन दोनों मित्रोंके बहुत दिनोंके सम्बन्ध में इतने दिन बाद आज सचमुच विघ्न उपस्थित हुआ है ।

बरसान्की रातके सन्नाटेके अन्धकारको कँपा कर बीच-बीच में बादल गरज उठता था । विनयके मन में एक बोझ सा जान पड़ने लगा । उसे जान पड़ा, वह इतने दिनसे जिस रास्ते में चला आ रहा था, आज उसने उसे छोड़ कर और, एक नई राह पकड़ी है । इस अन्धकारके बीच गोरा कहीं गया, और वह कहीं चला जा रहा है ।

दूसरे दिन सबेरे उठने पर विनयका मन हलका हो गया । रातको कल्पनाके द्वारा उसने अपनी वेदना को अनावश्यक अत्यन्त बढ़ा दिया था । सबेरे उसे गोरा के साथ मित्रता और परेशबाबूके परिवारके साथ

मेज़ जोल परस्पर उलतना विरोधी नहीं जान पड़ा। मामला क्या ऐसा ही था, बात क्या ऐसी ही चिन्ताकी थी ? कभी नहीं। यों कह कर कल रातकी मानसिक पीड़ाका ख्याल करके आज विनय आप अपनी बेवकूफी पर हँसने लगा।

विनय कंधे पर एक चादर डाल कर तेजीके साथ गोरारके घर में आकर उपस्थित हुआ। गोरा उस समय नीचेकी बैठक में बैठा हुआ अखबार पढ़ रहा था। विनय जिस समय रास्ते में था, तभी गोराने उसे देख लिया था। किन्तु आज विनयके आने पर भी अखबार के ऊपरसे गोराकी दृष्टि नहीं हटी। विनयने आते हो कुछ कहे सुने बिना चटसे गोरारके हाथसे अखबार छीन लिया।

गोराने कहा—शायद तुम भूलते हो—मैं हूँ गौरमोहन—एक कुसंस्कारोंसे घिरा हुआ हिन्दू।

विनयने कहा—भूलते शायद तुम्हीं हो। मैं हूँ श्रीयुत विनय—उक्त गौरमोहनका कुसंस्कारोंसे घिरा हुआ मित्र।

गोरा—किन्तु गौरमोहन इतना बड़ा बे-दया है कि वह अपने कुसंस्कारके लिए कभी किसीके आगे लज्जा का अनुभव नहीं करता।

विनय—विनय भी ठीक वैसा ही है। मगर हाँ प्रकृति इतना ही है कि वह अपने संस्कारको लेकर दूसरे पर हमला करने नहीं जाता।

देखते ही देखते दोनों मित्रों में करारी बहस छिड़ गई। यहां तक कि अड़ोसी-पड़ोसी और महल्ले भर के लोग समझ गये कि आज गोरारसे विनयकी भेंट हुई है।

गोराने कहा - अच्छा तुम परेश बाबूके घर आते जाते हो; यह बात उस दिन मेरे आगे अस्वीकार करने की क्या ज़रूरत थी ?

विनय—किनी ज़रूरतके कारण मैंने अस्वीकार नहीं किया था। मैं आता जाता था ही नहीं और इसीसे आना जाना अस्वीकार किया था। इतने दिनके बाद कल ही पहले पहल मैंने ठाढ़ घर में पैर रक्खा था।

गोरा—मुझे सन्देह होता है कि तुम अमिमन्यु की तरह प्रवेश करने की राह जानते हो—निकलने की राह नहीं जानते ।

विनय—सो—हां—यह तुम्हारा खयाल ठीक भी हो सकता है । यही शायद मेरा जन्मका स्वभाव है मैं जिसे श्रद्धा या प्यार करता हूँ; उसे फिर छोड़ नहीं सकता । मेरे इस स्वभाव का परिचय तुमने भी पाया है ।

गोरा—तो अबसे वहाँ बराबर आना जाना जारी रहेगा ?

विनय—ऐसी तो कोई बात नहीं है कि अकेले मेरा ही आना जाना जारी रहेगा । तुममें भी तो चलने फिरनेकी शक्ति है, तुम एकदम स्यावर पदार्थ तो हो ही नहीं ।

गोरा—खैर, मैं तो आऊँ जाऊँगा, लेकिन तुम्हारे जो लक्षण मैंने देखे, उनसे तो यही जान पड़ता है कि तुम बल्कुल जड़-मूलसे ही जाने को तैयार हो । गरम चाय कैसी लगी थी ?

विनय—कुछ कड़ी लगी थी ।

गोरा—तो फिर ?

विनय—न पीना उससे भी कड़ा लगता ।

गोरा—तो समाजके नियमों का पालन क्या केवल भलमन्सीका पालन मात्र है ?

विनय—सब समय यह बात नहीं है । किन्तु देखो गोरा समाजके साथ जहाँ हृदयकी टकर हो, वहाँ पर मेरे लिए ...।

गोरा अधीर हो उठा । उसने विनयको अपनी बात पूरी ही नहीं करने दी । बीच ही में गरजकर कहने लगा—क्या कहा—हृदय ! तुम समाजको छोटा, तुच्छ देखते हो, इसीसे बात बातमें समाजके साथ तुम्हारे हृदयकी टकर होती है । किन्तु समाजको चोट पहुँचानेसे उसकी वेदना कितनी दूर तक जाकर पहुँचती है इसका जो तुम अनुभव करते, तो तुम्हें अपने इस हृदयकी बात उठाते लज्जा मालूम होती । परेश बाबूकी लड़कियोंके मनको जरा सी चोट पहुँचाने में तुमको बड़ा कष्ट

मालूम होता है, किन्तु उतनेके लिए जब तुम अपने सम्पूर्ण देशको अनायास कष्ट पहुँचा सकते हो, तब मुझे तुमसे कहीं अधिक कष्ट मालूम होता है।

बिनय—तो सच बात कहूँ भाई गोरा, एक प्याली चाय पीने से अगर वह सम्पूर्ण देशको चोट पहुँचाना है, तो मेरी समझ में वह चोट ऐसी है कि उससे देश का उरकार हो होगा। उस आघातसे देशको बचाकर चला जायगा तो उससे देश अत्यन्त दुर्बल और बाबू बन जायगा।

गोरा—अजी जनाब इन सब युक्तियोंको मैं जानता हूँ। मुझे एकदम इतना नादान न समझना। किन्तु ये सब इस समय की बातें नहीं हैं। रोगी लड़का जब दवा खाना पीना नहीं चाहता तब शरीर सुस्थ होने पर भी माँ खुद दवा खा पीकर उसे जताना चाहती है कि तेरी और मेरी एक ही दशा है। यह तो व्यक्ति की बात नहीं है यह प्यार की बात है। प्यार अगर न रहे, तो चाहे जितनी युक्ति क्यों न हो, लड़के के साथ माता का सम्बन्ध नष्ट हो जाता है ऐसा होने पर कार्य भी नष्ट होता है। मैं भी उस चायकी प्यालीको ले कर बहस नहीं करता—किन्तु देश के साथ सम्बन्ध-विच्छेदको मैं सहन नहीं कर सकता। चाय न पीना उसकी अपेक्षा बहुत सहज है—परेश बाबू की लड़कीके मन को कष्ट देना उसकी अपेक्षा बहुत छोटा है। समस्त देशके संग एकात्म रूपसे मिलना ही हम लोगोंकी इस समयकी अवस्था में सब कामोंकी अपेक्षा प्रधान कार्य है—जब वह मिलन हो जायगा, तब चाय पीना चाहिए या न पीना चाहिए, इसे तर्क मीमांसाकी दो बातों में ही हो जायगी।

बिनय—तब तो मैं देखता हूँ, मेरे दूसरी प्याली चाय पीनेमें बहुत देर है।

गोरा—न, अधिक देर करनेकी दरकार नहीं है। किन्तु बिनय, मुझे अब क्यों घेरते हो ? हिन्दू-समाजकी अनेक अप्रिय चीजोंके साथ ही

मुझे भी छोड़ देने का समय आ गया है। नहीं तो परेश बाबू की लड़कियों के मन को चोट पहुँचेगी।

इसी समय अविनाश ने आकर बैठक में प्रवेश किया। वह गोरा का शिष्य है। वह गोरा के मुख से जो सुनता है, उसी को अपनी बुद्धि के द्वारा छोटा और अपनी भाषा के द्वारा विस्तृत करके चारों ओर कहता फिरता है। गोरा की बातों को जो लोग ज़रा भी नहीं समझ पाते, वे ही अविनाश की बातों को खूब अच्छी तरह समझते हैं, और प्रशंसा करते हैं।

विनय के ऊपर अविनाश के मन में एक अत्यन्त ईर्ष्या का भाव है। इसीसे वह मौका पाते ही विनय के साथ मूर्ख की तरह तर्क वितर्क करने की चेष्टा करता है। विनय उसकी मूर्खता से अत्यन्त अधीर हो उठता है—तब गोरा अविनाश के पक्ष को खुद लेकर विनय के साथ बहस करने लगता है। अविनाश उस समय यही समझता है कि उसी की युक्तियाँ जैसे गोरा के मुख से निकल रही हैं।

अविनाश के आ जाने से गोरा के साथ बात करने में विनय को बाधा पहुँची। तब वह उठकर ऊपर चला गया। आनन्दमयी भंडार, घर के सामने बरामदे में बैठी तरकारी काट रही थीं।

आनन्दमयी ने कहा—बहुत देर से तुम्हारी आवाज़ सुन रही हूँ विनय। आज इतने सबेरे कैसे आ गये? जलपान करके तो चले थे?

और दिन होता तो विनय कह देता कि नहीं, कुछ नहीं खाया-पिया, और आनन्दमयी के सामने बैठ कर, उनसे माँग कर मजे से भोजन करता। किन्तु आज उसने कहा—नहीं माँ, खाऊंगा नहीं। जलपान करके घर से आया हूँ।

आज विनय ने गोरा के निकट अपना अपराध बढ़ाना नहीं चाहा। परेश बाबू के साथ उसका जो संसर्ग हुआ है, उसके लिए गोरा ने अभी तक उसको क्षमा नहीं किया। उसे वह जैसे अपने से कुछ दूर ठेल रखना चाहता है, यह अनुभव करके विनय अपने मन के भीतर एक तरह के

क्लेशका अनुभव कर रहा था। विनय जैसे चाकू निकालकर आलू छीलने बैठ गया।

पंद्रह सोलह मिनटके बाद नीचे जाकर देखा, गोरा अविनाशको साथ लेकर चल दिया है। गोरा की बैठकमें बहुत देर तक विनय चुप बैठा रहा। फिर एक लम्बी साँस छोड़कर बाहर निकला और घर चल दिया। दोपहरको भोजनके बाद गोराके पास जानेके लिए फिर विनयका मन चंचल हो उठा। विनयने कभी किसी दिन गोराके आगे अपनेको झुकाने में संकोचका अनुभव नहीं किया, किन्तु अपना अभिमान न रहने पर भी बन्धुत्व के अभिमानको धोका देना कठिन है। परेश बाबूके निकट गोराके प्रति इतने दिन की निष्ठासे अपनेको कुछ विचलित सा समझ कर विनय अपनेको अपराधी अवश्य समझ रहा था, और इसके लिए उसने यहीं तक आशा की थी कि गोरा परिहास और भत्सना करेगा। पर विनयको स्वप्न में भी यह खयाल न था कि गोरा इतनी सी बातके लिए उसे इस तरह अपनेसे अलग ठेल कर दूर रहने की चेष्टा करेगा। घरसे कुछ दूर जाकर विनय फिर लौट आया; बन्धुत्वका पीछे अपमान न हो, इस भयसे वह गोराके घर जा नहीं सका।

इसी तरह कई दिन बीतनेके बाद, एक दिन दोपहरको भोजनके उपरान्त गोराको एक चिट्ठी लिखनेके विचारसे कागज़-क़लम लेकर विनय बैठा था इसी समय नीचेसे किसीने "विनय" कह कर पुकारा ! विनय क़लम फेंक कर चटपट नीचे उतरा, और आगन्तुकको देख कर बोला—महिम दादा, आइये, ऊपर चलिए ।

महिमने ऊपर आकर विनयके पलंग पर अच्छी तरह आसन जमाया । घरके साज सामानको एक बार सरसरी तौरसे अच्छी तरह देख कर महिमने कहा—देखो आज जो रविवारके दिन की नींद को बिल्कुल मिट्टी करके तुम्हारे यहां आया हूँ, इसका एक विशेष कारण है । तुमको मेरा एक उपकार करना होगा ।

विनयने पूछा—क्या उपकार ? महिमने कहा—पहले वचन दो, तब कहूंगा ।

विनय—मुझसे उसका होना अगर सम्भव होगा, तभी तो ?

महिम—हां, केवल, तुम्हारे ही द्वारा सम्भव है । और कुछ नहीं करना है, तुम्हारे एक बार "हां" भर कह देनेसे हो जायगा ।

विनय—तो फिर मुझसे इस तरह क्यों आप कहते हैं ? आप तो जानते हैं, मैं आप लोगोंके घरका ही आदमी हूँ । यह तो हो ही नहीं सकता कि संभव होने पर मैं आपका उपकार करनेसे मुँह मोड़ जाऊँ ।

महिमने जेबसे एक पत्तेकी पुड़िया निकाली और उससे दो पान निकाल कर विनयको दिए । शेष चार पान अपने मुखमें रख कर उन्हें चबाते-चबाते कहा—मेरी शशिमुखीको तो तुम जानते ही हो । देखने सुननेमें कुछ बुरी नहीं है, अर्थात् बापको बिल्कुल नहीं पड़ी है । उसकी अवस्था दस सालके लगभग हो आई है । अब, उसका ब्याह कर देनेका

समय आ पहुँचा है। क्या जाने किस अयोग्य या बदमाश लड़केके हाथ पड़ जाय, यही सोचकर मुझे तो रातको नींद नहीं पड़ती।

विनयने कहा—आप इतना घबराते क्यों हैं, अभी तो अच्छा लड़का ढूँढनेके लिए समय है।

महिम—अपने अगर कोई लड़की होती तो सम्भूते कि क्यों इतना घबड़ा रहा हूँ। साल-साल करके उमर आप ही बढ़ती है, लेकिन घर तो आप ही से घर पर आ नहीं जाता! इसीसे जितने ही दिन बीतते हैं, उतना ही मन व्याकुल हो उठता है। अब तुम अगर ज़रा भरोसा दो, तो न हो कुछ दिन धैर्य भी धारण कर सकता हूँ।

विनय—मेरा तो बहुत लोगोंसे यहाँ आलाप-परिचय नहीं है—कलकत्तेमें आपके घरके सिवा और किसीका घर नहीं जानता, यह कहना भी ग़लत न होगा। तो भी मैं तलाश करके देखूँगा।

महिम—शशिमुखीके स्वभाव और चरित्रको तो जानते हो।

विनय—जानता क्यों नहीं। उसे बचपनसे देखता आता हूँ—बड़ी भली, भोलीभाली लड़की है।

महिम—तो फिर और जगह तलाश करनेकी क्या ज़रूरत है भैया! वह लड़की मैं तुम्हारे ही हाथ में समर्पण करूँगा।

विनयने व्यस्त हो उठ कर कहा—आप कहते क्या हैं?

महिम—क्यों, बेजाँ क्या कहता हूँ! अवश्य ही कुलमें तुम हम लोगोंसे बहुत बड़े हो—लेकिन विनय, इतना पढ़ लिख कर भी अगर तुम कुलका ढोंग मानोगे तो बस फिर हो चुका!

विनय—ना ना, कुलकी बात नहीं है, लेकिन अवस्था तो...

महिम—बाह! शशीकी अवस्था क्या कम है! हिन्दूके घरको लड़की मेम साहब तो है नहीं। हमारे समाजमें तो इसी अवस्थामें लड़की ब्याह दी जाती है। फिर शास्त्र में भी तो लिखा है—कन्याया द्विगुणो वरः।

महिम सहज में छोड़ देनेवाला आदमी नहीं था। विनयको उसने

अस्थिर कर दिया : अन्तमें लाचार होकर विनयने कहा—मुझको ज़रा सोचने विचारनेका समय दीजिए ।

महिम—मैं आज ही रातको तो व्याह करने के लिए नहीं कहता ।

विनय—तो भी घर के आदमियों की . ।

महिम—हाँ, सो तो है ही । उनकी राय तो लेनी ही होगी । तुम्हारे चाचा मौजूद हैं, उनकी सलाहके बिना तो कुछ हो नहीं सकता ।

इतना कह कर पाकेटसे पानोंका दूसरा दोना भी निकाल कर उसे समाप्त कर और ऐसा भाव दिखा कर जैसे बात बिलकुल पक्की हो गई है, महिम चल दिया ।

कुछ दिन पहले आनन्दमयीने एक बार शशिमुखीके साथ विनयके व्याहका प्रस्ताव स्पष्ट रूपसे इसारेसे उठाया था । किन्तु विनयने जैसे उसे सुनाही नहीं । आज भी यह बात नहीं थी कि यह प्रस्ताव विनयको विशेष संगत या उचित जान पड़ा हो, किन्तु तो भी इस बातने उसके मनमें जैसे कुछ जगह पाई । विनयने सोचा, यह विवाह हो जाने पर गोरा किसी दिन उसे आत्मीयताके सम्बन्धसे डेल कर दूर नहीं कर सकेगा विवाह-व्यापारको हृदयके आवेगके साथ शामिल करने को अंगरेजी ढंग समझ कर ही अब तक विनय इस बातको एक दिल्लगी समझता आया है । और, यही कारण है कि शशिमुखीके साथ व्याह करना उसे आज उतना असम्भव नहीं जान पड़ा है । सच तो यह है कि उसने विवाहको कभी उतना महत्व ही नहीं दिया । महिमके इस प्रस्तावको लेकर गोराके साथ सलाह करनेका एक बहाना मिल गया, यह सोच कर फ़िलहाल विनय खुश ही हुआ । विनयकी इच्छा है कि गोरा इस बातके लिए उस पर ज़रा ज़ोर डाले । विनयको इसमें ज़रा भी सन्देह नहीं था कि महिमको सहजमें स्वीकृति न देनेसे महिम गोराके द्वारा उसमें अनुरोध करानेकी अवश्य चेष्टा करेगा ।

इन्हीं सब बातोंकी आलोचना करके विनयकी चिन्ता दूर हो गई । वह उसी समय गोराके घर जानेको तैयार होकर, घरसे निकल पड़ा ।

कुछ दूर जाते ही पीछेसे किसीने पुकारा—विनय बाबू ! विनयने घूमकर देखा, सतीश उसे पुकार रहा है ।

सतीशको साथ लेकर विनय फिर घर आया । सतीशने जेबसे रुमाल की पोटखी निकाल कर कहा—

रंगून में मेरे एक मामा हैं, उन्होंने वहाँके ये फल माँके पास भेजे हैं ।
उन्हीं में से ये पाँच-छः फल माने सौगातके तौर पर आपके पास भेजे हैं ।
विनयने फल ले लिया ।

उसके बाद दोनों असमान अवस्थाके मित्रोंमें कुछ देर तक कौतुक-मय चार्तालाप जब होचुका, तब सतीशने कहा— विनय बाबू माने कहा है, अगर फुरसत हो तो आप एक बार हमारे घर अवश्य आवें; आज लीलाकी वर्षगांठका दिन है ।

विनयने कहा—आज, भाई, मुझे समय नहीं मिलेगा—और एक जगह जरूरी कामसे जारहा हूँ ।

सतीश—कहाँ जारहे हैं ?

विनय—अपने मित्रके घर ।

सतीश—आपके वही मित्र ?

विनय—हां ।

विनय मित्रके घर जा सकता है, लेकिन उसके घर नहीं जासकता, इस बातका युक्तिसंगत होना सतीशकी समझ में नहीं आया, विशेष कर विनयका वह मित्र सतीशको अच्छा नहीं लगा था । सतीशकी दृष्टि में वह जैसे स्कूलके हेडमास्टरसे भी कड़ा आदमी है । उसे कोई आर्गन बाजा सुना कर यश प्राप्त कर सके, वह ऐसा आदमी ही नहीं है । विनयका ऐसे आदमीके पास जानेका कुछ भी प्रयोजन समझना सतीशको बिल्कुल ही अच्छा नहीं लगा । उसने कहा—नहीं विनय बाबू, आप हमारे ही घर चलिए ।

विनय को हार मानते अधिक देर नहीं लगी । दुबधा करते-करते, मनके भीतर आपत्ति करते-करते, अन्त में बालकका हाथ पकड़ कर

बिनय उस अठत्तर नंबरके घरकी राह पर ही चला। वरमासे आये हुए उन दुर्लभ फलों का कुछ अंश भेजनेके लिये बिनयका खयाल रखने और वह सौगात भेजनेसे जो अपनापन प्रकट हुआ, उसकी खातिर न करना बिनयके लिए असंभव था।

बिनयने परेश बाबू के घरके पास पहुँच कर देखा, पूर्वोक्त पानू बाबू और अन्य कई अपरिचित आदमी परेश बाबूके घरसे निकल रहे हैं। लीलाके जन्म दिनकी दावत में दोपहरके समय उनको भोजनका निमन्त्रण दिया गया था। पानू बाबू इस तरह चले गये, जैसे उन्होंने बिनयको देखा ही नहीं।

घरमें घुसते ही बिनयने खूब जोरकी हँसी और दोड़ धूपका शब्द सुन पाया।

थोड़ी देर बाद सुचरिताने कमरेमें आकर बिनयसे कहा—मांने आपसे ज़रा बैठनेके लिए कहा है, वह अभी आती हैं। बाबूजी अनाथ बाबूके घर गये हैं, वह भी जल्दी ही आ जायेंगे। सुचरिताने बिनयका संकोच दूर करनेके लिये गोराका जिक्र छेड़ा। हँसकर कहा—जान पड़ता है वो हमारे यहाँ फिर कभी न आवेंगे ?

बिनयने पूछा—क्यों ?

सुचरिताने कहा—हम मर्दोंके सामने निकलती-पैठती हैं, यह देख निश्चय ही वह सच्चाटे में आ गये होंगे। घर गिरस्तीके कामको छोड़ कर औरतोंको और कहीं देखनेसे शायद वह उनको श्रद्धाकी दृष्टिसे नहीं देख सकते।

इसका उत्तर देनेमें बिनय कुछ मुश्किल में पड़ गया। इस बातका प्रतिषाद कर सकनेसे ही वह खुश होता, किन्तु झूठ कैसे बोले ? बिनयने कहा—गोराका मत यही है कि औरतें घरके काममें पूर्ण रूपसे मन लगावें तो उनके कर्तव्यके सम्बन्धमें एकाग्रता, नष्ट होती है।

सुचरिताने कहा—तो फिर औरत-मर्द मिल कर घर बाहरको एकदम बाँट लेते तो अच्छा होता। मर्दोंको घरमें घुसने दिया जाता है, इसलिये

सम्भव है कि उनका बाहरका कर्त्तव्य अच्छी तरह सम्पन्न न होता हो । आपभी क्या अपने मित्र की रायसे सहमत हैं ?

नारी-नीतिके बारेमें अब तक तो विनय गोराके मतका ही साथ देता आ रहा था । इस विषयको लेकर उसने पत्रों में लेख भी लिखे हैं । किन्तु इस समय यह बात उसके मुखसे निकलना नहीं चाहती थी कि उसका मत भी यही है । उसने कहा—देखिये, असलमें इन सब बातोंमें हम लोग अभ्यासके दास हैं, अर्थात् प्राचीन संस्कारके पक्षपाती हैं । इसी कारण औरतोंको बाहर निकलते देखतेही मनमें खटका सा लगता है । यह तो हम केवल जोर करके ज़बरदस्ती प्रमाणित करनेकी चेष्टा करते हैं कि अन्याय या अकर्त्तव्य होने के कारण औरतोंका घरसे बाहर निकलना ख़राब लगता है । युक्ति यहां उपलब्ध मात्र है, संस्कार ही असल चीज़ हैं ।

सुचरिताने धीरे-धीरे खोद खोद कर गोराके सम्बन्धकी आलोचनाको बन्द न होने दिया । विनय भी, 'गोराके पक्षमें, उसे जो कुछ कहना था सो खूब अच्छी तरह स्पष्ट रूपसे कहने लगा । गोरा भी शायद अपने मतको इस तरह स्पष्ट करके न कह सकता । इस अपूर्व उत्तेजनमें विनय की बुद्ध और विनयके प्रतिपादनकी—हृदयके भाव को व्यक्त करनेकी—क्षमतासे सुचरिताके मनमें एक अपूर्व आनन्द उत्पन्न होने लगा ।

विनयने कहा—देखिए, शास्त्र में कहा है, आत्मानं बिद्धि—अपने को जानो । नहीं तो मुक्ति किसी तरह नहीं है । मैं आपसे कहता हूँ, मेरा मित्र गोरा भारतवर्ष के उसी आत्मबोधके प्रकाश रूप से प्रकट हुआ है । मैं उसे साधारण आदमी नहीं समझ सकता । हम सब लोगोंका मन जब तुच्छ आकर्षणके फेर में पड़कर नवीनके प्रलोभन में बाहरकी ओर विलेप में पड़ा है, तब वही एक आदमी ऐसा है, जो उस सारी विलसिताके बीचमें अटल भावसे खड़े हो कर सिंहकी तरह गरज कर वही पुरातन मंत्र कह रहा है— आत्मानं बिद्धि ।

विनय आज परेश बाबूके घरसे सबेरे ही विदा होकर गोराके यहाँ जानेका निश्चय करके आया था । घ्रास कर गोराकी चर्चा करते-

करते, गोराकी बातें कहते-कहते, गोरा के पास जानेका उत्साह भी उसके मन में प्रबल हो उठा। इसीसे वह घड़ी में टन-टन करके चार बजते सुनकर ही चटपट कुर्सीसे उठ खड़ा हुआ।

सुचरिता ने कहा—आप अभी चल दिये ? मां आपके लिए भोजन बना रही हैं। और ज़रा देरके बाद जानेसे क्या कुछ हज़ होगा ?

विनयके लिए यह तो प्रश्न नहीं है, यह तो हुक्म है। वह वैसेही बैठ गया। लावण्य रंगीन रेशमी कपड़ोंसे सजावट किये हुए कमरे में दाखिल हुई और बोली—दीदी, भोजन तैयार है। मांने छत पर बुलाया है।

छत पर आकर विनय भोजन करने लगा। वरदासुन्दरी अपने सब बच्चोंके जीवन-वृत्तान्त की चर्चा करने लगीं। ललिता सुचरिताको घरके भीतर घसीट ले गईं। लावण्य एक चौकी पर बैठ कर गर्दन झुका कर दो लोहे की सलाइयोंसे अपना बुनने का काम करने लगी। किसीने कभी कहा था कि बुनने का काम करते समय उसकी कोमल उगलियों की क्रीड़ा बहुत सुंदर देख पड़ती है। बस तभीसे लोगोंके सामने बिला ज़रूरत बुननेका उसे अभ्यास सा हो गया था।

परेश बाबू आ गये। संध्या हो आई थी। आज रविवार को समाज-मन्दिर में उपासनाके लिए जाने की बात तय हो चुकी थी वरदासुन्दरीने विनयसे कहा—अगर कुछ आपत्ति न हो, तो क्या आप हमारे साथ समाज में चलेंगे ?

इसके ऊपर कोई उज्र नहीं किया जा सकता। दो गाड़ियों में बैठकर सब लोग उपासना के लिए गये। लौटते समय जब ये लोग गाड़ी पर चढ़ रहे थे, सुचरिता एकाएक जैसे चौंक उठी और बोली—यह गौरमोहन बाबू जा रहे हैं।

इसमें किसीको सन्देह नहीं था कि गोराने इस दल को देख लिया था। किन्तु जैसे देख नहीं पाया, ऐसा भाव दिखाकर वह तेज़ीसे चला गया। गोराके इस उद्गत अशिष्ट व्यवहारसे परेश-परिवारके निकट

लज्जित हो कर विनयने सिर नीचा कर लिया । किन्तु अपने मन में उसने स्पष्ट समझ लिया कि मुझे ही इस दलकी दलदल में देख कर गोरा ऐसे प्रबल वेग से विमुख होकर चला गया । इतनी देर तक विनयके मन में जो एक आनन्द का प्रकाश जल रहा था, वह एवदम जैसे बुझ गया । सुचरिताने विनयके मनके भाव और उसके कारणको उभी समय ताड़ लिया, और विनय ऐसे मित्र के प्रति गोराका यह अविचार तथा ब्राह्म लोगों पर उसकी यह अन्यायपूर्ण अश्रद्धा देखकर गोराके ऊपर सुचरिताको क्रोध आ गया । उसने मन ही मन किसी तरह गोराके परास्त होनेकी इच्छा की ।

गोरा जब दोपहरको भोजन करने बैठा, तब आनन्दमयीने धीरे धीरे जिक्र छेड़ा—आज सबेरे विनय आया था । तुमसे भेंट नहीं हुई ?

गोराने थालीसे सिर उठाये बिना ही कहा—भेंट हुई थी ।

आनन्दमयी बहुत देर तक चुपचाप बैठी रही । उसके बाद बोलीं उससे मैंने ठहरनेको कहा था, लेकिन वह न जाने कैसा अनमना सा होकर चला गया ।

गोराने कुछ उत्तर न दिया । आनन्दमयीने कहा—उसके मनमें नजाने कौन सा कष्ट है, गोरा । मैंने उसे इस तरह उदास कभी नहीं देखा । उसकी यह दशा देख कर मुझे बड़ा दुख हो रहा है ।

गोरा चुपचाप खा रहा था । आनन्दमयी अत्यन्त स्नेह करती थीं, इसीलिए गोरासे मन ही मन डरती थीं । वह जब खुद ही उसके आपने अपने मनका भाव व्यक्त नहीं करता था, तब वह उससे किसी बातके लिए अधिक जिद नहीं करती थीं । और दिन होता, तो यहीं पर वह चुप हो जाती, किन्तु आज विनयके लिए उसके मनमें बड़ी पीड़ा हो रही थी, इसीसे उसने फिर कहा—देखो गोरा एक बात कहती हूँ, नाराज न होना—विनय तुमको प्राणोंसे बढ़कर चाहता है, इसीसे तुम्हारी सभी बातें सहता है; किन्तु तुम जो उससे अपनी ही राह पर चलनेके लिए ज़बरदस्ती करोगे, तो वह सुखकी बात न होगी ।

गोराने बात टालनेके लिए कहा—माँ, और थोड़ा दूध ले आओ ।

बात यहीं पर खत्म हो गई । भोजनके उपरान्त आनन्दमयी अपने तख्तके ऊपर बैठ कर चुपचाप सिलाईका काम करने लगीं । लछमिया घरके किसी खास नौकरके दुर्ब्वहारके संबंधकी आलोचनामें आनन्दमयीको खींचनेकी वृथा चेष्टा करके फ़र्शके ऊपर ही लेट कर सोने लगी ।

गोराने चिट्ठी-पत्री लिखनेमें बहुत-सा समय बिता दिया। विनय आज सबेरे यह स्पष्ट देख गया है कि गोरा उस पर नाखुश है, तो भी गोरा यह जान कर कि उस नाराज़ीको दूर करनेके लिए विनयका उसके पास न आना किसी तरह संभव ही नहीं है, अपने सारे काम-काजमें भी विनयके पैरोंकी आहटके लिए कान खड़े किये हुये उसकी प्रतीक्षामें बैठा था।

समय निकल गया—विनय न आया। लिखना छोड़ कर गोरा उठने ही वाला था, इसी समय महिम आकर उपस्थित हुए। आते ही कुर्सी पर बैठ गये, और बिना किसी प्रकारकी भूमिकाके कहने लगे—शशिमुखीके ब्याहके बारेमें क्या सोचा, गोरा ?

गोराने किसी दिन इस विषय पर ध्यान ही नहीं दिया था, इसीसे उसे अपराधीकी तरह चुप रह जाना पड़ा।

गोरासे जब कोई उचित उत्तर महिमको न मिला तब उन्होंने गोराको इस चिन्ता संकट से उबारने के लिए विनयकी बात उठाई।

इस प्रसंगमें विनयकी बात उठ सकनेको गोरा ने कभी स्वप्न में भी नहीं सोचा था। विशेष करके गोरा और विनयने यह निश्चय किया था कि वे विवाह न कर के देश के कामों ही जीवन अर्पण कर देंगे। इसीसे गोराने कहा—विनय क्यों ब्याह करेगा ?

महिमने कहा—जान पड़ता है यही तुम्हारा कट्टर हिन्दूपन है ! हजार चोटी रक्खो और लिलक लगाओ, साहबी ढंग तुम्हारी हड्डियोंमें बसा हुआ है। जानते हो, शास्त्र के मतसे विवाह ब्राह्मण के लड़केका एक ज़रूरी संस्कार है ?

महिम बाबू आजकलके लड़कोंकी तरह आचार लंघन भी नहीं करते, और उधर शास्त्रकी पर्वा भी नहीं करते। होटलमें भोजन करके बहादुरी दिखानेको भी वह बहुत बढ़ जाना समझते हैं, और उधर गोराकी तरह श्रुतिस्मृतिके मतको लेकर रगड़-भगड़ करना भी प्रकृतिस्थ आदमी-

का लक्षण नहीं समझते। किन्तु यस्मिन देशे यदा चारः' के वह कायल हैं। इसीसे गोराके आगे उनको कार्य-सिद्धिके लिहाजसे शास्त्रकी दुहाई देनी पड़ी।

यह प्रस्ताव अगर दो दिन पहले आगे आता तो शायद गोरा इस पर बिल्कुल ध्यान ही न देता। किन्तु आज उसे जान पड़ा कि बात बिल्कुल उपेक्षाके योग्य भी नहीं है। कमसे कम इसी प्रस्तावको लेकर अभी विनयके घर पर जानेका एक बहाना तो मिल गया।

अंतमें गोराने कहा—अच्छा, विनयका भाव क्या है, यह तो पहले देख-सुन लूँ।

महिमने कहा—उसके देखने सुननेकी अब ज़रूरत नहीं है। तुम्हारी बातको वह किसी तरह टाल नहीं सकेगा। वह ठीक हो गया है, अब तुम्हारे कहने भरकी कसर है।

उसी संध्याके समय गोरा विनयके घर पर आकर उपस्थित हुआ। आँधीकी तरह घरमें प्रवेश करके गोराने देखा, वहाँ कोई नहीं है। नौकरको बुलाकर पूछने पर उसने कहा बाबू ७८ नंबरके घरमें गये हैं।

परेश बाबूके परिवारके विरुद्ध, ब्राह्म समाजके विरुद्ध, गोराका अंतः-करण एकदम विपाक हो उठा। वह अपने मनमें एक भारी विद्रोहका भाव लेकर परेश बाबूके घरकी तरफ तेज़ीसे चला। इच्छा थी कि वहाँ वह ऐसी सब बातें उठावेगा, जिन्हें सुनकर इस ब्राह्म-परिवारमें आगसी लग जायगी, और विनय भी बेचैन हो उठेगा।

परेश बाबूके घर जाकर सुना, कोई घरमें नहीं है, सब उपासना-मंदिरमें गये हैं। घड़ी भरके लिए मनमें संशयका उदय हुआ कि शायद विनय वहाँ नहीं गया—वह शायद इस समय उसीके घर गया हुआ है।

रहा नहीं गया। गोरा अपनी स्वाभाविक आँधी—की सी चालसे मंदिर ही की ओर गया। द्वारके पास जाकर देखा, विनय बरदासुन्दरीके पीछे उन्हींकी गाड़ी पर चढ़ रहा है—खुली सड़कके बीच निर्लज्जकी तरह

गोरा

अन्य परिवार की औरतोंके साथ एक ही गाड़ीमें जाकर बैठ रहा है !
—मूढ़ ! नागपाशमें इसी तरह अपने को फँसाना होता है ! इतनी जल्दी ! इतने सहजमें ! तो फिर मित्रता अब भद्र पुरुषके साथ नहीं रही । गोरा आँधी ही की तरह वहाँसे चल दिया । और विनय, वह गाड़ी के अंधकार के भीतर सड़ककी ओर ताकता हुआ चुपका बैठा रहा ।

बरदासुन्दरीने समझा, आचार्यका उपदेश विनय के मनमें काम कर रहा है । इसीसे उन्होंने भी विनयसे कोई बात नहीं की ।

रातको घरमें लौट आकर गोरा अंधकारमें ही छत पर टहलने लगा ।
महिम छत पर आकर हाँफते हुए कहने लगे हौं जी, विनयके पास गये थे ?

गोराने इसका स्पष्ट उत्तर न देकर कहा—विनयके साथ, शशिमुखीका ब्याह न हो सकेगा ।

महिम—व्यों, क्या विनयकी राय नहीं है ?

गोरा—मेरी राय नहीं है ।

महिमने हाथ उलटा कर कहा—खूब, यह तो और एक नया झूठ देख पड़ता है । तुम्हारी राय नहीं है क्यों ? कुछ कारण भी तो सुनूँ ।

गोरा—मैंने खूब समझ लिया है कि विनयको अपने समाजमें रोक रखना हमें कठिन होगा । उसके साथ हमारे घरकी लड़कीका ब्याह नहीं चल सकता ।

महिम—बहुत-बहुत कष्ट हिन्दू भी देखे हैं, किन्तु ऐसा और कहीं नहीं देखा । तुम तो काशी और नदिया के पंडितों से भी बड़ गए ! देखता हूँ, तुम भविष्य देख कर विधानकी व्यवस्था देते हो ।

बहुत बक-झक के बाद महिम ने कहा—तुम कुछ भी कहो, लड़कीको मैं किसी मूर्ख के हाथमें तो सौंप नहीं सकता । उसका ब्याह बंद करके मेरी लड़की को क्यों अथाह में डकेलते हो ! तुम्हारे सभी उलटे विचार हैं ।

महिमने नीचे आकर आनन्दमयीसे कहा—माँ, अपने गोराले तुम समझाओ ।

आनन्दमयीने घबरा कर पूछा—क्या हुआ ?

महिम—विनयके साथ शशिमुखीके व्याहकी बातको मैं एक तरह से पक्की ही कर चुका था। गोराको भी आजसे पहले राजी कर लिया था। लेकिन इतने ही समयमें गोराको स्पष्ट मालूम हो गया कि विनयमें हिन्दूपनकी यथेष्ट मात्रा नहीं है। इसीसे गोरा इस विवाहका विरोधी बन गया है। अब अगर तुम यत्न करो तो लड़कीका ठिकाना लग जाय। ऐसा लड़का और खोजनेसे भी नहीं मिलेगा।

इतना कहकर छत पर आ गोराके साथ जो बात चित हुई थी सो सब महिमने मांको सुना दी। विनयके साथ गोराका विरोध गहरा होता जा रहा है, यह समझ कर आनन्दमयीका मन बेचैन हो उठा।

आनन्दमयीने ऊपर आकर देखा, गोरा छत पर टढ़लना बन्द करके एक कुर्सी पर बैठ कर दूसरी कुर्सी पर पैर रखे कोई पुस्तक पढ़ रहा है। आनन्दमयी एक कुर्सी खींच कर गोराके पास ही बैठ गई। गोराने सामनेकी चौकीसे पैर उतार कर सीधे होकर माताके मुख की ओर देखा।

आनन्दमयीने कहा—बेटा गोरा, मेरी एक बात मान। विनयके साथ झगड़ा या मनमैली मत कर। मेरी निगाह में तुम दोनों दो भाई हो; तुम्हारा परस्पर बिछुड़ना मुझसे सहा न जायगा।

गोराने कहा—मित्र अगर स्नेहका बंधन काटना चाहता है, तो उसके पीछे दौड़नेमें मैं अपना समय नष्ट न कर सकूंगा।

आनन्दमयीने कहा—भैया, मुझे नहीं मालूम, तुम दोनोंके बीच क्या झगड़ा है, लेकिन अगर तुम यह विश्वास करो कि विनय तुम्हारे स्नेह-बंधनको तोड़ना चाहता है, तो फिर तुम्हारा मित्रताका जोर कहाँ रहा ?

गोरा—मैं सीधे चलना पसंद करता हूँ। दो नावोंमें पैर रखना जिसका स्वभाव है, उसे अवश्य मेरी नावसे पैर उठा लेना होगा, इसमें चाहे मुझे कष्ट हो और चाहे उसे कष्ट हो।

आनन्दमयी—अच्छा हुआ क्या, बताओ तो ! ब्राह्म लोगोंके घरमें बह आता जाता है, यही तो उसका अपराध है ?

गोरा—इसमें बहुत सी बातें हैं, मां ।

आनन्दमयी—होंगी बहुत बातें—किन्तु मैं केवल एक बात कहती हूँ । सभी बातोंमें तुम्हारी ऐसी और इतनी ज़िद है कि तुम जो पकड़ते हो उसे कोई तुमसे छुड़ा नहीं सकता । फिर विनयसे ही तुम इतना क्यों चिढ़ते हो ? क्यों उसे इतने सहजमें छोड़ देना चाहते हो ? तुम्हारा अविनाश अगर दल छीड़ना चाहता तो क्या उसे तुम इस तरह सहजमें छोड़ देते ? तुम्हारा मित्र होने ही के कारण क्या विनय तुम्हारी दृष्टिमें उन सबसे कम या निकम्मा है ?

गोरा चुप होकर सोचने लगा । आनन्दमयीकी इस बातने उसकी आँखें जैसे खोल दीं, उसे अपना मन अच्छी तरह स्पष्ट दिखाई देने लगा । अब तक वह सोच रहा था कि मैं कर्त्तव्यकी खातिरसे विनयके बन्धुत्वको विसर्जन करने जा रहा हूँ, किन्तु इस समय उसे स्पष्ट जान पड़ा कि असल में बात बिल्कुल इससे उलटी है । उसके बन्धुत्वके अभिमानमें धक्का लगा है—उसे वेदना पहुँची है—इसीसे वह विनयको बन्धुत्वका चरम दण्ड देनेके लिए उद्यत हुआ है । वह अपने मनमें जानता था कि विनयको बांध रखनेके लिए बन्धुत्वका बन्धन ही यथेष्ट है, अन्य कोई चेष्टा प्रणयका असम्मान है ।

आनन्दमयीने जैसे समझा कि उनकी बात गोराके मनमें कुछ अपना असर कर गई है ; वैसे ही वह फिर कुछ न कह कर धीरे धीरे उठनेको उद्यत हुई । गोरा भी एकाएक वेगसे उठ बैठा और अरगनीसे चादर उतार कर कंधे पर ढाली ।

आनन्दमयीने पूछा—कहां जाते हो गोरा ?

गोराने कहा—मैं विनयके घर जा रहा हूँ ।

आनन्दमयी और कुछ न कह कर नीचेकी तरफ चली, सीढ़ियों पर पैरोंकी आहट सुनकर एकाएक रुक कर बोली—लो, विनय आप ही आगया ।

कहते ही विनय आ पहुँचा। आनन्दमयीकी आँखोंमें आँसू भर आये। उन्होंने स्नेहसे विनयके शरीर पर हाथ फेर कर कहा—विनय भैया, तुम खाकर नहीं आये ?

विनयने कहा—नहीं, माँ।

आनन्द०—आज तुम यहीं खाना।

विनयने एक बार गोरामें मुँहकी ओर देखा। गोराने कहा—विनय, तुम्हारी बही उम्र है। मैं तुम्हारे ही यहाँ जा रहा था।

आनन्दमयीकी छातीका बोझ जैसे उतर गया। वह चटपट नीचे चली गई।

दोनों मित्र बैठकमें आकर बैठे। गोराने जो ज़बानमें आया, वही कह कर मौन भंग किया।

दोनों जब खानेको बैठ गये, तब आनन्दमयीको उनकी बातचीतसे मालूम हुआ कि अभी तक उनके दिल साफ़ नहीं हुए। दोनों ओरसे सफ़ाई नहीं हुई; पर्दा नहीं हटा, रुकावट मौजूद है। उन्होंने कहा—विनय रात अधिक हो गई है, तुम आज यहीं सो रहो। मैं तुम्हारे घर पर खबर भेजे देती हूँ।

विनयने एक चाँकत दृष्टि गोरामें मुँह पर डाली और बोला—
“भुक्त्वा राजबदाचरेत”—खाकर राजाकी तरह रहे। खाकर राह चलना नियम विरुद्ध है ही। खैर, तो आज यहीं सोना होगा।

भोजनके बाद दोनों मित्र छत पर आकर चटार्ई बिछाकर बैठे।

गिर्जेकी घड़ीमें ग्यारह बज गये। गाड़ियोंके चलनेकी घरघराहट धीमी पड़ गई थी। गोरे अंग्रेजोंके मुहल्ले और गलीमें किसीके जागनेका कोई लक्षण नहीं देख पड़ता था केवल पड़ोसीके अस्तबलमें काठके कर्श पर घोड़ेकी टापका शब्द कभी-कभी सुन पड़ता था, या कभी-कभी कुत्ते भूकने लगते थे।

दोनों बहुत देर तक चुप रहे। उसके बाद विनयने कहा—भाई गोरा, मेरा हृदय भर उठा है, किन्तु तुमसे कहे बिना मुझसे नहीं रहा जायगा।

मैं भला बुरा कुछ समझ नहीं पाता, लेकिन यह निश्चय है कि इसके साथ कोई चातुरी नहीं चलेगी। किताबोंमें बहुत सी बातें पढ़ी हैं, और अब तक यही कहता आया हूँ कि मैं सब जानता हूँ। ठीक जैसे चित्र में जल देखकर समझता था कि तैरना खूब सहज है, मगर आज जलके भीतर गिरकर दम भरमें समझ गया हूँ कि यह तो मिथ्या नहीं है।

यह कहकर विनय अपने जीवनकी इस विचित्र घटनाको बड़ी धीरता से गोराके सामने प्रकट करने लगा।

वह कहने लगा—आजकल मेरे लिए दिन-रातमें कुछ अन्तर नहीं है। समस्त आकाश-मंडलमें मानों रती भर जगह कहीं खाली नहीं है। सारा आकाश मानों किसी एक कठिन पदार्थसे भर गया है। मधु मासमें मधुका छूता जैसे मधुसे भरकर फटना चाहता है, वही दशा मेरी है। आज सभी पदार्थ एक अपूर्व भावसे मेरे सामने प्रतीयमान हो रहे हैं। मैं नहीं जानता था कि संसार की सभी वस्तुओंको मैं इतना प्यार करता हूँ, आकाश ऐसा विचित्र होता है, प्रकाश ऐसा अपूर्व होता है। रास्तेके अपरिचित पथिकका प्रभाव भी ऐसी गम्भीरता से सत्य होता है। मेरा जी चाहता है, सबके लिए मैं कुछ करूँ; मैं अपनी सम्पूर्ण शक्तको आकाशके सूर्यकी भाँति संसारकी एक चिरस्थायी वस्तु बना डालूँ।

विनय किसी व्यक्ति विशेष के प्रसङ्गमें यह सब बातें कह रहा है, यह स्पष्ट रूपसे समझमें नहीं आता। मानों वह किसीका नाम मुँह पर नहीं ला सकता। संकेतसे भी नाम सूचित करनेमें वह कुण्ठित हो पड़ता है। वह जिस मानसिक भावकी आलोचना कर रहा है, इसके लिए मानों वह किसीके निकट अपने अपराधका अनुभव कर रहा है। इसे वह एक प्रकार का अन्याय और किसीके प्रति गुप्त अपमान करना समझता है। किन्तु आज इस निःशब्द रातमें निःस्तब्ध आकाशमें सुनी जगहमें मित्रके पास बैठकर वह इस अन्यायको किसी तरह छिपा न सका।

“अहा ! वह सुख क्या है मानों निष्कलङ्क पूर्ण चन्द्र है। उसके निर्मल प्रायोंकी आभा उसके आलकी कोमलतामें क्या ही मनोहर भावसे

विकसित हो रही है। मुसकुराते ही उसका चेहरा कमल सा खिल उठता है। उस मुखके सौन्दर्यकी उपमा चन्द्रमासे दूं या कमलसे ! उसकी वह चिकुर राशि उसके वे दोनों कटीले नेत्र ! उसकी वह सीधी चितवन चित्त को चुराये लेती है। मानों वह मधुर मूर्त्ति मेरी आँखोंके सामने खड़ी है मानो वह मुझसे बातें कर रही है।' विनय अपने जीवनको और युष्मत्त्व को धन्य मान रहा है। इस नूतन आनन्दसे उसका हृदय रह रहकर फूल उठता है। संसारके अधिकांश लोग जिसे न देखकर ही जीवन को बिता डालते हैं। उसे विनय इस तरह आँखोंके सामने मूर्त्तिमान् देख सकता है इससे बढ़कर आश्चर्य की बात और क्या हो सकती है

किन्तु यह कैसा पागलपन है ! कैसा अन्याय है। जो हो पर यह अब किसी तरह मनमें रोका नहीं जा सकता। इस प्रेम प्रवाहका यदि कोई किनारा बता दे तो अच्छा है। नहीं तो यदि किसीने उसमें ढकेल दिया किसी तरह उसके भीतर धँस पड़ा तो फिर बाहर निकलने का उपाय क्या है !

कठिन तो यह कि उसमेंसे बाहर होने की इच्छा भी नहीं होती। इतने दिनों के समस्त संस्कार और सारी मर्यादा को खो देना ही मानों जीवनका सार्थक परिणाम जान पड़ता है।

गोरा चुपचाप सुनने लगा। इस छत पर ऐसे सप्ताटेकी चाँदनी रातमें और कितने ही दिन इन दोनोंमें कितनी ही बातें हो गई हैं। साहित्य काव्यालाप और लोक चरित्र की कितनी ही आलोचना हुई है; समाज की कितनी ही आलोचना और भविष्यत जीवन यात्राके सम्बन्धमें कितने ही संकल्प हुए हैं; परन्तु ऐसी बात इसके पूर्व किसी दिन न हुई थी। मनुष्य हृदयका ऐसा एक सत्य पदार्थ ऐसा एक प्रबल प्रकाश इस प्रकार गोराके सामने कभी नहीं पड़ा था। इन व्यापारोंको वह कविका चमत्कार ससम्भर इतने दिन तक सम्पूर्ण रूपसे उनकी उपेक्षा करता आया है। किन्तु आज इन्हें प्रत्यक्ष देख वह किसी तरह अस्वीकार न कर सका। इतना ही नहीं, इसके प्रबल वेगने उसके मनको चञ्चल कर दिया। उसके

सारे शरीर में रोमाञ्च हो आया। एक छिपी हुई शक्ति उसकी नस-नसमें बिजलीकी तरह दौड़ गई। उसकी जवानीके एक अज्ञात अंशका पर्दा कुछ देर के लिए हट गया और उस—इतने दिनकी बन्द—कोठरीके भीतर इस शरत्कालिक निशीथ-चन्द्रिकाने प्रवेश करके एक अपूर्व मायाका विस्तार कर दिया।

चन्द्रमा किस समय पच्छिमकी ओर झुका, जिस समय छतोंसे नीचे उतर गया यह इन दोनोंने नहीं जाना। देखते देखते पूरब ओर आसमानमें सफ़ेदी छा गई। तब विनयका जी कुछ हलका हुआ और मनमें कुछ लज्जा हुई। वह कुछ देर चुप रहकर बोला—मेरी ये बातें तुम्हारे समीप बड़ी तुच्छ हैं, तुम मन ही मन मेरी निन्दा करते होगे; किन्तु तुम्हीं कहो मैं क्या करूँ, मैंने तुमसे कभी कोई बात छिपाई नहीं, आज भी कुछ नहीं छिपाया। तुम समझो या न समझो।

गोरा ने कहा—विनय, मैं नहीं कह सकता कि मैं इन बातोंको ठीक-ठीक समझ गया। दो दिन पहले तुम भी इन्हें नहीं समझते थे। इतनी बड़ी उम्रमें आज तक ये आवेग और आवेश बड़े ही तुच्छ जँचते थे, इस बातको भी मैं अस्वीकार नहीं कर सकता। इससे मैं अब यह नहीं कह सकता कि यथार्थमें ही यह इतना तुच्छ विषय है। मैंने इसकी शक्ति और गम्भीरताको कभी प्रत्यक्ष नहीं देखा, इसी कारण यह मेरे पास अपदार्थकी भाँति मिथ्या प्रतीत होता था। किन्तु तुम्हारे इतने बड़े अनुभव को मैं झूठ कैसे कहूँ? असल बात यह है कि जो व्यक्ति जिस मण्डलीके भीतर है, उस मंडलीके बाहरका सत्य पदार्थ यदि उसकी दृष्टिमें छोटा न जान पड़े तो उससे उसकी मंडलीका कोई काम नहीं हो सकता; वह कोई काम कर ही नहीं सकता। इसी लिए ईश्वरने दूरकी वस्तु मनुष्यकी दृष्टिमें छोटी कर दी है। सम्पूर्ण सत्यके समान दिखाकर वह लोगों को महाविपत्ति में डालना नहीं चाहता। हम लोगों को कोई एक दिशा निर्दिष्ट कर उस ओर जाना ही होगा। एक साथ सब ओर दौड़नेकी लाजब छोड़नी होगी। नहीं तो—“एकै साधे सब सधे सब

साधे सब जाय'—की कहावत चरितार्थ होगी। किसी एक मार्ग का अवलम्बन करना ही ठीक है; नहीं तो सत्यकी प्राप्ति न होगी। तुम जिस जगह खड़े होकर आज सत्यकी जिस मूर्त्ति को आँखों देख रहे हो, मैं उस मूर्त्तिका अभिवादक करनेके लिए वहाँ तक न पहुँच सकूँगा। इससे मैं अपने जीवनके सत्यको भी खो डालूँगा। इन और सत्य और उस और असत्य।

विनय—सत्य तुम्हारी ओर, और असत्य मेरी ओर। मैं अपने को पूर्ण करना चाहता हूँ और तुम अपना जीवन उत्सर्ग करने के लिए खड़े हो।

गोराने कुछ तीव्र होकर कहा—विनय, तुम बात-बात में काव्य मत करो। तुम्हारी बातें सुनकर मैं यह स्पष्ट समझ गया हूँ कि तुम आज अपने जीवनमें एक प्रबल सत्यके सामने मुँह करके खड़े हुए हो, उसके साथ कपट चल नहीं सकता। सत्यकी रक्षा करनेसे उसके पास आत्म समर्पण करना ही होगा। इसमें अन्यथा हो नहीं सकता। मैं जिस समाज के भीतर हूँ, उस समाजके सत्यको मैं भी एक दिन इसी तरह प्रत्यक्ष देखूँ, यही मेरी इच्छा है। तुम इतने दिन तक काव्यमें पड़े हुए प्रेमके परिचयसे ही तृप्त थे—मैं भी पुस्तकोंमें उल्लिखित स्वदेश-प्रेमको ही जानता हूँ। आज प्रेम जब तुम्हारे पास प्रत्यक्ष हुआ तब तुम समझ सके हो कि पुस्तकोंमें पठित विषयकी अपेक्षा यह कितना सत्य है। इसने तुम्हारे समस्त चराचर जगत्को अधिकारमें कर लिया है, तुम इसके हाथसे अब उद्धार नहीं पा सकते। इसके अधिकारसे बाहर जानेकी अब तुम्हें कोई जगह नहीं है। स्वदेश प्रेम जिस दिन मेरे सामने इस प्रकार पूरे तौर से प्रत्यक्ष होगा उस दिन मेरी भी यही गति होगी, मैं भी इसी तरह संसार को एक और ही रूप में देखूँगा। उस दिन वह मेरे धन-प्राण मेरे रक्त मांस, मेरे आकाश विकाश और मेरे जो कुछ हैं, सभीको अनायास ही अपनी ओर खींच लेगा। स्वदेश की वह सत्यमूर्त्ति क्या ही आश्चर्यस्वरूप है। उसके आनन्द और विषाद दोनों

बड़े ही प्रबल प्रचंड हैं, जो बाढ़के तीव्र वेगकी भाँति जीवन मृत्युकी बातकी बातमें पार कर जाते हैं। तुम्हारी बात सुनकर आज मन ही मन उनका कुछ कुछ अनुभव कर सका हूँ। तुम्हारे जीवनकी इस अभिव्यक्ति मेरे जीवनको चोट पहुँचाई है। तुमने जो अनुभव किया है, वह मैं किसी किसी दिन समझ सकूँगा या नहीं यह मैं नहीं जानता किन्तु मैं जो पाना चाहता हूँ उसके स्वादका कुछ अनुभव मानों तुम्हारे अन्तःकरण के ही द्वारा मैंने किया है।

यह कहता हुआ गोरा चटाईसे उठकर छत पर टहलने लगा। पूर्व दिशा की उपःकालिक स्वच्छता उसके पास मानों एक प्राकृतिक वायुकी भाँति प्रकट हुई। मानों पुराने तपोवनका एक वेदमन्त्र उसके सामने प्रत्यक्ष हुआ। उसका सम्पूर्ण शरीर कण्टकित हो गया। कुछ देर तक वह ठिठक कर खड़ा हो रहा। जल भरके लिए उसे ऐसा लगा मानों उसके ब्रह्म रन्ध्रको भेदकर एक ज्योतिलेखा, सूक्ष्म मृणाल की तरह, उठकर ज्योतिर्मय शतदल में—समस्त आकाशमें—परिव्याप्त होकर विकसित हो गई। उसके प्राण, समस्त चेतना और सारी शक्ति सब मानों इससे एकाएक परम आनन्दमें निःशेष हो गये।

कुछ देर पीछे जब वह प्रकृतिस्थ हुआ तब सहसा बोल उठा—विनय तुम्हें इस प्रेमको भी लांघकर मेरा साथ देना होगा। मैं कहता हूँ कि वहाँ उलझनेसे काम न चलेगा। मुझे जो महाशक्ति अपनी ओर बुला रही है, वह कितनी बड़ी प्रभावशालिनी है, और कितनी सत्य है, यह किसी दिन मैं तुमको दिखाऊँगा। मेरे मनमें आज बड़ा हर्ष हो रहा है। मैं अब तुमको किसीके हाथमें जाने न दूँगा। अब मैं तुम्हें छोड़ नहीं सकता।

विनय चटाई छोड़कर गोराके पास आ खड़ा हुआ। गोराने उसे एक अपूर्व उत्साहके साथ दोनों हाथोंसे आलिङ्गन कर कहा—विनय, हम तुम दोनों एक साथ जिएँगे-मरेंगे; हम दोनों एक होकर रहेंगे। हम दोनोंको कोई जुदा नहीं कर सकेगा, कोई बाधा न दे सकेगा।

गोराके इस गम्भीर उत्साह का वेग विनय के हृदय में भी तरङ्गित होने लगा;—उसने अपने आपको बिना कुछ कहे-सुने गोराके आकर्षणमें खोब दिया ।

गोरा और विनय दोनों पास ही पास चुपचाप घूमने लगे । पूर्व आकाशमें लालिमा छा गई । गोराने कहा—भाई, मैं अपनी देवीको जहाँ देख रहा हूँ, वह सौन्दर्यके बीचकी जगह नहीं है । वहाँ तो दुर्भिक्ष और दरिद्रताका निवास है, वहाँ केवल कष्ट और अपमान भरा है । वहाँ गीत गाकर और फूल चढ़ाकर पूजा करनेसे क्या होगा ? वहाँ प्राण देकर पूजा करनी होगी । देवी की आराधनाके लिए बलिदानकी आवश्यकता है । आत्म समर्पणको ही मैं सबसे बढ़कर पूजाका उपकरण समझता हूँ । इस प्रकारकी पूजामें मुझे जितना हर्ष होता है उतना और किसीमें नहीं । वहाँ सुखके द्वारा भूलनेकी कोई सामग्री नहीं । वहाँ अपनी शक्ति भर जागना होगा—सब कुछ देना होगा । वहाँ माधुर्यका लेश नहीं, वहाँ एक दुर्जय दुःसह साहसका आविर्भाव है । इसके भीतर एक ऐसा कठिन झट्टार है जिससे हाथमें एक साथ सातों सुर बोल उठते हैं और तार टूटकर गिर पड़ते हैं । इसके स्मरण मात्रसे मेरे हृदयमें उत्साह जाग उठता है । मेरे मनमें होता है, यह आनन्द ही पुरुषका आनन्द है—यही जीवनका ताण्डव नृत्य है । पुरातन प्रलय यज्ञकी अग्निशिखाके ऊपर नई अद्भुत मूर्ति देखने ही के लिए पुरुषार्थ साधनकी आवश्यकता है । रक्तिमा भरे आकाश क्षेत्रमें एक बन्धन रहित ज्योतिर्मय भविष्यत्को मैं देख रहा हूँ । देखो, मेरे हृदयके भीतर कौन डमरू बजा रहा है—यह कहकर गोराने विनयका हाथ लेकर अपनी छातीके ऊपर दबा रक्खा ।

विनयने कहा—मैं तुम्हारे ही साथ चलूँगा । किन्तु मैं तुमसे कहता हूँ कि मुझे कभी किसी ओर बहकने मत देना । तुम जिधर जाओ उधर मुझे भी, विधाता की तरह, निर्दय होकर खींचे लिये चलो । हमारा तुम्हारा—दोनोंका मार्ग एक ही होगा—किन्तु मेरी और तुम्हारी शक्ति तो बराबर नहीं है ।

गोरा— हम लोगोंकी प्रकृतिमें भेद है, किन्तु एक महान् आनन्दसे हम अपनी भिन्न प्रकृतिको एक कर देंगे। तुममें और हममें जो प्रेम है वह सामान्य प्रेम है, इसकी अपेक्षा जो बड़ा प्रेम है, उसके द्वारा हम तुम दोनों मिलकर एक हो जायेंगे। वह अखण्ड प्रेम जब तक स्वरूपमें परिणत न होगा तब तक हम दोनोंके बीच पन-पगमें अनेक आघात-संघात, विरोध-विच्छेद होते ही रहेंगे। इसके बाद एक दिन हम लोग सब भूलकर, अपनी विभिन्नता और अपनी मित्रता को भी भूलकर, एक बहुत बड़े आत्मत्यागके भीतर अटल बल से मिलकर खड़े हो सकेंगे। वह निविड़ आनन्द ही हम लोगों की मित्रताका अन्तिम परिणाम होगा।

बिनयने गोराका हाथ पकड़कर कहा—यही।

गोरा—उतने दिन तक मैं तुमका अनेक काट दूंगा। मेरे सब अत्याचार तुमको सहने पड़ेंगे। हम लोग क्या अपनी मित्रताको जीबनके अन्तिम लक्ष्य तक न निभा सकेंगे? जैसे होगा, उसे बचाकर चलेंगे, कभी उसका अनादर न करेंगे। इतने पर भी यदि मित्रता न रहेगी तो उपाय क्या है, किन्तु यदि बच रहे तो वह अवश्य एक दिन सफल होगी।

इही समय दोनोंने किसीके पैरों की आहटसे चौंककर पीछेकी ओर देखा, आनन्दमयी छतके ऊपर आई है। उसने दोनोंके हाथ पकड़ कमरे की ओर खींचकर कहा—चलो, सोनेको चलो, रात भर जागते रहे हो, अब जाकर सो जाओ।

दोनोंने कहा—माँ, अब नींद न आवेगी।

“आवेगी जरूर” यह कहकर आनन्दमयी जबरदस्ती दोनोंको कमरेके भीतर ले आई और दोनोंके बिछौने पर पास ही पास सुलाकर कमरेका द्वार बन्द कर दिया और दोनों के सिरहाने बैठकर पंखा झलने लगी।

बिनय ने कहा—माँ, तुम यहाँ बैठकर पंखा झलोगी तो हमें नींद न आवेगी।

आनन्द—देखूंगी कैसे नींद नहीं आती है। मेरे चले जाने पर फिर तुम दोनों बातें करना आरम्भ करोगे, मेरे रहने से वह न होगा।

कुछ देर में दोनों सो गये । आनन्दमयी धीरे-धीरे कमरे से बहर चली गई । सीढ़ी परसे उतरते समय देखा कि महिम ऊपर आ रहे हैं । आनन्दमयीने कहा—अभी लौटो, कल वे दोनों सारी रात जागते रहे हैं । मैं अभी उन्हें सुलाकर चली आ रहा हूँ ।

महिम—वाह ! इसी का नाम मित्रता है ! ब्याह की बात कुछ चली थी, जानती हो ?

आनन्दमयी—नहीं जानती ।

महिम—मालूम होता है कुछ ठीक हो गया है । कब नींद टूटेगी ? शीघ्र ब्याह न होनेसे अनेक विघ्न उपस्थित होंगे ।

आनन्दमयीने हँसकर कहा—उन दोनोंको भली भाँति सोने दो । विघ्न न होगा । आज दिनमें ही नींद टूटेगी ।

वरदासुन्दरीने कहा—आप सुचरिताका ब्याह कहीं करेंगे या नहीं ?
परेश बाबूने अपने स्वाभाविक शान्त गम्भीर भावसे कुछ देर तक पकी दाढ़ी पर हाथ फेरा पीछे कोमल स्वरमें कहा—कहीं लड़का मिले भी तो ।

वरदा सुन्दरी—क्यों पानू बाबू के साथ उसके ब्याहकी बात तो ठीक हुई है । हम सब पहले से यह बात जानते हैं—सुचरिता भी जानती है ।

परेश—मैं जहां तक जानता हूं सुचरिता पानू बाबू को पहले से नहीं चाहती ।

वरदा सुन्दरी—यह बात मुझे अच्छी नहीं लगती । सुचरिता को मैं अपनी लड़कियोंसे कभी अलग करके नहीं देखती । इसीसे मैं यह साहस करती हूं कि वे भी तो कुछ ऐसे वैसे नहीं हैं । पानू बाबू के समान विद्वान धार्मिक पुरुष अगर उसे चाहते हैं तो क्या यह उसके लिए कम सौभाग्यकी बात है ? यह अवसर क्या हाथसे जाने देने योग्य है ? आप चाहे जो कहें मेरी लावण्यतो देखनेमें उससे कहीं अच्छी है किन्तु मैं आप से कहे देती हूं कि हम जिसे पसन्द करेंगी वह उसीके साथ ब्याह करेगी कभी “नाहीं” न करेगी । आप यदि सुचरिताके दिमाग को आसमान पर चढ़ा दें तो फिर उसके लिए बर मिलना कठिन होगा ।

परेश बाबू इस पर कुछ न बोले । वरदा सुन्दरी के साथ वे कभी विवाद न करते थे । विशेषकर सुचरिता के सम्बन्ध में ।

सतीशको जनमाकर जब सुचरिता की माँ मर गई तब सुचरिता सात वर्ष की थी । उसका पिता रामशरण हवलदार, स्त्रीकी मृत्यु के बाद, ब्राह्म समाजमें जा मिला । बादमें लोगोंके अत्याचारसे तज़ आकर, वह शका चला गया । वह जब वहाँके डाकघरमें काम करता था तब परेशबाबू

के साथ उसकी गाड़ी मैत्री हुई। सुचरिता तबसे परेश बाबू को अपने पिता के समान मानने लगी।

रामशरण अचानक मर गया। उसके पास जो कुछ जमापूँजी थी, वह अपने बेटे और बेटाको बांट देने का भार परेश बाबू को दे गया था। तबसे सतीश और सुचरिता दोनों परेश बाबूके घर रहने लगे।

पाठक पहले ही जान चुके हैं, हारानचन्द्र उर्फ पानू बाबू बड़े उत्साही ब्राह्म थे। ब्राह्म समाजके सभी काम उनके हाथमें थे। वह रात्रि पाठशाला के शिक्षक, समाचार पत्र सम्पादक और स्रो विद्यालयके मन्त्री थे। किसी भी काममें उनकी शिथिलता नहीं पाई जाती थी। सभीके मनमें यही आशा थी कि यही युवक एक दिन ब्राह्म समाज का ऊँचा आसन ग्रहण करेगा। विशेष कर अंगरेजी भाषामें पानू बाबू के अधिकार और दर्शन शास्त्रमें उनकी पारदशिताके सम्बन्धमें उनका यश विद्यालयके छात्रोंके द्वारा ब्राह्म समाजके बाहर भी दूर दूर तक फैल गया था।

इन सब गुणोंके कारण अन्यान्य ब्राह्मणोंकी भाँति सुचरिता भी हारान बाबू पर विशेष श्रद्धा रखती थी। ठाकेसे कलकत्ते आते समय हारान बाबूके साथ परिचय होनेके लिए उसके मनमें विशेष उत्सुकता भी उत्पन्न हुई थी।

अन्तमें प्रसिद्ध हारान बाबूके साथ केवल परिचय ही होकर नहीं रहा किन्तु, थोड़े ही दिनोंमें, सुचरिताके प्रति अपने हृदयका अनुराग दिखलाने में हारान बाबूने कुछ संकोच न किया। स्पष्ट रूपसे उन्होंने सुचरिताके निकट प्रेम भले ही प्रकट न किया हो, किन्तु सुचरिताकी सब तरहकी कमियोंको पूर्ण करनेमें, उसकी त्रुटियोंके संशोधनमें, उसके उत्साहको बढ़ाने में, उसकी उन्नतिमें उन्होंने ऐसा मन लगाया—ऐसा ध्यान दिया—कि यह बात सबको स्पष्ट विदित हो गई कि सुचरिताको विशेष रूपसे अपने लायक सहधर्मिणी या जीवनसंगिनी बनानेकी उनकी प्रबल इच्छा है।

सुचरिताने जब जाना कि मैंने प्रसिद्ध हारान बाबूके मन पर विजय प्राप्त की है तब वह मनमें कुछ-कुछ भक्तिके साथ गर्वका अनुभव करने लगी।

खड़कीवाले की ओरसे कोई प्रस्ताव उपस्थित न होने पर भी हारान

बाबूके ही साथ सुचरिताका विवाह होना जब सभीने निश्चय समझ लिया तब सुचरिताने भी मन ही मन उसमें योग दिया था। सुचरिताकी एक विशेष इच्छा यह थी कि हारान बाबूने ब्राह्म समाजके जिस हित-साधनके लिए अपना जीवन उत्सर्ग किया है, उनके सभी कार्योंमें मदद दे सकूंगी। विवाहकी यह कल्पना उसके लिए भय, आवेग और कठिन उत्तरदायित्व ज्ञान द्वारा बने हुए पत्थरके दुर्गकी भाँति अभेद्य मालूम होने लगी। वह केवल सुखसे रहनेका किला नहीं है, वह तो युद्ध करनेके ही लिए रचा गया है। उस किले पर अधिकार करना सहज नहीं है।

इसी अवस्थामें यदि विवाह हो जाता तो किसी तरह कन्यापक्ष वाले इस ब्याहको सौभाग्य ही मानते। किन्तु हारान बाबू अपने उत्सर्ग किये हुए महान् जीवनकी जिम्मेदारीको इतनी ऊँची दृष्टिसे देखते थे कि केवल प्रेमसे आकर्षित होकर ब्याह करना उन्होंने अपने लिए अयोग्य समझा। इस विवाह से ब्राह्म समाजको कहाँ तक लाभ पहुँचेगा, यह भली भाँति बिना सोचे इस कार्यमें प्रवृत्त न हो सकें इस कारण प्रेमकी दृष्टिसे नहीं, बल्कि ब्राह्म समाजकी दृष्टिसे सुचरिताकी परीक्षा करने लगे।

इस तरहसे परीक्षा करनेमें परीक्षा देनी भी पड़ती है। हारान बाबू परेश बाबूके घरमें सुपरिचित हो उठे। यहाँ तक कि उन्हें उनके घरके लोग जिस पानू बाबू के नामसे पुकारते थे, उनके उस नामका प्रचार इस परिवारमें भी हो गया। अब उन्हें केवल अङ्गरेजीके भण्डार तत्व ज्ञान के आधार और ब्राह्मसमाजके मंगलके अवतार के रूपसे देखना असम्भव हो गया। वह भी मनुष्य ही हैं, उनका यही परिचय सब प्रकारके परिचयोंसे बढ़ कर निकटवर्ती और सहज हो उठा। तब वह केवल श्रद्धा और सम्मानके अधिकारी न होकर अच्छे और बुरे लगने के भावके वशवर्ती हो गये।

आश्चर्यकी तो बात यह है कि हारान बाबूके जिस भावने पहले दूरसे सुचरिताके मनमें भक्तिका संचार किया था, उसे अपनी ओर अधिकाधिक आकर्षित करना शुरू किया था, वही भाव घनिष्टता और निकटवर्ती होने पर उसे चोट पहुँचाने लगा। ब्राह्मसमाजके भीतर जो कुछ

सत्य है मंगल और सुन्दर है, उसके अविभावक-स्वरूप हो कर हारान बाबूने उसकी संरक्षताका भार ले लिया था, इसी कारण उन्हें अत्यन्त असंगत रूपसे छोटा देखना पड़ा। सत्यके साथ मनुष्यका जो यथार्थ सम्बन्ध है, वह भक्ति का सम्बन्ध है, और वह मनुष्य को स्वभावसे ही विनम्र विनीत बना देता है। किन्तु विनम्र न बन कर जहाँ मनुष्य उद्धत और अहंकारी बन जाता है, वहाँ वह अपनी क्षुद्रताको उस सत्यकी ही तुलनामें अत्यन्त सुस्पष्ट रूपसे प्रकट करता है। यहीं पर परेश बाबूके साथ हारानका भेद सुचरिताने देखा और मन ही मन उसकी आलोचना किये बिना उससे नहीं रहा गया। परेश बाबू के मुखमंडलकी शांत छवि देखते ही उस सत्य का महत्व नजर आता है, जिसे वह हृदय में धारण किये हुए है। किन्तु हारान बाबूका हाल वैसा नहीं है। ब्राह्मसमाजीपनकी पोशाकके भीतर अपनेको प्रकट करने की उनकी उग्र प्रवृत्ति और सब कुछ ढक कर उनकी सभी बातों और कामोंमें अशोभन अभद्र रूपसे जाहिर हुआ करती है।

हारान बाबू जब ब्राह्मसमाजकी भलाई पर लक्ष्य करके विचारके समय परेश बाबूको भी अपराधी बताना चाहते थे, उन्हें भी कोरा नहीं छोड़ते थे, तभी सुचरिता जैसे चोट खाई हुई नागिन की तरह ऐठने लगती थी। उससे यह व्यवहार नहीं सहा जाता था। उस समय बङ्गदेशके बीच शिंचित मण्डलीमें भगवद्गीता का पठन पाठन प्रचलित न था। किन्तु परेश बाबू सुचरिता को पास बिठाकर कभी-कभी गीता पढ़ते थे—काली सिंह बाबूका वङ्गानुवाद महाभारत भी प्रायः सभी उन्होंने पढ़कर सुचरिताको सुना दिया था। हारान बाबू को यह अच्छा न लगता था। वह ब्रह्मपरिवार में इन सब ग्रन्थों के बायकाटके पक्षपाती थे। उन्होंने खुद भी कभी ये ग्रन्थ नहीं पढ़े। वह रामायण, महाभारत, गीता आदिको गपोड़े-पसन्द गँवार पुराने खयालके कुसंस्काराच्छन्न हिन्दुओं की चीज समझ कर उन्हें दूर रखना चाहते थे। धर्मशास्त्रोंमें केवल बाइबिल ही उनका एकमात्र सहारा थी। परेश बाबू जो अपनी शास्त्र-चर्चा और

छोटे मोटे अन्य अनेक मामलोंमें ब्राह्म-अब्राह्मकी हद बांधकर नहीं चलते थे, यह बात हारान बाबूको बहुत बुरी मालूम होती थी; जैसे कोई उनके शरीरमें कांटे चुभोता था। परेश बाबूके आचरण पर कोई जाहिरा या मनही मन किसी तरह का दोषारोपण करें, ऐसी स्पद्धा को सुचरिता कभी सह नहीं सकती। और ऐसी स्पद्धा प्रकट हो पड़नेसे ही हारान बाबू सुचरिता की नज़रो में हेच हो गये थे। यहाँ तक कि इस ओछेपनके आचरण से उसे उन पर अश्रद्धा सी हो चली थी।

हारान बाबूके सांप्रदायिक उत्साहके अत्याचार और संकीर्ण रूखेपनसे यद्यपि सुचरिताका मन भीतर ही भीतर प्रतिदिन उनकी ओरसे बिमुख होता जा रहा था, तथापि हारान बाबूके ही साथ सुचरिताका ब्याह होनेके बारे में किसी पक्षके मनमें कोई तर्क या सन्देह नहीं था। धर्म-समाजकी दुकानमें जो व्यक्ति अपने ऊपर खूब बड़े बड़े अक्षरोंमें उच्च मूल्यकी चिट चिपका रखता है, अन्य लोग भी क्रमशः उसके महँगेपनको—मूल्यकी अधिकता को—स्वीकार कर लेते हैं। यहाँ तक कि परेश बाबूने भी मन ही मन सुचरिताके सम्बन्धमें हारान बाबूके दावेको अप्राप्त नहीं किया। सभी लोग हारान बाबूको ब्राह्मसमाजका भग्वी कर्णधार अथवा अवलम्बन स्वरूप जानते थे, और वह भी इसके विरुद्ध विचार न करके इसीका अनुमोदन करते थे, इसी कारण परेश बाबू यही सोचा करते थे, इसीकी उनको चिन्ता थी, कि, सुचरिता हारान बाबू जैसे मनुष्यके लिये उपयुक्त अर्धाङ्गिनी हो सकेगी या नहीं। यह क्याल तो कभी उनके मनमें भी नहीं आया कि सुचरिताके लिये हारान बाबू कहीं तक उपादेय होंगे।

जैसे इस विवाह के प्रस्तावमें किसीने सुचरिताकी ओरसे विचार करना ज़रूरी नहीं समझा, वैसे ही स्वयं सुचरिताने भी अपनी सुबिधा असुबिधाकी बात कभी नहीं सोची बिचारी। ब्राह्मसमाजके और सब लोगोंकी तरह उसने भी यही निश्चय कर लिया था कि हारान बाबू जिस दिन कहेंगे, मैं इस कन्या को ग्रहण करनेके लिये प्रस्तुत हूँ, उसी दिन

वह इस विवाह रूपी महत्कार्य को स्वीकार कर लेगी ।

इसी तरह यह प्रसंग चला आ रहा था । इसी बीचमें उस दिन, गोराको उपलब्ध करके हारान बाबूके साथ सुचरिताकी दो चार गर्मागर्मी की बातें होगई थीं उनको सुन सुन कर ही परेश बाबूके मनमें संशय उपस्थित हुआ कि शायद सुचरिता हारान बाबू पर यथेष्ट श्रद्धा नहीं रखती—शायद दोनों की प्रकृतिमें परस्पर मेल न खाने का कोई कारण मौजूद है । इसी कारण वरदासुन्दरी जब ब्याहके लिये ताकीद कर रही थीं, उस समय परेश बाबू पहलेकी तरह उसका अनुमोदन नहीं कर सके । उसी दिन वरदासुन्दरीने सुचरिताको एकान्तमें सुनी जगह बुला कर कहा—तुमने तो अपने बाबू जीको चिन्तामें डाल दिया सूची !

यह सुनकर सुचरिता चौंक उठी । वह अगर भूलकर धोखे से भी परेश बाबूकी चिन्ताका कारण हो उठे, तो उसके लिये इससे बड़कर कष्टका और कोई कारण हो ही नहीं सकता । उसका चेहरा उतर गया । उसने सटपटा कर पूछा—क्यों मैं क्या किया ?

वरदासुन्दरीने कहा—बया जाने बच्ची । उन्हें शायद किसी तरह जान पड़ा है कि तुम पानू बाबूको पसंद नहीं करती हो । ब्राह्मसमाजके सभी लोग जानते हैं कि पानू बाबू के साथ तुम्हारा ब्याह एक तरहसे पक्का है । ऐसी हालत में अगर तुम—

सुचरिताने व्यग्र हो कर कहा—कहाँ, माँ, मैंने तो इस सम्बन्ध में कभी किसीसे कोई बात ही नहीं कही-सुनी फिर यह कैसी बात है !

सुचरिताके विस्मित होनेका कारण था ? वह हारान बाबूके व्यवहार-से बराबर स्वीकृति आती थी सही, किन्तु विवाहके प्रस्तावके बिरुद्ध उसने किसी दिन मन में भी कुछ नहीं सोचा । कारण, वह यही जानती थी कि सुख-दुखकी दृष्टिसे यह विवाह विचारणीय ही नहीं है ।

तब उसे झग्याल आया कि उस दिन परेश बाबूके सामने ही उसने पानू बाबूके प्रति विराग प्रकट किया था । उसीसे परेश बाबूके चिन्तित होने का झग्याल करके उसके हृदयको चोट लगी । उसने पहले तो कभी

किसी दिन ऐसे असंयमका भाव नहीं प्रकट किया। अन्तको मनमें यह पक्का इरादा कर लिया कि आगे अब कभी ऐसी गलती नहीं होगी।

आज हारान बाबूके आते ही वरदासुन्दरीने उन्हें आड़में ले जाकर कहा—अच्छा पानू बाबू आप हमारी सुचरिता से ब्याह करेंगे, यद्वा बात सभी के मुँहसे सुन पड़ती है, लेकिन आपके मुँह से तो इस बारे में कभी कोई बात नहीं सुनने को मिलती। अगर सचमुच आपका ऐसा इरादा हो तो उसे स्पष्ट करके क्यों नहीं कहते ?

हारान बाबू अब और देर न कर सके। इस समय वह सुचरिता को किसी तरह अपने हाथमें कर सकें तो फिर निश्चिन्त हो जाय। सुचरिता की अपने ऊपर भक्ति और आद्य समाज की हितचिन्तनाके बारेमें योग्यता, दोनों बातों की परीक्षा तो पीछे भी की जा सकती है। हारान बाबूने वरदासे कहा—इसके कहने की ज़रूरत नहीं थी, इसीसे नहीं कहा। सुचरिताकी अवस्था अठारह सालकी हो जानेकी राह देख रहा था—बस।

वरदाने कहा—आप हर बातमें ज़रा ज़रूरत से ज्यादा बढ़ जाते हैं। हम लोग तो लड़कीकी शादी के लिए चौदह बरस ही काफी समझते हैं।

उस दिन चाय पीनेके टेबिल पर सुचरिता का ढँग देखकर परेश बाबू दङ्ग हो गये। सुचरिताने बहुत दिनोंसे इधर हारान बाबूकी इतनी खातिर और इज्जत नहीं की थी। यहाँ तक कि आज जब हारान बाबू जानेके लिए उठनेका उपक्रम कर रहे थे, उस समय सुचरिताने लावण्यकी एक नई शिल्प कला का परिचय देने के बहाने पानू बाबूसे और ज़रा बैठे रहने का अनुरोध किया।

परेश बाबूका मन इधरसे निश्चिन्त हो गया जो खटका पैदा हो गया था वह जाता रहा। उन्होंने सोचा, मेरी भूल थी यहाँ तक कि वह मन ही मन जरा हँसे भी। सोचा इन दोनों जनोंके बीच शायद कुछ गूढ़ प्रणय—कलह हो गई होगी और अब वह फिर मिट गई है।

ठसी दिन जानेके समय हारान बाबू ने परेश बाबू के आगे विवाहका

प्रस्ताव किया। उन्होंने कहा— कि इस सम्बन्धमें विलम्ब करने की मेरी बिलकुल इच्छा नहीं है।

परेश बाबू को कुछ आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा— लेकिन आपकी राय यह जो है कि अठारह वर्षसे कम अवस्थामें लड़कियोंका ब्याह होना अन्याय है! आपने किसी पत्रमें लेख भी तो इसी विषय पर लिखकर छपाया था।

हारान ने कहा— मगर सुचरिता के सम्बन्धमें यह नियम लागू न होना चाहिए। कारण, इसी अवस्था में उसके मन की ऐसी परिणति (परिपक्वता) हो गई है कि अनेक बड़ी उमर की लड़कियों में भी वह बात नहीं देख पड़ती।

परेश बाबू ने प्रशान्त हृदयके साथ कहा— यह बात भले ही हो पानू बाबू, मगर मेरी समझमें जब अभी ब्याह न होनेमें कोई अहितका कारण नहीं देखा जाता, तब आपके सिद्धान्तके अनुसार सुचरिताकी विवाह के योग्य अवस्था हो जाने तक ठहरना ही हमारा कर्त्तव्य है।

हारान बाबू ने अपनी मानसिक दुर्बलता प्रकट हो जानेसे लज्जित हो कर कहा— निश्चय ही कर्त्तव्य है। मेरी इच्छा केवल यही है कि एक दिन सब मण्डलीको बुला कर ईश्वरका नाम लेकर सम्बन्ध पक्का कर डाला जाय।

परेश बाबू ने कहा— हाँ, यह तो बहुत अच्छा प्रस्ताव है।

दो-तीन घण्टे सोनेके बाद नींद टूटने पर जब गोराने देखा कि पास ही विनय सो रहा है तब उसका हृदय आनन्दसे परिपूर्ण हो गया । स्वप्नमें किसी एक प्रिय वस्तुको खोकर जागने पर देखा जाय कि वह खो नहीं गई है तो उस समय जैसा आनन्द जान पड़ता है वैसा ही गोराको भी हुआ । विनयको छोड़ देनेसे गोराका जीवन कितना निर्बल हो जाता इसका अनुभव आज वह सोकर उठनेके बाद विनयको पासमें देखकर कर सका । इस आनन्दके आवेशमें चञ्चल हो गोराने विनयको हाथसे हिलाकर जगा दिया और कहा — चलो, आज एक काम है ।

गोराका प्रतिदिन सबेरका एक नियमित काम था । वह अड़ोस पड़ोस के छोटे लोगोंके घर जाता-आता था । उन लोगोंका उपकार करने या उन्हें उपदेश देनेके लिए नहीं वरन् उन सबोंसे केवल भेट करने ही के लिए वह जाता था । शिष्टित दलमें उसका इस प्रकार जाने-आनेका व्यवहार न था । गोराको वे लोग बाबाजी कहते और हाथमें हुक्का देकर उसका आदर करते थे । केवल उन लोगोंका आतिथ्य ग्रहण करने ही के लिए गोराने ज़बर्दस्ती तम्बाकू पीनेकी आदत लगा ली थी ।

इस दलमें गोराका सबसे पक्का भक्त नन्द था । नन्द बड़ईका लड़का था । बाईस वर्षकी उसकी उम्र थी । वह अपने बापकी दुकानमें लकड़ीके संदूक बनाया करता था । शिकारियोंके दलमें नन्दकी तरह बन्दूकका अचूक निशाना किसीका न था । गोराने अपने खेलने वाले दलमें भद्र छात्रोंके साथ इन बड़ई और लुहारके लड़को को मिलालिया था । इस मिले-दूले दलमें नन्द सब प्रकारके खेल और व्यायाममें सबसे बड़ा-चढ़ा था । कोई कोई कुलीन छात्र उससे डाह रखते थे ; किन्तु गोराके दबावसे सभी उसको अपने दलका सरकार मानते थे ।

इसी नन्दके पैर पर, कई दिन हुए, रखानी गिर पड़नेसे घाव हो गया था जिससे वह क्रीड़ास्थलमें न जा सकता था। विनयके सम्बन्धमें गोराका मन कई दिनोंसे विकल था अतः वह अपने उन साथियोंके घर न जा सकता था। आज सबेरे ही विनयको साथ ले वह बड़ईके टोलेमें जा पहुँचा।

नन्दके दोमज्जिले खुले घरके फाटकके पास आतेही उसे भीतरसे स्त्रियोंके रोनेका शब्द सुन पड़ा। नन्दका बाप या और कोई बन्धु-बान्धव घर पर न था। एक ही तमाखूकी दुकान थी। उस दुकानदार ने आकर कहा—नन्द आज सबेरे मर गया, सब लोग उसे दाह करने के लिए ले गये हैं।

नन्द मर गया ! ऐसा स्वस्थ, ऐसा हट्टा-कट्टा जवान, ऐसा तेज, ऐसी शक्ति, ऐसा प्रौढ़ हृदय, इतनी थोड़ी उम्र—वही नन्द आज सबेरे मर गया है। गोराके सारे बदन में सञ्जाटा छा गया। वह पत्थर की मूर्ति की भाँति खड़ा रहा। नन्द एक साधारण बड़ईका लड़का था। उसके अभाव में उसके साथियों को कुछ कालके लिए संसार सूना सा दिखाई देने लगा है। उसकी मृत्यु पर शोक करने वालोंकी संख्या अवश्य कम होगी; किन्तु आज गोरा की दशा विचित्र हो गई है। उसे नन्दकी मृत्यु बिलकुल असंगत और असम्भव मालूम हुई है। गोराने उसे बड़ा ही दिलेर देखा था, वह वास्तव में एक प्रौढ़ हृदय का मनुष्य था—इतने लोग जीते हैं किन्तु नन्दका सा दृढ़ जीवन कहीं देखनेमें नहीं आता।

उसकी मृत्यु कैसे हुई ? इस बातके पूछने पर मालूम हुआ कि उसे पचाघात रोग हो गया था। नन्दके पिताने डाक्टर को बुलाना चाहा, किन्तु नन्दकी माँने जोर बाँधकर कहा कि बेटे को भूत लगा है। भूत झाड़नेवाला ओझा सारी रात उसके पास बैठकर झाड़ फूँक और मार-पीट करता रहा। पर भूत ऐसा प्रबल था कि वह उसे पकड़कर ले ही गया। बीमारीके आरम्भ में गोरा को खबर देने के लिए नन्दने एक बार अनुरोध किया था। किन्तु इस से कि वह आकर डाक्टरी मतसे इलाज

करनेके लिए ज़िद करेगा, नन्द की माने किसी तरह गोराके पास खबर न भेजने दी ।

वहाँसे लौटते समय विनयने कहा —कैसी मूर्खता है । रोग क्या और इलाज क्या !

गोरा—इस मूर्खताकी बातको एक ओर रखकर और अपनेको इसके बाहर समझ कर तुम शान्ति-लाभ न करो ! यह मूर्खता कितनी बड़ी है, और इसकी सज़ा क्या है, इसे यदि तुम स्पष्ट रूपसे देख सकते तो इसे एक मामूली सी बात समझ कर इसको अपने पास से अलग कर डालने की चेष्टा न करते ।

मनकी उत्तेजना के साथ गोरा की गति धीरे-धीरे बढ़ने लगी । विनय उसकी बातका कोई उत्तर न देकर उसके साथ-साथ तेजी से चलने लगा ।

गोरा कुछ देर चुपचाप चलकर सहसा बोला —नहीं, यह न होगा कि मैं इस विषय को सहज ही सह लूँ । यह जो भूतका ओम्हा आकर मेरे नन्दको मार गया है, उसकी सख्त चोट मेरे कलेजे में लगी है—मेरे सारे देशको लगी है । मैं इन कामोको साधारण समझकर छोड़ नहीं सकता । इससे देशका विशेष अनिष्ट होनेकी सम्भावना है ।

विनय इस पर भी जब कुछ न बोला तब गोराने गरजकर कहा—विनय, तुम जो मनमें सोच रहे हो वह मैं अच्छी तरह समझ गया हूँ । तुम सोच रहे हो इसका प्रतिकार नहीं है, या इसके प्रतिकार का समय आने में अभी बहुत विलम्ब है । किन्तु मैं ऐसा नहीं सोचता । यदि सोचता तो मैं जी न सकता । जो कुछ मेरे देश पर दुःख पड़ रहा है उसका प्रतिकार अवश्य है, चाहे वह कितना ही कठिन या प्रबल क्यों न हो । और एक मात्र हमीं लोगों के हाथ में उसका प्रतिकार है यह भावना मेरे मनमें खूब दृढ़ है । इसी कारण मैं चारों ओरके इतने दुःख, दुर्गति और अपमानको सहन कर रहा हूँ ।

बिनय—इतनी बड़ी देश व्यापिनी दुर्गतिके आगे विश्वासको खड़ा रख सकने के लिए मेरा साहस नहीं होता ।

गोरा—दुर्गति या दुःख बराबर रह सके इसे मैं किसी तरह नहीं मान सकता—सारे संसार की ज्ञान-शक्ति और प्राण-शक्ति उसे भीतर या बाहर से केवल आघात पहुँचा रही है । बिनय, मैं तुमसे बराबर कहता आता हूँ कि मेरा देश मुक्त होगा ही इस बातको तुम कभी स्वप्न में भी असम्भव न समझो । इस बात पर दृढ़ विश्वास रख कर ही हमें सदा सावधान रहना होगा । भारतवर्ष स्वाधीन होने के लिए भविष्य में किसी दिन लड़ाई करेगा इसी पर निर्भर होकर तुम निश्चिन्त बैठे हो । मैं कहता हूँ, लड़ाई आरम्भ हो गई है, पल पल पर उद्योग चल रहा है । इस समय यदि तुम हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहो तो इससे बढ़कर कायरता और हो ही क्या सकती है ?

बिनय—देखो गोरा तुमसे मेरा एक मतभेद है । मैं यह देखता हूँ कि हमारे देशमें जहाँ-तहाँ जो काम बराबर हो रहा है और जो बहुत दिनोंसे होता आया है उसे तुम रोज़-रोज़ नई दृष्टिसे देख रहे हो । हम अपने श्वास-प्रश्वास—को जिस तरह भूले हुए हैं वैसे ही इन सबों को भी । इनसे हम न किसी तरहकी आशा करते हैं और न निराशा ही । इनसे न हमको सुख है न दुःख । समय बड़ी उदासीनताके साथ बीता जा रहा है । चारों ओरके घेरे में पड़कर हम न अपनी ही बात सोच सकते हैं और न अपने देशकी ही ।

एकाएक गोरा का मुँह लाल हो गया, मस्तक की नस तन गई वह बड़ी तेजी से एक गाड़ी चला के पीछे और अपनी तेज आवाज़ से सड़कके सब लोगोंको चकित करके बोला—'गाड़ीको रोको !' एक मोटा बाबू घड़ी-चेन लगाये गाड़ी हॉकता जा रहा था । उसने एक बार पीछे फिरकर देखा । एक आदमीको दौड़ते हुए आते देख वह दोनो तेज़ घोड़ोंको चाबुक मारकर पल भरमें गायब हो गया ।

एक बड़ा मुसलमान सिर पर एक टोकरीमें फल, तरकारी, अण्डा.

रोटी और मक्खन आदि खाद्य-सामग्री लिये जा रहा था। चेन-चरमाधारी बाबूने उसको गाड़ीके सामनेसे हट जानेके लिए जोरसे पुकारकर कहा था। उसको बृद्धने न सुना, गाड़ी उसके ऊपरसे होकर निकल जाती, परन्तु एक आदमीने झट उसका हाथ पकड़कर अपनी ओर खींच लिया। इस तरह उसके प्राण तो बच गये। पर टोकरी उसके सिर परसे गिर पड़ी और उसमें की सभी चीजें इधर-उधर लुढ़क गईं। बाबूने क्रुद्ध होकर कोचबक्स से घूम उसे डैम सुअर कहकर गाली दी और तबसे उसके मुँह पर एक चाबुक जमा दिया और घोड़ों की रास ढीली कर दी। चाबुक की चोट से उसके सिर पर लोह निकल आया। बुद्धने अल्ला कहकर लम्बी साँस ली और जो चीजें खराब न हुई थीं, उन्हें चुनकर वह टोकरीमें रखने लगा गोरा आगे न बढ़, बिखरी हुई चीजों को बटोरकर उसकी टोकरीमें रखने लगा। बूढ़े मुसलमानने सज्जन पथिक के इस व्यवहारसे अत्यन्त संकुचित होकर कहा—बाबू, आप क्यों तकलीफ़ कर रहे हैं? ये चीजें तो खराब हो गईं; अब ये किसी काम में न आवेंगी। गोरा भी इस कामको अनावश्यक समझता था और वह यह भी जानता था कि जिसको मदद दी जा रही है वह सज्जुचा जा रहा है। टोकरी भर जाने पर गोराने उससे कहा—जो चीज तुम्हारी नुकसान हो गई है उसका दाम तुम्हें मालिक से न मिलेगा। इसलिए तुम मेरे घर चलो, मैं पूरा दाम देकर तुमसे ये सब चीजें मोल ले लूँगा। किन्तु एक बात तुमसे कहता हूँ, बिना कुछ कहे-सुने तुमने जो चुपचाप अपमान सह लिया है, इसके लिए तुमको अल्ला माफ़ न करेगा।

जो क्रसूरवार होगा उसीको अल्ला सजा देगा, मुझे क्यों देगा?

गोरा—जो अन्याय सहता है वह भी दोषी है। क्योंकि अन्याय सहने ही से संसार में अन्यायकी सृष्टि होती है। अन्याय न सहने से कोई किसीके ऊपर अनुचित व्यवहार न कर सकेगा। मेरी बातका मतलब समझो इतना याद रखो कि सहिष्णुता गुण नहीं है, उसे एक प्रकारका दोष ही समझो। सहनशील लोग दुष्टोंकी संख्या बढ़ाते हैं। तुम्हारे

मुहम्मद साहब इस बातको जानते थे, इसीसे वे सहनशील बनकर धर्मका प्रचार नहीं करते थे ।

वहाँसे गोराका घर पास न था, इसलिए वह वृद्ध मुसलमानको विनय के घर लेगया । विनयकी टेबलके पास, दराज़के सामने, खड़े होकर उसने विनयसे कहा—रूपया निकालो ।

विनय—‘तुम इतने व्यग्र क्यों होते हो ? बैठो, मैं अभी देता हूँ ।’ यह कहकर विनय चाबी खोजने लगा, पर चाबी न मिली । गोराने कुञ्जी का इन्तज़ार न कर झट बन्द दराज़को जोरसे खींचा । ताला टूट जानेसे दराज़ बाहर निकल आया ।

दराज़ खुलते ही उसमें रखे हुए परेश बाबूके घरके सब लोगोंके पूरे चित्र पर सबसे पहले उसकी नज़र गई । यह चित्र विनयने अपने छोटे मित्र सतीशके द्वारा प्राप्त किया था ।

रूपया लेकर गोराने उस बूढ़े मुसलमानको दे बिदा किया, किन्तु फ़ोटोके सम्बन्धमें कुछ न कहा । गोराको इस विषयमें चुप रहते देख विनयने भी उसका कोई जिक्र न किया । चित्रके सम्बन्धमें दो-चार बातें हो जातीं तो विनयका मन हलका हो जाता ।

गोरा एकाएक बोल उठा—अच्छा, मैं चलता हूँ ।

विनय—वाह ! तुम अकेले जाओगे ! माने मुझको तुम्हारे ही यहाँ खानेको बुलाया है, इसलिए मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ ।

दोनों घरसे बाहर हुए । रास्तेमें गोरा अबकी बार कुछ न बोला । दराज़के चित्रने उसको सहसा स्मरण करा दिया कि विनयके मनकी एक प्रबल धारा ऐसे गुप्त मार्गसे बह रही है जिसके साथ गोराके जीवनका कोई सम्पर्क नहीं है ।

घरके पास आते ही उन्होंने देखा कि महिम फाटकके पास खड़े-खड़े रास्तेकी ओर देख रहे हैं । दोनों मित्रोंको एक साथ देख उन्होंने कहा—क्या मामला है ? कल तो तुम दोनों सारी रात जागते रहे । मैं सोच रहा

था, शायद तुम दोनों सड़कके किनारे कहीं सों गये होंगे । दिन तो बहुत चढ़ आया । जाओ विनय बाबू, तुम नहा लो ।

विनयको इस तरह ताक़ीद करके नहानेके लिए भेज कर महिम गोरासे कहने लगे, देखो गोरा तुमसे जो बात मैंने कही थी, उस पर तनिक विचार करो । विनयके ऊपर अगर तुमको यह सन्देह है कि वह हिन्दू धर्मके आचार-विचारको नहीं मानता, उनके विरुद्ध चलता है तो तुम्हीं बताओ, आजकल कट्टर हिन्दू पात्र मिल कहां सकता है ? केवल कट्टर हिन्दू होनेसे ही तो कुछ होगा नहीं, लड़का सुशील और पढ़ा लिखा भी तो होना चाहिए ! ऊँची शिक्षा और कट्टर हिन्दूपन इन दोनोंके मिलनेसे जो पदार्थ तैयार होता है, वह हमारे हिन्दू मतके अनुसार ठीक शास्त्रीय न होगा. किन्तु बुरा भी नहीं । अगर तुम्हारे लड़की होती तो इस बारेमें मेरे साथ तुम्हारा मत मिलकुल ठीक मिल जाता इसमें सन्देह नहीं ।

गोराने कहा—सो अच्छा तो है—जान पड़ता है इसमें विनयको भी कुछ उज्र न होगा ।

महिम—लो सुनो ! विनयको आपत्तिके लिए किसे चिन्ता है ! मैं तो तुम्हारी ही नाहीं-नूहीं को डरता हूँ ! तुम एक बार अपने मुंहसे विनयसे इसके लिए अनुरोध करो ; बस मैं और कुछ नहीं चाहता । उससे अगर कुछ फल न होगा तो फिर मैं नहीं कहूँगा ।

गोराने कहा—अच्छा ।

महिमने मन ही मन कहा—अब क्या है, मार लिया ! हलवाईके यहाँ मिठाईके लिए और अहीरके यहाँ दही दूधके लिए बयाना दे सकता हूँ ।

गोराने मौका पाकर विनयसे कहा—शशिमुखीके साथ तुम्हारे ब्याहके लिए दादाने बहुत जोर डालना शुरू किया है । अब तुम क्या कहते हो ?

विनय —पहले तुम बताओ, तुम्हारी इच्छा क्या है ?

गोरा—मैं तो कहता हूँ, बुरा क्या है !

विनय—पहले तो बुरा ही कहते थे ! हम दोनों ब्याह न करेंगे, इतना तो एक तरह से ठीक ही हो गया था ।

गोरा—लेकिन अब यह तय हुआ कि तुम ब्याह करो, और मैं न करूँ ।

विनय—क्यों, एक स्थानकी यात्रा में दो रातें या दा फल क्यों ?

गोरा—दो रातें या दो फल होने के भयसे ही तो यह व्यवस्था की जाती है । विधाता किसी किसी आदमीको सहजही अधिक भार अस्त करके गढ़ा करते हैं, और कोई कोई सहज ही भार हीन होते हैं । उक्त दोनों प्रकारके जीवोंको एक साथ मिलाकर चलाना हो, तो एकके ऊपर बाहरसे बोझ डालकर दोनों का वजन बराबर कर लेना होता है । तुम ब्याह करके ज़रा जिम्मेदारीके बोझसे दबोगे, और तब मैं और तुम दोनों एक चालसे चल सकेंगे ।

विनयने ज़रा हँसकर कहा—अगर तुम्हारा यही मतलब हो, तो इधर भी बटखरा रक्खो ।

गोरा—बटखरेके बार में कुछ आपत्ति तो नहीं है न ?

विनय—वजन बराबर करनेके लिए जो कुछ हाथ के पास मिल जाय, उसीसे काम चलाया जा सकता है । वह चाहे पत्थर हो, चाहे ढेला, जैसी खुशी हो ।

यह विनय के जानने को बाकी नहीं रह गया कि गोराने इस विवाह के प्रस्ताव में क्यों इतना उत्साह प्रकट किया । गोराने मनमें यह सन्देह हुआ है कि विनय कहीं परेश बाबूके परिवारमें ब्याह न कर बैठे, यह अनुमान करके विनय मन ही मन हँसा । दोपहरको भोजनके उपरान्त रात की नींदका ऋण चुकानेमें ही दिन बीत गया । उस दिन दोनों मिश्रों में और कोई बात नहीं हुई । जब जगतके ऊपर सन्ध्याके अन्धकार का पर्दा पड़ गया, जिस समय प्रणयी लोगोंके बीच मनका पर्दा उठ जाता है, तब, उसी समय, छतके ऊपर बैठे हुए विनयने सीधे आकाश की ओर ताक कर कहा—देखो गोरा, मैं तुमसे एक बात कहना चाहता हूँ । मुझे जान

पड़ता है, हम लोगोंके स्वदेश प्रेमके भीतर कोई बहुत बड़ी कमी है। हम लोग भारतवर्षको आधा करके देखते हैं।

गोरा— कैसे, बताओ ?

विनय—हम लोग भारतवर्षको केवल पुरुषोंका ही देश समझते और उसी दृष्टिसे देखते हैं स्त्रियों की ओर हमारी दृष्टि ही नहीं है।

गोरा—तुम अंग्रेज की तरह शायद औरतोंको घर, बाहर, जलमें स्थल में, शून्य में, आहार आमोद में, काम काजमें, सभी जगह देखना चाहते हो। मगर इसका फल यह होगा कि तुम पुरुषोंकी अपेक्षा औरतोंको ही अधिक करके देखते रहोगे। इस तरह भी, इससे भी, दृष्टि का सामञ्जस्य नष्ट होगा।

विनय—ना, ना, मेरी बातको इस तरह उड़ा देनेसे काम नहीं चलेगा। मैं औरतोंको अंगरेजोंकी तरह देखूंगा या नहीं, तुम यह बात क्यों उठाते हो ? मैं कहता हूँ, यह सर्वथा सत्य है कि हम लोग स्वादेशके अन्तर्गत स्त्रियों वाले आधे अंश को अपनी चिन्ता के भीतर यथेष्ट परिमाण में नहीं जाते। तुम्हारी ही बात मैं कह सकता हूँ, तुम औरतोंके गारेमें घड़ी भर भी नहीं सोचते—तुम देशको जैसे रमणी-रहित ही जानते हो। किन्तु इस तरहका जानना कभी ठीक या सत्य जानना नहीं है।

गोरा—मैंने जब अपनी माँको देखा, अपनी माँको जाना, तब अपने देशकी सभी स्त्रियोंको उसी एक स्थान में देख लिया और जान लिया। कम से कम मेरी तो यही धारणा है।

विनय—यह तो तुमने अपनेको भुलानेके लिये गढ़ कर एक बात कह भर दी है। घरके काम काजके भीतर घरका आदमी अगर घरकी औरतोंको अत्यन्त परिचित भावसे देखे, तो यथार्थ देखना है ही नहीं—इस तरह यथार्थ देखना हो ही नहीं सकता। मैं जानता हूँ कि अंगरेजों के समाजके साथ किसी तरहकी तुलना करते ही तुम आगबबूला हो उठोगे। इसीसे मैं तुलना करना नहीं चाहता। मैं नहीं जानता कि हमारी औरतें ठीक कितना और किस तरह समाज में प्रकट हो, तो मर्यादाका उल्लंघन

न होगा, किन्तु यह तो स्वीकार ही करना होगा कि इस तरह औरतोंके प्रच्छन्न या ढके रहने से हमारा स्वदेश हमारे निकट अर्द्ध-सत्य बना हुआ है। वह हमारे हृदय में पूर्ण प्रेम और पूर्ण शक्ति नहीं दे पाता।

गोरा—दिन और रात जैसे समय के दो भाग हैं वैसे ही पुरुष और स्त्री ये समाजके दो अंश हैं। समाजकी स्वाभाविक अवस्था में स्त्रियाँ रात्रि ही की तरह प्रच्छन्न होंगी—उनके सभी काम निगूढ़ और एकान्तमें होंगे। किन्तु जहाँ समाज की अस्वाभाविक अवस्था है वहाँ वह रातको जबरदस्ती दिन बना डालता है—वहाँ गैस जलाकर कल चलाई जाती है, रोशनी करके रात भर नाचना गाना होता है। उसका फल क्या होता है? फल यही होता है कि रात्रिका जो स्वाभाविक सन्नाटे का—एकान्त का काम है, वह नष्ट हो जाता है, क्लाम्बि बढ़ती रहती है, शक्तिकी पूर्ति नहीं होती, मनुष्य उन्मत्त हो उठता है। औरतोंको भी अगर उसी तरह हम प्रकाश्य कर्म-क्षेत्र में खींच लाते हैं तो उनके निगूढ़ कर्म की व्यवस्था नष्ट हो जाती है—उससे समाजका स्वास्थ्य बिगड़ता है उसकी शान्ति में खलल पड़ता है। समाजमें एक तरह का मतवाला मन घुस आता है। साधारण दृष्टिसे देखने में वह मत्तता शक्ति-सी प्रतीत होती है, किन्तु असल में वह अगर शक्ति है तो विनाश करने ही की। नर और नारी दोनों समाज-शक्तिके दो पहलू हैं। पुरुष ही व्यक्त (देख पढ़ने वाला) है। किन्तु व्यक्त होने के कारण ही वह बढ़ा नहीं है। नारी अव्यक्त है। इस अव्यक्त शक्ति को अगर केवल व्यक्त करने को चेष्टा की जाय, तो वह सारी पूँजीको खर्चमें डाल कर समाज को तेज़ीके साथ दिवालिया कर देनेकी ओर ले जाना होगा। इसी कारण तो कहता हूँ कि हम मर्द लोग अगर यज्ञ के क्षेत्रमें रहें और औरतें रहें घरके भण्डार की देखरेख में तभी स्त्रियों के अदृश्य रहने पर भी यज्ञ सुसम्पन्न होगा। जो लोग सारी शक्तिको एक ही तरफ़, एक ही जगहमें, एक ही तरहसे खर्च करना चाहते हैं, वे उन्मत्त हैं।

विनय०—गोरा, तुमने जो कहा, उसका मैं प्रतिवाद करना नहीं चाहता—लेकिन मैं जो कुछ कह रहा था, उसका तुमने भी प्रतिवाद नहीं किया। असल बात—

गोरा—(बात काटकर) देखो विनय इसके आगे अगर इस बात को लेकर अधिक वकबक की जायगी, तो वह बिलकुल ही बहसका रूप धारण कर लेगी। मैं स्वीकार करता हूँ कि आजकल हाल ही में तुम औरतों के सम्बन्ध में जितना सचेत सतर्क हो उठे हो मैं उतना नहीं हुआ। बस, तुम जो अनुभव करते हो, वही अनुभव मुझे भी करानेकी तुम्हारी चेष्टा कभी सफल न होगी। इस कारण इस बारे में फ़िलहाल हम दोनों में मत भेद रह जाना ही ब्यो न मान लिया जाय? यही अच्छा होगा।

गोराने बात उड़ा दी। किन्तु बीज को हवा में उड़ा देने से भी वह मिट्टी में गिरता है। और मिट्टी में गिरने से मौक़ा पाकर उसके अंकुरित होनेमें कोई रुकावट नहीं रह जाती। गोराने अबतक जीवनके क्षेत्र से स्त्री जातिको एकदम दूर हटा रखा था, और उसने कभी स्वप्न में भी इस बात का अनुभव नहीं किया कि वह एक अभाव है। आज विनय की बदली हुई हालत देख कर, संसार में स्त्रीजाति की विशेष सत्ता और प्रभाव उसके आगे प्रत्यक्ष हो उठा। लेकिन इसका स्थान कहाँ है इसका प्रयोजन क्या है, इस प्रश्नका उत्तर वह कुछ भी नहीं ठीक कर सका। इसी कारण इस बात पर विनयसे बहस करना उसे अच्छा नहीं लगता। इस विषय को वह अस्वीकार भी नहीं कर सकता, और अच्छी तरह उसे समझ भी नहीं पाता। अतएव उसे आलोचना के बाहर रखना चाहता है।

रातको विनय जब अपने घरको लौट रहा था, तब आनन्दमयी ने उसे पुकार कर कहा—विनय भैया, शशिमुखीके साथ क्या तेरा ब्याह पक्का हो गया है?

विनयने लज्जायुक्त मुसकान के साथ कहा—हाँ माँ,—गोरा इस शुभ कर्म का संयोजक है। आनन्दमयी ने कहा—शशिमुखी

लड़की तो बहुत अच्छी है, लेकिन भैया, लड़कपन न कर । मैं मनको अच्छी तरह रक्ती-रक्ती जानती हूँ—तू आज कल कुछ दुचित्ता हो रहा है, इसीसे चटपट यह काम किये डालता है । देख, अभी सोच कर देखने का सम २ है । तू अब सयाना हो आया है भैया—इतना बड़ा काम अश्रद्धा के साथ, तुच्छ समझ कर, न कर डालना ।

यों कह कर वह विनय के शरीर पर हाथ फेरने लगी । विनय कुछ न कह कर धीरे-धीरे चला गया ।

विनय आनन्दमयीकी ऊपर लिखी बातों को सोचता हुआ धरव गया । आनन्दमयीकी कही एक बात की भी अपेक्षा आज तक कभी विनय ने नहीं की । उस रातको उसके हृदय पर जैसे एक बोझ रक्खा रहा ।

दूसरे दिन सबेरे उठने पर विनयको अपनी तबियत हलकी सी जा पड़ी —उसे जान पड़ा, जैसे वह किसी भारी बोझके दबावसे छुटकारा पा गया है । विनयको समझ पड़ा, उसने जैसे गोरा की मित्रताको बहुत बलकीमत देकर चुका दिया है । एक तरफ शशिमुखीसे ब्याह करने के लिये राजी होकर उसने जीवन भरके लिये जो एक बन्धन स्वीकार किया है, उस बन्धनमें दूसरी तरफ उसे गोराकी मित्रता का बन्धन अलग कर देने का अधिकार हो गया है । गोराने विनयके ऊपर यह जो अत्यन्त अनुचित सन्देह किया है कि वह अपनी समाजको छोड़कर ब्राह्म परिवारमें ब्याह करने को लालचा उठा है, सो इस मित्या सन्देहके पास शशिमुखीके विवाह को सदाके लिये ज़मानतके रूपमें जमा करके उसने अपने को छुड़ा लिया इसके बाद विनय बिना किसी संकोचके परेश बाबूके घर अधिकताके साथ जाने आने लगा ।

जिनको विनय पसन्द करे, उनके निकट घरका —सा-अपना-सा-आदर्म बन जाना विनयके लिये कुछ भी कठिन नहीं । उसने जैसे ही गोरा की तरफका संकोच अपने हृदयसे दूर कर दिया, वैसे ही, देखते—ही देखते कुछ ही दिनोंके भीतर, वह परेश बाबू के घरके सभी आदमियों की दृष्टिमें जैसे बहुत दिनोंकी जान पहिचानवाले आत्मीयके समान हो उठा उसकी प्रकृत और व्यवहार ही ऐसा था ।

केवल ललितानेके मनमें जिन कई दिनों तक यह सन्देह रहा कि शायद सुचरिताका मन विनयकी ओर कुछ खिंच गया है, उन्हीं कई दिनों के

उसका मन अवश्य विनयके विरुद्ध जैसे खङ्ग-हस्त हो उठा था । किन्तु जब उसने स्पष्ट ही समझ लिया कि उसकी धारणा भ्रम मात्र थी, सुचरिताको विनयका विशेष भावसे पक्षपात नहीं है, तब उसके मनका वह विद्रोह दूर हो गया, उसे चैन पड़ी । फिर तो उसे भी विनय बाबूको असाधारण भला आदमी माननेमें कोई बाधा नहीं रही ।

हारान बाबू भी विनयसे विमुख नहीं हुए । उन्होंने जैसे सबकी अपेक्षा कुछ अधिक मात्रामें यह स्वीकार किया कि विनयको भलमंसी या भले आदमियोंके शिष्टाचार व्यवहारका ज्ञान है । इस स्वीकृतकी खास ध्वनि यही थी कि गोरा इस ज्ञानसे विलकुल शून्य है ।

विनय कभी हारान बाबूके सामने कोई बहसकी बात नहीं उठाता था । सुचरिताकी भी यही चेष्टा देखी जाती थी कि ऐसा कोई तर्क उनके सामने न उठाया जाय । इसी कारण इस बीचमें विनयके द्वारा चायके टेबल पर शान्तिभंग नहीं होने पाया ।

मगर हारान बाबूकी गैर हाजिरीमें सुचरिता आपही छेड़कर विनयको उसके अपने समाज सम्बन्धी मतकी चर्चा और आलोचनामें प्रवृत्त करती थी । सुचरिताके मनमें यह जाननेका जो कौतूहल था कि गोरा और विनयके ऐसे शिक्षित एरूप कैसे देशके प्राचीन कुसंस्कारोंका समर्थन कर सकते हैं, उसे वह किसी तरह दमन नहीं कर सकती थी । गोरा और विनयको वह अगर न जानती होती, तो उन सब मतोंका समर्थक जान लेने पर, दूसरी कोई बात न सुन कर उन्हें अवज्ञाके योग्य ठहरा लेती । किन्तु गोराको जबसे उसने देखा, तबसे वह गोराको अश्रद्धाके साथ अपने हृदयसे दूर नहीं कर पाती । इसीसे सुयोग पाते ही वह घुमा फिराकर विनयके आगे गोराके मत और जीवनकी आलोचना शुरू कर देती है, और बीच बीचमें विनयकी बातोंका प्रतिवाद करके सब बातें अन्त तक उसके पेटसे बाहर निकाल लेती है । परेश बाबू समझते थे कि सब संप्रदायोंका मत सुनने देना ही सुचरिताकी सर्वतोमुखी सुशिक्षाका

सहज उपाय है । इसी कारण वह ऐसे सब तर्क-वितर्कों से कभी शङ्कित नहीं हुए, और न बाधा ही दी ।

एक दिन सुचरिताने पूछा—अच्छा, गौर बाबू क्या सचमुच जाति भेद मानते हैं, या केवल देशानुराग दिखानेके लिये ही ऐसा करते हैं ?

विनयने कहा—आप क्या सीढ़ीके स्तरोंको मानती हैं ? ये भी तो सब त्रैसेही विभाग हैं—कोई ऊपर है कोई नीचे ।

सुचरिता—नीचे से ऊपर चढ़नेके लिये मानना ही पड़ता है—नहीं तो मानने का कोई प्रयोजन नहीं था ।

समतल भूमि में सीढ़ीको न माननेसे भी काम चल सकता है ।

विनय—ठीक कहा आपने—हमारा समाज भी एक सीढ़ी है—इस जाति-भेद या वर्णाश्रम-विभाग का एक उद्देश्य था, और वह है नीचेसे ऊपर उठा देना—मानव-जीवनके एक परिणाम में ले जाना । यदि हमारी यह धारणा होती कि समाजका परिणाम यह संसार ही है, तो किसी विभागकी व्यवस्थाका प्रयोजन ही नहीं था ; तब तो योरूपियन समाज की तरह हममें से हरएक दूसरे की अपेक्षा 'अधिक' पर अधिकार जमाने के लिये छीना-झपटी और मार काट करता रहता ।

सुचरिता—समा कीजिएगा, आपकी बातें साफ साफ मेरी समझमें नहीं आई । मेरा प्रश्न यह है कि आप जिस उद्देश्यसे समाजमें वर्ण-भेदका प्रचलित होना बता रहे हैं, क्या उस उद्देश्यको आप सफल हुआ देख रहे हैं ?

विनय—पृथ्वी पर सफलताकी सुरत देख पाना बड़ा कठिन है । भारत ने जो जाति भेदके नामसे समाजिक समस्या का एक महत्वपूर्ण उधर दिया है, वह उत्तर अभी मरा नहीं है—वह अब भी पृथ्वीके सामने मौजूद है । योरप भी समाजक समस्याका और कोई ठीक ओर अच्छा

उत्तर अभी तक नहीं दे सका। वहाँ केवल ठेला-ठेली और हाथा-पाई हो रही है। भारतवर्षका पूर्वीक उत्तर मानव-समाजमें अब भी सफलताके लिये प्रतीक्षा किए हुए हैं।

सुचरिता ने संकोचके साथ पूछा—आप नाराज न हों, सच कहिएगा; ये सब बातें आप गौर बाबू की प्रतिध्वनिकी तरह—भरे हुए ग्रामोफोन की तरह—कह रहे हैं, या स्वयं इनपर संपूर्ण विश्वास भी रखते हैं ?

बिनयने हँसकर कहा—मैं आपसे सत्य ही कहता हूँ, गोराकी तरह मेरा विश्वास जोरदार नहीं है। जाति-भेद का कूड़ा और समाजके विकार जब मैं देख पाता हूँ, तभी तरह—तरहके संदेह प्रकट किया करता हूँ। किन्तु गौर बाबू कहते हैं कि “बड़ी वस्तुको छोटा करके देखने से ही संदेह उत्पन्न होता है; वृत्तको टूटी-शाखा और सूखे पत्तों को ही वृत्तकी चरम प्रकृति मानकर देखना बुद्धि की असहनशीलता है।” मैं टूटी हुई शाखा की प्रशंसा करनेको नहीं कहता; किन्तु मेरा कहना यह है कि तुम समग्र वनस्पतिको देखो और उसका तात्पर्य समझने की चेष्टा करो।

सुचरिता ने कहा—वृत्तके सूखे पत्तों पर ध्यान न दिया जाय न सही, किन्तु वृत्तके फलको तो देखना होगा। जाति-भेद का फल हमारे देशके लिये कैसा है ?

बिनय—आप जिसे जातिभेद का फल कहती हैं, वह अवस्थाका फल है, केवल जाति-भेदका फल नहीं है। हिलते हुए दाँतसे किसी चीज़को चबाने में जो व्यथा होती है, उसमें सब दाँतोंका कोई अपराध नहीं है; वह अपराध केवल हिलते हुए दाँतका ही है। अनेक कारणोंसे हम लोगों के भीतर अनेक बिकार और दुर्बलता का प्रवेश हो गया है; इसीसे हम भारतवर्ष के उद्देश्य को सफल न बना कर विफल करते हैं। गौर बाबू इसी कारण बारबार कहते हैं—स्वस्थ होओ, सबल होओ।

सुचरिता—अच्छा तो फिर आप क्या ब्राह्मण-जातिको नर-देव मानने के लिए कहते हैं ? आप क्या सचमुच यह बिश्वास करते हैं कि ब्राह्मणके पैरों की धूल से मनुष्य पबित्र होता है ?

विनय—पृथ्वीतल पर अनेक सम्मान ही तो हमारी अपनी सृष्टि हैं । ब्राह्मणको यदि हम यथार्थ ब्राह्मण बना दे सकें, तो क्या वह समाज के लिए साधारण लाभ होगा ? हम नरदेव चाहते हैं । हम अगर नरदेव को यथार्थ ही हृदय के साथ बुद्धि-पूर्वक चाहें, तो अवश्य नरदेव को पावेंगे । और, अगर मूढ़की तरह आंखे मूढ़ कर नरदेवको चाहेंगे, तो जो सब अपदेवता सब तरह के दुष्कर्म करते रहते हैं, और हमारे मस्तकमें पैरों की धूल लगाना जिनकी जीविकाका उपाय या पेशा है, उनका दल बढ़ा कर पृथ्वीका भार ही केवल बढ़ाते रहेंगे !

सुचरिता—अच्छा, यह आपके यथार्थ नरदेव क्या आज कल कहीं हैं ? मिल सकते हैं ?

विनय—बीजके भीतर जैसे वृक्ष है, वैसेही वे भी हैं ; भारतवर्ष के आंतरिक अभिप्राय और प्रयोजनके भीतर मौजूद हैं । अन्य देश वेल्गटनके समान सेनापति, न्यूटन के समान वैज्ञानिक, रथचाईल के समान लखपती चाहते हैं, किन्तु हमारा देश यथार्थ ब्राह्मण को चाहता है । ब्राह्मण—वह ब्राह्मण, जिसे भय नहीं है, जो लोभको घृणा करता है, जो दुःखको सहन शक्ति से जीतता है, जो अभाव पर लक्ष्य नहीं करता, जिसने अपने विशुद्ध चित्तको परब्रह्ममें लगा रक्खा है । जो अटल है, जो शान्त है, जो मुक्त है, उसी ब्राह्मण को भारतवर्ष चाहता है—वैसे ही ब्राह्मणको यथार्थ भाव से जब पावेगा, तभी भारतवर्ष स्वाधीन होगा । हम भारतवासी क्या राजाके आगे सिर झुकते हैं, या अत्याचारीका बन्धन अपने गलेमें डालते हैं ? हमारा सिर अपने ही भयके आगे झुका हुआ है, हम अपने ही लोभ के जालमें जकड़े हुए हैं । हम अपनी मूढ़ताके ही दासानुदास हैं ! ब्राह्मण तपस्या करें—उस भय से, लाभसे मूढ़तासे हमें मुक्त करें—हम उनके निकटसे युद्ध नहीं चाहते, वाणिज्य नहीं चाहते, उनसे हमारा और कोई

प्रयोजन नहीं है।

परेश बाबू अब तक चुपचाप सुन रहे थे। वह धीरे-धीरे कहने लगे—यह तो नहीं कह सकता कि मैं भारतवर्ष को जानता हूँ, और यह भी निश्चय ही नहीं जानता कि भारतने क्या चाहा था, और किसी दिन उसे पाया था या नहीं; किन्तु प्रश्न यह है कि जो दिन बीत गये, जो ज़माना गुज़र गया, उन्हीं दिनोंमें—उसी ज़मानेमें—क्या अभी कोई फिर लौट कर जा सकता है? वर्तमानमें जो संभव है, वही हम लोगों की साधनाका विषय है—अतीतकी ओर दोनों हाथ बढ़ा कर समय नष्ट करनेसे क्या कुछ काम हो सकता है?

विनयने कहा—आप जो कुछ कह रहे हैं अक्सर मैंने भी यही सोचा और अनेक बार कहा भी है—गौर बाबू कहते हैं, हम अतीतको अतीत (गुजरा हुआ) होनेके कारण बरखास्त किये बैठे हैं, इसीसे क्या वह अतीत हो गया है? कोई सत्य कभी अतीत हो ही नहीं सकता।

सुचरिताने कहा—आप जिस तरह ये सब बातें कह रहे हैं, उस तरह साधारण आदमी नहीं कहते—इसी कारण आपके मतको समग्र देशकी चीज मान लेने में मन में संशय होता है।

विनयने कहा—हमारे देशमें साधारणतः जो लोग अपनेको हिन्दू कहकर उसका अभिमान करते हैं, मेरे मित्र गौर बाबूको आप उस दल का आदमी न समझिएगा। वह हिन्दू-धर्मको भीतरकी ओरसे और बहुत बड़े रूपमें देखते हैं। वह कभी यह मनमें भी नहीं लाते कि हिन्दू धर्मका प्राण निहायत शौकीन प्राण है—वह थोड़ी-सी छुआ-छूतसे ही सूख जाता है और साधारण घात-प्रत्याघातसे ही उसकी मृत्यु हो जाती है।

सुचरिता—लेकिन जान तो यही पड़ता है कि वह सब सावधान रह कर छुआ-छूतको मान कर चलते हैं।

विनय—उनकी यह सतर्कता एक अद्भुत वस्तु है। उनसे अगर प्रश्न किया जाय, तो वह प्रौरन कह देंगे—“हाँ, मैं यह सब मानता हूँ कि

छजानेसे जाति जाती है, खा लेनेसे पाप होता है, यह सब अन्ध्रात सत्य है', लेकिन मैं निश्चय जानता हूँ, ये सब उनकी जबर्दस्ती की बातें हैं। ये सब बातें जितनी असंगत होती हैं, उतना ही वह सबको सुनाकर जोर से कहते हैं। कहीं वर्तमान हिन्दू आचार की साधारण बातको भी अस्वीकार करनेसे अन्य मूढ़ लोग हिन्दू-आचारकी बड़ी बातका भी असम्मान न कर बैठें और जो लोग हिन्दू आचारको कुसंस्कार कह कर अश्रद्धा की दृष्टिसे देखते हैं, वे उसे अपनी जीत न मान बैठें, इसी खौफसे गौर बाबू, बिना कुछ विचार किए, सभी बातें मानकर चलना चाहते हैं। यहाँ तक कि मेरे आगे भी इस सम्बन्धमें अपनी कुछ भी शिथिलता नहीं दिखाना चाहते।

परेश बाबू ने कहा—ब्राह्म लोगों में भी इस तरह के आदमी बहुत हैं। इस शंकासे कि कहीं बाहर का कोई आदमी भूलकर यह न समझ बैठे कि वे हिन्दू धर्म की कुप्रथाओंको भी स्वीकार करते हैं, वे हिन्दू-आचार का सभी तरहका संसर्ग, बिना किसी विचारके, छोड़ देना चाहते हैं, ऐसे लोग संसारमें खूब सहज भावसे नहीं चल सकते—वे या तो ढोंग रचते हैं, और या हर काममें हृद दर्ज की ज्यादती करते हैं। समझते हैं, सत्य दुर्बल है, और केवल कौशल करके अथवा जोर करके सत्यकी रक्षा करना जैसे कर्तव्यका अंग है। मेरे ऊपर सत्य निर्भर है, मैं सत्य पर निर्भर नहीं हूँ—इस तरहकी जिनकी धारणा होती है, उन्हींको कट्टर कहते हैं। मेरी सदा ईश्वरसे यही प्रार्थना है कि चाहे ब्राह्म लोगों की सभा हो, और चाहे देवमन्दिर हो, मैं सर्वत्र सत्य को सिर झुका कर बहुत ही सहजमें, बिना विद्रोहके, प्रणाम कर सकूँ—बाहर कोई बाधा मुझे उससे रोक न रख सके।

परेश बाबूने इतना कह कर चुप चाप जैसे हृदयमें अपने मनका समाधान कर लिया। उन्होंने कोमल स्वरसे पूर्वोक्त जो शब्द कहे, उन्होंने इतनी देरकी सम्पूर्ण आलोचनाके ऊपर जैसे एक बड़ा 'सुर' गुंजा दिया—वह सुर केवल ऊपर कही गई कुछ बातोंका ही सुर नहीं, बल्कि

परेश बाबूके अपने जीवनका एक प्रशान्त गम्भीर तार (उच्च) सुर है । सुचरिता और ललिताने के मुख पर जैसे आनन्द-मिश्रित भवितकी दीप्ति उज्ज्वल प्रकाश डाल गई । विनय चुपका बैठा रहा । वह भी मन-ही-मन जानता था कि गोराके भीतर, उसके कामोंमें एक प्रचण्ड जबर्दस्ती है—सत्यका प्रचार करने वालोंके वाक्य, मन और कर्ममें जो एक सहज और सरल शान्ति रहनी चाहिए, वह गोराको नहीं है । परेश बाबू की बातें सुन कर उस झगलाने उसके मन पर जैसे और भी स्पष्ट आघात किया ।

सुचरिता रातको अपने बिस्तर पर आकर लेट रही, ललिताने उसके पलंग पर एक किनारे आकर बैठ गई । सुचरिता समझी, ललिताने के मनके भीतर कोई बात निकलने के लिये हलचल डाले हुए है । यह भी सुचरिता समझ गई कि वह बात विनयके ही सम्बन्धमें है इसी कारण सुचरिताने आप ही जिक्र छोड़ा । कहा—विनय बाबू मुझे बड़े भले मालूम पड़ते हैं ।

ललिताने कहा—वह सिर्फ गौर बाबूकी ही बातें घुमा फिराकर कहते हैं न, इसीसे तुम्हें रुचते हैं ।

सुचरिता इस कथनके भीतर छिपे हुए इशारेको समझ कर भी टाल गई, गोया समझी ही नहीं । उसने एक सरल भाव धारण करके कहा—यह तो सच है, उनके मुख से गौर बाबूकी बातें सुननेमें मुझे बड़ा आनन्द होता है । मैं जैसे गौर बाबू को प्रत्यक्ष देख पाती हूँ ।

ललिताने कहा—मुझे तो बिल्कुल अच्छा नहीं लगता—बल्कि क्रोध चढ़ आता है ।

सुचरिताने विस्मयके साथ कहा—क्यों ?

ललिताने कहा—गोरा, गोरा, गोरा, दिन-रात सिर्फ गोरा ही गोरा ! मान लिया, उनके मित्र गोरा खूब बड़े और अच्छे आदमी हैं, अच्छी बात है—लेकिन वह खुद भी तो मनुष्य हैं ।

सुचरिताने हँसकर कहा—सो तो हैं ही, लेकिन उनके मनुष्यत्व में कमी क्या हुई ?

ललिता—उनके मित्रने उनको इस तरह ठक लिया है कि वह अपने तईं प्रकट नहीं कर सकते । जैसे किसीके सिर पर भूत सवार हो गया हो । ऐसी दशामें मुझे उस मनुष्य पर भी क्रोध आता है, और उस भूत पर भी श्रद्धा नहीं होती ।

ललिताकी भल्लाहट देख कर सुचरिता चुपचाप हँसने लगी ।

ललिताने कहा—दीदी, तुम हँसती हो, लेकिन मैं तुमसे कहे देती हूँ, मुझे कोई इस तरह आच्छन्न कर रखने की चेष्टा करता तो मैं एक दिन भी सह न सकती । मान लो तुम हो,—लोग चाहे जो समझें, तुमने मुझे अपने प्रभावसे आच्छन्न नहीं कर रखा है; तुम्हारी प्रकृति ही इस तरहकी नहीं है—तुम मुझे ठक रखनेकी चेष्टा नहीं करतीं, इसीसे मैं तुमको इतना चाहती और मानती हूँ । असल बात यह है कि बाबूजी से ही तुम्हें यह शिक्षा मिली है—वह हर एकको उसका 'स्थान' छोड़ देते हैं ।

इस परिवारमें सुचरिता और ललिता, दोनों परेश बाबूकी अनन्य भवत हैं । 'बाबूजी' कहते ही उनकी छाती जैसे फूल उठती है ।

सुचरिताने कहा—बाबूजी के साथ भला कहीं और किसीकी तुलना हो सकती है ? मगर चाहे जो कुछ कहो बहन, विनय बाबूमें बोलनेकी शक्ति बहुत विलक्षण है । वह खूब बोल सकते हैं ।

ललिताने कहा—वे विचार खास उनके हृदयके नहीं हैं, इसीसे वह उन्हें इस अद्भुत आलंकारिक ढंग से कहते हैं ! वह अगर खास अपने हृदयके विचारोंको कहते, तो वह उनकी बातचीत खूब सहज और स्वाभाविक होती यह न जान पड़ता कि वह खूब सोच-सोच कर संभाल-संभाल कर कह रहे हैं । मुझे तो ऐसी अद्भुत बातोंकी अपेक्षा वे सहज सरल स्वाभाविक बातें ही बहुत अच्छी लगती हैं ।

सुचरिता—खैर नाराज़ क्यों होती है बहन ! गौर मोहन बाबूकी बातें वास्तवमें विनयकी खास अपनी ही बातें बन गई हैं । दोनों अभिन्न-हृदय मित्र हैं ।

ललिता—अगर ऐसा हुआ है, तो वह बहुत ही चाहियत है ! ईश्वरने क्या बुद्धि इसलिए दी है कि हम पराए विचारोंका बखान करें—पराई बातोंकी व्याख्या करें ? मुँह क्या इसलिए ईश्वरने बनाया है कि हम पराई बातोंको बहुत अच्छी तरह बनाकर वर्णन करें ? मुझे ऐसी अद्भुत बातें न चाहिए ।

सुचरिता—लेकिन यह तू नहीं समझ पाती कि विनय बाबू गौर बाबू पर स्नेहका भाव रखते हैं । दोनोंका मन मिला हुआ है—हृदय एक हो गया है !

ललिता को जैसे असह्य हो उठा । वह कह उठी—ना, ना, ना, यह बात नहीं है—दोनोंके हृदयों में सम्पूर्ण मेल नहीं है । असल बात यह है कि गौर बाबूको बड़ा मानना, उनका अनुगमन करना विनय बाबूकी आदतमें दाखिल हो गया है—इसका उन्हें अभ्यास-सा हो गया है । यह उनकी गुलामी है, स्नेह या प्रीति नहीं है । परन्तु वह ज़बरदस्ती यह समझना चाहते हैं कि गौर बाबूके मत से उनका मत ठीक मिलता है । प्रीति अगर होती है, तो प्रीति-पात्रके साथ मतभेद रहने पर भी उसको कोई आँच नहीं पहुँचती । मनुष्य अन्धभक्त हुए बिना भी आत्म त्याग कर सकता है, दूसरे को मान कर चल सकता है । किन्तु विनय बाबू में तो यह बात नहीं है । वह गौर बाबूको मानते हैं शायद प्रेमसे ही मगर उसे स्वीकार नहीं कर पाते । यह बात उनकी बातें सुननेसे ही स्पष्ट समझमें आ जाती है—अच्छा दीदी, तुम यह बात नहीं समझी थीं, सच कहना !

सुचरिताने ललिताकी तरह इस प्रकार यहाँ तक इस बातको सोचा ही नहीं था, लक्ष्य ही नहीं किया था । कारण, गोराको सम्पूर्ण रूपसे जाननेके लिये ही उसका कौतूहल व्यग्र हो रहा था—विनयको गोरासे अलग करके देखनेके लिए उसे आग्रह ही नहीं था । सुचरिताने ललिताके प्रश्नका स्पष्ट उत्तर न देकर कहा—अच्छा, अच्छी बात है, तेरी ही बात मैं माने लेती हूँ—तो बता, क्या करना होगा ?

ललिता—मेरा जी चाहता है. विनय बाबूको बंधु के बंधनसे छुड़ा कर स्वाधिन कर दूं।

सुचरिता - अच्छा तो है बहन, चेष्टा करके देख न।

ललिता—मगर यह काम मेरी चेष्टासे न होगा—तुम ज़रा मन पर धरो, तो ज़रूर हो सकता है।

सुचरिता ने यद्यपि भीतर-ही-भीतर समझ लिया था कि विनय उम पर अनुरक्त है. ता भी उसने ललिता की इस बात को हँसकर उड़ा देनेकी चेष्टा की।

ललिताने कहा—तथापि वो जो गौर बाबूके शासनपाशको ढीला करके तुम्हारे पास इस तरह अपनेको आबद्ध करनेके लिये आते हैं, तुम्हारे प्रति आत्म समर्पण का भाव प्रकट करते हैं इसीसे मुझे भले लगते हैं। उनकी अवस्थामें अगर कोई और होता, तो वह अवश्य ही ब्राह्मसमाजी महिलाओंको भला-बुरा कहकर एक नाटक लिख डालता। लेकिन उनका मन अब भी उदार है। इसका प्रमाण यही है कि वह बाबू जी पर भक्ति रखते हैं, और तुम्हें भी चाहते हैं। सचमुच दीदी विनय बाबूको उनके अपने भावसे खड़ा करना होगा —परावलम्बी से स्वावलम्बी और स्वाभिमानी बनाना होगा। वह जो केवल गौर मोहन बाबूका मत फैलाते फिरते हैं, उनका गुणगान करते रहते हैं, यही मुझे असत्य जान पड़ता है!

इसी समय 'दीदी — दीदी, कहता हुआ सतीश चहाँ दाखिल हुआ। विनय आज उसे किले के मैदान में सर्कस दिखाने ले गया था। यद्यपि अधिक रात बीत चुकी थी, तो भी बालक अपने पहले पहल सर्कस देखने के उत्साह, खुशी और विस्मयको सभौल नहीं पाता था। सर्कस का वर्णन करके उसने कहा—विनय बाबूको आज मैं अपने ही पलंग पर सोनेके लिये पकड़े लाता था। वह दरवाजे के भीतर आये थे मगर वैसे ही लौट गये। बोले—कल आऊंगा। दीदी, मैंने उनसे एक दिन तुम्हें भी सर्कस दिखाने के लिये ले जाने को कहा है।

ललिताने पूछा—उस पर उन्होंने क्या कहा ?

सतीशने कहा—उन्होंने कहा, औरते बाघ देखकर डर जायंगी । किन दीदी, मैं तो बिलकुल नहीं डरा । कहकर सतीश पौरुषके अभिमान छाती फुलाकर बैठ गया ।

ललिताने कहा—सो तो ठीक ही है ! तुम्हारे मित्र विनय बाबू का हास कितना बढ़ा है, यह खूब मेरे समझ में आ रहा है ।—ना भाई म लोगों को साथ लेकर तुम्हें सर्कस दिखाने ले जाना ही पड़ेगा ।

सतीशने कहा—कल तो दिन को सर्कस होगा ।

ललिताने कहा—यह और भी अच्छा है । हम दिन ही को जायंगी ।

दूसरे दिन विनयके आते ही ललिता कह उठी—जो, ठीक समय पर । विनय बाबू आये हैं !—चलिए ।

विनय—कहाँ चलना होगा ?

ललिता—सर्कस ।

सर्कस ! दिनके समय हज़ारों मर्दोंके सामने औरतोंको लेकर सर्कस जाना ! विनय तो हतबुद्धि हो गया ।

ललिताने कहा—शायद गौर बाबू हमें ले जानेसे खफा होंगे—क्यों विनय बाबू, यही बात है न ?

ललिता के इस प्रश्नसे विनय कुछ चौंक उठा ।

ललिताने फिर कहा—सर्कस में औरतोंको ले जानेके सम्बन्धमें गौर मोहन बाबूकी क्या कोई राय है ?

विनय—निश्चय है ।

ललिता—क्या राय है ? आप ज़रा उसकी व्याख्या कहिये । मैं दीदी को बुला लाऊँ ; वह भी सुनैंगी ।

विनय ठहाके से हंस पड़ा । ललिता ने कहा—हंसते क्यों हैं विनय बाबू ? आपने कल सतीश से कहा था कि औरते बाघसे डरती हैं प्रायः भी किसीसे डरते हैं क्या ?

इसके बाद उस दिन औरतों को लेकर विनय सर्कस में गया था। केवल यही नहीं गोराके साथ उसका सम्बन्ध ललिताको और शायद इस घर की अन्य स्त्रियों को कैसा प्रतीत हुआ है यह खयाल भी बार-बार विनय के मनमें हलचल मचाने लगा।

फिर जिस दिन विनयसे भेंट हुई उस दिन ललिता ने जैसे बहुत ही लापरवाहीके कौतूहलका भाव दिखा कर प्रश्न किया—गौर बाबू से आपने उस दिन सर्कस जाने का जिक्र किया था ?

इस प्रश्न की गहरी चोट विनय के मनमें लगी क्योंकि उसे कहना पड़ा—ना, अभी तक तो नहीं किया। यह उत्तर देते समय उसके कानों की जड़ तक चेहरा तम तमा उठा, शायद शर्मके मारे।

इतनेमें लावण्य आ गई। उसने कहा—बिनय बाबू आइए, चलिए न।

ललिताने कहा—कहाँ ? सर्कसमें क्या ?

लावण्यने कहा—वाह आज सर्कस कहाँ है ? मैं बुझाती हूँ इसलिये कि विनय बाबू चलकर मेरे रूमालमें चारों ओर एक किनारे की बेल पेसिल से खींच दें—मैं उसे काढ़ लूँगी। विनय बाबू द्वाइङ्ग में बड़े उस्ताद हैं !

लावण्य बिनयको पकड़ ले गई।

(१६)

सबरेके पहर गोरा कोई लेख लिख रहा था। विनय ने एकाएक उसने पास आकर अव्यवस्थित भावसे कहा—मैं उस दिन परेश बाबू की लड़कियोंको सर्वस दिखाने ले गया था।

गोरा लिखते ही लिखते बोला—हाँ, सुना है।

विनयने बिस्मित होकर कहा—तुमने किससे सुना ?

गोरा—अविनाशसे। वह भी उस दिन सर्वस देखने गया था।

वह और कुछ न कहकर चुपचाप लिखने लगा। गोरा ने पहले ही यह सुन लिया, सो भी अविनाशके मुँहसे, इसलिए उसमें टीका-टिप्पणी की कोई बात न रही। इससे, चिरसंस्कार-वश विनयके मनमें विशेष सङ्कोच हुआ। सर्वसमें जानेकी यह बात इस प्रकार जनसमाजमें प्रकट न होती तो वह खुश होता।

इसी समय उसे स्मरण हो आया कि कल रातको देर तक जागते रहकर वह मन ही मन ललितासे झगड़ता रहा है। ललिता समझती है कि गोराको विनय उतना ही मानकर चलता है जितना कि विद्यार्थी अपने मास्टरको। ऐसा अन्याय करके भी एक मनुष्य दूसरे को ठीक-ठीक नहीं समझ सकता। गोरा और विनयकी एक आत्मा है—वनिष्ठ मित्रता है—असाधारण गुणके कारण गोरा पर उसकी भक्ति है सही किन्तु इसी लिए ललिताने जो कुछ समझ रक्खा है वह गोरा और विनय दोनोंके साथ अन्याय है न तो विनय ही नाबालिग है और न गोरा ही उसका अभिभावक है।

गोराने लिखने में मन लगाया। विनय ने ललिताके दो-तीन तीखे प्रश्नोंका मन ही मन स्मरण करने लगा। वह सहज ही उन प्रश्नोंको मनसे न हटा सका।

सोचते ही सोचते विनयके मनमें विद्रोहने सिर उठाया । सकँस देखने गये तो क्या हुआ ? अविनाश कौन है जो उन बातोंके विषय में गोराके साथ आलोचना करने आता है । अथवा गोरा ही मेरी गति विधिके सम्बन्धमें उस अकार्य-भाजन के साथ क्यों बातें करता है ? क्या मैं गोरा का नौकर हूँ या उसका कैदी हूँ, जो उसकी आज्ञाके अनुसार चलूँगा ? मैं किसीसे मिलूँगा किसीके साथ बातचीत करूँगा, या कहीं जाऊँगा तो क्या मुझे गोरा को इन बातों की कैफ़ियत देनी होगी ! मित्रतामें यह भारी उपद्रव उठ खड़ा हुआ ।

विनय यदि अपनी भोरताको इस प्रकार अपने भीतर स्पष्ट रूपसे न देख पाता तो उसे गोरा और अविनाश के ऊपर इतना क्रोध न होता । गोराके पास वह कोई बात तर्ण भरके लिए भी झिपा नहीं सकता, इस-लिए वह आज मनही मन गोराको ही अपराधी बनानेकी चेष्टा कर रहा है । गोराने ही उसे पर-वश बना रखता है । मित्रतामें ऐसी परवशता क्यों ! सकँस जानेकी बातके लिए यदि गोरा विनयको दो-एक खरी-खोटी बातें सुनाता तो इससे भी मित्रत्व भावकी समता जानकर विनयको सान्त्वना मिलती । किन्तु गोरा गम्भीर भावसे बहुत बड़े विचारकका रूप धारण कर मौन द्वारा विनयका अपमान कर रहा है इससे, ललिताकी बात काँटेकी तरह उसके मनमें चुभने लगी ।

इतनेमें महिमाने हाथ में हुक्का लिये घरके भीतर प्रवेश किया । पानोंकी डिब्बियासे एक बीड़ा पान विनयके हाथमें देकर कहा—विनय, इधर तो सब ठीक है । अब तुम्हारे चचाके हाथकी चिट्ठी आने भरकी देर है । वह मिलते ही मैं निश्चिन्त हो जाऊँगा । तुमने तो उनको पत्र लिख ही दिया होगा ?

इस विवाह की चर्चा आज विनयको बहुत बुरी लगी परन्तु वह जानता था कि इसमें महिमका कोई दोष नहीं है । उनको वचन दे दिया गया है । किन्तु वचन देनेके भीतर उसने अपनी एक हीनता समझी । आनन्दमयीने तो उसे एक प्रकार से रोका था—उसका स्वयं भी इस

विवाहके प्रति कुछ विशेष भुकाव न था। तो यह बात इस प्रकार झट-पट पक्की क्योंकर हो गई? गोराने जल्दी की है, यह भी नहीं कहा जा सकता। विनय यदि किसी तरह अस्वीकृति का भाव दिखाता तो गोरा इसके लिए हठ करता, यह भी सम्भव नहीं, किन्तु तो भी—इसी तोभी के ऊपर फिर ललिता की व्यङ्ग्योक्ति आकर विनयके मनको दुखाने लगी, मानों वह उसके हृदयके भीतर नशतरका काम करने लगी। उस दिनकी ऐसी कोई विशेष घटना न थी, किन्तु बहुत दिनोंके प्रभुत्वकी बात सोचकर ही विनयकी यह अवस्था हो रही है। वह केवल घनिष्ट प्रेम और नितान्त भलमनसीके कारण गोराकी झिड़की और दुकूलमत सहनेको अभ्यस्त सा हो गया है। इस कारण यह प्रभुत्वका सम्बन्ध ही मित्रताके सिर पर चढ़ बैठा है। इतने दिन तक विनयने इसका अनुभव नहीं किया था, किन्तु अब अनुभव करने ही से क्या हो सकता है? अब इसे अस्वीकार करते भी तो नहीं बनता। तो क्या शशमुखीके साथ साथ ब्याह करना ही होगा?

विनयने कहा—जी नहीं, चाचाजीके पास तो अभी तक चिट्ठी नहीं भेजी।

महिम—यह मेरी ही भूल है। यह चिट्ठी तो तुम्हारे लिखनेकी नहीं है—यह मैं ही लिखूँगा। उनका नाम और पूरा पता क्या है?

विनय—आप घबराते क्यों हैं? आश्विन या कार्तिकमें तो विवाह हो नहीं सकेगा। रहा अग्रहन—सो उसमें भी एक बाधा है। मेरे वंशमें, बहुत समय पहले, अग्रहनमें न मालूम कब क्या दुर्घटना हुई थी। तबसे मेरे कुल में अग्रहन में विवाह आदि कोई शुभ कर्म नहीं होता।

महिमने हाथ का हुका धरके कोनेमें रखकर कह—विनय, तुम लोग यदि ये बातें मानोगे तो इतना पढ़-लिखकर क्या किया? एक तो इस मनहूस देशमें शुभ मुहूर्त्त खोजने से भी नहीं मिलता। इस पर फिर घर-घर पत्रा खोलकर बैठनेसे संसार का काम कैसे चलेगा?

विनय—अच्छा तो आप भादों या आश्विनको ही क्यों निषिद्ध मानते हैं ?

महिम—कौन कहता है कि मैं मानता हूँ । कभी नहीं । परन्तु मैं करूँ क्या । इस देशमें भगवान्‌को न माननेसे कोई हर्ज नहीं किन्तु भादों, आश्विन, शनि, वृहस्पति, तिथि और नक्षत्र न माननेसे कोई घरमें भी न रहने देगा । फिर भी मैं जो कहता हूँ कि मैं नहीं मानता सो ठीक है ; किन्तु कोई काम करते समय मुहूर्त्त ठीक न होनेसे मन अप्रसन्न हो जाता है । देशकी बिगड़ी हवासे जैसे मलेरिया होता है वैसे ही यह डर भी । इसे मैं किसी तरह दूर नहीं कर सकता ।

विनय—मेरे वंशमें भी अगहन का डर कोई न मिटा सकेगा । और लोग मान भी सकते हैं; परन्तु मेरी चाची किसी तरह राज़ी न होंगी ।

इस तरह उस दिन विनयने किसी ढंग से विवाह की बात को टाल दिया ।

विनयकी बातोंके रङ्ग-ढङ्गसे गोरा समझ गया कि इसके मनमें कुछ भावान्तर उपस्थित हुआ है । कुछ दिनसे विनय इधर ही उबर घूमता था, कभी दिखाई भी न देता था । गोराको यह भी पता लग गया था कि विनय अब पहले की अपेक्षा परेश बाबूके घर अधिक जाने आने लगा है । उस पर भी आज इस विवाहके प्रस्तावमें फन्दा काटकर उसके निकल जाने की चेष्टा देख गोराके मनमें सन्देह उत्पन्न हुआ ।

गोराने अपना लिखना छोड़ सिर उठाकर कहा—विनय, एक बार जब तुम भाई साहबको बचन दे चुके हो तब क्यों इनको दुविधा में डालकर नाटक कष्ट दे रहे हो ?

विनय सहसा असहिष्णु होकर बोला—मैंने वचन दिया है—या ज़बरदस्ती मुझसे वचन ले लिया गया है ?

विनयका यह आकस्मिक विद्रोह भाव देखकर गोरा विस्मित हुआ । उसने खड़े होकर कहा—किसने तुमसे ज़बरदस्ती बचन कहलाया है ?

विनय—तुमने ।

गोरा—मेरी तुम्हारे साथ इस सम्बन्धमें दो एक बातोंसे अधिक बात-चीत नहीं हुई। इसीको तुम बचन कहलाना कहते हो !

वस्तुतः विनय के पास कोई विशेष प्रमाण न था—गोरा जो कहता है वही सत्य है। बात चोत बहुत थोड़ी हुई थी और उसमें कोई ऐसे आग्रहका भाव न था जिसे ज़बरदस्ती कहा जाय। तो भी यह बात सच है कि गोराने विनयके पेट से उसकी सम्मति मानों लूटकर बाहर निकाल ली थी। जिस मुकदमेका बाहरी सबूत कम है, उस मुकदमे में मनुष्यको लोभ भी कुछ अधिक होता है। इसीसे विनयने कुछ लड़खड़ाती हुई ज़बान से कहा—ज़बरद तो कहलानेके लिये बहुत बातोंकी ज़रूरत नहीं होती।

गोराने कुरसीसे खड़े होकर कहा—लो, अपनी बात फेर लो। यह बात इतनी बेशक़ीमती नहीं कि मैं इसे तुमसे माँगकर या ज़बरदस्ती लूँ।

पास के कमरे में महिम थे। गोराने उच्चस्वर से पुकारा—भाई साहब।

महिम हड़बड़ा कर दौड़ आये। गोराने कहा—मैं शुरू से ही कहता आया हूँ कि शशिमुखाके साथ विनयका विवाह न होगा। मेरा विचार नहीं होता।

महिम—हाँ, कहा तो था ! तुम्हारे सिवा और कोई ऐसी बात कह नहीं सकता। दूसरा कोई भाई होता तो भतीजी के विवाहके प्रस्तावमें पहले हीसे उत्साह दिखाता।

गोरा—आपने मेरे द्वारा विनयसे अनुरोध क्यों कराया ?

महिम—सोचा था, उससे काम हो जायगा और कोई बात नहीं।

गोराने श्रॉलें लाल करके कहा—मैं इन सब बातोंमें नहीं रहता। विवाह की बिचवानी करना मेरा काम नहीं। मेरा काम कुछ और है।

यह कहकर गोरा घरसे चला गया, महिम हतबुद्धि से खड़े ही रहे। इसके कुछ कहने के पहले ही विनय भी घरसे चलता हुआ। महिम कोने में हुक्का उठाकर चुपचाप बैठ गये और पीने लगे।

गोरा के साथ इसके पहले विनयके कई बार झगड़े हो गये हैं किन्तु

ऐसे प्रचण्ड दावानलकी तरह भगड़ा कभी नहीं हुआ। विनय अपनी करतूत पर पहले दुखी हो उठा, किन्तु पीछे घर जाने पर उसके हृदयमें बाण बिधने लगा। घड़ी भरके भीतर ही मैंने गोरा को कितनी बड़ी चोट पहुँचाई है इसका स्मरण करके उसे बहुत पश्चात्ताप हुआ। खाना, पीना और सोना उस दिन उसे कुछ न रुचा। विशेषकर इस घटनामें गोराको दोष देना नितान्त अनुचित और असङ्गत हुआ है, यही उसको सन्तप्त करने लगा। वह अपने को बार-बार धिक्कार देकर बोला—अन्याय ! घोर अन्याय !! घोरतर अन्याय !!!

दो बजे दिनको आनन्दमयी सबको खिला-पिलाकर और आप भी खाकर जब सिलाई करने को बैठी थी तब अचानक विनय उसके पास आकर बैठा। आज सबेरकी कितनी ही बातें आनन्दमयी ने महिम से सुनी थीं। भोजनके समय गोरा के मुँहका गम्भीर भाव देखकर भी वह ताड़ गई थी कि आज कुछ खटपट जरूर हुई है।

विनयने आते ही कहा—माँ, मैंने अन्याय किया है। शशिमुखीके साथ व्याहके सम्बन्धमें मैंने आज सबेर गोरा से जो कुछ कहा है उसका कोई अर्थ नहीं।

आनन्दमयीने कहा—एक जगह रहनेसे आपसमें कभी कभी खटपट हो ही जाती है। मनके भीतर किसी व्यथा का बोझ होनेसे वह इसी तरह बाहर निकल पड़ता है। यह अच्छा ही हुआ। मनका मैत्र निकल जाना ही अच्छा है। इस भगड़ेकी बात दो दिन बाद तुम भी भूल जाओगे, गोरा भी भूल जायगा।

विनय—किन्तु माँ, शशिमुखीके साथ व्याह करने में मुझे कोई उज्र नहीं है, यही मैं तुमसे कहने आया हूँ।

आनन्दमयी—पहले इस भगड़े को मिटा लो; जब तक भगड़े की बात नहीं मिटती तब तक फिर दूसरे भ्रष्टमें मत पड़ो। व्याह गुड़िया का खेल तो है नहीं' वह सम्बन्ध सदाके लिये होगा। भगड़ा तो दो दिन का है।

विनयने इस बात को न माना । वह इस प्रस्ताव को लेकर गोरा के पास न जा सका, परन्तु महिमसे जाकर बोला—विवाहके प्रस्तावमें कोई बाधा नहीं—माघ महीने में यह काय हो जायगा । चाचाजीकी इसमें असम्पत्ति न होगी, यह भार मैं अपने ऊपर लेता हूं ।

महिमने कहा—तो फल दान हो जाय ।

विनय—अच्छा, यह आप गोरा से सलाह लेकर करें ।

महिम —फिर गोरा से सलाह लेने को कहते हो ?

विनय—उससे सलाह लेनी ही होगी । बिना उससे सलाह लिये काम न चलेगा ।

महिम —‘ न चलेगा , तब तो आखिर सलाह लेनी ही होगी । किन्तु’—यह कहकर उर्गेहने डिब्बेसे पान निकालकर मँहमें रखवा ।

महिम ने उस दिन गोरासे कुछ न कहा । वे दूसरे दिन उसके कमरे में गये । उन्होंने सोचा था, गोराको फिर राजी करने में बहुत कहना सुनना पड़ेगा । किन्तु उन्होंने ज्योंही आकर कहा कि विनय कल शामको आकर विवाहके सम्बन्धमें पक्का बचन दे गया है और फल-दान के विषय में तुमसे सलाह लेने को कहा है, त्योंही गोरा ने अपनी सम्मति प्रकट कर कहा—अच्छा तो फल दान हो जाय ।

महिम ने अचम्भित होकर कहा—अभी तो कत्ते हो, अच्छा, पीछे फिर कौन लड़ न बैठना ।

गोरा—मैंने रोकनेके अभिप्रायसे तो झगड़ा किया नहीं । अनुरोध का ही झगड़ा है ।

महिम - इसी लिए हम तुमसे हाथ जोड़कर यह विनय करते हैं कि न तुम इसमें बाधा दो और न अनुरोध ही करो । न तो हमें कुरु पत्र की नारायणी सेना की ही ज़रूरत है और न पाण्डव पत्र के नारायण की ही । मैं अकेला जो कर सकूंगा वही अच्छा होगा । मैंने भूल की थी जो तुमसे अनुरोध करनेको का था । पले मैं यह न जानता था कि तुम्हारी सहायता भी उलटी होती है । जो हो, यह जो कार्य हो रहा है इसमें तुम्हारी इच्छा तो है ?

गोरा—जी हाँ, इच्छा है ।

महिम - यही चाहिये । तुम इस विषयमें अब कुछ उद्योग न करना ।

गोरा ने अब समझा कि विनयको दूरसे खींच रखना काठन होगा । जो आशङ्काकी जगह है वहीं पहरा देना चाहिए । उसने मने में सोचा कि यदि मैं परेश बाबू के घर बराबर जाया आया करूँ तो विनयको घेरेके भीतर रख सकूँगा ।

उसी दिन अर्थात् भगड़ेके दूसरे दिन, तीसरे पहरको, गोरा विनय के घर आ पहुँचा। विनयको यह आशा न थी कि गोरा आज ही आवेगा। इस कारण उसके मनमें खुशीके साथ साथ आश्चर्य भी हुआ।

इससे भी बढ़कर आश्चर्यका विषय यह था कि आनेके साथ ही गोराने परेश बाबूकी लड़कियोंकी चर्चा छेड़ दी। फिर उस पर चमत्कार यह कि उसमें आलेखकी किंचित्मात्र गन्ध न थी। यह आलोचना विनय को उत्तेजित करने के लिए यथेष्ट थी, किसी विशेष चेष्टाकी आवश्यकता न हुई।

दोनों मित्रोंमें उस दिन घूम फिरकर परेश बाबूकी लड़कियोंके विषय में वार्तालाप होते होते रात हो गई।

गोरा अकेला घर लौटते समय रास्ते में इन सब बातों को मन ही मन सोचने लगा और घर आकर जब तक उसे बिछोने पर जाकर नींद न आई तब तक वह परेश बाबूकी लड़कियोंकी बातको मनसे दूर न कर सका। गोरा के जीवन में यह आज नई घटना है। इसके पहले आज तक कभी उसके मन में स्त्रियोंकी बातने स्थान नहीं पाया था। अनेक सांसारिक व्यवहारोंमें यह भी एक चिन्ताका विषय है, इसे विनयने इस दफे प्रमाणित कर दिया। यह बात अब किसी तरह उड़ाई नहीं जा सकती। या तो इसकी रक्षा करनी होगी या इसके विरुद्ध युद्ध करना होगा !

दूसरे दिन विनयने जब गोरासे कहा—परेश बाबूके घर एक बार चलो न, बहुत दिनसे नहीं गये हो; वे बराबर तुम्हारी बात पूछा करते हैं ताब गोरा बिना कुछ उत्तर किये जानेको राजी हो गया ! सिर्फ राजी ही नहीं हुआ, उसके साथ कुछ उत्सुकता भी थी। पहले सुचरिता और परेशबाबूकी कन्याश्री के स्थिति के सम्बन्ध में वह बिलकुल उदासीन था, किन्तु अब उसके मनमें एक नये कुतूहलका भाव उत्पन्न हुआ है। विनयके चित्तको वे कैसे इसतरह अपनी ओर खींच रही हैं यह जाननेके लिए उसके मनमें विशेष आग्रह हुआ।

जब दोनों परेश बाबूके घर पहुँचे तब सोंभ हो गई थी। छतके ऊपरवाले कमरेमें दिया जलाकर हारानबाबू अपना एक अंगरेज़ी लेख परेश बाबू को सुना रहे थे। यहाँ परेशबाबू एक उपलक्ष मात्र थे, असल में सुचरिताको सुनाना ही उनका उद्देश्य था। आँखों पर रोशनी न आने देने के लिए सुचरिता मुँहके सामने ताड़का पट्टा किये टेबलके कुछ दूर एक तरफ चुप बैठी थी ! वह अपने स्वाभाविक सरल भाव से निबन्ध सुनने के लिए विशेष चेष्टा कर रही थी, किन्तु रह रहकर उसका मन हठात् दूसरे ओर चला जाता था।

इसी समय नौकर ने आकर जब गोरा और बिनय के आने की खबर दी तब सुचरिता एकाएक चौंक उठी। वह कुरसीसे उठ खड़ी हुई उसे उठकर जाते देखकर परेश बाबूने कहा—सुचरिता, कहाँ जाती हो ? बैठा, और कोई नहीं है, हमारे बिनय और गौरमोहन आ रहे हैं।

सुचरिता सकुचाकर फिर बैठ गई। हारानबाबूके लम्बे अंगरेज़ी लेखके पाठमें विघ्न पहुँचनेसे सुचरिताका जी हलका हुआ। गोरा के आनेकी बात सुनकर उसके मन में किसी प्रकारका उल्लास न हुआ हो सा नहीं, किन्तु हारानबाबूके सामने गोरा के आनेसे उसके मनमें एक तरहकी बेचैनी और सङ्कोच मालूम होने लगा—दोनोंमें पीछे भगड़ा न हो, यह सोचकर या अन्य किसी कारणसे, यह कहना कठिन है।

गोराका नाम सुनते ही हारन बाबूका मन उदास सा हो गया। गोराके नमस्कार का किसी तरह उत्तर देकर यह मुँह लटकाये बैठे रहे। हारान बाबू को देखते ही उसीके साथ बादाविवाद करने के लिए गोराका जी फड़क उठा। वरदासुन्दरी अपनी तीनों लड़कियों को लेकर कहीं नेबते में गई थी। तय हो गया था कि शाम को परेश बाबू जाकर उन सबोंको ले आवेंगे। परेशबाबूके जानेका समय हो गया है। ऐसे समय में गोरा और बिनयके आ जाने से उनके जाने में बाधा हुई। किन्तु अब अधिक बिज़म करना उचित न समझकर वे सुचरिता और हारानबाबू के

कान में कह गये—तुम इनके साथ कुछ देर बैठो; जहाँ तक होगा मैं शीघ्र ही आता हूँ।

देखते ही देखते गोरा और हारान बाबू के बीच भारी शास्त्रार्थ छिड़ गया। जिस विषय पर तर्क चला था वह यह था;—कलकत्ते के निकटवर्ती किसी ज़िले के मैजिस्ट्रेट ब्रैडला साहबसे परेश बाबूकी ढाके में भेंट हुई थी। परेश बाबूकी स्त्री और लड़कियाँ पढ़ेंका लिहाज़ न रखकर बाहर निकलती थीं, इससे खुश होकर साहब और मेम दोनों उनकी बड़ी खातिर करते थे। साहब अपने जन्म-दिनको हरसाल कृपि प्रदर्शनीका मेला कराते थे। इस दफे, वरदासुन्दरीने ब्रैडला साहबकी मेमसे भेंट करके उसके आगे अंगरेज़ी काव्य-साहित्य में अपनी लड़कियोंकी विशेष योग्यता का वर्णन किया। यह सुनकर मेम साहिबाने कहा—‘अबकी बार के मेले में छोटे लाट साहब अपनी मेम के साथ आवेंगे। आपको लड़कियाँ यदि उनके सामने एक आध छोटा सा कोई अंगरेज़ी नाटक खेलें तो बड़ा अच्छा हो।’ इस प्रस्ताव पर वरदासुन्दरी अत्यन्त उत्साहित हो उठी। आज वह अपनी लड़कियों के अभ्यास की जाँच कराने के लिए किसी मित्र के घर गई हैं। इस मेलेमें गोरा आवेगा या नहीं? यह पूछने पर गोरा कुछ अनावश्यक उप्रता के साथ बोला—‘नहीं।’ इस प्रसङ्ग पर, इस देशके अंगरेज़ों और बङ्गालियोंके बीच क्या सम्बन्ध है और परस्पर सामाजिक सम्मेलनमें कौन सी बाधा है, इस विषय पर दोनोंमें प्रचण्ड वादाविवाद उपस्थित हुआ।

हारान बाबूने कहा—बङ्गालियोंका ही दोष है। हम लोगोंमें इतने कुसंस्कार और कुप्रथाएँ हैं कि हम लोग अंगरेज़के साथ मिलने योग्य नहीं रहे।

गोरा—अगर यही सच है तो उस अयोग्यता के रहते भी अंगरेज़के साथ मिलनेके लिए तार टपकाते फिरना हमारे लिए बड़ी लज्जाका विषय है।

हारान—किन्तु जो योग्य हैं वे अंगरेज़ोंके यहाँ यथेष्ट सम्मान पा रहे हैं—जैसे ये लोग।

गोरा—एक व्यक्ति के आदर से जहाँ और सभी व्यक्तियों का विशेष अनादर हो वहाँ उस आदरको हम भारी अपमान में गिनते हैं ।

यह उत्तर पाकर हारान बाबू अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे ; गोरा उनको ठहर-ठहरकर वाक्य बाण से बेधने लगा ।

दोनोंमें जब इस प्रकार बातें हो रही थीं तब सुचरिता टेबल के पास बैठकर पङ्खे की आड़ से गोराको टकटकी बाँधे देख रही थी । जो बात होती थी सो उसके कानमें आती अवश्य थी, किन्तु उस ओर उसका मन नहीं था । पूछने पर शायद वह न बता सकती कि मैंने क्या सुना है ! सुचरिता जो स्थिर दृष्टिसे गोराको देख रही थी, सो उस सम्बन्धमें यदि उसका मन अपने हाथसे बाहर न हो गया होता तो वह अपनी इस धृष्टता पर लज्जित होती किन्तु वह मानों अपनेको भूलकर गोराको निहार रही थी । गोरा अपनी मजबूत बाँहोंको टेबलके ऊपर रखे हुए सामने मुका बैठा था । दिये की रोशनीमें उसका उन्नत ललाट चमक रहा था । उसके मुँह पर कभी घृणा, कभी व्यङ्ग्यकी हँसी और कभी उत्साहका चिह्न दिखाई दे रहा था । उसके मुँहके प्रत्येक भावसे एक आत्म-मर्यादा का गौरव लक्षित होता था । वह जो कह रहा था सो केवल सामयिक वितर्क या आक्षेपकी बात नहीं थी । प्रत्येक बात उसकी पहलेकी सोची हुई सी जान पड़ती थी । उसमें किसी तरहकी दुर्बलता, दुबिधा या विचित्रता नहीं थी । उसके कण्ठसे जो कुछ निकलता था, सुदृढ़ भावसे भरा हुआ निकलता था । मानों उसके अङ्ग-प्रत्यङ्गसे सुदृढ़ताका भाव प्रकाशित होता था । सुचरिता उसको आश्चर्यके साथ देखने लगी । सुचरिताने अपनी उम्र भर में इतने दिन बाद मानों पहले-पहल एक व्यक्तिको एक विशेष पुरुषके रूपमें देखा । उसकी जोड़का और कोई पुरुष उसकी दृष्टीमें न आ सका । इस वितर्कमें गोराके विरुद्ध खड़े होनेसे ही हारान बाबू सुचरिताकी दृष्टिमें, हलके जूँचने लगे । उसके शरीरकी आकृति, उसका चेहरा, उसकी चेष्टा और उसकी पोशाक तक मानों भाईके साथ दिव्यगी करने लगी । इतने दिन बारम्बार विनयके साथ

गोराके सम्बन्धमें आलोचना करके सुचरिताने गोराको एक विशेष दल और एक विशेष मतका असाधारण मनुष्य मान लिया था। उसके द्वारा देशका कोई कल्याण साधन कभी हो सकता है, यही कल्पना केवल मन में कर ली थी। आज सुचरिता उसके मुंहकी ओर एकाग्र मनसे देखते देखते समस्त दल, समस्त मन और समस्त उद्देशसे अलग कर गोराको केवल गौरमोहन समझने लगी। जैसे समुद्र कोई प्रयोजन या व्यवहारकी अपेक्षा न रखकर चन्द्रमाको देखते ही बिना कारण आनन्दसे फूल उठता है उसी तरह आज सुचरिता भी गोराको देखकर फूल उठी। मनुष्यके साथ मनुष्यकी आत्माका क्या सम्बन्ध है, इस ओर सुचरिता का ध्यान आकर्षित हुआ, और इस अपूर्व अनुभव से वह अपने अस्तित्वको एकदम भूल गई।

हारान बाबू ने सुचरिताके मनका ये भाव समझ लिया। इसीसे तर्क में उसकी युक्ति ज़ोरदार न होती थी। मन अधीर हो जानेसे बुद्धि भी मन्द पड़ जाती है। आखिर वह नितान्त धैर्य हीन होकर अपनी जगह से उठ खड़े हुये और सुचरिता को अपनी परम आत्मीय की भाँति पुकार कर बोले—सुचरिता ज़रा इस कमरे में आओ, तुमसे एक बात कहनी है।

सुचरिता एकदम चौंक उठी। हारान बाबूके साथ सुचरिता का जैसा चिर-परिचय था उससे वो कभी उसको इस तरह पुकार नहीं सकते थे सो बात नहीं है। यदि और समय वो इस तरह पुकारते तो सुचरिता कुछ मन में न लाती। किन्तु आज गोरा और त्रिनय के सामने उसने इस बातसे अपनेको अपमानित समझा। विशेष कर गोराने उसके मुंहकी ओर ऐसे भाव से देखा कि वह हारान बाबूके इस अशिष्टता के लिए क्षमा न कर सकी। पहले तो जैसे उसने कुछ सुना ही न हो ऐसा भाव करके चुप बैठी रही। फिर हारान बाबू ने कुछ क्रोध भरे स्वर में कहा—सुचरिता, सुनती नहीं! मुझे कुछ कहना है, एक बार इस कमरेके भीतर न आओगी?

सुचरिताने उनके मुंह की ओर न देखकर कहा—अभी ठहरिए बाबूजी को आने दीजिए तब सुन लूंगी ।

विनय ने खड़े होकर कहा—अच्छा तो हम जाते हैं ।

सुचरिता झट बेजा उठी—नहीं विनय बाबू, आप अभी न जायें । बाबूजीने आप लोगोंसे ठहरने को कहा है । वे अब आते ही होंगे ।

‘तो मैं अब पल भर भी यहाँ ठहर नहीं सकता,’ यह कहकर हारान बाबू वहाँ से चले गये । उस समय वे क्रोधमें आकर वहाँसे निकल तो पड़े किन्तु बाहर आकर जब उनके होश ठिकाने आये तब उन्हें पश्चात्ताप होने लगा ; परन्तु उस समय लौटने का कोई बहाना उन्हें खोजने पर भी न मिला ।

हारानबाबू के चले जाने पर सुचरिता एक अपूर्व लज्जा से सिकुड़कर, सिर झुकाकर, बैठ रही । क्या करूँ, क्या बोलूँ, यह मन ही मन सोच रही थी, पर कुछ निश्चय न कर सकती थी । तब तक गोरा ने उसके मुंह की ओर अच्छी तरह देखने का अवकाश पा लिया । गोरा ने शिथिल स्त्रियों में जिस उद्धत स्वभाव और निर्लज्जता की कल्पना कर रखी थी, उसका आभास तक सुचरिता की मुख-शोभा में न था । बुद्धि की उज्ज्वलता से उसका चेहरा अवश्य प्रकाश पा रहा था किन्तु लज्जा और नम्रता से आज वह क्या ही सुन्दर और कोमल मालूम हो रहा था । उसके मुख पर क्या ही लावण्य और कोमलता छाई है । धनुष सी टेढ़ी भौंहों पर आयत ललाटकी कैसी अपूर्व शोभा है । नवीना रमणीके वेप-विन्यास और उसके भूषण-वसन की ओर गोराने इसके पूर्व कभी अच्छी तरह से नहीं देखा था, और न देखने का उसे एक रोग सा था । स्वभावतः उसे उस पर घृणा थी । आज सुचरिता के शरीर पर नये ढङ्ग की साड़ी पहिरने का चमत्कृत भाव देखने में उसको बड़ा अच्छा लगा । सुचरिता का एक हाथ टेबल पर था । गोरा की दृष्टि उस पर भी जा पड़ी । वह भी उसे एक अपूर्व रूपमें दिखाई दिया । आज उसकी दृष्टि में कुछ विशेषता है वहाँ पर वह जो कुछ देखता है अपूर्व

देखता है। घर की कढ़ी, छत और दीवार तक उसकी दृष्टि में नहीं हो उठी है। आखिर वह क्रम क्रम से सुचरिताके सिर से पैर तक सभी अङ्गों की शोभा देख चकित हो रहा।

कुछ देर तक कोई कुछ न कहकर संकुचित से हो रहे। तब विनय ने सुचरिताकी ओर देखकर कहा—‘उस दिन आप क्या कहती थीं?’ और यह कहकर उसने एक बात छेड़ दी।

उसने कहा—मैं आपसे तो कही चुका हूँ कि पहले मेरे मनमें कुछ और ही धारणा थी। मेरे मनमें विश्वास था कि हमारे देश के लिए, समाजके लिए, कुछ आशा नहीं है—हम लोगोंको बहुत दिनों तक नाबा-लिङ्गकी तरह रहना होगा और अंगरेज हम लोगोंके निरीक्षक नियुक्त रहेंगे। हमारे देशके अधिकांश लोगोंके मनका भाव ऐसा ही है। ऐसी अवस्थामें मनुष्य या तो अपना स्वार्थ लिये रहता है या उदासीन भावसे समथ बिताता है। मैंने भी एक समय चाहा था कि गोरा के पितासे कह सुनकर कहीं नौकरी का प्रबन्ध करा लूँगा। उस समय गोराने मुझसे कहा—‘नहीं, तुम सरकारी नौकरी कभी नहीं कर सकोगे।’

इस बातसे सुचरिताके मुँह पर एक आश्चर्य का आभास देखकर गोराने कहा—‘आप यह न समझें कि गवर्नमेंट के ऊपर क्रोध करके मैंने ऐसा कहा है। जो लोग सरकारी काम करते हैं वे गवर्नमेंट की शक्ति को अपनी शक्ति समझ गवर्न करते हैं और देशी लोगोंकी श्रेणीसे अपनेको भिन्न मानते हैं। जितने ही दिन बीतते हैं, हम लोगोका यह भाव उतना ही प्रबल होता जाता है मेरे एक आत्मीय पुराने ज़माने में डिपटी थे—अब वे उस कामको छोड़ बैठे हैं। उनसे ज़िला-मैजिस्ट्रेटने पूछा था—बाबू, आपके इजलास से इतने लोग रिहाई क्यों पाते हैं? उन्होंने उत्तर दिया—‘साहब, उसका एक कारण है। आप जिनको जेल भेजते हैं वे आपके लिए कुत्ते-बिल्लीसे बढ़कर नहीं हैं और मैं जिन्हें जेल भेजता हूँ उन्हें अपना भाई समझता हूँ।’ इतनी बड़ी बात बोलने वाला डिपटी तब भी था और उस बात को सुन लेनेवाले अंगरेज हाकिमका भी उस समय अभाव

न था । परन्तु जितना ही समय बीतता जाता है उतने ही लोग नौकरीको भ्रूषण समझते जा रहे हैं और आजकलके डिपटी बाबूके सामने उनके देश का आदमी क्रमशः कुत्ता-बिल्ली होता जा रहा है । किन्तु इस प्रकार पदकी उन्नति होते-होते जो केवल उनकी अवनति हो रही है, इस बातका कभी उनके मनमें अनुभव तक नहीं होता । लोग दूसरे के कन्धे पर भार रखकर अपने घरके लोगोंको तुच्छ समझेंगे और तुच्छ जनकर उनके प्रति अविचार करनेको बाध्य होंगे । इससे देशका कोई कल्याण नहीं हो सकता ।—यह कहकर गोरा ने टेबल पर हाथ पटका जिससे चिराग़ हिल गया । यदि कुछ जोरसे और हाथ पटका जाता तो चिराग़ जरूर लुढ़क जाता ।

विनयने कहा—गोरा यह टेबल गवर्नमेन्ट की नहीं और यह चिराग़ भी परेश बाबू का ही है ।

यह सुनकर गोरा ठहाका मार कर हँस पड़ा । उसकी प्रबल हास्यध्वनिसे सारा मकान गूँज उठा । दिल्ली की बात सुनकर गोरा लड़के की तरह ऐसे जोर से हँस उठा इससे सुचरिता को आश्चर्य हुआ और उसके मन में एक विशेष आह्लाद हुआ । जो लोग बड़ी बड़ी बातें सोचते हैं वे जी खोलकर खूब हँस भी सकते हैं यह बात मानो वह न जानती थी ।

गोरा ने उस दिन बहुत बातें कहीं । सुचरिता यद्यपि चुप थी, किन्तु उसके मुँहके भावसे गोरा ने एक ऐसी तृप्ति पाई कि उत्साहसे उसका हृदय फूल उठा । अन्त में मानों उसने सुचरिताकी ओर लक्ष्य करके कहा—एक बात यह याद रखने की है । यदि हम लोगोंका ऐसा गलत संस्कार हो कि जब अंगरेज प्रबल हो उठे हैं, तब हम लोग भी ठीक उन्हींकी तरह न हों तो कदापि प्रबलता प्राप्त न कर सकेंगे, तो यह भूल है । हम लोग उनका अनुकरण करते करते और भी बरबाद हो जायेंगे । न हिन्दू रहेंगे न मुसलमान । प्रबलता क्या होगी खाक ! आपसे मेरा

यह अनुरोध है कि आप भारतवर्षके भीतर आवें। इसके भले-बुरे व्यवहारों के बीच में खड़ी हो। और यदि कोई त्रुटि देख पड़े तो भीतर से ही उसका संशोधन कर लें। सब के साथ मिलकर एक हो। इसके विरुद्ध खड़े होकर बाहर से वृस्तानी संसार में शामिल होकर रग रग में उस धर्म की दीक्षा पाने से इस हिन्दू मत का तत्त्व आप न समझ सकेंगे। जब-तब इस पर चोट ही करेंगी, आपके द्वारा इसका कोई उपकार न हो सकेगा।

गोरा ने कहा सही कि यह मेरा अनुरोध है—किन्तु यह तो अनुरोध नहीं है, यह तो एक प्रकारकी आज्ञा है। बात ऐसी बलवती है और उसके भीतर एक ऐसी ताकीद है कि वह दूसरेकी सम्मतिकी अपेक्षा नहीं रखती। सुचरिता ने सिर नीचा किये ही सब सुना। इस प्रकार एक प्रबल आग्रह के साथ गोरा ने जो उसीको विशेष भावसे सम्बोधन करके ये बातें कहीं इससे सुचरिता के मनमें एक आन्दोलन उपस्थित हुआ। सुचरिताने अपना सब संकोच दूर करके बड़ी मन्नता के साथ कहा—मैंने देशकी बातोंको कभी इस प्रकार महत्त्व भरे भावसे नहीं सोचा था। परन्तु मैं आपसे एक बात पूछती हूँ—धर्मके साथ देशका क्या सम्बन्ध है? धर्म क्या देशसे भिन्न विषय नहीं है?

गोराके कानमें सुचरिताके कोमल कण्ठका यह प्रश्न बड़ाही मधुर लगा। सुचरिताकी बड़ी-बड़ी आँखोंके बीच यह प्रश्न और भी माधुर्यमय देख पड़ा। गोराने कहा—जिस धर्मको आप देशसे भिन्न विषय समझती हैं वह देशकी अपेक्षा कितना बड़ा है, यह आप देशके भीतर प्रवेश करके ही जान सकती हैं। ईश्वरने ऐसे ही विचित्र भावसे अपने अनन्त स्वरूपको व्यक्त किया है। जो लोग कहते हैं कि सत्य एक है, वे केवल एक ही धर्म और उसके रूपको सत्य मानते हैं। वे अपने उस निर्णीत एक सत्यको ही मानते हैं। और सत्य जो अनन्त रूपमें परिणित है उसको वे मानना नहीं चाहते वे यह नहीं जानते कि यह सत्य धर्म अनेक रूपोंमें विभक्त है। फिर वह चाहे किसी रूपमें हो, है सब सत्य ही। मैं आपसे सच कहता हूँ;

भारतवर्षकी खुली खिड़कीकी राहसे आप सूर्यको अच्छी तरह देख सकती हैं, उसके लिए समुद्र पार जाकर किरिस्तानके गिर्जाघरकी खिड़कीमें बैठनेकी कोई आवश्यकता नहीं।

सुचरिताने कहा—आप यह कहना चाहते हैं कि भारतवर्षका धर्मनन्त्र एक विशेष मार्गसे ईश्वरकी ओर ले जाता है। वह विशेषता क्या है ?

गोरा—विशेषता यही कि जो निविशेष ब्रह्म है, वह विशेष के भीतर ही व्यक्त होता है। जो निराकार है उसके आकारका अन्त नहीं—वह ह्रस्व, दीर्घ, स्थूल और सूक्ष्मका अनन्त प्रवाह है। छोटीसे भी छोटा और बड़ासे बड़ा है। जो अनन्त विशेष है वही निविशेष है। जो अनन्त रूपा है वही अरूपा है, अर्थात् जिस रूपके परे कोई रूप नहीं। वह ब्रह्म व्यापक रूपसे सर्वत्र विद्यमान है। और देशोंमें ईश्वरको कुछ घट-बढ़ परिणामसे किसी एक सीमा-निबद्ध विशेषके भीतर रोक रखनेकी चेष्टाकी गई है। भारतवर्ष में भी ईश्वर को विशेषके बीच देखनेकी बात है, किन्तु यह देश उस विशेष को ही एक मात्र और सर्वोपरि नहीं गिनता। अनेक विषयोंमें एक यह भी विशेष है, बस इतना ही। ईश्वर जो इस विशेषको भी अनन्तगुणसे अतिक्रम किये हुए है, यह बात भारतवर्षका कोई भक्त कभी अस्वीकार नहीं करता।

सुचरिता—ज्ञानी अस्वीकार न करें परन्तु अज्ञानी ?

गोरा—मैंने तो पहले ही कहा है कि अज्ञानी सभी देशोंमें सभी सत्य को विकृत मानेंगे ही।

सुचरिता—हमारे देशमें वह विकार क्या बहुत दूर तक नहीं पहुँचा है ?

गोरा—हो सकता है। किन्तु उसका कारण है—धर्मका स्थूल और सूक्ष्म, भीतर और बाहर, शरीर और आत्मा, इन्हीं दोनों अङ्गोंको भारतवर्ष पूर्ण भावसे स्वीकार करना चाहता है। इसलिए जो सूक्ष्मको ग्रहण नहीं कर सकते, वे स्थूलको ही गहते हैं और अज्ञानके द्वारा उस स्थूलके भीतर अनेक अद्भुत विचारोंकी कल्पना करते हैं। किन्तु जो रूप-अरूप दोनोंमें सत्य है, स्थूलमें भी और सूक्ष्ममें भी सत्य है, ध्यानमें

भी सत्य और प्रत्यक्षमें भी सत्य है, उसको भारतवर्षने सब प्रकार मनसे वचनसे और कर्मसे प्राप्त करनेकी अद्भुत और बहुत बड़ी चेष्टाकी है। उसे हम लाग मूर्खकी भाँति अश्रद्धेय समझ यूरोपकी अठारहवीं शताब्दीके नास्तिकता-आस्तिकता-युक्त एक संकीर्ण शुष्क अङ्गहीन धर्मको ही एक-मात्र धर्म कहकर ग्रहण करेंगे, यह कभी हो नहीं सकता।

सुचरिताको देर तक चुप बैठे देख गोराने कहा—आप मुझे प्रतारक न समझें। हिन्दू धर्म के सम्बन्धमें कपटाचारी लोग, विशेष कर जो नये धर्मध्वजी हो उठे हैं वे, जिस भावसे बात करते उस भावमें आप मेरी बातको ग्रहण न करें। भारतवर्षके विविध प्रकाश और विचित्र व्यापारके भीतर मुझे एक गम्भीर और बहुत बड़ी एकता सूझ पड़ी है। मैं उस एकताके आनन्दमें पागल होगया हूँ। उस ऐक्यके आनन्दमें ही भारतवर्षके भीतर जो लोग निपट मूर्ख हैं, उनके साथ मिलकर दम आदमियोंके बीच ज़मीन पर बैठने में मुझे कुछ भी संकोच नहीं होता। संकोच होगा ही क्यों ? जिनकी दृष्टि बहुत दूर तक नहीं पहुँचती है वे भले ही संकोच करें। जिनकी जैसी समझ है, वे वैसा समझते हैं। मैं अपने भारतवर्षके सभी लोगोंके साथ एक हूँ—वे सभी मेरे आत्मीय हैं। भारतवर्षके हम लोग सब एक हैं। भारतवर्ष सबके लिए एक है। सब लोग इसी एक भारतभूमिकी सन्तान हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं।

गोराके सुदीर्घ कण्ठ से निकली हुई ये बातें घरके भीतर बड़ी देर तक गूँजती रहीं।

इन बातोंको सुचरिता भली भाँति न समझ सकी। वस्तुतः ये बातें उसके बाखूबी समझने की थीं भी नहीं। किन्तु अनुभवके प्रथम अस्पष्ट सञ्चारका बेग बढ़ा ही प्रबल होता है। मनुष्य जीवन चहारदीवारीके भीतर या किसी दलके बीच घिरा नहीं है, यह ज्ञान मानों सुचरिताके मनको दबाने लगा।

इसी समय सीढ़ीसे आती हुई स्त्रियोंकी खिलखिलाहट सुन पड़ी। बरदासुन्दरी और लड़कियोंको लेकर परेश बाबू लौट आये। सीढ़ीसे ऊपर

आते समय सुधीर उन सबोंका मार्ग रोककर बीचमें खड़ा हो रहा । उसकी इस नादानी पर सभी हँस पड़ी हैं ।

लावण्य, ललिता और सतीश कमरके भीतर आते ही गोराको देख ठिठक गये । लावण्य उलटे पैर कमरसे बाहर हो गई ! सतीश विनयको कुरसीके पास खड़ा होकर उसके कानके पास मुँह ले जाकर कुछ कहने लगा । ललिता सुचरिताके पोछे कुरसी खाकर, उसको आड़में अपनेको छिपाकर, बैठा ।

परेश बाबूने आकर कहा—मेरे लौटने में बड़ी देर हो गई । मालूम होता है, हारान बाबू चले गये ?

सुचरिता ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया । विनयने कहा—जी हाँ, वे नहीं ठहर सके ।

गोरा ने खड़ होकर कहा—‘अब हम भी जाते हैं,’ और झुककर परेश बाबू को प्रणाम किया ।

परेश बाबू—आज अब तुम लोगों से बातचीत करने का समय नहीं रहा । जब तुम्हें फुरसत मिले, कभी-कभी यहाँ आना ।

गोरा और विनय जब घर से जाने को उद्यत हुए तब वरदासुन्दरी सामने आ खड़ा हुई । दोनों ने उसे प्रणाम किया । उसने कहा—क्या आप लोग अब जा रहे हैं ?

गोरा—जी हाँ ।

वरदासुन्दरी ने कहा—विनय बाबू, आप अभी नहीं जा सकते हैं । आपको खबर जाना होगा । आपसे कुछ कामकी बात करनी है ।

सतीश ने लपककर विनय का हाथ पकड़ा और कहा—हाँ, माँ, विनय बाबू को मत जाने दो । आज वे रातको मेरे साथ रहेंगे ।

कुछ उचित उत्तर न दे सकनेके कारण विनयको घबड़ाया हुआ सा देख वरदासुन्दरी ने गोरा से कहा—क्या आप विनय बाबूको अपने साथ ले जाना चाहते हैं ? क्या आपको इनसे कोई काम है ?

“जी नहीं, कुछ भी नहीं। विनय, तुम ठहर जाओ, मैं जाता हूँ।” यह कहकर गोरा चला गया। विनयके लौटकर बैठने ही ललिताने कहा—विनय बाबू आज आपके भाग जाने की मैं कुशल थी।

विनय—क्यों ?

ललिता—माँ आपको एक विपत्ति में डालना चाहती हैं। मैजिस्ट्रेट के मेजेमेंट जो अभिनय होगा, उसमें एक आदमी कम हो गया है। माँने आपहीको चुना है।

विनय घबड़ाकर बोल उठा—राम राम ! यह क्या किया उन्होंने ! यह काम मुझसे न होगा।

ललिता ने हंसकर कहा—यह तो मैं माँसे पहले ही कह चुकी हूँ। इस नाटक में आपके मित्र कभी आपको सम्मिलित न होने देंगे।

विनयने चोट खाकर कहा—मित्रकी बात जाने दो। मैंने सात जन्ममें भी कभी अभिनय नहीं किया। मुझे क्यों चुनती हो ?

इसी समय वरदासुन्दरी कमरे के भीतर आ बैठी। ललिता ने कहा—माँ, तुमने अभिनय में विनय बाबू को व्यर्थ साथ कर लिया। पहले इनके मित्रको राजी कर लेतीं तब—

विनयने कुछ कातर होकर कहा—मित्रको राजी कर लेनेकी बात नहीं है। अभिनय तो आज नरु मैंने कभी किया ही नहीं और मुझमें वह योग्यता भी नहीं है।

वरदासुन्दरी—उसके लिए आप चिन्ता न करें। मैं आपको सिखा-पढ़ाकर ठीक कर लूँगी। छोटी छोटी लड़कियाँ अभिनय कर सकेंगी और आप न कर सकेंगे ?

विनयके उद्धार का कोई उपाय न रहा।

गोरा अपनी स्वाभाविक तेज चाल छोड़कर सोचता हुआ धीरे धीरे घरको चला। घर जानेके सीधे रास्तेको छोड़कर, बहुत फेरके साथ, गङ्गा-तट की राह पकड़ ली।

बहुत रात बीते जब गोरा घर पहुँचा तब आनन्दमयी ने पूछा— इतनी रात कर दी बेटा; तुम्हारी ब्यालू रखे रखे ठण्डी हो गई।

गोराने कहा—क्या जाने माँ, आज क्या खयाल आ गया, बहुत देरसे गंगाके किनारे बैठा हुआ था।

आनन्दमयी—जान पड़ता है, विनय साथ था।

गोरा—नहीं, तो, मैं अकेला ही था।

आनन्दमयी मन-ही-मन कुछ विस्मित हुई। बिना कुछ कामके गोरा इतनी रात तक गंगाके किनारे बैठ कर कुछ सोचता रहे, ऐसी घटना तो आज तक कभी हुई नहीं। चुपचाप बैठ कर सोचनेका तो उसका स्वभाव ही नहीं है। गोरा जिस समय अनमना-सा होकर भोजन कर रहा था, उस समय आनन्दमयीने ध्यान देकर देखा, उसके चेहरे पर जैसे एक न जानें कैसे चञ्चल भावकी उत्तेजना है।

आनन्दमयीने कुछ देर बाद धीरे-धीरे पूछा—आज शायद विनयके घर पर गये थे।

गोराने कहा— नहीं, आज हम दोनों पंश बाबू के यहाँ गये थे।

सुनकर आनन्दमयी चुपके बैठकर सोचने लगी। फिर पूछा— उनके ही यहाँ सब लोगों से तुम्हारा मेल जोल हो गया ?

गोरा—हाँ, हो गया।

आनन्द०—उनकी औरतें शायद सबके आगे निकलती हैं ?

गोरा—हाँ, उनके यहाँ इसका कोई ख्याल नहीं है ।

और समय होता तो इस तरह के उत्तरके साथ-साथ एक तरहकी उत्तेजना प्रकट होती । लेकिन आज उसका कोई लक्षण न देख पड़ा । यह देख कर आनन्दमयी फिर चुपचाप बैठ कर सोचने लगी ।

दूसरे दिन सबेरे उठ कर गोरा और दिनकी तरह फ़ौरन सुह धोकर अपने कामके लिए तैयार हो गया । वह अनमने भावसे अपने सोनेके कमरेके पूर्व ओरका दरवाजा खोलकर कुछ देर तक खड़ा रहा । जिस गलीमें यह घर था, वह पूर्व ओर एक बड़ी सड़कमें जाकर मिली है । उसी बड़ी सड़कके पूर्वकी ओर एक स्कूल है । उस स्कूलसे मिली हुई ज़मीन में एक पुराने जामुनके पेड़के ऊपर एक पतली-सी उज्ज्वल कुहरेकी चादर उड़ रही थी, और उसके पीछे उन्मुख सूर्योदयकी अरुण रेखा धुंधले रूपमें दिखाई दे रही थी । गोरा चुपचाप बहुत देर तक उसी ओर देखता रहा । देखते-देखते वह कुहरेका टुकड़ा गायब हो गया ; उज्ज्वल धूप, पेड़की शाखाओंके भीतरसे, अनेक चमचमा रही संगीनोंकी तरह उन्हें फोड़ कर, बाहर निकल आई । देखते-ही-देखते कलकत्तेकी सड़क आदमियोंकी भीड़, और शोर-गुलसे भर गई ।

इसी समय एकाएक गलीके मोड़ पर अविनाशके साथ और कई छात्रोंको अपने घरकी ओर आते देख कर गोराने कहा—ना, यह सब कुछ नहीं ; यह किसी तरह भी न चलेगा ।—यह कह कर तेजीके साथ कमरेसे बाहर निकला । गोराके घरमें उसका सब दल-बल आया हो, और गोरा उसके बहुत पहलेसे ही तैयार न हो, यह आज नई बात थी । आज तक ऐसी घटना एक दिन भी नहीं होने पाई । इस साधारण घुटि ने गोराके मनको एक भारी धिक्कारका धक्का दिया । उसने मन ही मन निश्चय किया कि अब वह फिर कभी परेश बाबूके घर न जायगा, और यह चेष्टा करेगा कि कुछ दिन बिनयसे भी भेंट न हो, जिसमें यह सब आलोचना बन्द रहे ।

उस दिन नीचे आकर यही सलाह हुई कि गोरा अपने दलके दो तीन आदमियोंके साथ, ग्रैड ट्रंक रोड होकर, पैदल ही भ्रमणके लिए निकलेगा। राहमें भोजनके समय किसी भले आदमीके घर आतिथ्य ग्रहण करेगा; साथ रुपया पैसा कुछ भी न रहेगा।

इस अपूर्व सङ्कल्पको मनमें धारण कर गोरा कुछ अधिक उत्साहित हो उठा। सब बन्धनोंको तोड़कर इस खुले रास्तेसे निकल पड़नेका प्रबल आनन्द उसके मनमें उमड़ उठा। भीतर ही भीतर उसका मन जिस एक ज़ाज़ीरसे जकड़ा था, वह ज़ाज़ीर बाहर होनेकी इस कल्पनासे मानों टूटीसी जान पड़ी। यह अस्ति भाव केवल माया है और कर्म ही सत्य है—इस बातको मन ही मन खूब मनन कर भ्रमण करनेकी तैयारीके लिए अपने नीचे वाले कमरेसे बाहर निकला। उसी समय कृष्ण दयाल गङ्गा स्नान करके ताँवेकी कलसीमें गङ्गाजल लिये, रामनामी ओढ़े, मन ही मन कुछ पाठ करते हुए घर आ रहे थे। रास्तेमें उनसे गोराकी एकाएक भेंट हो गई। गोराने लज्जित होकर झटपट उनके दोनों पैर छूकर प्रणाम किया। वे सकुचाकर ठहरो, ठहरो, कहकर घरकी ओर बढ़े। पूजा पर बैठनेके पहले छू लेनेसे उनका गङ्गास्नानका फल मिट्टी हो गया। 'वर्णदयाल मेरा संस्पर्श बचाये रहते हैं' यह गोरा न जानता था। वह समझता था कि लूत-पन्थी होनेके कारण सब प्रकार सबका सम्बन्ध बचाकर चलनाही दिन-दिन उनकी सावधानताका एकमात्र लक्ष्य है। आनन्दमयीको तो वे ग्लेच्छ कहकर उससे दूर ही रहा करते थे। महिम काम-काजी आदमी था, उसको फुरसत कहाँ जो उनसे भेंट करे। घरके सभी लोगोंके बीच केवल महिमकी बेटी शशिमुखीको वे अपने पास बिठाकर संस्कृत स्तोत्रोंका अभ्यास कराते और उससे पूजाकी सेवा-टहल कराते थे।

गोरासे अपने पैर छू जानेके कारण वर्णदयाल जब घबराकर भागे तब उनके सङ्कोचके सम्बन्धमें गोराको चेत हुआ और वह मन ही मन हसा। इस प्रकार पिताके साथ गोरा का सब सम्बन्ध धीरे-धीरे टूट गया था और माताके अनाचारकी वह चाहे जितनी निन्दा करे, पर तो भी वह

माँको ही अपने जीवनकी समस्त भक्ति समर्पित कर उसकी पूजा करता था ।

भोजनके अनन्तर गोरा एक छोटी सी गठरीमें कुछ कपड़े लेकर और उसे विजायती मुसाफिरकी भाँति पीठ पर बाँधकर वह माँके पास आया और बोला—माँ, मैं कुछ दिनोंके लिए बाहर घूमने जाऊँगा ।

आनन्दमयी—कहाँ जाओगे बेटा ?

गोरा—यह मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता ।

आनन्दमयी ने पूछा—क्या कोई काम है !

गोरा—काम तो वैसा कुछ नहीं है—यह घूमनेको जाना ही काम-समझो ।

आनन्दमयी को मन मार कर कुछ देर चुप देख गोराने कहा—माँ, मैं हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूँ, मुझे जानेसे रोको मत । तुम जो मुझको जानती हो हो । मैं संन्यासी हो जाऊँ, यह तो कभी हो नहीं सकता । मैं तुमको छोड़कर अधिक दिन कहीं रह नहीं सकता ।

गोराने माँ के निकट अपना प्रेम इस तरह अरने मुँह से कभी प्रकट नहीं किया था—इसीसे आज यह बात कहकर वह लज्जित हुआ ।

उसकी बातसे पुलकित होकर आनन्दमयीने अट उसकी लज्जा दबा देनेके लिए कहा—क्या विनय भी साथ जायगा ?

गोराने व्यस्त होकर कहा—नहीं माँ, विनय न जायगा । यह देखो ! माँ के मनमें चिन्ता होती है कि विनय के न जाने से रास्ते में मेरे गोरा की कौन रक्षा करेगा ? अगर तुम विनयको मेरा रक्षक समझती हो तो यह तुम्हारी भूल है । इस दफ्ते सुरक्षित रूपमें मेरे लौट आनेसे तुम्हारा यह भ्रम दूर हो जायगा ।

आनन्दमयी ने पूछा—बीच-बीच में खबर मिलेगी न ?

गोरा—खबर न मिलेगी, यही निश्चय कर लो । इसके बाद यदि खबर पाओगी तो विशेष हर्ष होगा । कुछ डर नहीं तुम्हारे गोराको कोई न लेगा । माँ तुम मुझे जितना चाहती हो उतना आँर कोई नहीं

चाहता । मैं तुम्हारी दृष्टि में जैसा बहुमूल्य जँचता हूँ वैसा और को दृष्टि में नहीं । तब इस गठरी पर यदि किसी को लोभ होगा तो यह उसे देकर चला अऊँगा; इसकी रक्षा के पीछे प्राण थोड़े ही दूँगा ।

गोराने आनन्दमयी के पैर छूकर प्रणाम किया । उसने उसके मस्तक पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया । उसकी यात्रा में किसी तरहकी बाधा न दी । अपने कष्ट होनेकी बात सोच कर या किसी तरहके अनिष्ट की आशङ्का करके आनन्दमयी कभी किसी को न रँकती थी । वह अपने जीवन में अनेक बाधाओं और विपत्तियोंके बीच होकर आई है । बाहरी संसार उसके लिए अज्ञात नहीं है उसके मनमें भय न था । गोरा किसी विपत्तिमें पड़ेगा, यह आशङ्का भी न थी । किन्तु गोराके मनमें जो एक प्रकार का नया विप्लव हो पड़ा है, इस बात का सोच कुछ दिनसे उसके मनमें ज़रूर है । आज सहसा गोरा बिना कारण अमण करने चला है यह सुनकर उसका वह शोच और भी बढ़ गया ।

गोराने पीठ पर पोतली बांधकर ज्योंही सड़क पर पैर रक्खा त्योंही हाथमें गुलाबके फूल लिये बिनय उसके सामने आ खड़ा हुआ । गोराने कहा—बिनय तुम्हारे दर्शन से यात्रा शुभ होगी या अशुभ ? —इस दफ़्त इसकी परीक्षा होगी ।

बिनय—कहाँ जाते हो क्या ?

गोर—हाँ ।

बिनय—कहाँ ?

गोर—देखो, प्रतिध्वनि ने उत्तर दिया 'कहाँ' ।

बिनय—प्रतिध्वनि की अपेक्षा क्या कोई अच्छा जबाब नहीं है ?

नहीं, तुम माँ के पास जाओ, उसके मुँहसे सब सुन लेना । मैं जाता हूँ—यह कहकर गोरा तेज़ी से चला पड़ा ।

बिनयने भीतर जा आनन्दमयी को प्रणाम कर उनके पैरों पर गुलाबके फूल रख दिये ।

आनन्दमयी ने फूल उठाकर पूछा—ये तुमने कहाँ पाये ?

विनयने उसका ठीक उत्तर न देकर कहा—उत्तम वस्तु मिलते ही जी चाहता है कि पहले इसके द्वारा माँ की पूजा करूँ ।

इसके बाद विनयने आनन्दमयी की चौकी पर बैठकर कहा—माँ आज क्या तुम्हारा चित्त ठिकाने नहीं है ?

आनन्दमयी—तुमको कैसे मालूम हुआ ?

विनय—आज तुम मुझे पान देना भूल गई हो ।

आनन्दमयी ने लज्जित हो पान लाकर विनयको दिया ।

इसके बाद दो-पहर से दोनोंमें वार्तालाप हुआ । गोरा के इस प्रकार निरुद्देश होकर घूमने का अभिप्राय क्या है, इस सम्बन्ध में विनयको कोई पक्की खबर न दे सका ।

आनन्दमयी ने हृधर-उधर की बातें करते-करते पूछा—क्या तुम कल गोरा को लेकर परेश बाबू के घर गये थे ?

विनयने कल की सारी घटना विस्तारपूर्वक कह सुनाई । अब आनन्दमयी ने प्रत्येक बात बड़े से ध्यान सुनी ।

जाते समय विनय के कहा—माँ, पूजा तो विधिवत् हुई । अब तुम्हारे चरणों की प्रसादीका फूल सिर पर धारण करने को मिल सकेगा ?

आनन्दमयी ने हँसकर गुलाब के फूल विनय के हाथ में दिये और मन में सोचा कि ये दोनों फूल जो केवल खूबसूरती ही के कारण आदर पाते हों सो नहीं । ज़रूर इसके भीतर और कोई गम्भीर तत्त्व छिपा है ।

दिनके पिछले पहर विनयके चले जाने पर वह न जाने कहाँ-कहाँ की बातें सोचने लगी । भगवान् को पुकार कर बारबार प्रार्थना करने लगी कि गोराको किसी तरह का कोई कष्ट न हो और विनयसे उसके अलग होनेका कोई कारण सङ्घटित न हो ।

गुलाबके फूलोंका एक उपाख्यान है। कल रातको गोरा तो परेश बाबूके घरसे चला आया किन्तु मैजिस्ट्रेट के यहाँ उस अभिनयमें योग देनेका प्रस्ताव लेकर विनय बड़ी विपत्तिमें पड़ा।

इस अभिनयमें ललिताका वैसा कुछ उत्साह नहीं था बल्कि इन बातों को वह पसन्द ही न करती थी। किन्तु किसी तरह विनयको इस अभिनयमें शामिल करनेके लिए उसके मनमें मानों एक प्रकारकी ज़िद हो गई थी। जो काम गोराके मतके खिलाफ़ थे, उन कामों को विनय के द्वारा पूरा कराना ही उसका अभीष्ट था, मानों वह अपने क्रोधको इसीके द्वारा चरितार्थ करना चाहती थी। विनय गोराका अनुवर्ती है, यह बात ललिताको असह्य थी पर वह इसका कारण खुद भी नहीं जानती थी। जो हो, वह यही चाहती थी कि विनयको किसी तरह गोराके हाथसे छुड़ा कर स्वतंत्र कर दूं।

ललिता ने अपनी चोटी हिला कर विनय से पूछा—क्यों साहब अभिनय करनेमें दोष ही क्या है ?

विनय—अभिनय करनेमें दोष न हो, किन्तु मैजिस्ट्रेटके घर पर जाकर अभिनय करना मुझे अच्छा नहीं मालूम होता।

ललिता—आप अपने मनकी बात कहते हैं या और किसीके मनकी ?

विनय—दूसरेके मनकी बात कहने का ज़िम्मा मैं नहीं लेता - दूसरे के मनकी बात कोई कह भी तो नहीं सकता। आप शायद विश्वास न करेंगी, परन्तु मैं अपने मनकी ही बातें कहा करता हूँ—कभी अपने मुँहसे और कभी औरके मुँह से।

इस बात का कोई जवाब न देकर ललिता ज़रा मुँह टेढ़ा करके हँसने लगी। वह कुछ देर पीछे बोली—आपके मित्र गौर मोहन बाबू

शायद यह समझते हैं कि मैजिस्ट्रेटका निमन्त्रण अस्वीकार करने ही में बड़ी बहादुरी है—मानों इसीमें वे अँगरेजोंके साथ लड़ाई कर दिलके फफोले फोड़ते हैं ।

विनयने उत्तेजित होकर कहा— मेरा मित्र तो शायद ऐसा नहीं समझता पर मैं समझता हूँ । जो हमें आदमी नहीं समझते, और यदि समझते भी हैं तो बहुत तुच्छ; जो इशारे पर हमें बन्दरकी तरह नचाना चाहते हैं; जो हमें उपेक्षाकी दृष्टिसे देखते हैं उनके लिए यदि उस उपेक्षाके बदले उपेक्षा न की जाय तो हम लोग अपने सम्मानकी रक्षा कैसे कर सकेंगे ?

ललितामें स्वाभिमानकी मात्रा काफ़ी थी । इसलिए वह विनयके मुँहसे आत्म गौरवकी बात सुनकर मन ही मन खुश हुई । परन्तु इससे वह अपने पक्षको दुर्बल न समझ करके अकारण व्यंगकी बातोंसे विनयके मनको दुखाने लगे ।

आखिर विनयने कहा— आप इसके लिए बहस क्यों कर रही हैं ? आप स्पष्ट क्यों नहीं कहती कि 'मेरी इच्छा है, तुम अभिनयमें साथ दो ।' तब मैं आपके अनुरोधसे अपने मनको त्यागकर जी को कुछ सुखी करूँ ।

ललिता चाह ! यह मैं क्यों कहूँ ? यदि आप अपने मतको किसी तरह पुष्ट कर सकें तो आप उसे मेरे अनुरोधसे क्यों छोड़ेंगे ? किन्तु वह मत सत्य होना चाहिए ।

विनय— अच्छा यही सही । न मैं अपने मतको सत्य ही कर सका, और न आपके अनुरोध की ही कोई बात रही । मैं आपके अनुरोधका पालन कर ही अभिनयमें योग देनेको राजी हूँ ।

इस समय चरदासुन्दरीको वहाँ आते देख विनयने झट उठकर कहा— बतलाइए, अभिनयमें सम्मिलित होनेके लिए मुझे क्या करना होगा ?

चरदासुन्दरीने गर्वके साथ कहा— उसके लिए आपको कुछ भी चिन्ता न करनी होगी ; मैं आपको तैयार कर लूँगी । सिर्फ अभ्यासके लिए आपको नित्य नियमित समय पर आना होगा ।

विनय— अच्छा तो आज जाता हूँ ।

वरदासुन्दरी—आज क्या कहते हो ? कुछ खाकर जाना !

विनय—आज नहीं ।

वरदासुन्दरी—नहीं-नहीं, यह न होगा ।

विनयने भोजन किया । किन्तु और दिनकी भाँति आज उसके मुँह पर स्वाभाविक प्रसन्नता न थी । आज सुचरिता भी कुछ चिन्तित एक प्रोर चुपचाप बैठी थी । जब ललिताके साथ विनयकी बहस हो रही थी तब वह बरामदेमें टहल रही थी । आजकी रातमें बातें खूब न जमीं ।

जाते समय विनयने ललिताके उदासीन मुँहकी ओर देखकर कहा—
मेने हार मानी तो भी आपको प्रसन्न न कर सका ।

ललिता कुछ उत्तर दिये बिना ही चली गई ।

ललिता सहज ही रोना नहीं जानती थी, किन्तु आज उसकी आँखों ने आँसू निकलना चाहते हैं । क्या हुआ है ? आज वह अपनी बात पर आप ही सिर पीट-पीट कर रोना चाहती है । वह बार-बार इस प्रकार निरपराधी विनय बाबू को क्यों चुटीली बातें कहती है और आप कष्ट पाती है ?

विनय जब तक अभिनयमें सम्मिलित होनेको राजी न था तब तक ललिताकी ज़िद भी आसमान पर चढ़ी जाती थी, किन्तु जब उसने स्वीकार कर लिया तब ललिताका सब उत्साह मिट्टीमें मिल गया । शामिल न होनेके लिए जितनी युक्तियाँ थीं सब उसके मनमें प्रबल हो उठीं । तब उसका मन व्यथित होकर कहने लगा, केवल मेरा अनुरोध रखनेके लिए विनय बाबूका इस प्रकार राजी हो जाना उचित नहीं । अनुरोध ! अनुरोध क्यों मानेंगे ? वे समझते हैं कि अनुरोध रखकर वे मेरे साथ भद्रता कर रहे हैं ! — ओहो ! उनकी यह भद्रता पानेके लिए मानों मेरा सिर दुख रहा है !

किन्तु अभी इस तरहकी स्वर्धा करनेसे कैसे बनेगा ? निःसंदेह वह विनयको अभिनयके दलमें खींचनेके लिए इतने दिनोंसे आग्रह दिखाती आई है । आज विनयने सुशीलताको जगह दे उसका इतना बड़ा अनुरोध

मान लिया है, इस लिए उस पर क्रोध करना भी अनुचित होगा। इस घटनासे ललिताको अपने ऊपर इतनी घृणा और लज्जा हुई जिसके स्वभावतः इतनी बड़ी होनेका कोई कारण न था। और दिन उसका मन जब किसी तरह अस्थिर होता था तब वह सुचरिताके पास जाती थी। पर आज नहीं गई और क्यों उसका हृदय विवश हो गया तथा उसकी आँखोंसे इस प्रकार सहसा आँसू गिरने लगे, इसका ठीक ठीक कारण वह खुद न समझ सकी।

दूसरे दिन सबरे सुधीरने लावण्यको एक गुलदस्ता लाकर दिया था। उस गुलदस्तेमें एक डालमें, दो अधखिले गुलाबके फूल थे। ललिताने उस गुलदस्तेसे उन्हें खोलकर रख लिया। लावण्यने कहा—यह क्या किया? ललिताने कहा—गुलदस्तेमें अनेक फूल-पत्तियोंके बीच अच्छे फूलको बंधा देख मुझे कष्ट होता है; इस तरह एक ही रस्सीमें सब भली बुरी चीजोंको एक श्रेणीमें जबरदस्ती बाँधना मूर्खता है।

यह कह कर ललिताने सब फूलोंको खोलकर उन्हें घरके द्वार उधर—जहाँ जो रखने योग्य था—रख दिया; सिर्फ गुलाबके दोनों फूलोंको लेकर वह चली गई।

सतीशने उसके हाथमें फूल देखकर कहा—बहिन, ये फूल कहाँ मिले?

ललिताने उसका उत्तर न देकर पूछा—आज तू अपने दोस्तके घर न जायगा?

विनयकी ओर अभी तक सतीश का ध्यान न था किन्तु उसके मुँहसे विनयका नाम सुनते ही वह उछलकर बोला—हाँ, जाऊँगा क्यों नहीं!—बस, वह जानेके लिए आतुर हो उठा।

ललिताने उसका हाथ पकड़ कर पूछा—वहाँ जाकर तू क्या करता है?

सतीशने संक्षेपमें कहा—गपशप।

ललिता—उन्होंने तुम्हको इतने चित्र दिये हैं, तू उन्हें कुछ क्यों नहीं देता?

विनय सतीशके लिए अंगरेजी अप्रबारों और विज्ञापनों से अनेक

तसबीरों काट कर रखता था। सतीशने एक फाहल बनाकर उसमें उन चित्रोंको चिपकाना आरम्भ किया था। इस प्रकार वह चित्रोंसे फाहल भरनेके लिए इतना व्यग्र हो पड़ा कि अच्छी किताबोंमें चित्र देख उनमेंसे भी चित्र काटकर ले लेनेके लिए उसका मन छूटपटाता था। इस लोलुपताके अपराधमें उसे कई बार अपनी बहनोंके द्वारा विशेष दण्ड सहने पड़े हैं।

संसारमें दानके बदले दान देना भी एक ज़रूरी बात है, यह जानकर आज सतीशको बड़ी चिन्ता हुई। दूटे टीन के बक्समें उसकी जो कुछ निजकी सम्पत्ति सञ्चिन है उसमें ऐसी कोई चीज़ नहीं जिसे वह सहस्र किसीकों दे डाले। सतीशका चेहरा घबड़ाया सा देखकर ललिताने हंसकर धीरेसे उसका गाल दबाकर कहा—ठहर, ठहर, अब तुम्हे अधिक सोचना न होगा। यही दोनों गुलाब के फूल उन्हें देना।

इतने सहजमें ही इस कठिन समस्या को हल होते देख वह प्रसन्न हो गया और बड़ी खुशीसे दोनों फूल लेकर अपने मित्रका ऋण चुकाने चला।

रास्तेमें विनयके साथ उसकी भेंट हुई ! सतीश दूरसे ही उसे विनय बाबू, विनय बाबू, कहकर पुकारता हुआ दौड़कर उसके पास पहुँचा और कुरतेकी जेबमें फूल छिपाकर बोला—बतलाइए, मैं आपके लिए क्या लाया हूँ ?

विनयके हार मास लेने पर उसने जेबमें से दोनों फूल निकाल कर दिया। विनयने कहा—वाह ! बहुत ही बढ़िया फूल हैं। किन्तु सतीश बाबू, ये तो तुम्हारे निजके नहीं हैं। चोरीका माल लेकर आखिा मैं कहीं पुलिसके हाथ न पकड़ा जाऊँ ?

ये फूल उसके निजके हैं या नहीं, इस विषयमें सतीश को कुछ धोखा हुआ। कुछ देर मनमें सोचकर उसने कहा—नहीं जी, यह चोरी कैसे हुई ? ललिता बहन ने मुझको दिये हैं आपको देने के लिए।

इस बातका फ़ैसला यहीं हो गया और विनयने साँझको उसके घर जानेका वादा करके सतीशको बिदा कर दिया।

कल रात को ललिताकी कड़ी बातोंसे चोट खाकर विनय अब भी उसकी वेदनाको भूल न सका था। विनयके साथ प्रायः किसीका विरोध नहीं होता। इसलिए वह किसीसे इस प्रकारका तीव्र आघात पानेकी आशाका भी नहीं रखता। इसके पहले वह ललिता को सुचरिता की अनुवर्तिनी समझता था। किन्तु अद्भुत श्रमा हाथी जैसे अरने महावत को नहीं भूलता, कुछ दिनसे जैसे ही दशा ललिता के उम्बन्धमें विनयकी भी थी। किस तरह मैं ललिताको कुछ प्रसन्न करूं और शान्ति पाऊँ, यही चिन्ता विनयके मनमें प्रबल हो उठी थी। सँभको परेश बाबू के घरसे लौटकर आने के बाद सोते समय, ललिताकी कुटिल हास्य-भरी जली-कटी बातें एक एक कर उसके मनमें उठतीं और उसकी नींद को तोड़ डालती थीं। 'मैं छाया की भाँति गोराके पीछे लगा फिरता हूँ, मैं गोराका आज्ञाकारी हूँ, मैं उसकी अनुमति के बिना स्वयं कुछ कर नहीं सकता'—यह कहकर ललिता मेरा अपमान करती है, परन्तु उसकी एक भी बात सच नहीं। विनय इसके विरुद्ध अनेक प्रकारकी युक्तियाँ मनमें एकत्र कर रखता था। किन्तु वे सब युक्तियाँ उसके किसी काम न आती थी। क्योंकि ललिता तो स्पष्ट रूपसे यह अभियोग उसके विरुद्ध लगाती न थी—इस बातके विषयमें तर्क करने का अवकाश उसे न देती थी। मतलब यह कि विनयके पास जवाब देनेको बहुत बातें रहने पर भी वह समय पर उनका व्यवहार न कर सकता था, जिससे उसके मनमें लोभ और भी बढ़ जाता था। कलकी रात जब उसने हार मानकर भी ललिताके मुँह पर प्रसन्नता न देखी तब वह घर आकर बहुत घबरा गया और सोसने लगा कि क्या सचमुच ही मैं इतनी बड़ी अवज्ञा का पात्र हूँ ?

इसीसे विनयने जब सतीशसे सुना कि ललिता ही ने सतीशके हाथ उसके लिए गुलाब के फूल भेज दिये हैं तब वह मारे खुशीके उछल पड़ा। उसने सोचा, अभिनय में सम्मिलित होनेको राजी हो जानेसे सन्धि के चिह्न स्वरूप गुलाब के फूल ललिताने प्रसन्न होकर दिये हैं।

पहले उसके मनमें आया कि ये दोनों फूल अपने घरमें रख आवें, पीछे उसने सोचा—नहीं, ये शान्तिसूचक फूल माँके पैरों पर चढ़ाकर इन्हें पवित्र कर लेना चाहिए ।

उसदिन साँझको विनय जब परेश बाबूके घर गया तब सतीश ललिताके पास बैठकर स्कूलका पाठ याद कर रहा था विनय ने ललिता से कहा—युद्ध का रङ्ग लाल होता है, इस लिए सन्धिके फूल सफ़ेद होना चाहिए था ।

ललिता इस बातका अर्थ न समझ विनयके मुँहकी ओर देखने लगी । तब विनयने अपनी चादरके खूँटसे उजले कनेरके फूलोंका एक गुच्छा निकालकर ललिताके सामने रखवा और कहा—आपके दोनों फूल चाहे जितने सुन्दर हों तो भी उनमें कुछ-कुछ क्रोधका रङ्ग है; मेरे ये फूल शोभा में उनका मुकाबिला नहीं कर सकते किन्तु शान्तिके स्वच्छ रूपमें नम्रता स्वीकार कर आपके पास हाज़िर हुए हैं ।

ललिताके कपोलों पर गुलाबी आभा दौड़ गई । उसने कहा—आप किनको मेरे फूल कहते हैं ?

विनयने कुछ ठिठककर कहा—तब मेरी भूल है, मुझे धोखा हुआ । सतीश बाबू, तुमने किसके फूल किसको दे दिये ?

सतीश ज़ोरसे बोल उठा—वाह ! ललिता बहनने देने को कहा था !

विनय—कैसे देने को कहा था ?

सतीश—आपको ।

ललिताने खिसियाकर सतीशकी पीठमें एक थप्पड़ जड़कर कहा—तुम्हारा बेवकूफ़ तो मैंने देखा नहीं विनय बाबूके दिये हुए चित्रोंके बदले तुम्ही न फूल देना चाहता था ?

सतीश हतबुद्धि होकर बोला—हाँ, उसीके बदलेमें तो दे आया था ! किन्तु तुम्हींने मुझसे फूल देनेको कहा था न ?

सतीशके साथ झगड़नेमें ललिता और भी पकड़ी गई । विनयने स्पष्ट समझ लिया, फूल ललिताने ही दिये थे । किन्तु उसका अभिप्राय

बेनामीसे ही काम करनेका था। उसका नाम ज़ाहिर होते ही वह बिगड़ उठी है। विनयने कहा—आपके फूलोंका दावा मैं छोड़े देता हूँ किन्तु इससे आप यह न समझें कि इन फूलोंके विषयमें मेरी कुछ भूल है। हम लोगोंके झगड़ेका निबटारा हो जानेके शुभ उपलक्षणे ये फूल मैं आपको—

ललिताने सिर हिलाकर कहा—हम लोगोंका विवाद हो क्या, और उसका निबटारा ही कैसा ?

विनय—तब तो ये सभी इन्द्रजालके खेल हैं ? विवाद भी झूठ, फूल भी वही, और फैसला भी मिथ्या ? केवल सीपमें चाँदी का भ्रम, नहीं, सीप भी बिल्कुल भ्रमात्मक ! अच्छा, अब यह कहिए कि मैजिस्ट्रेट साहबके घर पर जो अभिनय होनेकी बात हो रही थी वह भी क्या—

ललिता—वह भ्रम नहीं, वह सत्य ही है। किन्तु उस अभिनयके लिए झगड़ा कैसा ? आप ऐसा क्यों समझते हैं कि इसमें आपको राजी करने ही के लिए मैंने आपके साथ कलह किया है और आपकी स्वीकृति होने ही से मैं कृतार्थ हो गई हूँ। अगर आपको अभिनय करना अनुचित जान पड़ेगा तो किसीकी बातमें पड़कर आप उसे क्यों स्वीकार करेंगे ?

यह कहकर ललिता वहाँसे चली गई। बात बिल्कुल उलटी हो गई। विनय क्या सोचकर आया था और क्या हो गया ! आज ललिताने निश्चय कर रक्खा था कि मैं विनयके आगे अपनी हार स्वीकार करूँगी और उससे ऐसा ही अनुरोध करूँगी जिसमें अभिनय में योग न दें। कहाँ उसने यह बात सोच रखी थी, और कहाँ यह नई बात उठ खड़ी हुई जिससे परिणाममें फल ठीक उसका उलटा हुआ। विनयने सोचा, मैंने इतने दिन तक अभिनयके सम्बन्धमें जो विरुद्धता प्रकटकी थी, उसके प्रतिघातकी उत्तेजना ललिताके मनमें कुछ रह गई है। वह समझती होगी, विनयने केवल ऊपरके मनसे मान लिया है—किन्तु भीतर विरोध बना है, इसीसे शायद ललिताके मनका क्षोभ अभी तक दूर नहीं हुआ। ललिताको जो इस घटनासे इतनी ग्लानि हुई है, इससे विनयको बड़ा दुःख हुआ। उसने मन ही मन निश्चय किया कि अब मैं इस विषयमें

परिहास बुद्धिसे भी कोई आलोचना न करूँगा; और ऐसी निष्ठा और निपुणताके साथ इस काम को करूँगा कि कोई मुझ पर उदासीनताका दोष आरोपित न कर सकेगा।

सुचरिता आज सबेरेसे ही अपनी सोनेके कमरेमें अकेली बैठ कर एक ईसाई धर्म ग्रन्थ पढ़नेकी चेष्टा कर रही थी। आज अभी तक वह अपनी सबेरेकी कोई नियामित काम नहीं कर सकी। घरका कोई काम करनेकी आज उसे इच्छा नहीं होती। पुस्तक पढ़नेमें भी उसका जी नहीं लगता। पढ़ते-पढ़ते उसका ध्यान किञ्चि दूबरो और चला जाता था। और वह क्या पढ़ गई है यह उसकी समझमें न आता था। फिर वह पाठके दूटे हुए सूत्रको पुनरावृत्तिमें जोड़ती और चञ्चलताके कारण अपने मन पर कुदती थी।

एक बार दूरसे कण्ठ-स्वर सुनकर उसे मान्युष हुआ कि विनय बाबू आये हैं। तब वह चौंक उठी और झट हाथसे किताब रख कर बाहर जानेके लिए ब्याकुल हो गई। अपनी इस चञ्चलतासे अपने ऊपर क्रुद्ध होकर सुचरिता फिर किताब हाथमें ले कुर्सी पर बैठ गई। विनयको बोला फिर कहीं सुन न पड़े, इसलिए वह दोनों कान बन्द करके पढ़ने लगी।

ऐसा कितनी ही बार हुआ है कि विनय पहले आया है, और गोर उसके पीछे। आज भी ऐसा हो सकता है, यह सोचकर सुचरिता रह रह कर चकित हो उठती थी। गोरा पीछे आ न जाय, यहो उसको भय था और न आनेकी आशङ्का भी उसे कष्ट दे रही थी।

विनयके साथ ऊपरके मनसे दो चार बातें होनेके बाद सुचरिता मनमें भावको छिपानेका और कोई उपाय न देख सतीशको विनयसंग्रह फाइल लेकर उसके साथ चित्रोंके सम्बन्धमें आलोचना करने लगी। ईश्वर विनय टेबल पर अपने लौटाये हुए कनेरके फूलोंके गुच्छेको देखकर लज्जा और लोभसे मन ही मन कहने लगा कि आखिर शिष्टताके स्रयालसे भी तं मेरे इन फूलोंको ले लेना ललितार्थ उचित था।

सहसा किसीके पैरोंकी आहट सुन सुचरिताने चौंककर पीछे फिरकर देखा, हारान बाबू आ रहे हैं। हारान बाबू ने कुरसी पर बैठकर कहा—
विनय बाबू, आपके गौर बाबू नहीं आये ?

विनयने हारान बाबूके ऐसे अनावश्यक प्रश्नसे रुष्ट होकर कहा—
व्यों ? क्या उनसे कोई काम है ?

विनयके मन में बड़ा क्रोध हुआ। परन्तु उसने अपने क्रोधको दबा कर कहा—वे कलकत्तेमें नहीं हैं ?

हारान—तो क्या धर्मप्रचार करने गये हैं ?

विनयका क्रोध और भी बढ़ गया। उसने कुछ उत्तर न दिया।
सुचरिता भी चुपचाप वहाँसे उठकर चली गई।

हारान बाबू झट उसके पीछे-पीछे गये, किन्तु वह बढ़ गई। जब वह उसे न पा सके तब दूरसे पुकारकर कहा—सुचरिता, ठहरो, तुमसे कुछ कहना है।

“आज मेरी तबीयत ठीक नहीं है”—यह कहते हुए सुचरिताने अपने शयनागारमें जाकर भीतरसे किवाड़ लगा दिये।

इसी समय ललिता उसके कमरेमें आई। सुचरिताने उसके, मुंहकी ओर देखकर कहा—बतला, तुम्हे क्या हुआ है ? ललिताने सिर हिलाकर कहा—कुछ भी तो नहीं। सुचरिताने पूछा—तू कहाँ थी ?

ललिता—विनय बाबू आये हैं, शायद वे तुमसे कुछ कहना चाहते हैं।

विनयके साथ और कोई आया है कि नहीं, यह प्रश्न आज सुचरिता नहीं कर सकी। यदि और कोई आया होता तो ललिता जरूर ही उसका नाम लेती किन्तु तो भी उसके मनका संशय दूर न हुआ। अब वह अपनेको दबाने की चेष्टा न करके घर आये हुए अतिथिके प्रति कर्तव्य-पालनके अभिप्रायसे बाहरके कमरे की ओर चल पड़ी। ललितासे पूछा—तू नहीं चलेगी ?

ललिताने अवीरता भरे स्वरमें कहा—तुम जाओ—मैं पीछेसे आऊंगी ।

सुचरिताने बाहरके कमरेमें आकर देखा—विनय सतोशके साथ शप-शप कर रहे हैं ।

सुचरिताने कहा—बाबूजी घूमने गये हैं, अभी आवेंगे । मां आप लोगोंके उस अभिनयकी कविता कण्ठस्थ करानेके लिए लावण्य और लीलाओ लेकर मास्टर साहबके यहां गई हैं । ललिता किसी तरह जानेको राजी नहीं हुई । वे कह गई हैं कि आप आवें तो आपको बिठा लिया जाय—आज आपकी परीक्षा होगी ।

विनय ने पूछा—क्या आप इसमें नहीं है ?

सुचरिता—सब अभिनय करनेवाले ही हों तो संसार में दर्शक कौन होगा ?

वरदासुन्दरी सुचरिता को इन कामों में यथासम्भव बचाकर चलती थी । इसीसे नाटकीय गुण दिखानेके लिए इस दफ्ते भी उससे कुछ नहीं कहा गया ।

और दिन ये दोनो सुरचिता और विनय जब एक जगह बैठते थे, तब, खूब शप-शप होती थी । आज दोनों ओर ऐसा विघ्न 'हुआ है कि किसी तरह बात जमने न पाई । सुचरिता यह प्रतिज्ञा करके आई थी 'कि गोरासे बात न चलाऊंगी । विनय भी ललिताकी बातसे चिढ़कर गोराकी चर्चा न चला सकता था । विनयको ललिता ललिता ही क्यों, इस घर के प्रायः सभी लोग गोराका अनुयायी समझते हैं, यह सोचकर विनय गोरा के विषय में कोई बात न करना चाहता था ।

इसी समय वरदासुन्दरी आकर जब अभिनय की तालीम देने के लिये विनय को बुलाकर दूसरे कमरे में ले गई तब कुछ ही देर बाद, अकस्मात् वे फूल टेबल पर से गायब हो गये । उस रात में ललिता भी वरदासुन्दरी के अभिनय के अखाड़े में दिखाई न दी; और सुचरिता

इसाई-मतकी एक पुस्तक अपनी गोदमें रखे, चिरागको घरके एक कोनेमें छिपाकर बड़ी रात तक द्वारके समीप बैठकर अंधेरी रातकी ओर गाल पर हाथ दिये देखती रही। उसके आगे मानो कोई अपरिचित अपूर्व स्थान मृगनृष्णा की तरह दिखाई दिया था। इतने दिन तक जीवनमें जो बातें जानी सुनी हैं उनके साथ उस स्थानके किसी अंशका चिर विच्छेद है, इसलिए वहां के झरोखों में जो रोशनी हो रही है, वह घोर अंधेरी रात की नक्षत्र-मालाकी भांति सुदूरवर्ती होनेका कौतुक दिखा मन को सशक्त कर रही है। इस अपूर्व दृश्यको देख उसके मन में आया कि मेरा जीवन तुच्छ है; इतने दिन तक जिसे सच माना है वह संशयाकीर्ण है और जो नित्यका व्यवहार करती आती हूँ वह अर्थहीन है। अब यहां पहुँचकर शायद ज्ञानका पूर्ण लाभ होने और कर्मके उच्च होनेसे मैं जीवनको सार्थक कर सकूँ। इस अपूर्व अपरिचित भयङ्कर स्थानके अज्ञात सिंह-दर्वाजेके सामने किसने मुझे लाकर खड़ा कर दिया है? क्यों मेरा हृदय इस तरह कांप रहा है। क्यों मेरे पैर उस ओर आगे बढ़कर फिर इस प्रकार स्तब्ध हो रहे हैं।

इन कई दिनोंमें सुचरिताने विशेष रूपसे उपासनामें मन लगा दिया था। यह जैसे पहलेसे भी अधिक परेश बाबूका आश्रय लेनेकी चेष्टा करती थी। एक दिन परेश बाबू अपने बैठकमें अकेले बैठे कुछ पढ़ रहे थे, इसी समय सुचरिता चुपचाप उनके पास आकर बैठ गई। परेश बाबूने पुस्तक टेबिलके ऊपर रख कर पूछा—क्यों राधे !

सुचरिता 'कुछ नहीं।' कह कर, यद्यपि टेबिलके ऊपर किताबें और अखबार बाकायदे रखे थे, तो भी उनको इधर उधर हटाकर और तरहसे सजाकर रखने लगी।

दम भर बाद वह कह उठी—बाबूजी, पहले आप जिस तरह मुझे पढ़ाते थे, उसी तरह अब क्यों नहीं पढ़ाते ?

परेश बाबूने स्नेहपूर्वक ज़रा हँस कर कहा—मेरी छात्रा तो मेरे स्कूलसे पास करके निकल गई है ! अब तो तुम आप ही सब पढ़ सकती हो बेटी।

सुचरिताने कहा—ना, मैं कुछ भी नहीं समझ पाती बाबूजी। मैं पहले ही की तरह आपके पास पढ़ूंगी।

परेश बाबूने कहा—अच्छी बात है, मैं कलसे तुमको पढ़ाऊंगा।

सुचरिता फिर कुछ देर चुप रह कर एकाएक कह उठी—बाबू जी, उस दिन विनय बाबूने जाति-भेदके बारेमें बहुत-सी बातें कही थीं; आप उस बारेमें समझकर मुझसे कुछ क्यों नहीं कहते ?

परेश बाबूने कहा—बेटी तुम तो जानती ही हो, मैंने बराबर तुम लोगोंके साथ ऐसा ही व्यवहार किया है कि तुम लोग जिससे हरएक विषयका आपही सोचने-समझनेकी चेष्टा करो, मेरे या और किसीके मतको केवल रटी हुई बातोंकी तरह काममें न लाओ। प्रश्नके ठीक

तरहसे मनमें जाग उठनेके पहले ही उसके सम्बन्धमें किसी तरहका उपदेश देने जाना और भूख लगनेके पहले ही भोजन करनेके लिए आहार देना एक ही है । उससे केवल अरुचि और अजीर्ण ही होता है । तुम जब मुझसे जो प्रश्न करोगी, तब मैं अपनी समझके माफ़िक उसके विषयमें कहूँगा ।

सुचरिताने कहा — मैं आपसे यही प्रश्न करती हूँ कि हम लोग जाति भेदकी निन्दा क्यों करते हैं ?

परेश बाबूने कहा—एक बिल्ली थालीमें हमारे साथ बैठकर खानेको खा जाय, तो कोई दोष नहीं, मगर एक मनुष्य उस स्थान या चीकेमें चला जाय, तो सामनेका अन्न दूत हो गया कहकर फेंक दिया जाता है ! मनुष्य के द्वारा मनुष्यका ऐसा अपमान, मनुष्यकी मनुष्यके प्रति ऐसी घृणा, जिस जातिभेदके भावसे उत्पन्न होती हो, उसे अधर्म न कहे तो और क्या कहे ? जो लोग मनुष्य की ऐसी घोर अवज्ञा कर सकते हैं, वे कभी पृथ्वी पर बड़े नहीं हो सकते ! उन्हें भी अपने प्रति औरोंकी ऐसी अवज्ञा सहनी ही होगी ।

सुचरिताने गोराके ! मुंहसे सुनी हुई बातचीतका अनुशरण करके कहा—आज कल यहाँ के समाजमें जो बिकार उपस्थित हुआ है, उसमें अनेक दोषका रहना संभव है । किन्तु वह दोष तो समाजकी सभी चीजों में घुस गया है, तो क्या इसीसे असल चीजको दोष दिया जा सकता है ?

परेश बाबूने अपने स्वाभाविक शान्त स्वरसे कहा—असल चीज कहाँ है, जानता तो कह सकता । मैं आँखों से प्रत्यक्ष देख रहा हूँ कि हमारे देशमें मनुष्य मनुष्य से झूठी घृणा करता है, और वह घृणाका भाव वह सबको अलग परस्पर विच्छिन्न किये दे रहा है । ऐसी अवस्थामें एक काल्पनिक असल चीजकी बात सोच कर मनको सान्त्वना कहाँ मिलती है ?

सुचरिताने फिर गोराकी बातोंका अनुसरण करके कहा—अच्छा सबको समदृष्टिसे देखना ही तो हमारे देशका चरम सिद्धान्त था ।

परेश बाबूने कहा—समदृष्टिसे देखना ज्ञानकी बात है, हृदयकी बात नहीं। समदृष्टिके भीतर प्रेम ही नहीं है, घृणा भी नहीं है। समदृष्टि राग और द्वेषसे परे है। मनुष्यका हृदय ऐसा हृदय-धर्म-विहीन जगह पर स्थिर हो कर खड़ा रह नहीं सकता। इसी कारण हमारे देशमें इस तरहका साम्य-तत्त्व रहने पर भी नीच जतियोंको देवमंदिर तकमें घुसने नहीं दिया जाता। यदि देवताके स्थानमें भी हमारे देशमें साम्य न रहें, तो दर्शन-शास्त्रके भीतर उस तत्त्वके रहनेसे भी कोई लाभ नहीं, और न रहनेसे भी कुछ हानि नहीं।

सुचरिता बहुत देर तक चुपचाप बैठे रह कर परेश बाबूकी बातोंको मन ही मन समझनेकी चेष्टा करने लगी। अंतमें बोली—अच्छा बाबू जी आप विनय बाबू वगैरहको ये सब बातें समझानेकी चेष्टा क्यों नहीं करते ?

परेश बाबूने ज़रा हंसकर कहा—विनय बाबू वगैरह बुद्धि कम होनेके कारण इन सब बातोंको न समझते हैं यह बात नहीं है बल्कि उनमें बुद्धि अधिक होने की वजहसे वे समझना ही नहीं चाहते, केवल औरको समझाना ही चाहते हैं। वे लोग जब धर्मकी ओरसे अर्थात् सबकी अपेक्षा बड़े सत्यकी ओरसे इन सब बातोंको जब हृदयसे समझाना चाहेंगे, तब तुम्हारे बाबू जी की बुद्धि या समझानेके लिये उन्हें अपेक्षा किए बैठे रहना नहीं पड़ेगा। इस समय वे और ही पहलूसे देखते हैं; इस समय मेरी बातें या मेरा समझाना उनके किसी काम न आवेगा।

गोरा वगैरहकी बातोंको यद्यपि सुचरिता श्रद्धाके साथ सुनती थी, तो भी वे बातें उसके संस्कार या धारणा के साथ बिवाद उत्पन्न करके उसके हृदयको वेदना दे रही थीं। वह शांति नहीं पाती थी। आज परेश बाबूके साथ बातें करके उसने क्षण भरके लिए उस विरोधसे छुटकारा पाया। गोरा, विनय, या और कोई भी परेश बाबूसे बढ़कर किसी विषयको अच्छी तरह समझता है, इस बातको सुचरिता किसी तरह अपने मनमें स्थान देना नहीं चाहती। परेश बाबूके साथ जिसका मत

नहीं मिलता था, उसके ऊपर क्रोध किये बिना आज तक सुचरितासे नहीं रहा जाता था। हालमें गोराके साथ मुलाकात और बातचीत होनेके बादसे सुचरिता गोराकी बातोंको क्रोध, अवज्ञा, या उपेक्षा करके किसी तरह उड़ा देनेमें असमर्थ हो रही थी, इसीसे उसे एक तरहके कष्टके अनुभव हो रहा था। यही कारण था कि वह फिर बचपनकी तरह परेश बाबूको, उनकी छायाकी तरह, अपना आश्रय अथवा अवलम्ब बनानेके लिए उसके हृदयमें व्याकुलता उपस्थित हुई थी। चौकी परसे उठकर दरवाजेके पास तक जाकर सुचरिता फिर लौट आई, और परेश बाबूके पीछे खड़े होकर, उनकी कुर्सीकी पीठ पर दोनों हाथ रख कर, उसने कहा—बाबू जी, आज मुझे भी साथ लेकर उपासना कीजिएगा। परेश—अच्छा।

उसके बाद अपनी सोनेकी कोठरीमें जाकर दरवाजा बन्द करके सुचरिता बैठी, और उसने गोराकी बातोंको एकदम अभ्राह्म करनेकी चेष्टा की। किन्तु गोराका वह बुद्धि और विश्वाससे जगमगा रहा मुख उसकी आंखोंके आगे जागता रहा। उसे जान पड़ने लगा कि गोराकी बातें केवल बातें ही नहीं हैं, वे जैसे खुद गोरा ही हैं। उन बातोंका आकार है, गति है, प्राण है; वे विश्वास केवल और स्वदेश प्रेमकी वेदनासे परिपूर्ण हैं। वह मत नहीं है कि उसका प्रतिवाद करके ही उसे समाप्त कर दिया जायगा—वह तो सम्पूर्ण मनुष्य है, और वह मनुष्य सामान्य नहीं है। उसे ठेककर सामनेसे हटानेके लिये हाथ ही नहीं उठता ! अत्यन्त ही एक द्वन्द्व के बीचमें पड़कर सुचरिता को रुलाई आने लगी। कोई उसे इतने बड़े दुविधाके द्वन्द्वमें डालकर आप सम्पूर्ण उदासीन निर्लिप्तकी तरह अनायास दूर चला जा सकता है, यह बात सोचकर उसका हृदय विदीर्ण-सा होने लगा; किन्तु अपनेको इसके लिए कष्ट पाते देखकर वह अपनेको कोटिशः धिक्कार भी देने लगी।

यह निश्चय हुआ था कि अंगरेज़-कवि डाइडन की संगीत विषयक एक कविताको विनय रंगमंच पर भावव्यक्तिके साथ पढ़ेगा, और लड़कियाँ स्टेज पर उपयुक्त साज-सजाके साथ उपस्थित होकर कविताके विषयका मूक अभिनय करेंगी । इसके अलावा लड़कियाँ भी अंगरेज़ीकी कविताएं पढ़ेंगी, और गान भी गावेंगी ।

वरदासुन्दरीने विनयको बहुत कुछ भरोसा दिया था कि वे लोग उसे किसी तरह तैयार कर लेंगे । वरदासुन्दरीने खुद तो अंगरेज़ी बहुत ही थोड़ी मामूली सीखी थी, लेकिन उनके दलके दो एक अंगरेज़ीके विद्वान ऐसे थे, जिनपर उन्हें पूर्ण भरोसा था ।

किन्तु जब रिटर्सल हुई, तब पहिलेही दिन विनयने अपनी कविता-पाठकी निपुणतासे वरदासुन्दरीकी मण्डलीके बाहरके इस 'अनाड़ी' आदमीको सिखलाकर तैयार करनेके सुखसे वरदासुन्दरीको वंचित होना पड़ा । पहले जो लोग विनयको विशेष व्यक्ति न जानकर उसकी कुछ ख़ातिर न करते थे, अर्थात् उसे साधारण अदमी समझते थे, उनसे भी विनयको इतनी खूबीके साथ अंगरेज़ी कविता का पाठ और उच्चारण करते देखकर, मनही-मन उसे श्रद्धाकी दृष्टिसे देखे बिना नहीं रहा गया । यहाँ तक कि हारान बाबूने भी अपने अंगरेज़ीके अखबारमें कभी-कभी कुछ लिखनेके लिए विनयसे विशेष अनुरोध किया । सुधीरने भी अपने लोगोंकी छात्र सभामें कभी-कभी अंगरेज़ीमें व्याख्यान देनेके लिए विनयसे आग्रह करना शुरू कर दिया ।

उधर ललिताकी अवस्था विचित्र ही हो गई । किसीको किसी विषयमें विनयकी सहायता जो नहीं करनी पड़ी, इससे वह प्रसन्न भी हुई, और उसी विनयकी दक्षताने उसके मनमें एक असन्तोष भी पैदा कर

दिया ! उसे यह झगला चोट पहुँचाने लगा कि विनय किसी बातमें उनमेंसे किसीकी अपेक्षा कम नहीं है बल्कि उन सबसे अच्छा है ; वह मन-ही-मन अपनी श्रेष्ठताका अनुभव करेगा, और उन लोगोंके निकटसे किसी प्रकारकी शिक्षाकी प्रत्याशा नहीं करेगा । वह आपही यह नहीं समझ पाती थी कि विनयके सम्बन्धमें वह क्या चाहती है, कैसा होने पर उसका मन खूब सहज अवस्था को प्राप्त हो सकता है । बीचमें उसकी अप्रसन्नता केवल छोटी—छोटी बातोंमें तीव्रभावसे प्रकट होकर घूम—फिर कर विनयको अपना लक्ष्य बनाने लगी । ललिता आप ही समझती थी कि उसका यह व्यवहार विनयके प्रति सुविचार नहीं है, और शिष्टता भी नहीं है । समझ कर उसने कट पाया, और अपनी इस प्रवृत्तिके दमनकी चेष्टा भी की ; किन्तु अकस्मात् अत्यन्त साधारण उपलक्ष्यमें ही क्यों उसकी एक असंगत अंतर्ज्वाला संयमके शासनको पारकर बाहर हो पड़ती थी, यह उसकी समझमें न आता था । पहले जिस काममें शामिल होनेके लिए उसने बराबर विनयको उत्तेजित किया उसी काममें विनयको न शामिल होने देनेके लिए ही अब उसके मनने उसे बेचैन कर दिया ! किन्तु अब सारी तैयारीको उलट पुलट कर बिना किसी कारणके विनय उस कामसे भाग खड़ा हो तो कैसे, क्या कह कर ? समय भी अब और अधिक नहीं है । फिर अपनी एक नई निपुणता का आविष्कार करके विनय आप ही इस कार्यमें उत्साहित हो उठा था ।

अन्त में ललिताने अपनी मांसे कहा—मैं इस अभिनयमें न शामिल होऊंगी ।

वरदासुन्दरी अपनी मँझली लड़कीको अच्छी तरह पहचानती थीं । इससे बहुत ही शंकित होकर उन्होंने पूछा—क्यों ?

ललिता—मुझसे हो नहीं सकता ।

असल में जबसे विनयको अनाड़ी समझनेका उपाय नहीं रहा, तभीसे ललिता विनयके सामने किसी तरह कविताकी आवृत्ति अथवा अभिनयका अभ्यास करना नहीं चाहती थी । वह कहती थी—मैं अपने अलग ही

अभ्यास करूंगी। इससे सबके अभ्यासमें बाधा पड़ती थी; किन्तु ललिताको किसी तरह राजी नहीं किया जा सका। अन्तको हार मानकर रिहर्सलमें ललिताके बिना ही काम चलाना पड़ा।

किन्तु जब कुछ दिन बाक़ी रहने पर ललिताने एक दम अलग हो जाना चाहा तब वरदासुन्दरीके सिरपर जैसे बज्रपात हो गया। वह जानती थी कि वह ललिताकी इस 'नाहीं' का प्रतिकार नहीं कर सकती। तब वह परेश बाबूकी शरणमें गई। परेश बाबू साधारण बातोंमें कभी अपनी लड़कियोंकी इच्छा-अनिच्छामें हस्तक्षेप नहीं करते थे। किन्तु मैजिस्ट्रेटसे वे लोग वादा कर चुके हैं, उसीके अनुसार उधर भी तैयारी हो चुकी है, इधर समय भी बहुत ही थोड़ा है, यह सब साव-विचार कर परेश बाबूने ललिताको बुलाया। उसके सिरपर हाथ रख कर उन्होंने कहा—ललिते अब तुम इससे अलग हो जाओगी अगर, तो अन्याय होगा।

ललिता ने रोदन रुद्ध कंठ से बहा—बाबू जी, मुझ से यह नहीं हो सकता। मैं अभिनयमें अपना काम अच्छी तरह न कर पाऊँगी।

परेशने कहा—तुम अच्छी तरह न कर पाओगी तो उसमें तुम्हारा कुछ दोष न होगा; किन्तु न करनेसे अन्याय होगा।

ललिता सर झुकाये खड़ी रही। परेश बाबूने कहा—बेटी, जब तुमने इस कामका भार अपने ऊपर लिया है, तब तुम्हें यह काम पूरा करना ही होगा। पीछे अहंकार को चोट पहुंचेगी, यह खयाल करके भाग खड़े होनेका तो अब समय नहीं है। पहुंचने दो अहंकारको चोट उसे अप्राप्य करके भी तुमको अपना कर्त्तव्य करना ही होगा। यह तुमसे हो न सकेगा क्या बेटी?

ललिताने पिताके मुख की ओर देखकर कहा—हो सकेगा।

उसी दिन शामको ख़ास करके बिनयके सामने ही सब संकोचको पूर्ण रूपसे दूर करके ललिता, जैसे एक अतिरिक्त बलके साथ, स्पष्ट-पूर्वक अपने कर्त्तव्यमें प्रवृत्त हुई। बिनयने इतने दिन तक उसकी कविता

पाठ जूहीं सुना था । आज सुनकर वह अचंभेमें डूब गया । ऐसा सुस्पष्ट सतेज उच्चारण कि कहीं पर कुछ भी अस्पष्टता या रुकावट नहीं । भाव प्रकट करने के भीतर ऐसा एक निःसंशय बल था कि सुनकर विनयको आशातीत आनन्द प्राप्त हुआ । वह कंठ स्वर विनयके कानोंमें बहुत देर तक गूँजता-सा रहा ।

कविताका पढ़ना, अच्छे पढ़नेवालेके सम्बन्धमें, श्रोताके मनमें, एक विशेष प्रकार का मोह उत्पन्न करता है । फूल जैसे वृत्तकी शाखाओं, वैसेही कविता भी पढ़ने वाले हीके बीच, खिलकर उसे विशेष शोभा सम्पत्ति देती है । ललिता भी विनयकी दृष्टिमें कवितासे मग्नित हो उठी ।

ललिताने इतने दिन तक अपनी तीव्रताके द्वारा विनयको निरन्तर उत्तेजित ही कर रक्खा था । जहाँ पर व्यथा है, केवल उसी जगह जैसे हाथ पड़ता है, वैसेही विनयभी इधर कई दिन ललिताके उष्ण वचन और तीक्ष्ण हास्यके सिवा और कुछ सोचही नहीं सका था । उसे बारम्बार यही आलोचना करनी पड़ती थी कि ललिताने क्यों ऐसा किया, क्यों ऐसी बात कही । ललिताके असंतोषके रहस्यको जितना ही वह खोल नहीं सका उतना ही ललिताकी चिन्ताने उसके मन पर अधिकार जमाया । एकाएक सबेरके समय नींदसे जागकर वही ख्याल उसके मनमें आया ; परेश बाबू के घर आनेके समय नित्य ही उसके मनमें यह तर्कणा उपस्थित हुई कि आज ललिता कैसे भावमें देखी जायगी । जिस दिन ललिताने लेश भर भी प्रसन्नता प्रकटकी है, उस दिन विनयके जैसे जानमें जान आई, और यही सोचता रहा है कि क्या करनेसे उसका यह भाव लदा बना रह सकता है । किन्तु आज तक ऐसा कोई उपाय उसे ढूँढ़े नहीं मिला कि जो उसके हाथमें हो ।

इन कई दिनोंकी इस मानसिक हलचल के बाद ललिताके कविता पाठके माधुर्यने विनयको विशेष करके प्रबल भावसे विचलित किया । उसे, वह इतना भला लगा कि उसे प्रशंसाके लिये शब्द ढूँढ़ना कठिन हो गया । ललिता के मुँह पर भला या बुरा कुछ भी कहनेका उसे साहस

नहीं हुआ ; क्योंकि अच्छा कहनेसे प्रसन्न होनेका जो मनुष्य चरित्रका साधारण नियम है, वह ललिताके सम्बन्धमें नहीं भी घटित हो सकता है—यहाँ तक कि शायद साधारण नियम होनेके कारण ही न घटित होगा । यही सोचकर, इसी कारण से, विनय अपने मनके वेगको न रोक कर वरदासुन्दरीके पास गया, और उनके आगे ललिताकी इस लज्जा पर निरन्तर प्रशंसाके फूल बरसाने लगा । - इससे विनयकी विद्या और बुद्धि पर वरदासुन्दरीकी श्रद्धा और भी दृढ़ हो गई ।

और एक अद्भुत घटना देखी गई । ललिताने जब स्वयं अनुभव किया कि उसकी कविताका पढ़ना और अभिनय अच्छा हुआ है, सुगठित नाव जैसे नदीकी लहरों पर अनायास चली जाती हैं वैसे ही वह भी जब खूबीके साथ अपने कर्त्तव्यकी कठिनाईके ऊपर चली गई, तभीसे विनयके सम्बन्धमें उसकी तीव्रता भी दूर हो गई । फिर तो विनयको अभिनयसे अलग करनेके लिए उसकी ज़रा भी इच्छा नहीं रही । अब इस कायमें उसका उत्साह बढ़ उठा, और रिहर्सलके काममें विनयके साथ उसका मेल घनिष्ट हुआ यहाँ तक कि कविताकी आवृत्ति अथवा और किसी बातके बारेमें विनय से सलाह या उपदेश लेनेमें भी उसे कुछ भी आपत्ति नहीं रही ।

ललिताके इस परिवर्त्तनसे विनयकी छाती परसे जैसे एक बड़े भारी पत्थरका बोझ हट गया । उसे इतना अधिक आनन्द हुआ कि वह तब आनन्दमयीके पास जाकर बालककी तरह लड़कपन करने लगा । सुचरिता के पास बैठ कर बहुत सी बातें बकनेके लिए विनयके मनमें अनेक बातें जमा होने लगीं ; किन्तु आज कल सुचरिता उसे देखने ही को नहीं मिलती, उसके दर्शन ही दुर्लभ हैं । मौका पाते ही वह ललिताके साथ बात चीत करनेको बैठता था ; किन्तु ललिताके सामने उसे विशेष सावधान होकर ही बात मुँहसे निकालनी पड़ती थी । विनय जानता था कि ललिता मन-ही-मन उसका और उसकी बातोंका विचार तोषणभावसे करती है, इसी कारण ललिताके सामने उसकी बातोंके धारा-प्रवाहमें

स्वाभाविक वेग नहीं रहता था। ललिता बीच बीच में उससे कहती थी—
आप तो जैसे किताबसे रट कर ये बातें कह रहे हैं। आप इस तरह
क्यों बोलते हैं ?

विनय इसके जवाब में कहता था— मैं इतनी अवस्था तक किताबों
ही रटता आया हूँ इसीसे मेरा मन छपी हुई किताबके समान हो
गया है !

ललिता कहती थी—आप खूब अच्छी तरह संभाल कर, बनाकर
बात करनेकी कोशिश न किया करें—अपने मनकी बात ठीक तौरसे
कह जाया करें। आप इस तरह खूबीके साथ अलंकारिक भाषामें कहते
हैं कि मुझे सन्देह होता है, आप किसीकी बातें सोच समझकर बना कर
कहते हैं।

यही कारण था कि स्वाभाविक लज्जाके कारण कोई बात खूब
सजावटके साथ अगर विनयके मनमें आती थी, तो उसे भी ललिताके
सामने कहते समय चेष्टा करके विनयको वह बात सीधी सादी भाषामें
संक्षेपके साथ कहनी पड़ती थी। कोई अलंकारिक बात उसकी ज़ुबान पर
अगर अकस्मात आ जाती थी, तो वह लज्जित हो जाता था।

ललिताके मनके भीतरसे जैसे एक व्यर्थका मेघ हट गया, और
उसका हृदय निर्मल उज्ज्वल हो उठा। वरदासुन्दरी भी उसका यह परि-
वर्तन देख कर विस्मित होगई। वह अब पहलेकी तरह बात-बातमें
आपत्ति प्रकट करके विमुख नहीं हो बैठती—सब कामों में उत्साह के
साथ शरीक होती है। आगामी अभिनय के साज और सजावट वगैरह
सभी बातोंके बारेमें उसके मनमें नित्य नाना प्रकारकी नई-नई कल्पनाएँ
पैदा होने लगीं। उन्हीं कल्पनाओंको लेकर उसने सबकी नाकमें दम कर
दिया। इस बारेमें वरदासुन्दरीका उत्साह चाहे जितना अधिक हो, वह
स्वर्चकी बात भी सोचती है—इसी कारण, ललिता जब अभिनयकी
ओर से विमुख थी, तब भी जैसे उनकी उत्कण्ठाका कारण उपस्थित हुआ
था, वैसे ही अब उसकी उत्साहित अवस्थामें भी उनके जी को संकट उप-

स्थित हुआ। किन्तु ललिताकी उत्तेजित कल्पना-वृत्तिको चोट पहुँचाने का भी साहम नहीं होता। जिस काममें वह उत्साह दिखाती है, उस काम में कहीं लेशमात्र भी असंपूर्णता घटित होनेसे वह एक दम उदास हो बैठती है—उसमें शरीक होना ही उसके लिए असंभव हो उठता है।

ललिता अपने मनकी इस बड़ी हुई अवस्थामें सुचरिताके निकट अनेक बार व्यग्र हो गई है। सुचरिता ईंसी है, बातें भी की हैं, किन्तु ललिताने उसके भीतर बारम्बार ऐसी एक बाधाका अनुभव किया है कि वह मन-ही-मन नाराज़ होकर वहांसे लौट आई है।

एक दिन उसने परेश बाबूके पास जाकर कहा—बाबू जी सुची दीदी एक किनारे बैठे बैठे किताब पढ़ें, और हम लोग अभिनय करने जायें, यह न होगा। उतको भी हमारा साथ देना होगा।

परेश बाबू भी इधर कई दिनसे सोचते थे कि सुचरिता अपनी साथियोंसे जैसे कुछ दूर होती जा रही है। ऐसी अवस्था सुचरिताके लिए स्वास्थ्यकर नहीं, यह जान कर उन्हें एक आशंका सी हो रही थी। ललिताकी बात सुन कर आज उन्हें जान पड़ा, आमोद प्रमोदमें सबके साथ सम्मिलित न हो सकनेसे सुचरिताका यह अलगावका भाव प्रश्रय पाकर बढ़ जायगा। परेश बाबूने ललितासे कहा—अपनी माँ से कहो।

ललिताने कहा—माँसे तो मैं कहूँगी, मगर सुची दीदीको राजी करनेका भार आपको लेना पड़ेगा।

परेश बाबूने जब कहा, तो सुचरिता फिर कुछ नहीं नूढ़ी नहीं कर सकी। वह अपना कर्तव्य पात्रनेके लिए अग्रसर हुई।

सुचरिताके बाहर निकल कर सबके साथ शामिल होते ही विनयने उसके साथ पहलेकी तरह वार्तालाप जमानेकी चेष्टाकी, किन्तु इन्हीं कई दिनोंमें न जाने क्या हो गया कि अच्छी तरह उसे सुचरिताका रुख नहीं मिला। उसके मुखकी श्रीमें, उसकी दृष्टिमें ऐसा एक सुदूर व्यवधान का भाव प्रकट होता है कि उसके पास आगे बढ़नेमें प्रकोच उपस्थित होता है। पहले भी मिलने जुलने और काम कात्रके भीतर सुचरिताका एक निर्लिप्त

भाव था, वही भाव इस समय अत्यन्त स्पष्ट हो उठा है। उसने जो अभिनय कार्यके अभ्यासमें योग दिया था, उसके भीतर भी उसकी स्वतंत्रता नष्ट नहीं हुई। कामके लिए उसकी जितनी जरूरत होती थी, उसे ही करके वह चली जाती थी। इसी तरह देखते देखते सुचरिता विनयके निकटसे बहुत दूर चली गई।

अबकी कई दिन गोराके उपस्थित न रहनेसे विनय बिल्कुल ही बे रोकटोकके परेश बाबूके परिवारके साथ सभी तरहसे हिलमिल गया था, विनय इस तरह अव्यवस्थित भावसे प्रकाशको प्राप्त हुआ, तो यह देख कर परेश बाबूके घरके सभी आदमियोंने एक विशेष तृप्ति अनुभव किया। विनयने भी अपनी इस तरह बाधासुक्त स्वाभाविक अवस्था से जैसा आनन्द पाया वैसा आनन्द उसे और कभी मिला न था। वह उन सब लोगोंको भला लगता है, यह अनुभव करके उसकी रिम्मानेकी शक्ति और भी बढ़ उठी।

प्रकृतिक इस फैलावके समय, अपनेको स्वतंत्र शक्तिसे अनुभव करनेके दिन, विनयके निकटसे सुचरिता दूर चली गई। यह क्षति, यह आघात, अन्य समय दुःसह होता; किन्तु इस समय वह सहज ही उससे उत्तीर्ण हो गया। आश्चर्य तो यही है कि ललिताने भी सुचरिताके भावान्तरको उपलब्ध करके उसके प्रति पहलेकी तरह अभिमान नहीं प्रकट किया। कविताकी आवृत्ति और अभिनयके उत्साहने ही क्या उस पर संपूर्ण अधिकार कर लिया था ?

इधर सुचरिताको अभिनयमें शामिल होते देखकर एकाएक हारान बाबू भी उत्साहित हो उठे। उन्होंने यह कह कर स्वयं प्रस्ताव किया कि वह 'पैराडाइस लास्ट' का एक अंश पढ़ेंगे, और ट्राइडनके काव्यका जो पाठ अभिनयमें होगा, उसकी भूमिकाके तौर पर 'संगीतकी मोहिनी-शक्ति के सम्बन्धमें एक छोटी-सी वस्तुता भी देंगे। इस प्रस्तावको सुन कर वरदासुन्दरी मनमें खीज उठी। ललिता भी सन्तुष्ट नहीं हुई। हारान बाबू खुद मैजिस्ट्रेट से मुलाकात करके इस प्रस्तावको पहलेही पक्का कर

आये थे । ललिताने जब कहा कि इस मामलेको इतना बढ़ानेमें शायद मैजिस्ट्रेट साहब आपत्ति करेंगे, तब हारान बाबूने जेबसे मैजिस्ट्रेटका कृतज्ञताज्ञापक पत्र निकाल कर ललिताके हाथमें देकर उसे निरुत्तर कर दिया

गोरा बिना किसी कामके पर्यटन करने निकला था, और वह कब लौटेगा, यह भी कोई नहीं जानता था । यद्यपि सुचरिताने सोचा था कि वह इस सम्बन्धमें किसी भी बातको मनमें स्थान नहीं देगी, लेकिन तो भी प्रायः प्रतिदिन ही उसके मनमें आशा उत्पन्न होती थी कि आज शायद गोरा आवेगा । इस आशाको वह किसी तरह अपने मनसे दूर नहीं कर पाती थी । गोराकी उदासीनता या उपेक्षा और अपने मनकी इस अबाध्यतासे जब वह अत्यन्त पीड़ाका अनुभव कर रही थी, जब किसी तरह अत्यन्त पीड़ाका अनुभव कर रही थी, जब किसी तरह इस जालको छिन्न-भिन्न करके भागनेके लिए उसका चित्त व्याकुल हो उठा था, ऐसे ही समय एक दिन हारान बाबूने विशेष भावसे ईश्वरका नाम लेकर सुचरिताके साथ अपने विवाह सम्बन्धकी बात पक्की करनेके लिए परेश बाबूसे फिर अनुरोध किया । परेश बाबूने कहा—अभी तो विवाहमें बिलम्ब है; इतनी जल्दी सम्बन्ध बन्धन होना क्या अच्छा है ?

हारान—विवाह के पहले कुछ समय इस बन्धनकी अवस्थामें बिताना दोनोंके मनकी परिपातिके लिए मैं विशेष आवश्यक समझता हूँ । प्रथम परिचय और विवाहके बीचमें इस तरहका एक आध्यात्मिक सम्बन्ध जिसमें संसारकी जिम्मेदारी नहीं—लेकिन बन्धन है, विशेष उपकारी है ।

परेश—अच्छा, सुचरितासे पूछ देखूँ ।

हारान—उन्होंने तो पहले ही स्वीकृति दे दी है ।

हारान बाबूके प्रति सुचरिताके मनके भावके बारेमें परेश बाबूको अब भी सन्देह था इसीसे उन्होंने खुद सुचरिताको बुला कर उसके आगे हारान बाबूका प्रस्ताव उपस्थित किया । सुचरिताका यह हाल था कि

अपने इस दुःखधाम में पड़े हुए जीवनको किसी एक जगह चूड़ान्त भावसे समर्पण कर सकनेसे ही उसकी जान बचे । इसीसे उसने इस तरह तत्काल निश्चय भावसे अपनी स्वीकृति दे दी कि परेश बाबू का सारा सन्देश दूर हो गया । उन्होंने विवाहके पहले प्रतिज्ञाबद्ध होना कर्तव्य है कि नहीं, इस विषयको अच्छी तरह सोच विचार लेनेके लिए सुचरितासे अनुरोध किया, किन्तु फिर भी सुचरिताने इस प्रस्तावमें कुछ भी आपत्ति नहीं की ।

निश्चय हुआ कि घाउनलो साहबके निमन्त्रणमें हो आकर एक विशेष दिनमें सबको बुलाकर भावी दम्पति का सम्बन्ध पक्का किया जायगा ।

सुचरिताको क्षण भरके लिए जान पड़ा कि उसका मन जैसे राहूके आससे मुक्त हो गया । उसने मनमें पक्का कर लिया कि हारान बाबूसे ब्याह करके ब्राह्मणसमाज के काम में सम्मिलित होनेके लिए वह अपने मनको कठोर भावसे प्रस्तुत करेगी । हारान बाबूसे ही वह रोज थोड़ा थोड़ा धर्मतत्व सम्बन्धी अंगरेजी पुस्तकें पढ़कर उनकी आज्ञा के अनुसार चलेगी यही उसने इरादा कर लिया । उसके लिए जो दुरूह है यहाँ तक कि अप्रिय है, उसीको ग्रहण करनेकी प्रतिज्ञा करके उसने मनमें एक तरह की स्फूर्ति या स्फूर्तिका अनुभव किया ।

हारान बाबू द्वारा संपादित अंगरेजी पत्रको कुछ दिनसे सुचरिताने नहीं पढ़ा था । आज वह पत्र छपते ही सुचरिताको ढाकसे मिला । जान पड़ता है, हारान बाबू ने खास करके वह अंक सुचरिता के पास भेज दिया था ।

सुचरिता उस अखबारको अपनी कोठरीमें ले जाकर स्थिर होकर बैठकर, परम कर्त्तव्यकी तरह, शुरूसे पढ़ने लगी । श्रद्धापूर्ण चित्तसे अपनेको छात्रकी तरह जान कर वह उस पत्रसे उपदेश ग्रहण करने लगी ।

नौका पालके जोरसे चलते चलते एकाएक पहाड़से टकरा कर उल्ट गई । इस संख्या में 'पुराने ख्यालात के पागल' नामक एक लेख था । उसमें उन लोगों पर आक्रमण किया गया था जो वर्त्तमान कालमें रह कर भी पुराने जमानेकी ओर रुख किये हुए हैं ? यह बात नहीं कि उस लेख

की युक्तियाँ असंगत हों, बल्कि असलमें सुचरिता ऐसी ही युक्तियोंकी खोजमें थी' किन्तु वह लेख पढ़ते ही विदित हो गया कि इस आक्रमण का लक्ष्य एक मात्र गोरा पर ही है। मगर उसका नाम नहीं था। न उसके लिखे किसी लेखका ही उल्लेख था। सैनिक जैसे बंदूककी हर गोलीसे एक-एक मनुष्यकी हत्या करके खुश होता है वैसे ही उस लेखके प्रत्येक वाक्यसे कोई एक सजीव पदार्थ मानों छेदा जा रहा है, और मानों उससे एक हिस्सा का आनन्द व्यक्त होता है।

वह लेख सुचरिताको असह्य हो उठा। उसका जी चाहा कि वह उसकी प्रत्येक युक्तिको तीव्र प्रतिवादसे टुकड़े-टुकड़े कर डाले। उसने अपने मनमें कहा कि गौर मोहन बाबू अगर चाहें, तो इस लेखको मिट्टी में मिला दें। गोराका उज्ज्वल प्रदीप्त मुख-मण्डल सुचरिताकी आँखों के आगे ज्योतिर्मय होकर जगमगा उठा और उसका प्रबल कठस्वर सुचरिता की छातीके भीतर तक ध्वनित हो उठा, उस मुख और स्वरकी असाधारणताके निकट उस लेख और उसके लेखककी छुद्रता ऐसी ही तुच्छ हो उठी कि सुचरिताने उस पत्रको धरती पर फेंक दिया।

बहुत दिनके बाद उस दिन सुचरिता आपही से विनयके पास आकर बैठी, और कहा—आपने कहा था कि जिन पत्रोंमें आप लोगोंके लेख निकले हैं, उन्हें पढ़नेके लिए दीजिएगा, मगर आप नहीं लाये।

उत्तर में विनय ने कहा — हाँ, मैंने उन पत्रों का संग्रह कर लिया है, कल ही ला दूँगा।

विनय दूसरे ही दिन पत्र-पत्रिकाओंकी एक गठरी लाकर सुचरिताको दे गया। सुचरिताने उन्हें पाकर भी फिर पढ़ा नहीं, बक्समें बन्द करके रख छोड़ा। पढ़नेको बहुत ही जी चाहनेके कारण ही उसने उन्हें नहीं पढ़ा। उसने प्रतिज्ञा की कि चित्तको किसी तरह इधर-उधर बहकने न दूँगी। अपने विद्रोही चित्तको फिर हारान बाबूके शासनके अधीन अर्पण करके उसने और एक बार सान्त्वनाका अनुभव किया।

रविवारको सबेरे आनन्दमयी पान लगा रही थीं; शशिमुखी उनके पास बैठो सुपारी काटकर ढेर कर रही थी। इस समय विनय वहाँ पहुँचा। विनयको देखते ही शशिमुखी अपने आँचलसे कटी सुपारियाँ फेंककर चटपट भाग खड़ी हुई। आनन्दमयी ज़रा मुसकिया दी।

विनय सभीके साथ हेलमेल कर लेता था। अब तक शशिमुखीके साथ उसका खूब हेलमेल था। दोनों ही ओरसे परस्पर खूब उपद्रव चलता था। शशिमुखीने विनयसे कहानी कहलानेका यह उपाय खोज निकाला था कि वह उसके जूने छिपाकर रख देती थी। विनयने भी शशिमुखीके जीवनकी दो एक साधारण घटनाओंके आधार पर खूब रंग चुंग कर दो-एक कहानियाँ गढ़ रखी थीं। उन्हींमें से कोई कहानी शुरू करने पर शशिमुखी बहुत ही खीजती थी। पहले वह वक्ताके ऊपर मिथ्या भाषण का अपवाद लगाकर उच्च स्वरसे प्रतिवादकी चेष्टा करती। उसपर भी जब विनय चुप न होता, तो वह हार मानकर वह स्थान छोड़कर भाग जाती थी। शशिमुखी भी विनयके जीवन चरितको विकृत करके उन कहानियोंके जवाबमें वैसे ही कहानी बनानेकी चेष्टा करती थीं; किन्तु रचना या कल्पनाकी शक्तिमें विनयके सामने न टहर सकनेके कारण वह इस सम्बन्ध में यथेष्ट सफलता नहीं प्राप्त कर सकी।

मतलब यह कि विनय जब गोरारके घर आता था, तब सब काम छोड़कर शशिमुखी उसके साथ ऊधम और छेड़छाड़ करनेके लिये दौबी आती थी। किसी किसी दिन वह इतना उत्पात करती थी कि आनन्दमयी उसे डाँटने लगती थीं। किन्तु दोष तो अकेले उसी बेचारी का नहीं था, विनय भी उसे उत्तेजित कर देता था कि अपनेको संभालना उसके लिये असंभव हो जाता था। वही शशिमुखी आज जब विनय को देखकर च...

पट वह स्थानको छोड़कर भाग खड़ी हुई, तब आनन्दमयी हँसी। किन्तु वह हँसी सुखकी हसी नहीं थी।

विनय को भी इस लुढ़क घटनाने ऐसी चोट पहुँचाई कि वह कुछ देर तक चुपचाप बैठा रहा। शशिमुखी ने ब्याह करना विनयके दिये कितना असंगत है यह ऐसे ही ऐसी छोटी मोटी बातोंमें अच्छी तरह स्पष्ट हो उठता था विनयने जब इस ब्याह के लिये अपनी सम्मति दी थी तब उसने गोराके साथ अपनी मित्रताकी बात ही सिर्फ सोची थी—कल्पनाके द्वारा उसकी इन अड़चनोंका अनुभव नहीं किया था। इसके सिवा, हमारे देश में विवाह प्रधानतः व्यक्तिगत मामला नहीं है, वह पारिवारिक है, इसी सिद्धान्त को लेकर विनय पत्रोंमें अनेक लेख लिख चुका है, और उनमें इस बातको भारतवासियोंके लिये 'गौरवकी सामग्री' सिद्ध कर चुका है यही कारण है कि अपने विवाह सम्बन्धके बारेमें आप भी उसने किसी व्यक्तिगत इच्छा या विनृष्णाको मनमें स्थान नहीं दिया। आज शशिमुखी जो विनयको देखकर अपना वर समझकर लज्जाके मारे उसके आगेसे भाग खड़ी हुई उससे उसको शशिमुखीके साथ अपने भावी सम्बन्ध का रूप दिखाई पड़ा। यह सोचकर गोरा उसे उसकी प्रकृतिके विरुद्ध कहाँ तक लिये जा रहा था विनय को गोराके ऊपर बड़ा क्रोध हुआ अपने ऊपर अधिकारका भाव उत्पन्न हुआ, और यह स्मरण करके कि आनन्दमयीने पहले ही इस विवाहको नापसन्द किया था उनकी सूक्ष्म दर्शिता के लिये विनय का मन उनके प्रति विस्मय मिश्रित भक्तिसे परिपूर्ण हो उठा।

आनन्दमयी विनयके मनका भाव समझ गई। उन्होंने उसके मनको दूसरी ओर फेरनेके लिए कहा—कल गोराकी चिट्ठी आई है विनय।

विनयने कुछ अन्यमनस्क भावसे ही कहा—क्या लिखा है ?

आनन्दमयीने कहा—अपना हाल कुछ विशेष नहीं लिखा है। देशके छोटे लोगोंकी दुर्दशा देख कर दुःखित होकर उन्हींका हाल अधिकतर लिखा है। घोपपाड़ा नामके किसी गाँवमें मजिस्ट्रेट कैसे कैसे अन्याय-अत्याचार कर रहा है, उसीका वर्णन किया है।

गोराके प्रति एक विरुद्ध भावकी उत्तेजना होनेके कारण असहिष्णु हो कर विनय कह उठा—गोराकी बस परायेके ही ऊपर दृष्टि रहती है। हम जो समाजकी छाती पर बैठकर नित्यप्रति जो सब अत्याचार करते हैं, उन्हें केवल क्षमा ही करना होगा, और कहना होगा कि ऐसा सत्कर्म और कुछ हो ही नहीं सकता !

एकाएक गोराके ऊपर इस तरह दोषारोपण करके, अपनेको जैसे अन्य पक्ष मान कर, विनयने अपनेको गोराके विरुद्ध खड़ा किया। यह देख कर आनन्दमयी हँसी।

विनयने कहा—मां, तुम हँसती हो, कि एकाएक विनय इस तरह क्रोध क्यों कर उठा ? मुझे क्यों क्रोध होता है, सो तुमसे कहता हूँ। सुधीर उस दिन मुझे अपने यहाँके नहारी-स्टेशनमें अपने एक मित्रके बाग़में ले गया था। सियालदह स्टेशनसे ही पानी बरसना शुरू हो गया। शोदपुर स्टेशनमें जब गाड़ी रुकी, तब मैंने देखा, एक साहबी पोशाक पहने बंगाली साहब गाड़ीसे उतरे, अपनी स्त्रीको भी उतारा। बंगाली साहब मजेसे छाता लगाये हुये थे। स्त्रीकी गोदमें एक बच्चा था। वह बेचारी खुद एक मोटी चादर ओढ़े थी, और बच्चेका भी उसीमें छिपाये थी। शीत और लज्जासे संकुचित हो रही थी, महिला तो खुले प्लेटफार्म पर खड़ी हुई भीग रही थी, और उसका बेहया स्वामी खुद छाता लगाये असबाब उठानेके लिए कुलियों का इन्ज़ाम कर रहा था। मुझे जान पड़ा, इस घड़ी सारे बंगालमें, क्या धूपमें, और क्या बरामें क्या भले घर की और क्या नीच जातिकी—किसी भी स्त्रीके सिर पर छाता नहीं है ! जब मैंने देखा कि स्वामी निर्लज्ज होकर सिर पर छाता लगाये है, उसकी स्त्री चादरसे अपने बच्चेके शरीरको किसी तरह ढक कर चुपचाप खड़ी भीग रही है—इस व्यवहारकी निन्दा मनमें भी नहीं करती, और स्टेशन भरमें किसी आदमीको यह व्यवहार अन्याय नहीं जान पड़ता, तभीसे मैंने प्रतिज्ञाकी है कि मैं इन सब काव्यकी कल्पनात्मक मिथ्या बातोंको

अब कभी जवान पर भी नहीं लाऊँगा कि हम लोग स्त्री जातिका अत्यन्त आदर करते हैं, उन्हें लक्ष्मी (गृहलक्ष्मी) या देवी मानते हैं ।

अपने उत्साहसे एकाएक आप ही लज्जित होकर विनयने फिर स्वाभाविक स्वरमें कहना शुरू किया—माँ, तुम सोचती हो कि विनय कभी कभी इसी तरह बड़ी-बड़ी बातोंका व्याख्यान देने लगता है, और आज भी इसे व्याख्यान की सनक सवार है मैं मानता हूँ कि अभ्यासवश ऐसी बातें वक्तृताके समान हो पड़ती हैं ; किन्तु आज यह मेरी वक्तृता नहीं है । देशकी स्त्रियाँ देशकी कितनी बड़ी शक्ति हैं, यह मैं पहले कभी अच्छी तरह समझ नहीं सका—कभी इस विषय पर विचार भी नहीं किया !—माँ मैं अब और अधिक नहीं बड़ूँगा । मैं अधिक बोलता हूँ, इस कारण कोई विश्वास ही नहीं करता कि मैं जो कुछ कहता हूँ, वह मेरे ही मनकी बात है । अबसे मैं कम बोला करूँगा—

इतना कहकर बिना विलम्ब के विनय चल दिया । उस समय उसका चित्त उत्साहसे पूर्ण हो रहा था ।

आनन्दमयीने महिमको बुलाकर कहा—भैया, विनयके साथ हमारी शाशिमुखीका ब्याह नहीं होगा ।

महिम—क्यों ? क्या तुम्हारी राय नहीं है ?

आनन्द०—यह सम्बन्ध अंत तक नहीं टिक सकता, इसीसे मेरी राय नहीं है । नहीं तो मैं क्यों न राय देतो ?

महिम—गोरा राजी हो गया है, विनय भी राजी है, फिर क्यों नहीं टिकेगा ? हाँ, यह मैं अवश्य जानता हूँ कि अगर तुम राय न दोगी, तो विनय कभी वह ब्याह नहीं करेगा ।

आनन्द०—देखो, मैं विनय को तुम्हारी अपेक्षा अधिक और अच्छी तरह जानती हूँ ।

महिम—गोराकी अपेक्षा भी ?

आनन्द०—हाँ, विनयको जितना मैं जानती हूँ, उतना गोरा भी नहीं जानता। इसी कारण सब बातों पर गौर करके मैं इस ब्याहमें राय नहीं दे सकती।

महिम—अच्छा, देखा जायगा—गोराको लौट आने दो।

आनन्द०—महिम, मेरी बात सुनो। इस ब्याहके लिए अगर अधिक हठ करोगे, या दबाव डालोगे, तो अन्तको अवश्य गड़बड़ होगी। मेरी इच्छा नहीं है कि इस मामलेमें गोरा विनयसे कुछ कहे।

‘अच्छा, देखा जायगा।’ कहकर, मुँहमें एक पान रखकर, महिम बिगड़ कर वहाँसे चल दिया।

गोरा जब बाहर घूमनेको निकला था तब उसके साथ अविनाश मोतीलाल बसन्त और रमापति भी थे। किन्तु गोराके पूर्ण उत्साहमें ये लोग पूरा साथ न दे सके। अविनाश और बसन्त तबीयत खराब हो जानेका बहाना करके चार ही पाँच दिनोंके भीतर कलकत्ते लौट आये। मोतीलाल और रमापतिको गोराके ऊपर बड़ी भक्ति थी, इसलिए ये दोनों उसे अकेला छोड़कर न लौट सके। किन्तु इन दोनोंके कष्टोंकी सीमा न रही। कारण यह था कि गोरा बहुत चलकर भी न थकता था। और कहीं तकलीफ़ पाकर भी वह दो चार दिन ठहर जाता था। गांवका जो कोई गृहस्थ गोराको ब्राह्मण समझकर भक्तिपूर्वक अपने घरमें ठहराता था, वहाँ ठरहने तथा खाने पीनेकी अनेक असुविधाएँ रहते भी वह अटक जाता था। उसकी बातचीत सुननेके लिए सारी बस्तीके लोग चारों ओरसे आकर इकट्ठे होते थे और दिन-रात उसे घेरे रहते थे। वे उसको छोड़ना नहीं चाहते थे।

कुलीन-समाज, शिष्टि-समाज, और कलकत्तेसे बाहरका हमारा देश कैसा ? गोराने यह पहले-पहल देखा। यह भारतवर्ष असंख्य गाँवों-का आधार-भूत होकर भी कितना भेद-भाव-युक्त, सङ्कीर्ण और दुर्बल है, वह अपनी शक्तिके सम्बन्धमें कैसा अचेत और मङ्गल साधनमें नितान्त अज्ञ और उदासीन है ! पाँच ही सात कोस के अन्तर पर उसका कैसा सामाजिक प्रभेद है; परस्पर कैसा जुदाईका भूत सवार है; संसारके विहित सार्वजनिक कर्मक्षेत्रमें प्रवेश करनेके लिए कितनी स्वकल्पित बाधाएँ मौजूद हैं; सामान्य-सामान्य विषयोंको वह कितना बड़ा समझता है और उसका चित्त कैसा उत्साह-हीन और आलस्य निद्रामें पड़ा है, उसका जी कितना छोटा है यह सब ग्रामवासियोंके बीच इस तरह निवास न करनेसे गोरा

कभी न जान सकता । गोरा जब गाँवमें टिका था तब दैवयोगसे एक महल्लेमें आग लगी । इतने बड़े सङ्कटमें भी सब लोगोंको मिलकर प्राणपणसे विपत्तिके विरुद्ध काम करते न देख गोराको बड़ा आश्चर्य हुआ । एक जगह घर बाँधकर दस मनुष्योंके रहने का मुख्य उद्देश्य यही है कि विपत्तिमें एक दूसरेकी सहायता करें । यदि ऐसा न हुआ तो गाँवमें एक साथ रहनेका सुख क्या हुआ ? इस प्रकार मनमें सोचते हुए गोराने देखा कि गाँवके सभी लोग इधर-उधर दौड़ रहे हैं, कोई शोर-गुल मचा रहा है, कोई रो रहा है, कोई हाय हाय कर रहा है, कोई खड़ा होकर तमाशा देख रहा है और कोई सिर पर हाथ रख किंकाव्य-विमूढ़ हो खड़ा है । ऐसा यत्न किसीने न किया जिससे आग बुझ सकती । सब मिलकर यदि आग बुझानेमें लग पड़ते तो आग बुझना क्या कठिन था । सबके देखते ही देखते समूचा घर जल गया पर किसीसे कुछ न हो सका । उसके पास कोई तालाब या कुआँ न था । स्त्रियाँ दूरसे पानी लाकर घरका काम-काज चलाती थीं परन्तु प्रतिदिनका यह झन्झट मिटानेके लिए घरके नजदीक थोड़े खर्चमें कुआँ खुदा लेने पर धनवान् लोग भी ध्यान न देते थे । पहले भी कई बार इस बस्तीमें आग लग चुकी है, अतः उसे ब्राह्मग्न कह और देवको दोष दे सभी लोग निरुद्यम हो बैठे हैं । समीपमें पानीकी कोई व्यवस्था कर रखनेके लिए उन लोगोंके मनमें कभी कोई चेष्टा उपजती ही नहीं । गाँवकी अत्यन्त आवश्यक बातके लिए जिनकी समझ ऐसी विचित्र और खोटी है उन लोगोंके पास समस्त देशकी आलोचना करना गोराको एक विडम्बना सी जान पड़ी । सबसे अधिक आश्चर्य गोराको यह समझकर हुआ कि मोतीलाल और रमापति इन सब दृश्योंको देखकर ज़रा भी न घबराये, इस घटनासे कुछ भी विचलित न हुए । बल्कि गोराके इस लोभको उन दोनोंने असङ्गत जाना । छोटे लोग तो ऐसा करते ही हैं, वे इसीमें आनन्द मानते हैं । इन कष्टोंको वे कष्ट ही नहीं मानते । छोटे लोगोंमें इन सब बातोंके सिवा और कुछ हो सकता है और हम किसी तरह सुधर सकते हैं, इसकी कल्पना करना

भी वे व्यर्थ समझते हैं । इस अज्ञा पशुधर्मिता और दुःखका बोझ कितना भारी है । यह भार हमारे शिक्षित-अशिक्षित, धनी-दरिद्र, सभी के सिरको झुकाये हुए है और किसीको आगे बढ़ने नहीं देता । यह बात आज स्पष्ट रूपसे जानकर गोराके मनमें भाँति भाँतिके दुःख होने लगे ।

मोतोलाब यह कहकर कि “मेरे घरसे बीमारीका पत्र आया है,” चल दिया । अब गोराके साथ सिरु रमापति रह गया ।

दोनों वहाँसे विदा हो नदीके पासकी बालूकामयी भूमिमें एक मुसलमानी बस्तीमें जा पहुँचे । ठहरनेको इच्छासे ढूँढ़ते-ढूँढ़ते सारी बस्तीके भीतर केवल एक घर हिन्दू हजामका मिला । दोनों ब्राह्मणोंने आश्रय लेने के लिए उसके घर जाकर देखा, बूढ़ा नाई और उसकी स्त्री एक मुसलमानके बच्चे को अपने घरमें पाल रहे हैं । रमापति बड़ा ही नैष्टिक था, वह तो व्याकुल हो गया । गोरा नाईको इस अनाचारके लिए धिक्कार देने लगा । उसने कहा—देवताजी, हम लोग जिसे हरि कहते हैं, उसीको वे अल्ला कहते हैं, भेद कुछ नहीं है ।

धूर कड़ी हो गई थी, जिधर देखो उधर बालू ही बालू नज़र आती थी । नदी वहाँसे बहुत दूर थी । रमापतिने मारे प्यासके आकुल होकर कहा जल कहाँ मिलेगा ?

नाईके घरके समीप एक कूप था, किन्तु उस कुर्पका पानी न पीकर वह मुँह बिगाड़ कर बैठा रहा ।

गोराने पूछा—क्या इस लड़के के-माँ बाप नहीं हैं ?

नाईने कहा—दोनों हैं, पर न होने ही के बराबर है ।

गोरा—सो कैसे ?

नाईने इस पर जो इतिहास कहा उसका सारांश यह है—

जिस ज़मींदारीमें ये लोग रहते हैं, वह निलहे साहबके ठेकेकी है ! रेतीली भूमिमें नीलकी खेती करनेके विषयमें प्रजाके साथ नील-कोटोके विरोधका अन्त नहीं और सब किसानोंने उसकी दस्तन्दाजी कबूल कर ली है, सिर्फ इस अलापुरकी प्रजाको साहब अभी तक अपने कब्जेमें नहीं ला

सका है। यहाँकी रियाया मुसलमान है और इनका सर्दार फेरू मियाँ किसी से नहीं डरता ! निलहँ साहबके उपद्रवकी तहकीकातमें आई हुई पुलिसको दो दफ़े पीटकर जेल काट आया है। उसकी अवस्था ऐसी बीत रही है कि उसके घरमें इत्फ़ाक हीसे कभी चूल्हा जलता है पर तो भी वह किसीसे डरने वाला नहीं है। इस दफ़े नदीके समीप ही रेतीली ज़मीनको जोत गोड़कर इस गाँवके लोगोंने कुछ धान बोया था। करीब एक महीनेके हुआ कि कोठीके मैनेजर साहबने स्वयं लटेतोंको साथ ले प्रजाका धान लूट लिया इस अत्याचरके समय फेरू सर्दारने मैनेजरके दाहिने हाथमें एक ऐसी लाठी मारी कि उनका हाथ टूट ही गया। डाक्टरने उसकी चिकित्सा न कर सकने पर हाथ काट डाला। अब उसे लोग हथकट्टा साहब कहने लगे हैं। ऐसा बड़ा अन्धेर इस देहातमें आज तक कभी न हुआ था। इसके बादसे पुलिसका उपद्रव गाँवमें मानो आग बरसा रहा है। उस आगमें पड़कर प्रजाके घरकी सब चीज़ें जलकर खाक हो गई हैं। किसीके घरमें कुछ न बचा। पुलिसके क्रोधाग्निमें पड़कर सब स्वादा हो गये स्त्रियोंकी इज्जत न बची। सभी बेतरह बेइज्जतकी गई हैं। पुलिस फेरू सर्दार और कितने ही लोगोंको दोज़तमें रक्खे हुए है। गाँवके बहुतेरे लोग जहाँ-तहाँ भाग गए हैं। फेरूके घरके लोग आज भूखों मर रहे हैं ? उनकी देह परसे कपड़े तक उतार लिये गए हैं, यहाँ तक कि वे शर्मके मारे घरके बाहर नहीं निकल सकते। उसका एकमात्र लड़का तमीज़ नाहन को, गाँवके नातेसे, मौसी कहता था। उसे कई दिनोंका भूखा देख नाहन अपने घर लाई और उसका पालन कर रही है। नील कोठीकी एक कचहरी यहाँसे डेढ़ कोस पर है। दारोगा अब भी अपना दख-बखल लिए वहाँ ठहरा है। उस दंगेके उपलक्षमें वह गाँवमें आकर कब क्या करेगा, इसका ठिकाना नहीं। कल मेरे पड़ोसी नाज़िमके घर पर पुलिस उतरी थी ? नाज़िमका एक जवान साला दूसरे गाँवसे अपनी बहनको देखने आया था। दारोगाने उसे देख बिना कारण कहा —“साला देखनेमें कैसा मोटा ताज़ा है, इसकी छाती तो देखो कितनी चौड़ी है।” और यह

कहकर हाथकी लाठीकी ऐसी हूँ उसके मुँह पर मारी कि उसके दाँत टूट गये और मुँहसे रक्तकी धारा बहने लगी। भाई पर ऐसा अत्याचार होतेदेख उसकी बहन चिल्लाती हुई ज्योंही उसके पास आई त्योंही एक कान्सटेबलने उसे धक्का मारकर सात हाथ दूर फेंक दिया। वह बूढ़ी बेचारी मुँहकी खाकर बेहोश होकर गिर पड़ी। पहले इस गाँवमें पुलिस ऐसा उपद्रव करनेका साहस नहीं करती थी, किन्तु अभी इस गाँव के बलिष्ठ युवक लोग गिरफ्तार होनेके भयसे भाग गये हैं। उन भगोड़ोंकी खोजका बहाना करके पुलिस अब भी गाँवको तङ्ग कर रही है। नहीं कह सकते, कब इस संकटसे हम लोगोंका छुटकारा होगा।

गोरा उठना नहीं चाहता था। उधर प्यासके मारे रमापतिके प्राण निकले जाते थे। नाईका इतिहास खतम होते न होते उसने पूछा—यहाँ से हिन्दुओंका गाँव कितनी दूर है ?

नाई—करीब तीन मील पर जो नील-कोठीकी कचहरी है, वहाँका तहसीलदार एक कायस्थ है। नाम है मङ्गलप्रसाद।

गोराने पूछा—स्वभाव कैसा है ?

नाई—सालात् यमदूत ही कहना चाहिए। इतना बड़ा निर्दय और चालाक आदमी कहीं देखनेमें नहीं आया। दारोगाको वह कई दिनोंसे अपने यहाँ टिकाये हुए है ; उसका कुल प्रार्थ हमीं लोगोंसे वसूल करेगा। इसमें वह कुछ मुनाफ़ा भी मारेगा।

रमापति—गोरा, अब चलिये। मैं तो मारे भूख-प्यासके मरा जाता हूँ। अब मुझसे नहीं रहा जाता। विशेष कर जब नाइन मुसलमानके लड़केको कुर्प के पास ले जाकर घड़ेमें पानी भर-भरकर उसे नहलाने लगे तब रमापतिके मन में अत्यन्त क्रोध हुआ, और उस घरमें बैठना उसके लिए कठिन हो गया।

चलते समय गोराने नाई से पूछा—इस उपद्रवमें जो तुम अब तक यहाँ टिके हो, सो क्या और कहीं तुम्हारे कुटुम्बी लोग नहीं हैं ?

नाई—मैं बहुत दिनोंसे यहाँ हूँ, इन सबोंके ऊपर मेरी ममता बढ़ गई है, मैं हिन्दू नाई हूँ। मैं खेती नहीं करता, मेरे जोत जमा कुछ नहीं है इसी लिए कोठीके अमले मुझसे कुछ कह नहीं सकते। मुझे उन लोगों से कोई वास्ता नहीं है। आतंक इस गाँवमें एक भोड़ पुरुष नहीं। सभी जहाँ तहाँ भाग गये हैं। अगर मैं भी यहाँसे चला जाऊँगा तो स्त्रियाँ डर से ही मर जायेंगी।

गोराने कहा—अच्छा मैं वहाँसे खा पीकर फिर आऊँगा।

दुःसह भूख-प्यासके समय, रमापति कोठीके साथ दङ्गा-फसादके वर्णनसे गाँवकी प्रजाको अपराधी ठहरा कर उन पर खूब बिगड़ा। ये सब लोग बलवान्‌के विरुद्ध सिर उठाना चाहते हैं; यह मूर्ख मुसलमानोंकी स्पन्द और जड़ता नहीं तो और क्या है? उचित शासनके द्वारा इन लोगों की उद्‌दण्डता दूर करने ही मैं कुशल हूँ। इसमें रमापतिको कुछ भी सन्देह न था। ऐसे कम्बलक अभागोंके ऊपर पुलिसका उपद्रव होता ही रहता है। ये गँवार लोग ही प्रधान दोषी हैं, ये अपने दोषका ही उचित फल पा रहे हैं, उसकी ऐसी ही धारणा थी। वे मालिकके साथ मेल-मिलाप कर लेते, फसाद क्यों खड़ा करने लगे? अब पुलिसके आगे बह वीरता कहाँ गई? वास्तव में रमापतिकी आन्तरिक सद्‌मानुभूति नील-कोठीके साहबके ही साथ थी।

दोपहरकी कड़कड़ाती धूपमें तपी हुई बालूके ऊपरसे चलते-चलते थककर गोरा एक भी बात न बोला। आखिर एक बाग़के भीतरसे जब कुछ दूरी पर कचहरीका मकान देख पड़ा तब गोरा ने रमापतिसे कहा—तुम वहाँ जाकर खाओ-पीओ। मैं उसी नाईके घर जाता हूँ।

रमापति—यह क्यों? क्या आप भोजन नहीं करेंगे? तहसीलदार के यहाँ खा-पीकर जाइयेगा।

गोरा—अभी अपना काम करूँगा। तुम खा-पीकर क्लकत्ते चले जाना। इस अल्लापुर में शायद मुझे कुछ दिन रहना पड़ेगा। तुम्हें यहाँका रहना बरदाश्त न होगा।

रमापति के रोंगटे खड़े हो गये। गोराके सदृश धर्मिष्ठ हिन्दूने इस ग्लेन्डके घरमें रहनेकी बात कैसे मुँह से निकाली, यह सोचकर वह अवाक हो रहा। गोराने क्या खाना पीना छोड़कर उपवास व्रतका संकल्प किया है, वह यही सोचने लगा। किन्तु वह सोचनेका समय न था। एक एक घड़ी उसके लिए एक-एक कल्पके बराबर बीतती जा रही थी। गोराका साथ छोड़कर कलकत्ते जानेके लिए उसको अधिक निहोरा करना न पड़ा। कुछ ही देरमें रमापतिने देखा कि गोरा विस्तृत छाया छोड़कर प्रचण्ड आतप में सुनसान बालुका-मय मार्गसे अकेला ही लौटा जा रहा है।

भूख-प्यासने गोराको भी व्याकुल कर रक्खा था, किन्तु अन्यायी मङ्गलप्रसादका अन्न खाकर जाति बचानी होगी, इस बातको वह जितना ही सोचने लगा उतनी ही यह उसको असह्य होने लगी। उसके मुख और नेत्र लाल हो गये, सिर गर्म हो गया, उसके मनमें विषम विद्रोह उपस्थित हुआ। उसने मनमें कहा, हम लोग भारतवर्षमें पवित्रताका ढोंग रचकर भारी अधर्म कर रहे हैं। एक नया उपद्रव खड़ा करके जो लोग मुसलमानोंको सता रहे हैं, उन्हींके यहाँ खाने-पीनेसे मेरी जाति बचेगी और जो उत्पात सहकर मुसलमानके लड़केकी प्राण-रक्षा कर रहा है और साथ ही समाजकी निन्दा सहनेको भी तैयार हुआ है, उसके घर भोजन करनेसे मेरी जाति जायगी। हा ! ऐसी नासमझी ! जो हो, इस आचार-विचार की भली बुरी बातको पीछे सोचूँगा, किन्तु अभी मुझसे यह न हो सकेगा कि जाति बचानेकी इच्छासे मैं, इस घोर अन्यायीके घर अन्न जल ग्रहण करूँ।

गोराको अकेला लौट आते देख नाई अचम्भेमें आ गया। गोराने आते ही सबके पहले नाईके लोटे को भली भाँति बालूसे मलकर अपने हाथ से कुँ से पानी भरकर पिया और कड़ा, अगर तुम्हारे घरमें कुछ चावल दाल हो तो दो, हम रींघकर खायेंगे। नाईने हुलसकर रसोई का

सब प्रबन्ध कर दिया। गोराने भोजन करके कहा—मैं तुम्हारे यहाँ दो चार दिन रहूँगा।

नार्डने डरते हुए हाथ जोड़कर कहा—आप इस अधमके घर रहें, इससे बढकर मेरा सांभाल्य और क्या हो सकता है। परन्तु एक बात मैं पहले ही आपसे कह रखता हूँ, हम लोगोंके ऊपर पुलिसकी कड़ी दृष्टि है आपके रहने से कोई नया बखेड़ा न खड़ा हो, इसीका डर है।

गोराने कहा—मेरे यहाँ रहनेसे पुलिस कोई उपद्रव करनेका साहस न करेगी और जो करेगी तो मैं तुम लोगों की रक्षा करूँगा।

नार्ड—दुहाई बाबू की, अगर आप हम लोगोंकी रक्षा करनेकी चेष्टा करेंगे तो हम लोग और भी विपत्ति में फँसेंगे। वे साले यही समझेंगे कि मैंने ही प्रपञ्च करके आपको बुलाकर उनके विरुद्ध गवाह खड़ा किया है। इतने दिनसे किसी तरह यहाँ टिका तो हूँ, हाँ अब टिक भी न सकूँगा। अगर मैं अकेला यहाँसे चला जाऊँ तो यह सारी बस्ती बरबाद हो जायगी।

गोरा अब तक शहरमें रहकर ही आदमी हुआ है। नार्ड क्यों इतना डर रहा है, यह समझना उसके लिए कठिन होगया। वह जानता था कि न्यायके ऊपर दृढ़ भावसे आरुढ़ रहने पर अन्यायका प्रबाल्य नहीं रह सकता। विपद्रष्ट गाँवको असहाय अवस्थामें छोड़कर चले जानेमें उसकी बुद्धि किसी तरह सम्मत न हुई। तब नार्डने उसके पैरपकड़ कर कहा—देखिये आप ब्राह्मण हैं, मेरे पूर्वजन्म के पुण्य से आप मेरे अतिथि हुये हैं, आप से जानेके लिये कहता हूँ यह मुझसे बड़ा अपराध होता है। किन्तु हमारे ऊपर जो आपकी दया है वह जानकर ही हमने ऐसा कहा है। आप मेरे घरमें रहकर यदि पुलिसके अत्याचारमें कोई रोक टोक करेंगे तो समझिये आप हमें बड़ी विपत्तिमें डालेंगे।

नार्डके इस भयको अमूलक और कायरता समझकर गोरा कुछ रुष्ट हो कर तीसरे पहर दिनके ही उसका घर छोड़कर चलता हुआ। इस ग्लेन्डा-चारीके घर ख़ाया पीया है यह सोचकर गोराके मनमें कुछ अश्रद्धा भी

उत्पन्न होने लगी। थके हुये शरीर और उद्विग्न मनसे वह साँझको नील कोठी की कचहरीमें जा पहुँचा। रमापति भोजन करके तुरन्त कलकत्ते को चल दिया। इस कारण वह वहाँ न दीख पड़ा। मङ्गलप्रसाद गोराका तेजपूर्ण मुख देखकर उसका विशेष आतिथ्य स्वीकार करने लगा। गोराने एकदम विगड़कर कहा—मैं आपके यहाँ जल भी ग्रहण न करूँगा।

मङ्गलप्रसादने विस्मित होकर इसका कारण पूछा। उत्तरमें गोराने उसे अन्ध्यायी, अत्याचारी कहकर कटु भाषणका प्रयोग किया और आसन पर न बैठ खड़ा रहा। दरोगा चौकी पर बैठकर मसनदके सहारे तम्बाकू पी रहा था। वह उठ बैठा और ज़रा खूबे स्वरमें बोला—तुम कौन हो? तुम्हारा घर कहाँ है?

गोराने इसका कुछ उत्तर न देकर कहा—मालूम होता है तुम दरोगा हो! तुमने अज्ञापुर में जो जो उपद्रव किये हैं उनकी सब खबरें लिये आ रहा हूँ। अगर अब भी सँभलकर न चलोगे तो—

दरोगा—तो क्या तुम फ्रांसीसो दोगे? तुम तो बड़े शानदार आदमी मालूम होते हो। पहले तो जान पड़ा था, शायद तुम कुछ माँगने की इच्छासे आये हो, किन्तु अब तो कुछ और ही देख पड़ता है। देखते हैं, आँखें रंग गई हैं त्वोरी चढ़ गई है। शायद दरोगासे कभी भेंट नहीं हुई है?

मङ्गलने दरोगा का हाथ पकड़कर कहा—जाने दीजिए, अपने घर आये किसी सज्जनका अपमान करना ठीक नहीं।

दरोगाने बिगड़ कर कहा—कैसा सज्जन! इसने जो मनमें आया है, आपसे कहा है। क्या वह आपका अपमान नहीं हुआ?

मङ्गल—आपका कहना सही है। किन्तु निरर्थक क्रोध करनेसे क्या होगा? मैं निलहे साहबकी तहसीलदारी करके खाता हूँ; उसका काम करता हूँ। उसके अतिरिक्त और कामसे मुझे क्या वास्ता जो उसमें कुछ बोलूँ। भाई! आप क्रोध न करें, आप पुलिस मोहकमेके दरोगा हैं, आपको यदि यमदूत कहें तो भी अनुचित न होगा। बाघ आदमीको मारकर खाता है, यह

सब लोग जानते हैं । बाघ आदमीको खाय चाहे न खाय, मगर वह बद नाम ज़रूर है । इसके लिए आप क्या कीजिएगा ।

बिना प्रयोजन मङ्गलप्रसादको किसी पर नाराज होते आज तक किसी ने नहीं देखा है । किस आदमीसे कब क्या काम चल सकता है या रुष्ट होने पर किसके द्वारा क्या अनिष्ट हो सकता है, यह नहीं कहा जा सकता । किसीका अनिष्ट या अपमान वह खूब सोच-विचार कर करता था । क्रोध करके दूसरेको सतानेकी हत्ताको वह सहसा खर्च नहीं करता था ।

दरोगाने तब गोरासे कहा—देखो बाबू, तुम पूरे देहाती मालूम होते हो । हम लोग यहाँ सरकारी काम करने आये हैं । इसमें अगर तुम कुछ बोलोगे या किसी तरहकी दस्तन्दाजी करोगे तो मुश्किलमें पड़ोगे ।

गोराने इसका कुछ उत्तर न देकर बाहर निकल आया । मङ्गल ऋतु उसके पीछे हो लिया और उसके पास जाकर बोला—महाशय ! आपने जो कहा है सो ठीक है—हम लोगोंका यह कसईका काम है—आर इस बेईमान दरोगाके साथ एक बिछौने पर बैठनेमें भी पाप है । उसके पजेमें पड़कर मैंने जितने दुष्कर्म किये हैं उनको ज़बान पर भी नहीं ला सकता । अब अधिक दिन नहीं । दो तोन वर्ष किसी तरह और इस काममें रह लड़की के ब्याह कर देनेका खर्च जमा कर लेने पर मैं अपनी छो-सहित काशीवास करूँगा । मुझे भी यह सब अच्छा नहीं लगता । किसी समय मनमें इतना विषाद होता है कि गलेमें फाँसी लगाकर मर जाऊँ; जो हो, आज रातको आप जायँगे कहाँ ? यहीं खा-पीकर सो रहिए । उस पापी दारोगाकी छाया तक आपके ऊपर न पड़ने दूँगा । आपके खाने-पीनेका सब प्रबन्ध मैं अलग कर दूँगा ।

गोराको साधारण लोगोंकी अपेक्षा भूख अधिक लगती थी । आज सबेरे उसने अच्छी तरह नहीं खाया । किन्तु मारे क्रोधके उसका सारा शरीर जल रहा था । वह किसी भीति यहाँ रहनेको राज़ी न हुआ । उसने यह कहकर चलनेको तैयार हुआ कि मुझे एक बहुत ज़रूरी काम है ।

बङ्गल—अच्छा तो, ज़रा ठहर जाइए, एक लाजटेन साथ कर देता हूँ ।

गोरा इसका कोई उत्तर न देकर तीरकी तरह निकल पड़ा ।

मङ्गलप्रसाद ने घर लौटकर दारोगा से कहा—मालूम होता है, वह आदमी सदर गया है । इसी वक्त एक आदमी को मैजिस्ट्रेटके पास भेज दीजिये ।

दारोगा ने कहा—क्यों, क्या करना होगा ?

मङ्गलने कहा—और कुछ नहीं, वह जाकर डिविज़नल आफिसरको जता आवे कि एक भला आदमी वही से आवर गबाइयो विगाड़ने की चेष्टा में घूम रहा है ।

मैजिस्ट्रेट ब्रैडला साहब सन्ध्या समय नदीके किनारेकी सड़क पर पैदल घूम रहे हैं, साथ में हारान बाबू हैं। किन्तु उनसे कुछ दूर जोड़ी पर सवार हो उनकी मेम परेश बाबूकी लड़कियोंको साथ ले हवा खानेको निकली है।

ब्रैडला साहब कभी कभी गार्डनपार्टीमें अच्छे-अच्छे बङ्गालियोंको न्योता देकर अपने यहाँ बुलाते थे। जिला स्कूल में इनाम बांटने के लिए वही सभापति का आसन ग्रहण करते थे। कोई रईस यदि अपने बेटी-बेटे की शादी में उन्हें बुलाता तो वे उसका निमन्त्रण स्वीकार करते थे। उनकी कचहरीके सरकारी वकीलके घर गत दशहरेके उत्सव में जो यात्रा हुई थी, उसमें दो लड़कोंने मिश्री और मेहनरानी का पार्ट लिया था और परस्पर कुछ बातें की थी। उन दोनों का अभिनय मैजिस्ट्रेट साहब को बहुत अच्छा लगा। उन्होंने इस अभिनय पर विशेष हर्ष प्रकट किया था। और उनके अनुरोध से उस अभिनय का कुछ अंश दुबारा दिखलाया गया था।

उनकी स्त्री पादरीकी बेटी थी। उनके यहाँ कभी कभी पादरियोंकी लड़कियाँ आकर चाय पानी पीती थी। शहरके भीतर उसने एक कन्या पाठशाला स्थापितकी थी और उस स्कूलमें पढ़नेवाली लड़कियोंका अभाव न होनेके लिए वह यथेष्ट चेष्टा करती थी। परेश बाबूके घर की लड़कियों में विद्या की चर्चा देख वह उन्हें बराबर उसाह देती थी; दूर रहकर भी कभी कभी उनके पास पत्र भेजती और बड़े दिनकी खुशामें उन्हें धर्म ग्रन्थ उपहार देती थी।

प्रदर्शनीका दिन आ गया। मेलेका प्रबन्ध बहुत ठीक है। दूर-दूरके लोग कोई सौदा बेचने कोई खरीदने और कोई तमाशा देखनेको आये

हैं। इस उपलक्ष्यमें हारान बाबू सुधीर और विनयके साथ वरदासुंदरी और उसकी लड़कियाँ भी आई हैं। उनको डाक बंगलेमें ठहराया गया है। परेश बाबू इन सब बखेड़ोंमें पड़ना नहीं चाहते, इसलिए वे अकेले कलत्तेमें ही रह गये। सुचरिताने उनकी सेवा टहलके लिए उनके पास रहनेकी बहुत चेष्टाकी थी किन्तु परेश बाबूने मैजिस्ट्रेटके निमन्त्रणमें कर्तव्य पालनके लिए सुचरिता को विशेष उपदेश देकर भेज दिया। परसों कमिश्नर साहब और लाट साहबके आमने मैजिस्ट्रेट साहब के बंगले पर सन्ध्या समय परेश बाबूकी लड़कियों द्वारा अभिनय होनेकी बात स्थिर हुई है। उसे देखनेके लिए मैजिस्ट्रेटके अनेक इष्ट-मित्र जहाँ-तहाँसे बुलाये गये हैं। कितने ही चुने-चुने हिन्दू वकील, बारिस्टर और जमींदार आदिको भी इस अभिनयमें बुलानेका आयोजन हो रहा है। यह भी सुना जाता है कि उन लोगोंके लिए बागमें एक तम्बूके भीतर ब्राह्मण रसोइया द्वारा जल-पानकी सामग्री तैयार करानेकी व्यवस्था होगी।

हारान बाबूने कुछ ही समयमें सार-गर्भित बातचीतसे मैजिस्ट्रेटको विशेष रूपसे सन्तुष्ट कर लिया था। ईसा-मसीहकी धर्म संबंधी पुस्तकों में हारान बाबूका असाधारण पाण्डित्य देखकर साहब आश्चर्यमें डूब गये थे और ईसाई धर्मको ग्रहण करनेमें वह अब तक क्यों विलम्ब कर रहा है यह भी मैजिस्ट्रेटने उससे पूछा था।

आज साँझको नदी तटके मार्गमें हारान बाबूके साथ मैजिस्ट्रेट ब्राह्मणसमाजकी कार्यप्रणाली और हिन्दू-समाजके संस्कार-साधनके संबंधमें बड़ी गम्भीरतासे आलोचना कर रहे थे। इसी समय गोरा “गुड ईविनिंग सर” कहकर उनके सामने आ खड़ा हुआ।

कल उसने मैजिस्ट्रेट साहबसे मिलनेकी चेष्टा करके देखा कि साहबके सदर फाटकके भीतर पैर रखने के लिए दरवान को कुछ भेंट देनी होती है। इस प्रकार जुमानेके साथ-साथ अपमान स्वीकार करनेमें राजी न होकर आज वह साहबके हवा खानेके समय उनसे भेंट करने आया है। इस

साक्षात्कारके समय हारान बाबू और गोरा, इन दोनोंमें पारस्परिक परिचयका कोई लक्षण न पाया गया ।

गोरा को देखकर साहब कुछ विस्मितसे हो गये । ऐसा लम्बा जवान, हटा-कटा बदन, इसके पहले कभी वङ्ग देश में देखा है या नहीं, यह उनके स्मरणमें न आया । इसके शरीरकी कान्ति भी साधारण बङ्गालीकी सी न थी । यह एक खाकी रङ्ग का कुरता पहिने हुए था, धोती मोटी और कुछ मैली थी, हाथमें एक बाँस का लट्ट था । चादर को सिर-पर पगड़ीकी तरह लपेटे हुए था ।

गोराने मैजिस्ट्रेट से कहा—मैं अल्लापुरसे आ रहा हूँ ।

मैजिस्ट्रेटने एक विस्मयसूचक भाव प्रदर्शित किया । अल्लापुरकी वर्तमान कार्रवाईमें एक बाहरी आदमी बाधा देने आया है, यह खबर उनको कलही मिल चुकी थी । तो क्या यह वही आदमी है ? गोराको सिरसे पैर तक उन्होंने एक बार कड़ी दृष्टिसे देखा और पूछा—तुम कौन जात हो ?

गोरा—मैं बङ्गाली ब्राह्मण हूँ ।

साहबने कहा—ओ ! क्या समाचार-पत्रके साथ तुम्हारा कोई सम्बन्ध है ?

गोरा—जी नहीं ।

मैजिस्ट्रेट—तब तुम अल्लापुर क्या करने गये थे ?

गोरा—धूमते-फिरते वहाँ जा पहुँचा था । पुलिस का अत्याचार और गाँवकी दुर्दशा देखकर तथा वहाँ विशेष उपद्रवकी संभावना जानकर गतिकारके लिए मैं आपके पास आया हूँ ।

मैजिस्ट्रेट—अल्लापुरके लोग बड़े बदमाश हैं, यह तुम नहीं जानते ?

गोरा—वे बदमाश नहीं हैं, वे निडर हैं और स्वतन्त्र स्वभाव के हैं । वे लोग अन्याय और अत्याचार को चुपचाप नहीं सह सकते ।

मैजिस्ट्रेट खफा हो उठे । उन्होंने मनमें समझा कि नये बङ्गाली

इतिहासकी किताबें पढ़कर नई बोलो बोलने लगे हैं। “तुम वहाँकी हालतसे बिल्कुल वाकिफ नही हो,” यह कहकर मैजिस्ट्रेटने गोरा को खूब धुड़की दी।

गोराने भी खूब कड़ककर कहा—आप वहाँकी हालत मेरी अपेक्षा बहुत कम जनते हैं।

मैजिस्ट्रेट—मैं तुमको सावधान किये देता हूँ, अगर तुम अज्ञापुरके के मामले में किसी तरह का हस्तक्षेप करोगे तो याद रखो, तुम विद्रोही समझे जाओगे और तुमको इसका उचित फल मिलेगा।

गोरा—जब आपने अत्याचारको शान्त न करने ही का मनमें सङ्कल्प किया है और गाँवके लोगोंके विरुद्ध जब आपकी ऐसी धारणा दृढ़ बँध गई है तब मैं कर ही क्या सकता हूँ। हाँ, इतना मैं ज़रूर करूँगा कि उस गाँवके लोगोंको एलिस के विरुद्ध खड़े होने के लिये उत्साहित करूँगा।

मैजिस्ट्रेट चलते चलते रुक गये और पीछे की ओर घूमकर गोराको ढपट कर बोले—वया इतनी बड़ी शेखी।

गोरा कुछ जवाब न देकर धीरे-धीरे वहाँसे चला गया। मैजिस्ट्रेटने हारान बाबूसे कहा—क्यों साहब, आपके देशवासियोंमें यह कैसा लक्षण दिखाई दे रहा है ?

हारान बाबूने कहा—हुजूर ! लिखना पढ़ना कुछ ठीक होता नहीं, विशेषकर देशमें आध्यात्मिक और नैतिक तथा चरित्र सुधार सम्बन्धी शिक्षा न होने के कारण ही ऐसी घटना होती है। अँगरेज़ी विद्या का जो श्रेष्ठ अंश है वह ग्रहण करने का इन्हें सामर्थ्य नहीं। भारतवर्ष में अँगरेज़ी शासन को—जो ईश्वरकी कृपा का फल है—ये आकृतज्ञ अब भी स्वीकार करना नहीं जानते। इसका कारण एक मात्र यही जान पड़ता है कि ये लोग तोने की तरह केवल पाठ को कंठ कर लेते हैं किन्तु धर्म का ज्ञान बिल्कुल नहीं है।

मैजिस्ट्रेट—जब तक ये लोग ईसाईमतको न मानेंगे तब तक भारत में यह धर्मज्ञान कभी पूर्णता लाभ न करेगा ।

हारान बाबूने कहा—‘ यह आपका कहना एक प्रकार से सच है ।’ यह कहकर ईसाको स्वीकार करनेके सम्बन्धमें किसी ईसाई के साथ हारान बाबू का कहाँ मतभेद था और कहाँ वह,सम्मत था—इसीकी सूक्ष्म भावसे चर्चा उसने मैजिस्ट्रेटसे की और उनका ध्यान इस प्रकार अपनी ओर खींच लिया था कि जब मंम साहिबा ने परेश बाबू की लड़कियोंको गाड़ी पर बिठा डाक बंगलेमें पहुँचा दिया और लाँटती बार रास्तेमें अपने स्वामीसे कहा, “घर लौट चलिये,” तब वे चौक उठे और घड़ी देखकर कहा—आठ बजकर बीस मिनट हो गये ! गाड़ी पर चढ़ते समय मैजिस्ट्रेटने हारानबाबू से हाथ मिलाकर कहा—आपके साथ बातचीत करके मेरी आजकी सन्ध्या खूब मज़े में कटी है ।

हारान बाबूने डाक बंगलेसे पहुँचकर वे सब बातें सबको सुनाईं जो कि आज मैजिस्ट्रेट से हुई थीं । परन्तु उसने गोराके आने का उल्लेख नहीं किया ।

किसी प्रकारके अपराध का विचार न करके केवल गाँवका शासन अथवा दमन करने के लिये सैंतालीस आदमी गिरफ़ार करके हवालात में डाल दिये गये थे ।

मैजिस्ट्रेटके साथ मुलाकात करने के बाद गोरा वकीलको खोजमें निकला । किसी आदमीसे उसे खबर मिली कि सात कौड़ी हालदार यहाँके एक अच्छे वकील हैं । सात कौड़ीके धर पहुंचते ही वह कह उठा—वाह, गोरा— ! तुम यहाँ कहाँ !

गोराने जो समझा था, वही ठीक निकला—सात कौड़ी गोराके सहपाठियोंमें से है । गोराने कहा—चर-घोषपुरके आसामियों को ज़मानत पर छुड़ा कर उनके मुकद्दमे की पैरवी करनी होगी ।

सातकौड़ीने कहा—ज़मानत कौन करेगा ?

गोराने कहा—मैं ।

सातकौड़ीने कहा—तुम अकेले सैंतालीस आदमियोंकी ज़मानत कर सको, इतनी जायदाद तुम्हारे कहाँ है ?

गोराने कहा—अगर मुस्तार लोग मिलकर जमानत करें, तो उसकी फीस मैं दूंगा ।

सात०—मगर उसमें रुपया थोड़े नहीं लगेंगे ।

दूसरे दिन मैजिस्ट्रेटके इजलासमें जमानत पर आसामियोंको छोड़नेकी दरखास्त दी गई । मैजिस्ट्रेट ने कल वाले उस मलिन वस्त्र धारण किये पगड़ी पहने वीर-मूर्ति की ओर एक बार नजर डाली, और दरखास्त नामंजूर करदी । चांदह सालके लड़केसे लेकर अस्सी बरसके बूढ़े तक हवालातमें सड़ने लगे ।

गोराने इन लोगोंकी ओरसे मुकद्दमा लड़नेके लिए सातकौड़ीसे

अनुरोध किया। सातकौड़ीने कहा—गवाह कहाँ मिलेंगे ? जो लोग गवाह हो सकते थे, वे सब तो आसामी बना लिये गये हैं ! इसके अलावा इस साहब के सारने के मामलेकी तहक़ीकातके उपद्रवसे इस तरफ़के लोग हैरान हो उठे हैं। मेजिस्ट्रेट की यह धारणा पकी हो गई है कि इस मामले में भीतर-ही-भीतर भले आदमियों की साजिश है। शायद मुझ पर भी संदेह करता हो, कह नहीं सकता। अंग्रेज़ों अख़बार बराबर लिख रहे हैं कि 'देशी आदमियों की हिम्मत और हौसला अगर इस तरह बढ़ता रहा, तो अख़्तियत असहाय अंग्रेज़ लोग अब मुक़त्तिसलमें रहने ही न पावेंगे।' इधर इसी बीचमें यह हाल हो गया है कि देशके आदमी अपने ही गांव देशमें रह नहीं सकते। अत्याचार हो रहा है, यह मैं जानता हूँ, किन्तु क्या किया जाय, कुछ करनेका उपाय नहीं है।

गोराने गरज कर कहा—क्यों, उपाय क्यों नहीं है ?

सातकौड़ीने हँस कर कहा—देखता हूँ, तुम स्कूलमें जैसे थे, ठीक जैसे ही अभी तक बने हुए हो। उपाय नहीं है, इसके माने यह है कि हम लोगोंके घरमें आरतें और लड़के बाले हैं। रोज़ कमाई किये बिना सभी आदमियोंको भूखे रहना पड़े। पराई बला अपने सिर पर लेकर मरनेके लिए राजी होने वाले आदमी संसारमें अधिक नहीं हैं, खास कर उस देशमें, जहाँ परिवार पदार्थ निहायत छोटी मोटी चीज़ नहीं है। जिनके ऊपर दस आदमियोंका बोझ है, वे उन आश्रित आदमियोंको छोड़ कर अन्य दस आदमियों की ओर ताकनेका अवकाश ही नहीं पाते।

गोराने कहा—तो तुम इन लोगोंके लिए कुछ भी नहीं करोगे ? हाईकोर्टमें अपील करके अगर...

सातकौड़ीने अधीर होकर कहा—अरे तुम यह नहीं देखते कि अंग्रेज़को मारा गया है ! हर एक अंग्रेज़ ही यहाँ राजा है—एक छोटेसे अंगरेज़ों मारना भी एक छोटा मोटा राज बिद्रोह माना जाता है। जिसमें कुछ लाभ नहीं होनेका, जो अवश्य ही निष्फल

होगा, उसके लिए व्यर्थ चेष्टा करके मैजिस्ट्रेट के क्रोधकी आगमें पड़नेका काम मेरे द्वारा नहीं होगा ।

कलकत्ते जाकर वहाँके किसी वकीलकी सहायतासे कुछ सुभीता होता है कि नहीं, यह देखनेके लिए दूसरे दिन साढ़े दस बजेकी ट्रेनसे रवाना होनेके इरादेसे गोराने यात्राकी । किन्तु बीच हीमें बाधा पड़ गई ।

यहाँके मेलेके उपलक्षमें कलकत्तेके छात्रोंकी एक 'टीम' (दल) से यहाँ के स्थानीय छात्रोंकी एक 'टीम' की क्रिकेट-मैच होने वाला था । अभ्यासके लिए कलकत्तेके दलके छात्र आपसमें क्रिकेट खेल रहे थे । क्रिकेटका गेंद पड़ जानेसे एक लड़केके पैरमें गहरी चोट आगई । मैदानके किनारे एक बड़ा सा तालाब था । चोट खाये हुए लड़केको उसके साथी दो लड़के लादकर उसी तालाबके किनारे ले गये, और चादर फाड़ कर पानीमें भिगो कर उस लड़केके पैरमें पट्टी बाँधने लगे । इसी समय अकस्मात् एक सिपाही वहाँ आगया । उसने आते ही एक दम एक लड़केकी गर्दन पकड़ कर उसे जोरसे धक्का दिया । इतना ही नहीं, गन्दी गन्दी गालियाँ भी दी । तालाब पीनेके पानीके लिए सुरक्षित है उसके भीतर उतरना मना है, यह कलकत्तेके दलके छात्रोंको मालूम नहीं और अगर मालूम भी होता, तो अकस्मात् एक मामूली सिपाहीके हाँथों ऐसा अपमान सहनेका अभ्यास उन्हें न था । शरीरमें शक्ति भी थी । इसीसे उन्होंने उस अपमान का बदला चुकाना शुरू कर दिया । लड़कोंके हाथसे सिपाहीके पिटनेका दृश्य देखकर चार-पाँच और सिपाही भी दौड़कर आगये । ठीक इसी समय गोरा भी उधरसे निकला । वे लड़के गोराको अच्छी तरह जानते-पहचानते थे—गोरा बहुत दिन तक उनके साथ क्रिकेट खेला है । गोराने जब देखा, सिपाही लड़कोंको मारते हुए पकड़े लिए जाते हैं, तब उससे सहा न गया । उसने कहा—घबरादार मारना नहीं । सिपाहियोंने जैसे ही गोराके लिए गाली जवानसे निकाली, वैसे ही गोराने उनपर धूलसे लातकी बौछार करके ऐसा एक काण्ड कर डाला कि रास्तेमें तमाशाइयोंकी भीड़ जमा हो गई । इधर देखते ही देखते छात्रोंका पूरा जत्था आकर उपस्थित हो गया ।

फिर क्या था, गोरामें उन्साह और आज्ञा पाकर उन्होंने पुलिसवालों पर हमला किया, देखते-ही-देखते सिपाहियोंकी टोली भाग खड़ी हुई। तमाशाई राद्गोर लोगोंको बड़ा मज़ा आया, किन्तु यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं कि गोरामें लिए यह घटना कोरा तमाशा ही नहीं हुई।

तीन चार बजे होंगे — ढाक बंगलेमें विनय, हारान बाबू और लड़कियाँ रिहर्सलमें लगे हुए थे, इसी समय विनयके परिचित दो छात्रोंने आकर खबर दी कि गोरामें और अन्य कई छात्रोंको पुलिसने गिरफ्तार करके हवालातमें बन्द कर रक्खा है; कल मैजिस्ट्रेटके यहाँ पहले इजलासमें ही उनका विचार होगा।

गोरा हवालातमें ' यह खबर सुन कर हारान बाबूके सिवा और सभी एक दम चौंक उठे। विनय उसी दम दौड़ कर पहले अपने सहपाठी पूर्वोक्त सातकौड़ी तालदार वकील के पास गया, और उसे सब समाचार सुना कर साथ लेकर हवालातमें पहुँचा।

सातकौड़ीने गोरामें औरसे वकील होकर इसी दम जमानत पर उसको छुड़ानेका प्रस्ताव किया। गोरामें कहा — ना, मैं वकील भी नहीं करूँगा, और मुझे जमानत पर छुड़ानेकी चेष्टा भी न करनी होगी।

यह क्या बात है ! सातकौड़ीने विनयकी ओर फिर कर कहा — देखते हो ! कौन कहेगा कि गोरा स्कूलसे निकल चुका है ! उसकी बुद्धि ठीक उसी तरहकी बनी हुई है, जैसी कि स्कूलमें पढ़नेके समय थी।

गोरामें कहा — देवसंयोगसे मेरे रुपये हैं, इष्ट मित्र हैं, इसीसे मैं हाजत और हथकड़ीसे छुटकारा पा सकता हूँ; किन्तु मैं यह नहीं चाहता। हम लोग अपने देशकी धर्म-नीतिके अनुसार यही जानते हैं कि सुविचार और न्याय करनेकी गरज राजाको होनी चाहिए — प्रजाके प्रति अविचार होनेसे राजा को ही अधर्मका भागी होना पड़ता है। किन्तु इस सत्तनतमें अगर वकीलकी फ्रीसका प्रबन्ध न कर पानेसे प्रजा हवालातमें सड़ती और जेलमें मरती है, राजाके सिर पर मौजूद रहते न्याय विचारको रुपए देकर

खरीदने में सर्वस्व स्वाहा कर देना पड़ता है, तो ऐसे विचार के लिए मैं दमड़ी भी खर्च करनेको राजी नहीं हूँ।

सातकौड़ीने कहा—काजियोंके अमलमें तो घूस देने में ही सिर तक बिक जाता था ?

गोराने कहा—घूस देना तो राजाका विधान नहीं था। जो काज़ी बुरा होता था, वह घूस लेता था। यह बात इस अमलदारीमें भी है। किन्तु इस समय राज-द्वार में विचारके लिए खड़े होते ही बादी-प्रतिवादी, दोषी-निर्दोष, सभी प्रजा को आँसू बहाने ही पड़ेंगे। जो पक्ष धनहीन है, उसके लिए 'विचार' की लड़ाईमें हार और जीत दोनों ही सर्वनाशके समान हैं। फिर जहाँ राजा स्वयं वादी है, और प्रतिवादी मेरे समान संपन्न आदमी है, वहीं वकील बैरिस्टरका प्रबन्ध है। मैं अगर वकील बैरिस्टरको फ़ीस देकर खड़ा कर सका, तब तो अच्छा ही है, नहीं तो भाग्य में जो लिखा हो ! विचारमें अगर वकीलकी सहायताका प्रयोजन नहीं है, तो फिर सरकारी वकील क्यों हैं ? और अगर प्रयोजन है, तो फिर गवर्नमेंटके विरुद्ध पक्षको क्यों अपना वकील आप खड़ा करनेके लिए बाध्य होना होगा ? यह क्या प्रजाके साथ शत्रुता है ? यह किस तरहका राज धर्म है ?

सातकौड़ी ने कहा—भाई, ख़फ़ा क्यों होते हो ? सभ्यता सस्ती चीज़ नहीं है। सुक्ष्म विचार करने के लिए सुक्ष्म आईन बनाना होता है, और सुक्ष्म आईन बनाने पर क़ानूनी पेशा लोगोंके बिना काम नहीं चलता। पेशा या धंधा चलानेमें क्रय-विक्रयका भाव आ ही जाता है। अतएव सभ्यता की अदालतमें आप ही विचार (इन्साफ़) के क्रय-विक्रय की बाज़ार अवश्य हो उठेगी। जिसके पास रुपए नहीं हैं, उसके ठगे जाने की संभावना अवश्य यही रहेगी। अच्छा तुम अगर राजा होते तो क्या करते बतलाओ तो सही ?

गोराने कहा—मैं तब अगर ऐसा क़ानून बनाता कि हज़ार डेढ़ हज़ार रुपएकी तनख़्वाह पाने वाले विचारककी बुद्धिसे भी उसके रहस्य

का भेद होना संभव न होता, तो अभागो वादी और प्रतिवादी दोनोंकी ओर सरकारी खर्चसे ही वकील खड़े कर देता। विचार अच्छा और ठीक होनेका खर्च प्रजाके सिरपर लाद कर अपने सुविचारके गौरवका बखान मुराज-पठान शासकोंके ऊपर गालियों की बौछार कभी न करता।

सात-झोड़ीने कहा—अच्छी बात है, जब कि वह शुभ दिन अभी नहीं आया—तुम राजा नहीं हुए हो—और जब फ़िलहाल तुम सभ्य राजाकी अदालतके आसामी हो, तब तुमको या तो गॉठके पैसं खर्च करने पड़ेंगे, और नहीं तो वकील मित्रकी शरणमें जाना होगा। तीसरी गति या उपाय और कोई नहीं है।

गोराने ज़िद करके कहा—कोई चेष्टा न करके जो गति हो सकती है, वही गति मेरी हो। इस राज्यमें संपूर्ण रूपसे निरुपाय मनुष्यकी जो गति है, वही गति मेरी भी है।

विनय अनेक अनुनय-विनय करके हार गया, लेकिन गोराने उस पर ध्यान ही नहीं दिया। उसने विनयसे पूछा—तुम अकस्मात् यहाँ कैसे आगये ?

विनयका मुख कुछ लाल हो उठा। गोरा अगर आज हवालातमें न होता, तो शायद विनय कुछ बिद्रोहके स्वरमें ही अपनी यहां उपस्थिति का कारण कह देता। किन्तु आज गोराने उक्त प्रश्नका स्पष्ट उत्तर उसके मुँहसे न निकल सका। विनयने कहा—मेरी बात पीछे होगी, इस समय तुम्हारी।

गोराने कहा—मैं तो राजाका अतिथि हूँ। मेरे लिये राजाको खुद चिन्ता है, तुम लोगोंमेंसे किसीको कुछ सोचना न होगा।

विनय जानता था, गोराने उसके संकल्पसे डिगाना संभव नहीं। अतएव वकील करनेकी चेष्टा छोड़ देनी पड़ी। विनयने कहा—मैं जानता हूँ, तुम तो यहाँ कुछ खा पी नहीं सकोगे। बाहरसे कुछ खानेके लिए भेजनेका प्रबन्ध कर दूँ ?

गोराने अधीर होकर कहा—विनय, क्यों तुम वृथा चेष्टा करते हो।

बाहरसे मैं कुछ नहीं चाहता । हवालातमें सबको जो नसीब होता है, उससे अधिक कुछ भी मैं नहीं चाहता ।

विनय व्यथित चित्तसे डाकबंगलेमें लौट आया । रास्तेकी ओर जो एक सोनेकी कोठरी थी, उसीमें दरवाजा बन्द किये और खिड़की खोले बैठी हुई सुचरिता विनयके लौटनेकी राह देख रही थी । वह किसी तरह और सबका संग और बातचीत सहन करनेमें असमर्थ हो रही थी ।

सुचरिताने जब देखा कि विनय चिन्तित उदास मुख लिये डाक-बंगलेका ओर आ रहा है, तब आशंकाके मारे उसके हृदयमें हलचल सी मच गई । बहुत कोशिशसे अपनेको शान्त करके एक किताब हाथमें लेकर सुचरिता सबके पास आकर बैठ गई । ललिता सिलाईका काम पसंद नहीं करती, किन्तु आज वह भी चुपचाप एक कोनेमें बैठी सुई चला रही थी । लाइए सुधीरके साथ खेल खेल रही थी; लीला दर्शक रूपसे बैठी थी । हारान बाबू वरदासुन्दरीके साथ दूसरे दिन होने वाले उत्सव की चर्चा और आलोचना कर रहे थे ।

विनय ने आकर आज प्रातःकाल पुलिसके द्वारा गोराके भगड़े का सब हाल ब्योरेवार कह सुनाया । सुचरिता सन्नाटे में आकर बैठी रही । ललिताके हाथसे सिलाई का काम गिर गया और चेहरा लाल हो उठा ।

वरदासुन्दरीने कहा—आप कुछ चिन्ता न करिये विनय बाबू आज शाम को मैं खुद मैजिस्ट्रेट साहब की मेमसे गोरा बाबू के लिये अनुरोध करूंगी ।

विनयने कहा—ना, ना, आप यह न करें । गोरा अगर सुन पावेगा तो वह इस जीवन भरमें मुझे क्षमा न करेगा ।

सुधीरने कहा—उनके डिफेन्स (बचाव) के लिये तो कुछ बन्दोबस्त करना होगा । जमानत देकर छुड़ाने की चेष्टा और वकील खड़ा करनेके सम्बन्ध में गोराने जो जो आपत्ति की थी सो सब विनयने कह सुनाया । सुनकर हारान बाबूने असहिष्णु होकर कहा—यह सब ज्यादाती है !

हारान बाबू के ऊपर ललिता के मनका भाव चाहे जो हो, वह आज तक उन्हें मानती आ रही है, उनका अद्वर करती रही हैं—कभी उसने उनसे बहस नहीं की। आज यह उनकी उक्ति सुनकर उससे नहीं रहा गया वह तीव्र भाव से सिर हिलाकर कह उठी—कुछ भी ज्यादाती नहीं है—गोरा बाबू जो कहते हैं सो ठीक ही करते हैं। मैजिस्ट्रेट हम पर अन्या-चार करेगा, और हम आप अपनी रक्षा करेंगे ! उनको लंबी तरखवाह देने के लिये हमें टैक्स देना होगा और उन्हीं के दमन के हाथ से परित्राण पाने के लिये अपने बचाव के लिये—हमें अपनी ही गाँठ से वकील की फीस भी देनी होगी ! ऐसा इंसान पाने की अपेक्षा जेल जाना ही भला है !

ललिता को हारान बाबू ने ज़रा सी देखा है—उन्होंने किसी दिन इसकी कल्पना भी नहीं की कि ललिता की भी कोई स्वतंत्र सम्मति है, या हो सकती है। उन्हीं ललिता के मुख की तीव्र भाषा सुनकर वह आश्चर्य से अवाक रह गये। भर्त्सना के स्वर में उन्होंने ललिता से कहा—तुम इन सब बातों के बारे में क्या समझती हो ? जो लोग कुछ थोड़ी सी किताबें रटकर परीक्षा पास कर, अभी कालेज से निकल कर आये हैं, जिनका कोई धर्म नहीं है—कोई धारणा नहीं है, उनके मुख से दायित्व हीन उन्मत्त-प्रलाप सुनकर तुम लोगों का सिर फिर जाता है !

इतना कहकर हारान बाबू ने कल शाम को गोरा से मैजिस्ट्रेट की मुलाकात और मैजिस्ट्रेट के साथ अपनी बात चीत का विवरण उन्होंने कह सुनाया। चरघोष पुर का हाल विनय को मालूम न था ; सब सुनकर वह शंकित हो उठा। उसने समझ लिया कि मैजिस्ट्रेट गोरा को सहज में चमा या रिहा नहीं करेगा।

हारान ने जिस मतलब से वह हाल कहा, वह बिल्कुल व्यर्थ हो गया। वह गोरा के साथ अपनी मुलाकात होने के बारे में अब तक एक दम चुप थे, उनके भीतर जो छुद्रता थी, उसने सुचरिता को चोट पहुँचाई, और

हारानबाबूकी हर एक बातसे गोराके प्रति जो एक व्यक्तिगत ईर्ष्या प्रकटहुई, उसने गोराकी इस विपत्तिके समय, हारान बाबूके ऊपर, उपस्थित सभी लोगोंके मनमें एक अश्रद्धाका भाव उत्पन्न कर दिया । सुचरिता अब तक चुप थी । कोई एक बात कहनेके लिए उसके चित्तमें आवेग उपस्थित हुआ सही, किन्तु वह अपनेको संभालकर एक पुस्तक खोलकर काँपते हुए हाथ से उसके पन्ने उलटने लगी । ललिताने उद्धत भावसे कहा—मैजिस्ट्रेटके साथ हारान बाबूका मत चाहे जितना मिलता हो, घोषपुरके मामलोंमें अवश्य ही गौरमोहन बाबूका महत्व प्रकट हुआ है ।

आज छोटे लाटकी अवाईके कारण मैजिस्ट्रेट साहबने ठीक साढ़े दस बजे अदालतमें आकर सबेरे-सबेरे कचहरीका काम खतम कर ढालनेकी कोशिशकी ।

सातकौड़ी बाबूने स्कूलके विद्यार्थियोंका पक्ष लेकर उसी उपलक्षमें अपने मित्र गोराको बचानेकी चेष्टाकी । उन्होंने रंग ढंग देखकर समझ लिया था कि अपराध स्वीकार कर लेना ही इस जगह अच्छी चाल है । 'लड़के उपद्रवी हुआ ही करते हैं, वे नाजायक पाजी इत्यादि हैं—कह कर उन्होंने लड़कोंके लिए क्षमा-प्रार्थनाकी । मैजिस्ट्रेटने लड़कोंको जेल लेजाकर उनकी अवस्था और अपराधकी कमी बेसीके अनुसार पाँचसे पच्चीस बेंत तक लगानेका हुक्म दे दिया ! गोराका वकील कोई न था । उसने अपना मुकदमा आप चलाया, और उसी उपलक्षमें पुलिसके अत्याचारके बारेमें भी कुछ कहना चाहा, किन्तु मैजिस्ट्रेटने बीच हीमें तीव्र तिरस्कार करके उसका मुँह बंद कर दिया, और पुलिसके काममें बाधा देनेके अपराधमें उसे एक महीनेकी सख्त सज़ा देदी । साथ ही ऐसी हलकी सज़ाको विशेष दया कहनेमें भी नहीं चूके ।

सुधीर और विनय अदालतमें उपस्थित थे । विनय गोराके मुँहकी ओर देख न सका । उसकी जैसे साँस बन्द होने लगी; वह चटपट अदालतके कमरेसे बाहर निकल आया । सुधीरने उससे ढाक-बंगलेको लौट जाकर नहाने-खानेके लिए अनुरोध किया, मगर उसने उस पर ध्यान नहीं दिया । मैदानकी राहसे चलते-चलते एक पेड़के नीचे वह बैठ गया, सुधीर से कहा—तुम बंगलेको लौट जाओ, मैं भी कुछ देर बाद आता हूँ । सुधीर चला गया ।

इस तरह कितना समय वृत्तके नीचे बैठे बीत गया, इसकी खबर

विनयको नहीं हुई। सूर्य सिरके ऊपरसे पश्चिमकी ओर जब ढल पड़े, तब एक गाड़ी ठीक उसके सामने आकर रुकी। विनयने मुंह उठाकर देखा, सुधीर और सुचरिता, दोनों गाड़ीसे उतर कर उसके पास आ रहे हैं। विनय फौरन उठ खड़ा हुआ। सुचरिताने पास आकर स्नेहाद्रि^१ स्वरसे कहा—विनय बाबू आइए !

विनयको एकाएक होश हुआ कि इस दृश्यको रास्तेके लोग तमाशेकी तरह देख रहे हैं। वह चटपट गाड़ी पर सवार हो गया। रात भर किसी के मुंहसे कोई बात नहीं निकल सकी।

डाकबंगलेमें पहुँच कर विनयने देखा, वहाँ एक ख़ासी लड़ाई चल रही है। ललिता बिगड़ी बैठी है—वह किसी तरह मैजिस्ट्रेटके निमन्त्रण और उत्सवमें शामिल न होगी। वरदासुन्दरी बड़े संकट में पड़ गई हैं। हारान बाबू ललिता सरीखी बालिकाके इस असंगत विद्रोहको देखकर क्रोधके मारे अस्थिर हो उठे हैं। वह बार-बार कहते हैं—आज कलके लड़कों और लड़कियोंमें यह कैसा विकार उपस्थित हो गया है कि वे अदब-कायदा मानना नहीं चाहते। केवल जिस-तिस ऐरे गैरे आदमी के संसर्ग में मन-मानी आलोचना करनेका ही यह फल है !

विनयके आते ही ललिताने कहा—विनय बाबू, मुझे माफ़ कीजिये। मैंने आपके निकट भारी अपराध किया है। आप उस समय जो कहते थे, उसे तब मैं कुछ भी नहीं समझ सकी थी। हम लोग बाहरकी हालत कुछ भी नहीं जानतीं, इसीसे हमारे समझनेमें इतनी और ऐसी भूल हो जाती है ! हारान बाबू कहते हैं, भारतमें मैजिस्ट्रेटका यह शासन विधाता का विधान है। मैं कहती हूँ अगर यह बात सच है, तो इस शासनको मन-वाणी काया से अभिशाप देनेकी इच्छा जगा देना भी उसी विधाताका ही विधान है !

हारान बाबू क्रुद्ध होकर कहने लगे—ललिता तुम,.....

ललिता हारान बाबूकी ओर घूम कर खड़ी होगई, और बोली—चुप रहिए साहब ! आप से मैं कुछ नहीं कहती।—विनय बाबू आप किसीके

अनुरोधका ख्याल न करें ! आज किसी तरह अभिनय हो ही नहीं सकता !

वरदासुन्दरीने चटपट ललिताकी बातको दबाते हुए कहा—ललिता, तू तो अच्छी लड़की देख पड़ती है ! विनय बाबू को क्या आज नहाने-खाने न देगी ? जानती है, दो बज गये हैं ? देख तो उनका मुँह सुख रहा है, चेहरा कैसा हो रहा है !

विनय ने कहा—यहाँ हम उसी मैजिस्ट्रेट के अतिथि हैं। इस घर में मैं तो स्नान भोजन नहीं कर सकूँगा !

वरदासुन्दरीने बहुत अनुनय-विनय करके विनय को समझाने की चेष्टा की। सब लड़कियोंको चुप बैठे देख कर, खफा हो कर बह कहने लगी—तुम सबको हो क्या गया है ? सुची, तुम्हीं विनय बाबू को जरा समझाओ ! हमने जबान दे रखी है—सब लोग निमन्त्रण दे कर बुलाये जा चुके हैं ; आजका दिन किसी तरह बिता देना चाहिए—नहीं तो भला वे सब लोग क्या ख्याल करेंगे, तुम्हीं बताओ ? मैं तो फिर उन लोगों के आगे मुँह नहीं दिखा सकूँगी।

सुचरिता चुपचाप मुँह नीचा किये बैठी रही।

विनय पास ही नदी पर स्टीमरमें चला गया। वह स्टीमर आज दो तीन घंटे में भीतर ही यात्रियोंको ले कर कलकत्ते को रवाना होगा—कल आठ बजेके लगभग वहाँ पहुँच जायगा।

हारान बाबू उत्तेजित हो उठे, और विनय तथा गोरा की निन्दा करने लगे। सुचरिता चटपट कुर्सीसे उठकर पासकी कोठरीमें चली गई, और जोरसे दरवाजा भेड़ दिया। दम भर बाद ही ललिता भी दरवाजा खोल कर भीतर पहुँची। उसने देखा, सुचरिता दोनों हाथोंसे मुँह ढके बिस्तर पर पड़ी हुई है।

ललिताने भीतरसे दरवाजा बन्द कर लिया। फिर सुचरिताके पास बैठकर धीरे—धीरे उसके सिरके बालोंमें अंगुलि—संचालन करने लगी। कई मिनटके बाद सुचरिता जब शान्त हुई, तब जबरदस्ती उसके मुँह

परसे दोनों हाथ हटाकर, उसके मुंहके पास मुंह लेजाकर, उसके कानमें ललिता कहने लगी—दीदी, चलो, हम लोग यहांसे कलकत्ते लौट चलें; आज तो हम मजिस्ट्रेटके यहां जा नहीं सकेंगी ।

सुचरिताने बहुत देर तक इस प्रस्तावका कुछ उत्तर नहीं दिया । ललिता जब बारंबार कहने लगी, तब सुचरिता बिछोने पर उठ बैठी, और बोली—यह कैसे होगा बहन ? मेरी तो आनेकी इच्छा ही नहीं थी । लेकिन जब बाबूजीने भेज दिया है तब जिस कामके लिये हम आई हैं उसे किये बिना हम जा नहीं सकेंगी ।

ललिता—बाबूजी तो इन सब बातोंको जानते नहीं हैं, वह जानते, तो कभी हमसे यहां ठहरनेके लिये न कहते ।

सुचरिता—सो मैं किस तरह जान सकती हूँ बहन !

ललिता—दीदी, तुमसे जाया जायगा ? तूही बता, किस तरह वहां जायगी ? उसके बाद फिर सजधज करके स्टेज पर खड़े हो कर कविता पढ़नी होगी । मेरे तो जीभ फटकर खून गिरेगा, तो भी मुंहसे एक शब्द न निकलेगा !

सुचरिता—सो तो जानती हूँ बहन ! किन्तु नरककी यन्त्रणा भी सहनी पड़ती है । अब और कोई उपाय नहीं ! आजका दिन जीवन भरमें कभी न भूल सकूंगी ।

सुचरिताकी इस वाध्यतासे नाराज होकर ललिता वहांसे उठ आई आकर मांसे कहा—मां, तुम लोग न जाओगे ?

वरदासुन्दरीने कहा—तू क्या पागल हो गई ? वहां तो रातको, नव बजेके बाद, जाना होगा ।

ललिताने कहा—मैं कलकत्ते जानेकी बात कहती हूँ ।

वरदा०—जरा लड़कीकी बातें तो सुनें !

ललिताने सुधीरसे कहा—सुधीरदादा, तुम यहां रहोगे ?

गोराकी सजाने सुधीरके मनको भी बेचैन कर दिया था, किन्तु

बड़े-बड़े साहबोंके सामने अपनी विद्या प्रकट करनेके प्रलोभनको त्याग कर सकनेकी हिम्मत उसमें नहीं थी ।

वरदासुन्दरीने कहा—इस गड़बड़में देर हो गई, अब और देर करनेसे काम नहीं चलेगा । अब साढ़े पांच बजे तक कोई बिस्तर परसे उठने नहीं पावेगा—विश्राम करना होगा । नहीं तो रात नींद सतावेगी, मुंह भी सूख जायगा, देखनेमें अच्छा न लगेगा ।

इतना कह कर उन्होंने एक तरहसे जबरदस्ती ही सबका सोनेकी कोठरीमें लेजाकर बिस्तरों पर सुला दिया । सब सो गये, केवल सुचरिता को नींद नहीं आई, और दूसरी कोठरीमें ललिता अपने बिस्तरे पर उठ कर बैठी रही ।

उधर स्टीमर बार बार सीटी देने लगा ।

स्टीमर जिस समय छूट रहा था, ख़लासी लोग सीढ़ी ऊपर उठानेके लिए तैयार थे, इसी समय जहाजके डेकके ऊपरसे विनयने देखा, एक भले घर की स्त्री जहाजके सामने तेज चालसे आ रही है । उसका पहनावा देख कर वह ललिता ही जान पड़ी; किन्तु विनय सहसा विश्वास न कर सका । अंतको ललिता जब पास आगई, तब संदेह जाता रहा । एक बार ख्याल आया, ललिता उसे लौटानेके लिए आई है; किन्तु ललिता ही तो मैजिस्ट्रेटके निमंत्रणमें जानेके विरुद्ध खड़ी हुई थी । ललिता स्टीमर पर चढ़ गई, ख़लासीने सीढ़ी ऊपर उठाली । विनय शंकित चित्तसे ऊपरके डेकसे नीचे उतर कर, ललिताके सामने आकर उपस्थित हुआ । ललिताने कहा—मुझे ऊपर ले चलिए ।

विनयने विस्मित हो कर कहा—जहाज जो छोड़ा जा रहा है ! ललिताने कहा—यह मैं जानती हूँ ।

इतना कहकर, विनयके लिए अपेक्षा न करके ही सामने की सीढ़ी से वह ऊपरके खंड में चढ़ गई ।

स्टीमर सीटी देता हुआ चल दिया ।

विनयने ललिता को फ्रस्टेब्लास डेक में कुर्सी पर बिठा कर चुपचाप उसके मुखकी ओर देखा।

ललिताने कहा—मैं कलकत्ते जाऊँगी। मुझसे किसी तरह ठहरा नहीं गया।

विनयने पूछा—और वे सब ?

ललिताने कहा—अभी तक कोई यह हाल नहीं जानता। मैं पुर्जी लिख कर रख आई हूँ, पढ़ कर जान लूँगे।

ललिताकी इस दुस्साहसिकतासे विनय स्तम्भित रह गया था। वह संकोच के साथ कहने लगा—मगर...

ललिताने चटपट बाधा देकर कहा—जहाज छूट चुका है, अब 'अगर—मगर' से क्या होगा ? औरत होकर पैदा हुई हूँ तो मुझे सब कुछ चुपचाप सहना पड़ेगा, यह मेरी समझ में नहीं आता। हम स्त्रियोंकी बुद्धिमें भी न्याय अन्याय, संभव-असंभव, सभी कुछ है। आज के निमन्त्रण में जाकर अभिनय करने की अपेक्षा आत्महत्या करना मेरे लिए सहज है।

विनयने सोचा, जो होना था सो होगया; अब इस कामकी भलाई-बुराईका विचार करके मनको पीड़ित व चिन्तित करनेमें कोई लाभ नहीं है।

कुछ देर चुप रह कर ललिताने कहा—देखिए, आपके मित्र गोरा बाबूके साथ मैंने मन-ही-मन बड़ा अविचार किया था। नहीं जानती, पहलेसे ही क्यों उन्हें देख कर, उनकी बातें सुनकर मेरा मन उनके विरुद्ध होगया था। वह बहुत ज़्यादा जोर देकर बातें कहते थे, और आप सब लोग उनका साथ जैसे दिये जाते थे; यही देख कर मुझे एक तरहका क्रोध हो आता था। मेरा स्वभाव ही यह है, यदि देखती हूँ कि कोई बातचोत या व्यवहार में जोर ज़ाहिर करता है, तो उसे मैं बिल्कुल ही सह नहीं सकती। किन्तु गोरा बाबूका जोर सिर्फ

औरोके ऊपर ही नहीं है, वह अपने ऊपर भी जोर देते हैं। यह सच्चा जोर है। ऐसा आदमी और मैंने नहीं देखा।

इसी तरह ललिता कहने लगी। यह बात नहीं थी कि वह केवल गोरामें सम्बन्धमें पश्चात्तापका बोध करनेके कारण ही ये सब बातें कह रही थी; असलमें, एक धुनमें आकर उसने जो काम कर डाला था, उसका संकोच मनके भीतरसे बारबार निर उठानेका उपक्रम कर रहा था, 'काम शायद अच्छा नहीं हुआ !' इस दुःखाके जोर करनेके लक्षण देखे जाते थे। विनयके सामने स्टीमरमें इस तरह अकेले बैठे रहना इतनी बड़ी कुन्ठाका विषय है—इसका खयाल भी पहले वह नहीं कर सकी थी, किन्तु लज्जा प्रकट होते ही यह घटना अत्यन्त लज्जाका मामला हो उठेगी, इसी लिए वह प्राणपणसे कड़ने लगी। विनयको बोलना भी भार हो रहा था। एक ओर गोरामें कष्ट और अपमान था, दूसरी ओर यहाँ मैजिस्ट्रेटके घर आमोद-प्रमोद में सम्मिलित होने के लिए आनेकी लज्जा थी, उस पर तुरा यह कि ललिताके इस दुस्साहससे उसके सम्बन्धमें विनय पर अवस्था-संकट आपड़ा। इन्हीं बातोंने मिलकर विनयको गूंगा-सा बना दिया था।

पहले होता, तो ललिताके इस दुस्साहससे विनयके मन में तिरस्कार का भाव उत्पन्न होता, किन्तु आज वह किसी तरह नहीं हुआ। यहाँ तक कि उसके मनमें जो विस्मय उदय हुआ था, उसके साथ श्रद्धा मिली हुई थी। इसमें एक और आनन्द यह था कि उनके सारे दिलके भीतर गोरामें अपमानके प्रतिकारकी चेष्टा केवल विनय और ललिताने ही की है। इसके लिए विनयको तो विशेष कुछ दुःख उठाना न होगा, किन्तु ललिताको अपने कर्म के फलस्वरूप बहुत दिन तक असीम पीड़ा भोग करनी होगी। अथच इसी ललिता को विनय बराबर गोरामें विरुद्ध ही जानता था। वह जितना ही सोचने लगा उतना ही ललिता के इस परिणाम-विचार बिहीन साहस और अन्यायके प्रति एकान्त घृणासे उसके प्रति विनयके मन में भक्ति उत्पन्न होने लगी। किस तरह क्या कहकर

वह भक्ति प्रकट की जाय, यह बहुत सोचकर भी विनय निश्चय न कर सका। विनय बारम्बार सोचने लगा की ललिताने जो उसे इतना परमुखा-पेक्षी और साइसाहीन कह कर वृणा प्रकटकी थी, वह यथार्थ थी। वह तो आत्मीय बन्धुओंकी निन्द और प्रशंसाकी बलपूर्वक उपेक्षा करके इस तरह किसी भी विषयमें साहसिक आचरणके द्वारा अपने मतको प्रकट न कर सकता। उसने अक्सर गोराको कष्ट पहुँचानेके भयसे, अथवा पीछे गोरा उसे दुर्बल न समझ ले — इस आशंकासे, अपने स्वाभावका अनुसरण नहीं किया; अक्सर सूक्ष्म युक्ति-जाल फैला कर गोरा के मतको अपना ही मत कहकर स्वयं अपने ही को भुलाने की चेष्टा की है। आज यही मन में स्वीकार करके विनयने स्वाधीन बुद्धि शक्तिके गुणमें ललिताको अपनेसे कहीं श्रेष्ठ मान लिया। उसने जो पहले अनेकबार मन-ही-मन ललिता की निन्दा की थी, उसकी याद करके विनयको लज्जा मालूम हुई। यहाँ तक कि ललिता से क्षमा मांगने को उसका जी चाहा, किन्तु यह सोचकर ठीक न कर सका कि किस तरह उससे क्षमा मांगे। ललिता की कमनीय स्त्री-मूर्ति अपने आन्तरिक तेज से विनय की आँखों को आज ऐसी एक महिमा से जगमगाती हुई दिखाई दी कि नारीके इस अपूर्व परिचय से उसने अपने जीवनको सार्थक समझा।

ललिताको साथ लेकर विनय परेश बाबूके घर पर उपस्थित हुआ ।

स्टीमर पर चढ़नेके पहले तक विनयको निश्चित रूपसे नहीं मालूम था कि ललिताके सम्बन्धमें उसके मनका भाव क्या है । ललिताके साथ विरोध में ही उसका मन लगा हुआ था । किस तरह इस दुर्जन लड़कीके साथ किसी तरह सुलह की जा सकती है, यही कुछ समयसे विनयकी चिन्ता का प्रायः प्रतिदिनका विषय हो रहा था । विनयके जीवनमें स्त्री-माधुर्यकी निर्मल दीप्ति लेकर सुचरिता हो पहले सन्ध्या ताराके समान दिखाई दी थी इस आविर्भाव का अनुपम अपरूप आनन्द ही उसकी प्रकृति को परिपूर्णता दिये हुए हैं, यही विनय अपने मनमें जानता था । किन्तु इसी बीचमें और एक तारा उदय हो आया है, और ज्योतिः उत्सव की भूमिगामान करके प्रथम तारा धीरे-धीरे क्षितिजकी ओर उतर रहा है—यह बात विनय स्पष्ट रूपसे समझ नहीं सका था ।

विद्रोही ललिता जिस दिन स्टीमर पर चढ़ आई, उस दिन विनयके मनमें आया कि ललिता और मैं दोनों एक पक्षमें होकर जैसे सारे संसार के प्रतिकूल खड़े हुए हैं । इस घटनाके कारण ललिता और सबको छोड़ कर उसीके पास आकर खड़ी हुई है—यह बात विनय किसी तरह भूल नहीं सका । चाहे जिस कारण और चाहे जिस उपलक्ष्यसे हो, ललिताके लिए विनय आज अनेकके बीच एक जनमात्र नहीं है—ललिताकी बगलमें वही अकेला है—वही एक मात्र है; सब आत्मीय-स्वजन दूर हैं, वही निकट है । इस नैकट्य का पुलक पूर्ण स्पन्दन, विद्युत्तगर्भ मेघकी तरह उसकी छातीमें एक चमक सी पैदा करने लगा । फ्रस्ट ह्यास केबिनमें ललिता जब सोने गई तब विनयसे अरनी जगह पर सोया नहीं गया । वह उसी केबिनके बाहर डेक पर जूते उतार कर चुपचाप टहलने लगा । स्टीमर में ललिता के सम्बन्धमें कुछ उत्पात होने की विशेष

सम्भावना नहीं थी, किन्तु बिना अपनेको अकस्मात् मिले हुए नवोन अधिकारका पूरा अनुभव करने के प्रलोभनसे बिना प्रयोजनके भी उस अधिकार का व्यवहार किये बिना नहीं रह सका ।

रात गहरी अंधेरी थी, मेघ—शून्य आकाश तारागणों से जगमगा रहा था, नीचे चौड़ी नदी की प्रबल धारा चुर-चाप बह रही थी—उसके बीचमें ललिता सो रही थी । और कुछ नहीं, केवल इस सुन्दर—इस विश्वास-पूर्ण—निद्रा को ही ललिताने आज विनयके हाथमें सौंप दिया है । महा मूल्य रत्नके समान इस निद्राकी ही रखवालीका भार आज विनयने लिया है । पिता, माता, भगिनी, भाई, कोई नहीं है; एक अपरिचित शय्याके ऊपर ललिता अपने सुन्दर शरीरको ढाले हुए निश्चिन्त होकर सो रही है । निश्वास-प्रवास जैसे इस निद्रा काव्यके छन्दकी माप से, अत्यंत शान्तभावसे, गमनागमन करती है । उस कारीगारीके साथ बाँधी गई वेणीसे एक केशभी स्थान-न्युत नहीं हुआ । वे नारी हृदयके कल्याणकी कोमलतासे मण्डित दोनों हाथ परिपूर्ण विश्रामसे बिछौने के ऊपर पड़े हुए हैं । कुसुम-सुकुमार दोनों पदतल अपना समस्त रमणीय गति-चेष्टाको उत्सवावसान के संगीत की तरह स्तब्ध करके बिछौने के ऊपर फैले हुए हैं । विश्रब्ध विश्राम की इस छविने विनयकी कल्पनाको परिपूर्ण कर डाला; सीपीमें मोतीके समान ही ग्रह तारामण्डित निःशब्द-तिमिर-वेष्टित इस आकाश-मंडलके मध्य स्थलमें ललिताकी यह निद्रा—यह सुडौल, सुन्दर, संपूर्ण विश्राम—जगत में एकमात्र ऐश्वर्यके रूपमें विनय को देख पड़ा । मैं जाग रहा हूँ—मैं जाग रहा हूँ, यह वाक्य विनयके विस्फारित वज्र-स्थलसे अभय-शंख ध्वनि के समान उठ कर महा आकाशके अनिमेघ जाग्रत पुरुष की निःशब्द बाणीके साथ मिलित हुआ ।

इस कृष्ण-पलकी रात्रिमें और एक खूबाल विनय के हृदयको रुद रुद कर चोट पहुँचाने लगा, वह यही कि गोरा आज रातको जेल-खाने में है । आज तक विनय गोराकी सभी सुख-दुःखकी बातोंमें बराबर शरीक होता आया है—यही पहले पहल उसके खिलाफ हुआ । विनय जानता

था, गोरा-जैसे मनुष्यके लिये जेलका शासन कुछ भी नहीं है; किन्तु आदिसे अन्त तक इस घटनामें विनयके साथ गोराका कोई योग न था—गोराके जीवनकी इस प्रधान घटनामें बिचकुल ही विनयका संसर्ग नहीं है। दोनों मित्रोंके जीवनकी धारा यह जो एक जगह विच्छिन्न हो गई है, वह फिर जब मिलेगी, तब क्या इस विच्छेदकी शून्यताकी पूर्ति हो सकेगी? बंधुत्वकी सम्पूर्णता क्या अब की खंडित नहीं हो गई? जीवन का ऐसा अखंड—ऐसा दुर्लभ—बन्धुत्व ! आज एक ही रातमें विनय अपनी एक ओर की शून्यता और दूसरी ओर की पूर्णताका एक साथ अनुभव करके जीवन के सृजन-प्रलयके सन्धि कालमें निश्चल स्तब्ध भाव से बैठे-बैठे अंधकारकी ओर ताकता रहा था।

किराएकी गाड़ी परेश बाबूके दरवाजेके पास आकर खड़ी हुई। उतरते समय ललिताके पैर कांप उठे, और घर के भीतर प्रवेश करनेके समय उसने ज़ोर करके अपने जी को ज़रा कड़ा कर लिया, यह बात विनयने स्पष्ट समझ ली। ललिताने धुनमें आकर अबकी जो काम कर डाला है, उसका अपराध कितना बड़ा है, और उसका वज़न कितना है, इसका अनुमान वह आप किसी तरह नहीं कर पाती थी। ललिता जानती थी कि परेश बाबू उसे ऐसी कोई भी बात नहीं कहेंगे, जिसे ठीक भर्त्सना कहा जा सके; किन्तु इसी से परेश बाबूके चुप रहनेको ही वह सबसे अधिक डरती थी।

ललिताके इस संकोचके भावको लक्ष्य करके विनय को इस जगह क्या करना चाहिए, यह बहुत सोच विचार करके भी कुछ ठीक न कर सका। उसके साथ रहनेसे ललिताके लिये संकोचका कारण अधिक होगा, या नहीं, इसी की परीक्षा करनेके लिए उसने ज़रा तबधाके स्वर में कहा—तो अब जाऊँ ?

ललिताने चटपट कहा—ना, चलिए, बाबूजीके पास चलिए।

ललिताके इस समय व्यग्र अनुरोधसे विनय मन-ही-मन आनन्दित हो उठा। घरमें पहुँचा देनेके बादसे उसका कर्तव्य जो समाप्त नहीं हो गया,

इस एक एकाएक होने वाले मामलेसे ललिताके साथ उसके जीवनकी एक विशेष गाँठ बन्ध गई, यही समझ कर विनय ललिताकी बगलमें जैसे कुछ विशेष जोरके साथ खड़ा हुआ। उसके ऊपर ललिताकी इस निर्भर कल्पनाने जैसे एक स्पर्शके समान उसके सारे शरीरमें बिजली सी दौड़ाना शुरू कर दिया। उसे जान पड़ा, ललिताने जैसे उसका दाहना हाथ जोरसे पकड़ रक्खा है। ललिताके साथ इस सम्बन्धसे उसका हृदय जैसे भर उठा — छाती जैसे फूल उठी। उसने अपने मनमें सोचा, जब परेश बाबू ललिताके इस हठके काम पर क्रोध करेंगे, ललिताको डाँटेंगे तब वह यथासंभव उस कार्यकी सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेलेगा — डाँट उपटके श्शको बिना किसी संकोचके ग्रहण करेगा, और ललिताको सभी आघातोंसे बचानेकी चेष्टा करेगा।

किन्तु ललिताके मनके यथार्थ भावको विनय नहीं समझ सका। यह बात नहीं थी कि ललिताने विनयको भर्त्सनाकी ढाल बनानेके लिये ही विनयको न जाने देना चाहा हो। असल बात यह थी कि ललिता कुछ भी छिपा रखना नहीं चाहती थी। वह छिपा रख सकती ही न थी; यह उसके स्वभावके विरुद्ध था। उसने जो कुछ किया है, उसका सब कुछ परेश बाबू आँखोंसे देखें, और विचारमें जो कुछ निर्णय हो, उसका सारा फल ललिता स्वयं ग्रहण करे, यही उसके मनका भाव था।

आज सवेरेसे ही ललिता विनयके ऊपर मन-ही-मन नाराज है। वह यह अच्छी तरह जानती है कि उसकी नाराज़गी असंगत है, किन्तु असंगत होनेके कारण ही क्रोध कम नहीं होता, बल्कि बढ़ता ही जाता है।

जब तक ललिता स्टीमरमें थी, तब तक उसके मनका भाव और तरहका था। लड़कपनसे ही वह कभी क्रोध करके, कभी हठ करके एक न-एक अभावनीय कांड करती आई है, किन्तु अबकी घटना गुस्तर है। इस निपट्ट काममें विनयके भी उसके साथ जड़ित हो पड़नेसे एक ओर वह संकोच का, और दूसरी ओर एक निगूढ़ हर्षका, अनुभव कर रही थी। वह हर्ष जैसे निपट्टकी टक्करसे ही अधिक उन्मथित हो उठ रहा था। एक बाहरके

आदमीका उसने आज इस तरह आश्रय लिया है, उसके इतना पास आ गई है, कि उन दोनोंके बीचमें आत्मीय-समाजकी कोई आड़ नहीं है। इसमें कुन्ठा या सकोचका कितना बड़ा कारण था। किन्तु विनयकी स्वाभाविक नम्रताने ऐसे समयके साथ एक 'आबरू' की रचना कर रखी थी कि इस आशकाजनक अवस्थाके बीचमें भी विनयकी सुकुमार सुशीलताका परिचय ललिताको एक भारी आनन्द दे रहा था। जो विनय उसके यहाँ सबके साथ सर्वदा आमोद-कौतुक करता था, जिसकी बात चीत कभी बन्द नहीं होती थी, जिसके साथ घरके नौकर-चाकरोंकी भी आत्मीयता अवारित थी, वह विनय यह जैसे था ही नहीं। सतर्कताकी दोहाई देकर जिस जगह वह अनायास हो ललिताके साथ अधिक और निकट रह सकता था वहाँ वह इस तरह दूर-ही-दूर रहनेकी चेष्टा करता था कि उसीसे ललिता अपने हृदयमें उसे और भी अपने निकट अनुभव करती थी।

रातको स्टीमरके केबिनमें अनेक चिन्ताओंके कारण ललिताकी अच्छी तरह नींद नहीं आती थी। छुटपटाते-ही-छुटपटाते एकबार उसे जान पड़ा कि अब रात बीत गई, सवेरा होनेको है। धीरे-धीरे केबिनका द्वार खोल कर बाहर नज़र डाल कर उसने देखा, रात्रि-शेपका शिशिर, अन्धकार उस समयभी नदीके ऊपरके मुक्त आकाश और किनारे परके जंगलसे लिपटा हुआ है, अभी अभी एक ठंडी हवाके झोंकेने उठकर नदीके जलमें कलरव पैदा कर दिया है, और नीचेके खंडों पंजिनके खलासी अभी उठ कर अपना काम शुरू कर देने वाले हैं, ऐसा आभास पाया जाता है। ललिताने केबिनके बाहर आते ही देखा, थोड़ी ही दूर पर विनय एक गरम कपड़ा पहने बेत की कुर्सी पर बैठा हुआ सो रहा है। देखकर ही ललिताका कलेजा धड़क उठा। रात भर विनय इसी जगह पर बैठे पहरा देता रहा है ! इतना निकट होकर भी इतना दूर है ! तब ललिता कांपते हुए पैरोंसे, डेकसे केबिनमें आई। द्वार पर खड़े होकर उस हेमन्तके प्रयूप-कालमें, उस, अन्धकार-जड़ित अपरचित 'नदी'—दृश्य के बीच, अकेले सोते

प्रांत-भागके तारागण जैसे विनयको निद्राको घेरे हुए हैं। एक अनिर्वचनीय गांभीर्य और माधुर्यसे उसका सारा हृदय एक दम लबालब भर गया। देखते ही-देखते ललिताके दोनों नेत्रोंमें जल भर आया, यह वह खुद ही नहीं समझ सकी। अपने पितासे उसने जिस देवताकी उपासना सीखा है, उसी देवताने जैसे उसे दाहिने हाथसे आज स्पर्श किया है। इस नदीके ऊपर, इस तरह पल्लव निविड़ निद्रित नदी तटमें रात्रिके अन्धकारके साथ नवीन प्रकाशका जिस समय निगूँड़, सम्मिलन हो रहा था, उसी पवित्र सन्धि क्षणमें परिपूर्ण नक्षत्र सभाके बीच कोई एक दिव्य संगीत अनाहत महावीर्यमें दुस्सह आनन्द वेदनाकी तरह बज उठा।

इसी समय नींदके भोंकेमें विनयने जरा हाथ हिलाया, ललिता चटपट केबिनका दरवाजा बंद करके बिछौने पर लेट रही। उसके हाथ पैरके तलवे टंडे पड़ गये। बहुत देर तक छातीकी धड़कनको वह बन्द न कर सकी।

अंधकार दूर हो गया, स्टीमर चलने लगा। ललिता मुँह हाथ धोकर प्रस्तुत होकर बाहर आई, और रेलिङ्ग पकड़ कर खड़ी हुई। विनय पहले ही जहाजके भोंपूकी आवाज़से जग कर तैयार होकर प्रभातका प्रथम अभ्युदय देखनके लिए अपेक्षा कर रहा था। ललिताके बाहर निकलते ही वह संकुचित होकर चले जानेका उपक्रम करने लगा। ललिताने पुकारा—विनय बाबू !

विनयके पास आते ही ललिताने कहा—जान पड़ता है, रातको आप अच्छी तरह नहीं सो सके ?

विनयने कहा —सोया तो खूब।

इसके बाद दोनोंमें फिर कोई बात नहीं हुई। शिशिर सिक्ताकाश वन के दूसरे छोर पर उन्मुख सूर्योदयकी सुनहली आभा उज्ज्वल हो उठी। इन दोनों जनोंने जीवनमें ऐसा प्रभात और किसी दिन नहीं देखा था। प्रकाशने उन्हें कभी इस तरह स्पर्श नहीं किया। यह बात उन्होंने यहीं पहले पहल जानी कि आकाश बिलकुल शून्य नहीं है, वह विश्रमय नीरव आनन्दसे सृष्टिकी ओर एक टक निहार रहा है। इन दोनों जनोके चित्तमें

चेतना इस तरह जागृत हो उठी कि सारे जगत्के अन्तर्निहित चैतन्यके साथ आज जैसे एकदम उनके अंगसे अंग भिड़ गया । किसीने कोई बात नहीं ।

स्टीमर कलकत्तेमें आया । विनयने घाटमें एक गाड़ी किरायेकी करके भीतर ललिताको बिठलाया, और आप ऊपर कोच-बक्समें गाड़ीवानके पास बैठ गया । इस दिनके समय कलकत्तेकी सड़क पर गाड़ी करके चलते-चलते क्यों ललिताके मनमें उलटी हवा चलने लगी, यह कौन बता सकता है ! इस संकटके समय विनय जो स्टीमरमें था, ललिता जो विनयके साथ इस तरह जड़ित हो पड़ी है, विनय जो अभिभावककी तरह उसे गाड़ी पर बिठा कर घर लिए जा रहा है, यह सब उसे पोंडित करने लगा । घटनावश विनयने जो उसके ऊपर एक कर्तृत्वका अधिकार पाया है, वही उसे असत्य हो उठा । क्यों ऐसा हुआ ! रातको वह संगीत दिनके कर्म-क्षेत्रके सामने आकर क्यों ऐसे कठोर सुरमें थम गया !

इसीसे, द्वारके पास आकर विनयने जब संकोचके साथ पूछा—मैं तो, फिर जाऊँ ? तब ललिताकी खीझ और भी बढ़ उठी । उसने सोचा कि विनय बाबू समझते हैं, उन्हें साथ लेकर पिताके पास उपस्थित होनेमें कुंठित होती हूँ । इस सम्बन्धमें उसके मनमें संकोचका लेश भी नहीं है, यही जोरके साथ प्रमाणित करने और पिताके निकट सारी घटनाको संपूर्ण भाव से उपस्थित करनेके लिए उसने विनयको द्वारके निकट हीसे अपराधीकी तरह विदा कर देना नहीं चाहा ।

विनयके साथ सम्बन्धको वह पहले-ही की तरह साफ कर डालना चाहती है—बीचमें कोई कुंठा, कोई मोहकी जड़िमा रख कर वह अपनेको विनयके निकट छोटा या हीन करना नहीं चाहती ।

विनय और ललिताको देखते ही सतीश न मालूम कहाँसे दौड़कर उनके पास आया और उन दोनोंके बीच खड़ा हो दोनोंके हाथ पकड़कर बोला—कहो, बड़ी बहन कहाँ है? क्या वह नहीं आई?

विनयने पाकेटमें हाथ डालकर और विस्मय-भरी दृष्टिसे चारों ओर देखकर कहा—बड़ी बहन! ओफ्, थो तो साथ हीमें, न मालूम कहाँ खो गई!

सतीशने विनयको धक्का देकर कहा—नहीं, यह बात कभी नहीं है। कहो ललिता बहन, तुम कहो।

‘बड़ी बहन कल आवेगी।’ तब कहकर ललिता परेश बाबूके घरकी ओर चली।

सतीशने ललिता और विनयका हाथ पकड़ और अपनी ओर खींचकर कहा—हमारे घरमें कौन आया है, देखो, चलो।

तिमंजिलेकी छतके कोने पर जो एक छोटी सी कोठरी है, उसके दबिखन और धूप और वर्षाके निवारणार्थ एक टीनका छोटासा आवरण दे दिया गया है। सतीशके पीछे-पीछे इन दोनोंने जाकर देखा कि एक छोटा सा आसन बिछाकर, उस छपरीके नीचे, एक अर्धेडूखी चश्मा लगाये रामायण पढ़ रही है। उसकी उम्र करीब पैंतालिस वर्षकी होगी। सिरके आगेके बाल कुल उड़े हुएसे जान पड़ते हैं और कोई-कोई बाल सरुंद भी हो चला है। किन्तु गोरा चेहरा अब भी, पके फलकी तरह ज्योंका त्यों देख पड़ता है। दोनों भौंहोंके बीच एक काला दाग है। न हाथमें चूड़ी है और न बदनमें कोई गहना। विधवा सी दीखती है। पहले ललिता पर दृष्टि पड़ते ही उसने फट चश्मा खोल पुस्तकको एक ओर रख बड़ी उत्सुकताके साथ उसके मुँहकी ओर देखा। इसी क्षण

उसके पीछे विनयको देख वह रुट उठ खड़ी हुई और घूँघट बड़ाकर भीतर जाना चाहा । सतीश रुट दौड़कर उससे लिपट गया और बोला, मौसी, तुम क्यों भागती हो ? यह मेरी ललिता बहन है, ओर ये विनय बाबू हैं । बड़ी बहन कल आवेगी । विनय बाबूका यह संक्षिप्त परिचय ही काफी था । इसके पहले ही विनय बाबूके सम्बन्धमें पूर्ण रूपसे आलोचना हो चुकी है, इसमें सन्देह नहीं ।

सतीश किसे मौसी कह रहा है, यह न जाननेके कारण ललिता चुपचाप खड़ी रही । विनयने इस अधेड़ स्त्रीके पैर छूकर उसे प्रणाम किया । ललिताने भी विनय का अनुसरण किया ।

उस स्त्रीने रुट घरके भीतरसे एक चटाई लाकर बिछा दी और कहा—बैठो बाबू, बेटी तुम भी बैठो ।

विनय और ललिताके बैठने पर वह भी अपने आसन पर बैठी और सतीश उसके बदनसे सटकर बैठा । उसने सतीशको दाहने हाथसे भरकर कहा—मुझे आप नहीं जानते, मैं सतीशकी मौसी हूँ । सतीशकी माँ मेरी सगी बहन थी ।

इस सामान्य परिचयके भीतर कोई ऐसी विशेष बात न थी किन्तु उस स्त्रीके चेहरे और गलेकी आवाज़में ऐसा एक विलक्षण भाव था, जिससे उसके जीवनका; गम्भीर शोकसे मरा हुआ, पवित्र आभास प्रकाशित हो पड़ा । मैं सतीशकी मौसी हूँ यह कहकर जब उसने सतीशको छातीसे लगाया, तब उस स्त्रीका जीवन वृत्तान्त न जानने पर भी विनयका मन दयासे पसीज गया । वह स्नेह-भरे स्वरसे बोल उठा—आप अकेले सतीश की मौसी होकर रहेंगी, तो कैसे होगा ? अगर आप सतीशके बराबर मुझे न समझेंगे तो सतीशके साथ मेरा झगड़ा होगा । एक तो वह मुझे विनय बाबू कहकर पुकारता है, भाई नहीं कहता, तिस पर भी अब वह मुझे आपसे मौसीका नाता न जोड़ने देगा तो कैसे बनेगा ।

किसीके मनको वशमें कर लेना विनयके बाँयें हाथका खेल था ।

इस सुशील प्रियभापी युवकने बातकी बातमें उस स्त्रीके हृदयमें सतीशके साथ प्रेमका अंश ग्रहण किया ।

सतीशकी मौसीने पूछा—बच्चा ! तुम्हारी माँ कहाँ है !

विनयने कहा—मुझे अपनी माँको खोये बहुत दिन हो गये, किन्तु मेरे माँ नहीं हैं यह बात मैं मुँहसे नहीं निम्नल सकता ।

यह कहकर आनन्दमयीकी बात स्मरण करते ही इसकी आँखें आँसुओंसे भर गईं ।

बड़ी देर तक इन दोनोंके बीच बातें होती रहीं । उस समय ऐसा नहीं जान पड़ा कि इनकी यह पहली मुलाकात है । सतीश इन दोनोंकी बातचीतमें जब तब अप्रासङ्गिक बातें कहकर अपने लड़कपनका परिचय देने लगा । ललिता चुपचाप बैठकर इन दोनोंकी बातें सुनती रही ।

परेश बाबूको बाहर गये बहुत देर हो गई, अब भी लौटकर नहीं आये यह देख ललिता वहाँसे उठ जानेके लिए छटपटाने लगी । उसको किसी तरह रोक रखने होके लिए विनय सतीशकी मौसीके साथ जी लगाकर बातें कर रहा था । आश्रित ललिताका क्रोध रोके न सका, वह विनयकी बातमें सहसा बाधा देकर बोल उठी—आप इतनी देर क्यों कर रहे हैं ? बाबूजी कब आवेंगे, इसका निश्चय नहीं । क्या आप गोराकी माँके पास एक बार न जायेंगे ?

विनय चौंक उठा । ललिताका क्रुद्ध स्वर विनयके लिए अपरिचित न था । वह ललिताके मुँहकी ओर देखकर तुरन्त उठ खड़ा हुआ । वह किसके लिए विलम्ब कर रहा था ? उसीके लिए । यहाँ उसका कोई विशेष प्रयोजन नहीं था, वह तो दरवाजे परसे ही बिदा हो रहा था । ललिता ही तो उसे अनुरोध करके अपने साथ लाई थी, आश्रित उसीके मुँहसे ऐसा प्रश्न !

विनय इस प्रकार एकाएक आसन छोड़ उठ खड़ा हुआ कि ललिता अचम्भेके साथ उसकी ओर देखने लगी । उसने देखा, विनयके मुँहकी स्वाभाविक प्रसन्नता एकदम लुप्त हो गई जैसे फूँक मारनेसे चिराग़ बुझ

जाता है। विनयका ऐसा ग्लान मुख और उसके भावका ऐसा परिवर्तन ललिताने और कभी नहीं देखा था। विनयके मुहकी ओर देखते ही तीस अनुतापकी ज्वालामय यन्त्रणाने तुरन्त ललिताके सम्पूर्ण हृदयको आक्रान्त कर लिया। वह बार बार अपनी इस आतुरता पर पछताने लगी।

सतीश झट खड़ा हो गया और विनयका हाथ पकड़ मिर हिलाकर विनती भरे स्वरमें बोला—विनय बाबू बैठिए, अभी मत जाइएगा। फिर मौसीकी ओर देखकर उसने कहा—विनय बाबूसे जलपान करनेको कहो—ललिता बहन, विनय बाबूको क्यों जाने देती है?

विनयने कहा—भाई सतीश, आज साफ़ करो, अगर मौसी चाहेंगी तो मैं और किसी दिन आकर प्रसाद पाऊँगा। आज देर हो गई है।

विचारनेसे बात कुछ विशेष नहीं किन्तु विनयके कण्ठस्वरमें ममता का भाव भरा था। उसकी करुणा और उसके मनके भावको सतीशकी मौसी समझ गई। उसने एक बार विनयके और एक बार ललिताके मुँहकी ओर चाकत होकर देखा।

ललिता तुरन्त वहाँसे उठी और कोई बहाना करके अपने कमरेमें चली गई। वह कई दिन इसी प्रकार अपनी करनी पर कुदकर आपही आप रोती रही।

विनय उसी समय आनन्दमयीके घरको चला ।

उस समय आनन्दमयी वैसे ही नहाकर दालानके फर्श पर आसन बिछाये स्थिर भावसे बैठी थीं, शायद मनमें जप कर रही थीं । विनय चटपट उनके पैरों पर लोट कर बोला—माँ !

आनन्दमयीने उसके मस्तक पर दोनों हाथ फेर कर कहा—विनय !

माताके ये ऐसे स्निग्ध कंठ-स्वर को सुनकर विनयके सारे शरीरमें जैसे कदणाके स्पर्शका अनुभव हो गया । उसने कष्टसे आँसुओंको रोक कर कोमल-स्वरमें कहा—माँ, मुझे आनेमें देर हो गई !

आनन्दमयीने कहा—मैं सब बातें सुन चुकी हूँ विनय !

विनय चौंक कर बोला—सब बातें सुन चुकी हो !

गोराने इवालातसे ही उन्हें पत्र लिखकर अपने मित्र वकीलकी मार्फत भेज दिया था । उसने निश्चित रूपसे अनुमान कर लिया था कि वह अवश्य जेल जायगा ।

उसने पत्रके अन्तमें लिखा था—कारागार-निवास तुम्हारे गोरानी रक्ती भर हानि न कर सकेगा । किन्तु तुम ज़रा भी कष्ट पाओगी, तो ठीक न होगा । तुम्हारा दुख ही बस मेरा दण्ड होगा, मुझे और कोई भी दण्ड देनेकी शक्ति मैजिस्ट्रेटमें नहीं है । अकेले अपने ही लड़केकी बात न सोचना माँ और भी अनेक माताओंके लड़के बिना दोपके जेल भुगदते रहते हैं । एक बार उनके साथ, उनके कष्टके समान क्षेत्रमें खड़े होनेकी मेरी इच्छा हुई है । यह इच्छा अगर इस दफे पूर्ण हो, तो तुन मेरे लिए शोक या दुख न करना ।

“माँ नहीं जानता तुम्हें याद है कि नहीं, उस मर्तबा अकालके साल सड़के किनारे वाली अपनी बैठकमें टेबिल पर हपयोंकी थैली रख कर मैं चार-पाँच मिनटके लिए भीतर चला आया था । लौट कर देखा

थैली नदारद ! कोई चुरा ले गया था । थैलीमें मेरे स्कात्तरशिपके जमा किये ८५) रुपये थे । मेरा इरादा था, और कुछ रुपए जमा होजाने पर तुम्हारे पैर धोनेके जलके लिए एक चाँदीका लोटा बनवा दूंगा । रुपये चुराये जानेके बाद जब मैं चोरके ऊपर व्यर्थ के क्रोधसे जल रहा था, उस समय ईश्वरने एकाएक मुझे सुमति दी । मैंने मनमें कहा, जो व्यक्ति मेरे रुपये ले गया है, उसीको आज दुर्भित्तके दिनोमें मैंने वे रुपये दान कर दिये । जैसे यह कहा, वैसे ही मेरे मनका सारा दुख शान्त हो गया । आज भी अपने मनसे मैंने उसी तरह कहलाया है कि मैं स्वेच्छासे ही जेल जा रहा हूँ । मेरे मनमें कोई कष्ट नहीं है, किसीके ऊपर क्रोध नहीं है । मैं जेलमें अतिथि सत्कार स्वीकार करने चला । वहाँ आहार-विहारका कष्ट है तो कुछ हर्ज नहीं । अबकी इस यात्रामें भ्रमण के समय अनेक घरोंमें अतिथि हुआ हूँ—वहाँ भी तो अपने अभ्यास और आवश्यकताके माफिक आराम नहीं पाया ! इच्छा करके, जान बूझ कर, हम जिसे स्वीकार करते हैं, वह कष्ट तो कष्ट ही नहीं है । जेलके आश्रय को आज मैं अपनी इच्छासे ही ग्रहण करूँगा । जब तक मैं जेलमें रहूँगा, एक दिन भी कोई मुझे जबर्दस्ती नहीं रखेगा, यह तुम निश्चय जानो ।

‘पृथ्वी पर जब हम घरमें बैठकर अनायास ही आहार-विहार करते थे तब नित्यके अभ्यासके कारण हमका अनुभव भी नहीं कर पाते थे कि बाहरके आकाश और प्रकाशमें बिना किसी बाधाके घूमने-फिरनेका अधिकार कितना बड़ा अधिकार है; और उसी समयमें पृथ्वीके जो बहुतसे मनुष्य अपराध और बिना अपराधके ईश्वरके दिये विश्वके अधिकार (स्वतंत्रता) से वंचित होकर बन्धन और अपमानको भोग रहे थे उनके सम्बन्धमें आज तक मैंने नहीं सोचा—उनके साथ कुछ भी सम्बन्ध नहीं रखता । अबकी मैं उनके साथ समान रूपसे दागी होकर कारागारसे बाहर निकलना चाहता हूँ । पृथ्वीके अधिकांश बनावटी भले आदमी जो शरीफ या प्रतिष्ठित बने बैठे हैं, मैं उनके दलमें घुसकर सम्मान बचा कर चलना नहीं चाहता ।

माँ इस बार पृथ्वीके साथ परिचय होनेसे मुझे बहुत शिला हो गई है। पृथ्वी तल पर जिन्होंने विचारका भार अपने ऊपर ले रखा है उनमें अधिकांश ऐसे हैं जो कृपा के पात्र हैं। जो लोग दण्ड नहीं पाते और दण्ड देते हैं उन्हींके पापकी सज़ा जेलके कैदी भोग करते हैं। अपराध तो अनेक मिलकर गढ़कर खड़ा करते हैं और प्रायश्चित्त करते हैं ये ही। जो लोग जेलके बाहर आरामसे हैं सम्मानसे हैं, नहीं जानते उन लोगोंके पापोंका क्षय कब, कहाँ और किस तरह होगा। मैं उसी आराम और सम्मानको लात मारकर—धिकर देकर—मनुष्यके कलंकका चिन्ह हृदयमें धारण कर—जेलसे बाहर निकलूँगा। माँ ! तुम मुझको आशीर्वाद दो, तुम आंसू न गिराना। × × × ?”

गोराका यह पत्र पाकर आनन्दमयीने महिमको उसके पास भेजनेकी चेष्टाकी थी पर मुझे आफ्रिम जाना है साहब किसी तरह छुट्टी नहीं देंगे। यह कहकर महिम गोराकी अविवेचना और उद्वेगता आदि का बखान करता हुआ उसे यथेष्ट रूपसे भला बुरा कइने लगा। उसने यह भी कहा कि ‘उसके कारण किसी दिन मेरी नौकरी तक चली जायगी।’ आनन्दमयीने इस बारेमें कृष्णदयाल बाबूसे कोई बात कहना अनावश्यक या व्यर्थ समझा। गोराके सम्बन्धमें स्वामीकी उदासीनता उन्हें बहुत ही कष्ट देती थी। वह जानती थी, कृष्णदयालने गोराको अपने हृदयमें पुत्रका स्थान नहीं दिया। यहाँ तक कि उनके अन्तःकरण में गोरा के ऊपर एक विरोधका भाव था। गोरा आनन्दमयी के दाम्पत्य सम्बन्धको दो टुकड़े करके दोनों जनोंके बीचमें बिन्ध्याचलकी तरह खड़ा हुआ था। उसके एक अत्यन्त सतर्क शुद्धाचारको लेकर कृष्णदयाल अकेले थे, और दूसरी ओर अपने ‘श्लेच्छ’ गोरा के लिये अकेली आनन्दमयी थी। गोराके जीवनका इतिहास पृथ्वी पर जो दो आदमी जानते हैं, उनके बीचमें आने जाने की राह जैसे बन्द हो गई है। इन सब कारणोंसे संसारमें गोरा के ऊपर आनन्दमयीका स्नेह बिल्कुल अकेले उन्हींकी सम्पत्ति था इस परिवारमें गोराकी अनधिकार अवस्थितिको वह सब ओरसे जितनी हलकी कर

रखना संभव था, उसीकी चेष्टा करती थीं। आनन्दमयीको नित्य यही चिन्ता रहती थी कि पीछे कोई यह न कहे कि तुम्हारे गोराके कारण यह हुआ, तुम्हारे गोराके कारण हमें यह बात सुननी पड़ी, अथवा तुम्हारे गोराने हमारा यह नुकसान कर डाला। गोराकी सब जिम्मेदारी तो उन्हींकी है। वह हठी, तेजस्वी और उदंड गोरा है उसके अस्तित्वको छिपाकर रखना तो कोई सहज बात नहीं है। उसी अपनी गोद के पागल गोराको इस विद्वद् परिवारके बीचमें अब तक दिन रात संभाले रहकर इतना बड़ा किया है—इसमें उन्होंने ऐसी अनेक अप्रिय बातें सुनी हैं जिनका कोई जवाब नहीं दिया; ऐसे अनेक दुःख सहें हैं जिनका हिस्सेदार वह और किसीको नहीं बना सकीं।

आनन्दमयी चुपचाप होकर खिड़कीके पास बैठी रहीं। उन्होंने देखा, कृष्णदयाल बाबूने प्रातःकाल स्नान करके—ललाटमें गोपीचंदनकी छाप लगा कर—मंत्र उच्चारण करते-करते घरमें प्रवेश किया। उनके पास आनन्दमयी जा नहीं सकीं। निपेय, निपेय, सर्वत्र ही निपेय है। अन्तको लंबी सांस छोड़कर ठठकर आनन्दमयी महिमके कमरेमें गईं। महिम उस समय फर्शके ऊपर बैठा अखबार पढ़ रहा था, और उसका नौकर स्नानके पहले उनके शरीरमें तेलकी मालिश कर रहा था। आनन्दमयीने महिमसे कहा—महिम, तुम मेरे साथ एक आदमी कर दो, मैं जाकर गोराको देख आऊँ वह जेल जानेके लिये मनमें निश्चय किये बैठा है। अगर उसे जेलकी सजा हो गई तो क्या मैं उसके पहले एक बार उसको देख भी न आ सकूंगी ?

महिमका ऊपरका व्यवहार गोराके बारे में चाहे जैसा हो भीतर उसके हृदयमें गोराके प्रति एक प्रकार का आतृ-स्नेह अवश्य था। उसने मुँहसे गरजकर यह अवश्य कहा कि “जाय अभागा जेलको। अब तक जेल नहीं गया वह यही आश्चर्य है।” किन्तु यह कहने के बाद ही दम भरमें अपने साथी परान घोपालको बुला कर उसे वकीलकी फीसके लिये कुछ रुपये देकर, उसी समय गोराके पास रवाना कर दिया, और

गोरा

उधर आप भी आफिसमें जाकर यह निश्चय कर लिया कि साहबसे छुट्टी माँगेंगे; अगर साहबने छुट्टी और बीबीने अनुमति देदी, तो वहाँ जायेंगे।

आनन्दमयी भी जानती थी कि महिम गोराके लिए कुछ किये बिना बैठा नहीं रह सकता महिमके यथासम्भव प्रबन्ध करनेकी बात सुनकर वह अपनी कोठरीको लौट गई। वह स्पष्ट ही जानती थी कि गोरा जहाँ पर है, उस अपरिचित स्थानमें, इस संकटके समयमें उन्हें साथ लेकर जाने वाला आदमी इस परिवार में कोई नहीं है। वह हृदयकी ज्ञान पीड़ाको मन ही मन सहनकर चुप होकर बैठ रही। लक्ष्मिया जब हाथ हाथ करके रोने लगी, तब उसको डपट कर दूसरी दालानमें भेज दिया। सो इसको चुपचाप सहन कर लेनाही उनका सदाका अभ्यास था। सुख और दुःख, दोनों हीको वह शांत भावसे ग्रहण करती थीं। उनके हृदयका दुःख और कष्ट केवल अन्तर्यामी ही जानते थे !

विनय सोचकर ठीक न कर सका कि वह आनन्दमयी से क्या कहे। किन्तु आनन्दमयी किसीके सान्त्वना वाक्योंकी कुछ अपेक्षा नहीं रखती थीं। जिस दुःख का कोई प्रतिकार नहीं है उस दुःखकी अन्य कोई आदमी अगर उनके साथ आलोचना या चर्चा करने आता था तो उनकी प्रकृति संकुचित-सी हो उठती थी। उन्होंने और कोई बात उठने देनेका अवसर न देकर विनयसे कहा—विन्, देख पड़ता है, अभी तक तुम नहाए नहीं हो जाओ जल्द नहा आओ बहुत देर हो गई है।

विनय स्नान करके जब भोजन करने बैठा तब उसके पास गोराका स्थान शून्य देख कर आनन्दमयीका हृदय हाहाकार कर उठा। गोराको आज जेलका अन्न खाना पड़ रहा होगा। यह सोचकर कि वह अन्न निर्मम शासनके द्वारा कटु है, माताकी सेवा और स्नेहके मेलसे मथुर नहीं है, आनन्दमयी को भी कोई बहाना करके वहाँसे उठ जाना पड़ा।

परेश बाबू घर आकर ललिताको देखते ही समझ गये कि यह ठहण्ड लड़की जरूर कोई अनोखी बात करके वहाँ से आई है। जिज्ञासा-भरी दृष्टि से उनके मुँहकी ओर देखते ही वह बोल उठी—बाबूजी, मैं चली आई हूँ। किसी तरह वहाँ नहीं रह सकी।

परेश बाबूने पूछा—क्यों चली आई? क्या हुआ?

ललिता ने कहा—गोरा बाबू को मैजिस्ट्रेटने कैदकी सजा दी है।

गोरा इसके बीच कहाँसे आपड़ा, कैसे उसे जेल हुआ, यह परेश बाबू कुछ न समझ सके। ललितासे सब समाचार सुनकर कुछ देर तक वे दुखी होते रहे। उसके बाद गोराकी माँकी बात सोचकर उनका चित्त और भी दुखी हुआ। वे मन ही मन सोचने लगे कि चोरको जो दण्ड देना चाहिये था, वही दण्ड गोरा को भी देना मैजिस्ट्रेट के लिए सर्वथा धर्म विरुद्ध कार्य हुआ है मनुष्यके प्रति मनुष्यका अनिष्ट साधन संसार की और सब हिंसाओंसे कितना भयानक है, यह कहा नहीं जा सकता। उसके पीछे समाजकी शक्ति और राजाकी शक्तिने एक साथ मिलकर उसे कैसा भयानक कर दिया है, यह दृश्य गोरा के कारागार की बात सुनकर उनकी आँखोंके सामने प्रत्यक्ष हो गया।

परेश बाबूको इस प्रकार चुप हो सोचते देख ललिता उत्साहित होकर बोल उठी—अच्छा, बाबूजी, आप ही कहिए क्या यह घोर अन्याय नहीं है?

परेश बाबूने अपने स्वाभाविक शान्त भावसे कहा—गोरा ने कब क्या किया है, यह हम ठोक नहीं जानते। हाँ, इतना कह सकते हैं गोरा अपनी कर्तव्य-बुद्धिकी प्रबलताके भोंके में आकर सहसा अपने अधिकारकी सीमा पार कर सकता है। किन्तु अंगरेजी भाषामें जिसको क्राइम (जुर्म) कहते हैं

वह गोराके लिए एकदम प्रकृति-विरुद्ध है। इसमें कुछ भी संदेह नहीं। किन्तु हम लोग क्या करेंगे ? वह समयानुसार काम नहीं करता, आजकल का जो न्याय है, उस पर वह विचार नहीं करता। जिस ज़मानेका खयाल उसके दिमागमें घुसा है, अथ वह ज़माना नहीं। इस समय जान बूझ कर अपराध करने का जो दण्ड है वही भूलसे भी करनेका दण्ड है। दोनों प्रकार के कैदी एक ही जेल में एक साथ ठूँसे जाते हैं। ऐसा क्यों होता है, इसका दोष एक ही आदमीके माथे मढ़ा नहीं जा सकता। कितने ही लोग इस दोषके भागी हैं। एकाएक इस प्रसङ्गको रोककर परेश बाबू पूछ बैठे—तुम किसके साथ आई हो ?

ललिता ने साहस करके कहा—विनय बाबूके साथ। बाहरसे वह चाहे जितनी प्रबलता प्रकट करती किन्तु उसके भीतर दुर्बलता थी। विनय बाबूके साथ आनेकी बात कहते समय लाख चेष्टा करने पर भी उसका स्वर स्वाभाविक नहीं रहा। उसमें कुछ विकार आ ही गया। लज्जासे बचनेके लिए खूब सावधान रहने पर भी न मालूम कहाँसे कुछ लज्जा आ ही गई। चेहरे पर लज्जाका भाव छा गया है, यह समझकर उसे और भी लज्जा हुई।

परेश बाबू इस उद्धत-स्वभावकी लड़कीको अपनी और लड़कियों के अलावा कुछ अधिक प्यार करते थे। इसके व्यवहारको और लोगोंके द्वारा निन्दा होने पर भी उसके आचरणमें जो सत्यनिष्ठता थी उसे वे विशेष श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे। वे जानते थे, ललितामें जो दोष है वही लोगों की नज़रमें विशेष रूपसे पड़ेगा, किन्तु इसमें जो गुण है वह, चाहे जितना ही दुर्लभ क्यों न हो, लोगोंके निकट आदरणीय न होगा। परेश बाबू उसके दोष को न देख करके उसके गुणको ही यत्नपूर्वक आश्रय देते आये हैं। वे ललिताकी दुरन्त प्रकृति को दबानेकी चेष्टा करते हुए भी उसके भीतरका महत्त्व नष्ट करना नहीं चाहते थे। उसकी और दो बेटियोंको सब लोग सुन्दरी कहते थे उनका रङ्ग गोरा था किन्तु ललिताका रङ्ग उन दोनोंकी अपेक्षा कुछ साँवला था। उसके चेहरेके सौन्दर्यमें भी भेद

था। वरदासुन्दरी इसी कारण ललिताके लिए योग्य वरकी बात चलाकर स्वामीके समीप सदा उद्वेग प्रकट करती थी। किन्तु परेश बाबू ललिताके चेहरे पर जो एक प्रकारकी शोभा देखते थे, वह न रङ्गकी शोभा थी और न अवयवकी शोभा; वह अन्तःकरणकी गम्भीर शोभा थी। उसमें केवल लालित्य ही नहीं था किन्तु स्वतन्त्रताका तेज और मानसिक शक्तिकी दृढ़ता भी भरी थी। वह दृढ़ता सबके हृदयको मोह नहीं सकती थी। वह व्यक्ति-विशेषको अपनी ओर खींचती थी किन्तु बहुतेरोंको दूर हटा देती थी। संसारमें ललिताका स्वभाव लोगोंको प्रिय न होगा, यह समझ परेश बाबू उस पर कुछ खेद करते हुए उसे अपने पास बिठाते—और उसमें कोई खुश नहीं रहता यह जानकर ही उसके दोषों पर ध्यान न दे उसे दया की पात्री समझते थे।

परेश बाबूने जब सुना कि ललिता अकेली विनय के साथ दूठान चली आई तब वे तुरन्त समझ गये कि इसके लिए उसे बहुत दिनों तक दुःख सहने पड़ेंगे। उसने जो कुछ अपराध किया है, उसकी अपेक्षा भारी अपराधका दण्ड लोग उसके प्रति निर्धारित करेंगे। वे इस बातको मन ही मन चुपचाप सोच रहे थे, इसी समय ललिता बोल उठी—मैंने अपराध किया है। किन्तु इस बार मैं भली भाँति समझ गई हूँ कि मैजिस्ट्रेटके साथ हमारे देशके लोगोंका ऐसा सम्बन्ध है कि उनके आतिथ्यमें सम्मान का नाम नहीं, केवल अनुग्रहका है। यह सहकर भी वहाँ रहना क्या मेरे लिए उचित था ?

परेश बाबू ने इस प्रश्न का कुछ उत्तर न दे सिर्फ मुसकुरा-कर कहा—
तू पगली है।

इस घटनाके सम्बन्धमें मन ही मन चिन्ता करते हुए परेश बाबू जब शामको बाहर टहल रहे थे तब विनयने आकर उन्हें प्रणाम किया। परेश बाबूने गोरा के कूँद-खाने की सजाके सम्बन्धमें उसके साथ बड़ी देर तक बात-चीतकी, किन्तु ललिताके साथ स्टीमर पर आनेके प्रसङ्गमें

कुछ न पूछा । अंधेरा होने पर कहा—चलो विनय, भीतर चलो ।

विनयने कहा—मैं अभी अपने घर जाऊँगा ।

परेश बाबूने उससे दूसरी बार ठहरनेका अनुरोध न किया । विनय एक बार सचकित दृष्टिसे दो-मंजिलेकी ओर देखकर धीरे-धीरे चला गया ।

ऊपरसे ललिताने विनयको देख लिया था । जब परेश बाबू अकेले घरके भीतर बैठे, तब ललिताने समझा कि कुछ देरमें विनय भी घर आवेगा । परन्तु विनय न आया । तब टेबलके ऊपरकी कुछ किताबोंको उलट-पलटकर ललिता कोठेसे चली गई । परेश बाबूने फिर ललिता को पुकारा । उसके उदास मुँहकी ओर स्नेह-भरी दृष्टिसे देखकर कहा—बेटी मुझे एक ब्रह्म-सङ्गीत सुनाओ । यह कहकर उन्होंने बत्ती की रोशनी में कागज़ की आड़ कर दी ।

दूसरे दिन वरदासुन्दरी और उसके दलके सभी लोग कलकत्ते आ पहुँचे। हारान बाबू ललिताके सम्बन्धमें अपने क्रोधको न रोक सके, इसलिये सीधे अपने घर न जा इन लोगोंके साथ एकाएक परेश बाबू के पास आए। वरदासुन्दरी मारे क्रोध और ग्लानिके ललिताकी ओर न देख और न उसके साथ कोई बात करके सीधी अपने कमरेमें चली गई। लावण्य और लीलाभी ललिताके ऊपर बहुत रुष्ट थी। ललिता और विनयके चले आनेसे उनका अभिनय अङ्गहीन हो पड़ा था। बीच-बीचमें उन दोनों का पार्ट खाली हो जानेसे वे सब बड़ी लज्जित हो गई थी। सुचरिता हारान बाबू की क्रोध भरी उत्कट उत्तेजनामें, वरदासुन्दरीके आँसु-भरे कटुवाक्यों में तथा लावण्य और लीलाके लज्जा भरे निरुत्साह में कुछ भी योग न देकर एकदम चुप हो रही थी। अपने निर्दिष्ट कामको वह मैशीनकी तरह करती गई। सुधीर लज्जा और पश्चात्तापसे संकुचित होकर परेश बाबूके घरके फाटकसे ही अपने घरको चला गया ? लावण्य उसको घर आने के लिए बार बार अनुरोध करके सफल न होने पर उससे बिगड़ बैठी और बोली—आजसे मैं तुमसे कुछ न कहूँगी।

हारान बाबू परेश बाबूके घरमें प्रवेश करते ही बोल उठे एक बहुत बड़ा अन्याय हो गया है।

पासवाले कमरे में ललिता थी। यह बात उसके कानमें पड़ते ही वह आकर अपने पिताकी कुरसीके पीछे दोनों हाथ रखकर खड़ी हुई, और हारान बाबूके मुँहकी ओर टकटकी बाँधकर देखने लगी।

परेश बाबूने कहा—मैं ललिताके मुँह से सब बातें सुन चुका हूँ। जो बात हो गई, उसकी आलोचना करनेसे अब कोई फल नहीं।

शान्त-स्वभाव लामाशील परेश बाबूको हारानबाबू अत्यंत दुर्बल-हृदय समझते थे। इससे उन्होंने कुछ अनादरके साथ कहा—घटना तो हो ही जाती है, परन्तु कलङ्क सहसा नहीं मिटता, इसलिए जो बात हो जाती है उसकी आलोचना करना भी जरूरी है। यदि आपसे ललिता इस प्रकार बराबर सहारा न पाती तो उसने जो काम आज किया है, वैसा वह कभी न कर सकती। आपहीने उसे इतना उद्वेग बना डाला है। आपने उद्वेग बनाकर उसका कहाँ तक अनिष्ट किया है, यह आजका सब हाल सुननेसे आप भला-भाँति समझ जाँयगे।

परेश बाबूने पीछेकी ओर ललिताको खड़ी देख उसका हाथ पकड़ सामने खींचकर हारान बाबूसे जरा हँसकर कहा—हारान बाबू जब समय आवेगा तब आप जान सवेंगे कि संतान को सुशीलित करनेके लिए स्नेहकी भी आवश्यकता होती है।

ललिताने झुककर पिता के कानके पास मुँह ले जाकर कहा—बाबूजी आपका पानी ठण्डा हुआ जा रहा है। आप नहाने जायें।

परेश बाबूने हारान बाबूको ओर देखकर कोमल स्वरमें कहा—हाँ, जाता हूँ, अभी उतनी देर नहीं हुई है।

ललिताने स्नेह भरे स्वरमें कहा—नहीं आप स्नान कर आवें, तब तक हम लोग हारान बाबूके पास बैठती हैं।

परेश बाबू जब चले गये तब ललिता एक कुर्सी पर जमकर बैठी और हारान बाबूके मुँह की ओर देखकर बोली—आप समझते ही हैं सभीको अपनी बातें कहने का अधिकार है।

ललिताको सुचरिता जानती थी। और दिन ललिताकी ऐसी मूर्ति देखने पर वह मन ही मन उद्विग्न हो उठती; किन्तु आज वह खिड़कीके पास कुर्सी पर बैठकर, एक किताब हाथमें ले सिर मुकाये चुपचाप उसके पन्ने उलटने लगी। अपनेको रोक रखना सुचरिता जानती थी। वह स्वभावकी बड़ी गम्भीर थी। इन कई दिनों के अनेक आघातोंसे उसके मनमें जितनी ही अधिक पीड़ा होती थी उतनी ही वह अपने आवेगको

रोककर मन मारे बैठी रहती थी। आज उसे अपना मौन असह्य हो गया है। इसलिए ललिता जब हारान बाबू के आगे अपना विचार प्रकट करने बैठी तब सुचरिताने अपने हृदयके रुके हुए वेगको मुक्त कर देने का अवसर पाया।

ललिताने कहा— हमारे लिए पिताजीको क्या करना उचित है यह आपकी समझमें पिताजीकी अपेक्षा आप ही अच्छा जानते हैं। ऐसा आपको समझता चाहिए, क्योंकि आप समस्त ब्राह्मसनाजके आचार्य हैं न।

ललिताकी ऐसी उद्विग्नता-भरी बात सुन हारान बाबू पहले तो हत-बुद्धि हो रहे किन्तु फिर उन्होंने इसका खूब कड़ा जवाब देना चाहा। उन्हें कुछ बोलते देख ललिता ने रोककर कहा—हम लोग इतने दिनसे आपकी श्रेष्ठताका बराबर लिहाज करती आती हैं किन्तु आप यदि पिताजी से बढ़कर अपनेको मान्य समझते हैं, और उनकी अपेक्षा अपना आदर बढ़ाना चाहते हैं तो इस घरमें आपका आदर कोई न करेगा। हमारे नौकर तक आपको न पृछेंगे।

हारानबाबू आँखें लाल कर बोल उठे—ललिता तुम बहुत बढ़कर बातें—

ललिताने उनकी बात काटकर तीव्र स्वरमें कहा—शान्त रहिए। आपकी बातें हमने बहुत सुनी हैं। आज मेरी बात सुनिए। अगर आपको मेरी बात पर विश्वास न हो तो आप सुचरिता बहिनसे पूछ लीजिए आप अपनेको जितना बड़ा समझते हैं, उसकी अपेक्षा हमारे पिताजी बहुत बड़े हैं। अब आपको जो कुछ उपदेश मुझे देना है दे डालिए।

हारान बाबू का चेहरा उतर गया। उन्होंने कुर्सीसे उठकर कहा सुचरिता !

सुचरिताने किताबके पन्नेकी ओरसे नजर उठाकर उनकी ओर देखा।

हारान बाबूने कहा—देखो, ललितता तुम मेरे साथ अमर्त्यताका व्यवहार कर रही है। क्या तुम्हें मेरा अपमान करना उचित है !

सुचरिताने गम्भीर स्वरमें कहा—वह आपका अपमान करना नहीं चाहती। उसके कहने का मतलब यह है कि आप पिताजीको सम्मान की दृष्टिसे देखा करें। उनसे बढ़ कर सम्मानके योग्य और कोई है यह हम लोग नहीं जानती।

हारान बाबूकी चेष्टासे जान पड़ा कि वह अभी कुरसी छोड़कर चले जाँयगे। किन्तु वह दो-एक बार उठनेका लक्षण दिखाकर भी न उठे, मुँह लटका कर बैठ रहे। इस घरमें उसकी प्रतिष्ठा धीरे नष्ट हो रही थी, इस बात को वह जितना ही सोचते थे, उतना ही वह यहाँ आने आसनको दृढ़ जमाकर बैठनेके लिए विशेष चेष्टा करते थे। वे इस बातको सोचकर अपनी अप्रतिष्ठाको भूल जाते थे कि पुरानी वस्तुको जितना ही जोर लगाकर दबा रखना चाहते हैं वह उतनी खण्ड खण्डा होकर टूटती है।

हारान बाबू मुँह लटकाये बैठे हैं। यह देख, ललितता वहाँ से उठ सुचरिता के पास जा बैठी। और उसके साथ मीठे स्वरमें इस प्रकार बातें करने लगी मानों हारान बाबूके साथ कुछ छेड़छाड़ ही नहीं हुई हैं।

इसी समय सतीशने घरके भीतर प्रवेश कर सुचरिता का हाथ खींचकर कहा—बड़ी बहिन, इधर आओ।

सुचरिता ने कहा—कहाँ जाना है ?

सतीश—चलो, तुमको एक चीज दिखाऊँगा ! ललितता बहिन, तुमने कह तो नहीं दिया ?

ललितता—नहीं।

माँसीके आने की बात ललितता सुचरितासे न कहे, ऐसा ही ललितताका निश्चय सतीशके साथ हुआ था। इसीसे ललितताने अपनी प्रतिज्ञाका स्मरण कर सुचरितासे कुछ नहीं कहा।

परेश बाबूको स्नान कर घरमें आते देख सतीश अपनी दोनों बहिनोंको वहाँसे खींचकर ले गया।

हारान बाबूने परेश बाबूसे कहा—सुचरिताके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव पक्का हो गया है उसमें अब बिलम्ब करना ठीक नहीं। मैं चाहता हूँ कि अगले रविवारको यह काम हो जाय।

परेशबाबू—मुझे उसमें कोई उत्र, नहीं। यह बात सुचरिताकी इच्छा पर निर्भर है।

हारान—उसकी इच्छा तो पहले ही ज्ञात हो चुकी है।

परेश बाबूने कहा—अच्छा, तो आपकी ही बात रही।

उस दिन ललिताके पाससे आकर परेश बाबूके घर जाना विनबाके लिए असम्भव हुआ, और अपने सुने घरमें भी बैठना कठिन हो गया । दूसरे दिन तड़के ही उठकर वह आनन्दमयीके पास पहुँचा और कहा—माँ, मैं कुछ दिन तुम्हारे ही यहाँ रहूँगा ।

आनन्दमयीको गोराके विच्छेदसे जो शोक हुआ था, उसमें सान्त्वना देनेका अभिप्राय भी विनयके मनमें था । यह समझकर आनन्दमयीका हृदय प्रेमसे पिघल गया । वह कुछ न कहकर बड़े स्नेहसे विनयकी पीठ पर हाथ फेरने लगी ।

विनयने अपने खाने-पीने और सोने आदिका बहुत बड़ा ऋमेला खड़ा कर दिया । वह बीच-बीचमें आनन्दमयीके साथ झूठ-मूठका झगड़ा करने लगा कि यहाँ मेरा जैसा प्रबन्ध चाहिए नहीं होता । उसनेह मेशा ही इधर-उधरकी बातें सुनाकर आनन्दमयीको और अपनेको गोराकी चिन्तासे अलग रखनेकी चेष्टा की । साँझको जब मनको बाँध रखना कठिन हो जाता, तब विनय उत्पात करके आनन्दमयीको घर के कामोंसे हठात् रोक द्वारके सामने बरामदेमें चटाई बिछाकर बैठता था । वह आनन्दमयीसे उसके लड़कपन की बातें और उसके बापके घरकी कहानी कहलवाता । जब उसका विवाह नहीं हुआ था, जब वह अपने अध्यापक पितामहकी पाठशालाके विद्यार्थियोंके बड़े आदरकी बालिका थी, और जब सभी मिलकर सब विषयोंमें उस पितृहीन बालिकाका पक्ष करते थे, जिससे उसकी विधवा माताके मनमें विशेष उद्वेग होता था, उस दिनकी सब कथा कहने को विनय उसे बाध्य करता था । विनय कहता—माँ, तुम कभी मेरी माँ न थी, यह बात मनमें आनेसे मुझे बड़ा आश्चर्य होता है । मैं तो समझता हूँ कि महल्लेके सभी लड़के तुमको अपनी ही माँ समझते हैं ।

एक दिन साँझको आनन्दमयी चटाई पर दोनों पैर पसार बैठी थी। विनयने उसके पैरके तलुवों पर मिर रखकर कहा—माँ, जी चाहता है कि मैं अपनी सब विद्या, बुद्धि भुलाकर बालक बन तुम्हारी गोदमें बैठूँ। संसारमें तुम्हीं मेरी सब कुछ हो, तुम्हें छोड़ मैं और कुछ नहीं चाहता।

विनयके कौमलता-भरे कण्ठसे एक ऐसा आन्तरिक भक्ति-भाव प्रकट हुआ जिससे आनन्दमयीने व्यथाके साथ आश्चर्य का अनुभव किया। वह खिसककर विनयके पास बैठ गई और धीरे-धीरे उसके माथे पर हाथ फेरने लगी। बड़ी देर तक चुप रहकर आनन्दमयीने पूछा—विनय, परेश बाबूके घरका समाचार कैसा है ?

इस प्रश्नसे विनय सहसा लज्जित हो चौंक उठा। सोचा, माँ से कोई बात छिपाना ठीक नहीं, मेरी माँ अन्तर्यामिनी है। उसने ठिठकते हुए कहा—हाँ, उनके घरका समाचार अच्छा है, सभी लोग कुशलपूर्वक हैं।

आनन्दमयी—मेरी बड़ी इच्छा है कि परेश बाबूकी लड़कियों से मेरी जान-पहचान हो जाय। पहले तो उनके ऊपर गोरा के मतका भाव अच्छा न था, किन्तु अब जब उन लोगोंने उसे वशमें कर लिया है तब वे साधारण लोगोंमें नहीं हैं।

विनयने उत्साहित होकर कहा—मेरी भी कई बार यह इच्छा हुई है कि परेश बाबूकी लड़कियोंके साथ किसी तरह तुम्हारी भेंट करा दूँ, किन्तु गोरा नाराज न हों इस भयसे मैंने कभी इसका जिक्र भी तुमसे नहीं किया।

आनन्दमयीने पूछा—बड़ी लड़कीका नाम क्या है ?

इस प्रकार प्रश्नोत्तर होते-होते जब ललिता का प्रसङ्ग आया तब विनयने इस प्रसङ्गको थोड़े हीमें समाप्त कर डालना चाहा। किन्तु आनन्दमयीने न माना। वह ललिताके सम्बन्ध में प्रश्न पर प्रश्न करने लगी। उसने मुसकुराकर कहा—सुनती हूँ, ललिताकी बुद्धि बड़ी तीव्र है।

विनयने कहा—तुमने किससे सुना है ?

आनन्दमयी—तुम्हींसे !

पहले एक ऐसा समय था जब ललिताके सम्बन्धमें विनय को कुछ सङ्कोच न था। तब उसने आनन्दमयी के आगे ललिताकी तीक्ष्ण बुद्धि पर जो बेरोक टोक आलोचनाकी थी, वह उसे याद ही थी।

आनन्दमयी खूब चतुराई से सब बाधाओंको बचा-कर ललिताकी बातको इस प्रकार ले चली कि विनयके द्वारा उसके जीवन की प्रायः सभी बातें प्रकट हो गयी। गोराके जेल जानेकी घटना से दुखी होकर ललिता चुपचाप अकेली भागकर स्टीमर पर विनयके साथ आई, यह बात भी विनयने आज कह डाली। कहते-कहते उसका उत्साह बढ़ गया। वह जिस दुखके बोझसे वह दबा जा रहा था, वह एकदम हलका पड़ गया। उसने ललिताके समान बालिकाके अद्भुत चरित्रको जाना और उसके चरित्रका इस प्रकार वर्णन किया, इसीको वह परम लाभ मानने लगा। रात को जब भोजनके लिए बुलाहट हुई, और बात ख़तम हुई तब विनय मानों स्वप्नसे जाग उठा; उसे मालूम हुआ कि मेरे मनमें जो कुछ बात थी वह सभी आनन्दमयीसे कही जा चुकी है। आनन्दमयीने विनयके मुँहसे आज सभी बातें सुनीं। आज तक माँसे छिपानेकी कोई बात विनयके मनमें न थी। मामूली से मामूली बात भी वह आनन्दमयी के पास आकर कह सुनाता था। किन्तु परेश बाबूके घर के लोगोंके साथ जबसे परिचय हुआ है तबसे कोई एक बात उसके हृदयमें कहीं अटक रही थी, वह उसे बराबर कसकती थी। आज ललिताके सम्बन्धकी जो बातें उसके मन में थीं वे एक प्रकार से सभी आनन्दमयी पर प्रकट हो गई हैं। यह सोचकर विनयका मन उत्तमोत्तम हो गया।

भोजन करके रातमें अकेली बैठकर आनन्दमयी इन बातोंको बड़ी देर तक सोचती रही। गोराके जीवन की समस्या उत्तरोत्तर जटिल होती जा रही है और परेश बाबूके घरमें ही उसकी कोई मीमांसा हो सकती है। यह सोचकर उसने निश्चय किया कि जैसे होगा, एक बार पंश बाबूकी लड़कियोंके साथ अवश्य भेंट करनी होगी।

(३६)

शशिमुखीके साथ विनयका विवाह जैसे एक तरह से पक्का होगया है, इस डंगसे महिम और उसके घरके और लोग चल रहे थे । शशिमुखी तो विनयके पास ही न फटकती थी । शशिमुखीकी माँ लक्ष्मीमणिके साथ तो विनयका परिचय जैसे था ही नहीं, यह कहना कुछ सूठ न होगा । वह ठीक लज्जाशीला हों, यह बात न थी । बात यह थी कि वह कुछ अस्वाभाविक रूपसे परदा पसंद करती थीं । उसने पक्के तौर पर यह ठीक कर लिया कि विनयके साथ ही उनकी कन्याका व्याह होगा । इस प्रस्ताव की एक भारी सुविधा की यह बात उन्होंने अपने स्वामीके मनमें जमा दी कि विनय उन लोगोंसे दहेजमें कोई भारी रकम न माँग सकेगा ।

आज रविवार था । विनय को घरमें अकेला बैठा देखकर महिमने कहा—विनय तुमने जो कहा था कि तुम्हारे वंशमें अग्रहन के महीने में विवाह होनेका निषेध है, सो यह तो किसी काम की बात नहीं है । एक तो पोथी-पत्रेमें निषेधके सिवा कोई बात ही नहीं है, उस पर अगर घरके शास्त्रको मानोंगे तो फिर वंशकी रत्ना किस तरह होंगी ?

विनयके संकटको देखकर आनन्दमयीने कहा—शशिमुखीको विनय उसके बिलकुल बचपनसे देखता आ रहा है; उससे व्याह करनेकी बात उसे पसन्द नहीं आती और इसी से वह अग्रहनके निषेधका बहाना कर रहा है ।

महिमने कहा—यह बात तो फिर शुरूमें ही कह देनी चाहिए थी ।

आनन्द०—अपने मन को जाँचनेमें भी तो कुछ समय लगता है ।

और लड़कोंकी क्या कमी है महिम ! गोरा लौट कर आ जाय—वह तो अनेक अच्छे लड़कोंको जानता है—वह एक लड़का ढूँढ़ कर ठीक कर दे सकेगा ।

महिमने कहा—माँ, तुम अगर विनयके मनको बहँका न देती, तो वह इस काम में कुछ 'नाहीं-नूहीं' न करता ।

विनय व्यस्त होकर कहनेको था कि इतनेमें आनन्दमयीने बाधा देकर कहा—सौ सच ही कह रही हूँ महिम, मैं इस काममें विनयको उत्साहित नहीं कर सकती । विनय अभी लड़का ही है । मुमकिन है कि वह बिना सोचे समझे एक काम कर भी डाले किन्तु अन्त में उसका फल अच्छा न होगा ।

आनन्दमयीने विनयको अलग आड़में रखकर अपने ही ऊपर महिमके कोपका धक्का ले लिया । विनय यह बात समझ गया, और अपनी इस दुर्बलता पर लज्जित हो उठा । वह अपनी असमर्थताको स्पष्ट करके प्रकट करनेको उद्यत हुआ, इतने ही में महिम और न ठहर करके मन-ही-मन यह कहते हुए चले गये कि सोतेली माँ कभी अपनी नहीं होती ।

आनन्दमयी इस बातको जानती थी कि महिम ऐसा खयाल मनमें ला सकता है और वह खुद भी सोतेली माँ होनेके कारण विचार-क्षेत्रमें बराबर अपराधी की श्रेणीमें ही स्थान पाये हुए हैं । किन्तु यह सोचकर कि लोग क्या खयाल करेंगे, काम करनेका उन्हें अभ्यास ही न था । जिस दिन उन्होंने गोराको अपनी गोद में उठा लिया उसी दिनसे उनकी प्रकृति लोगों के आचार और विचारसे एक दम स्वतन्त्र हो गई है । उसी दिनसे वह इस तरहके सब आचरण करती आई हैं कि जिनसे लोग उनकी निन्दा ही करते हैं । उनके जीवनके मर्म स्थानमें जो एक छिपा हुआ सत्य उन्हें सर्वदा पीड़ा पहुँचाता है, यह लोक-निन्दा असलमें उस पीड़ासे कुछ छुटकारा देकर शान्ति ही पहुँचाती है । लोग जब उन्हें क्रिस्तान कहते थे तो वह गोराको छातीसे लगा कर कहती थीं —भगवान् जानते क्रिस्तान कहनेसे मेरी कुछ भी निन्दा नहीं होती । इस तरह क्रमशः सभी मामलोंमें लोगोंकी बातोंसे अपने व्यवहारको अलग कर देना उनके लिए एक स्वभाव सिद्ध बात हो गई थी । इसी कारण महिम मन-ही-मन या

प्रकट रूपसे साँतेली माँ कहकर अगर उन्हें लाङ्घित करता तो भी वह अपने निश्चित मार्गसे विचलित न होतीं ।

आनन्दमयीने कहा—बिन् तुम बहुत दिनसे परेश बाबू के घर नहीं गये ?

विनयने कहा—बहुत दिन अभी कहाँ से हो गये ?

आनन्द०—स्टीमरसे आनेके दूसरे दिनसे तो तुम एक दफे भी उधर नहीं गये ।

वह तो बहुत अधिक दिनकी बात है, किन्तु विनय जानता था, कि त्रीचमें परेश बाबूके घर उसका जाना-आना इतना बढ गया था कि आनन्दमयी को भी उसके दर्शन दुर्लभ हो उठे थे । उसके देखते बेशक वह परेश बाबूके घर बहुत दिनसे नहीं गया ।

विनय चुप होकर अपनी धोती के सिरेसे एक डोरा तोड़ने में लग गया ।

इसी समय नौकरने आकर कहा कि माँ जी कहींसे औरतें आई हैं ।

विनय चटरट उठ खड़ा हुआ । कौन आया कहाँसे आया; इसकी खबर लेनेके पहिले ही सुचरिता और लज्जिता ने वहाँ प्रवेश किया । विनयका घर छोड़कर बाहर जाना न हो सका; वह सञ्चाटेमें आकर वही खड़ाका खड़ा रह गया ।

दोनोंने आनन्दमयीके पैर छूकर प्रणाम किया । लज्जिता ने विनयकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया; सुचरिताने उसे नमस्कार करके कहा—अच्छे हैं आप ? फिर आनन्दमयीकी ओर देख कर कहा—हम परेश बाबू के घर से आई हैं ।

आनन्दमयीने आदर करके उन्हें बिठलाया और कहा—मुझे वह परिचय देना न होगा । तुम लोगोंको मैंने कभी देखा नहीं बेटी, मगर तुम्हें मैं अपने घरका आदमी ही जानती मानती हूँ ।

देखते-देखते बात-चीतका सिलसिला जम गया । विनय को चुपचाप बैठे देखकर सुचरिताने उसे अपनी बातचीतके बीच खींच लानेकी चेष्टाकी;

कोमल स्वरसे पूछा—आप कई दिनसे हमारे उधर गये नहीं क्यों ?

विनयने एक बार ललिताकी ओर नजर डाल कर कहा—बार बार जल्दी जल्दी दिक करनेसे कहीं आप लोगो का स्नेह न गंवा बैठूं—यही डर मालूम पड़ता है ।

सुचरिताने जरा हंस कर कहा—आप शायद यह नहीं जानते कि स्नेह भी जल्दी-जल्दी दिक करने की अपेक्षा रखता है ?

आनन्दमयीने कहा—सो दिक करना तो यह खूब जानता है बेटी ! तुम लोगोंसे क्या कहूँ दिन भर इसकी फरमाइस और जिद को पूरा करते मेरे नाकमें दम हो जाता है जरा भी फुरसत नहीं मिलती !

इतना कहकर उन्होंने स्नेह पूर्ण दृष्टिसे विनयकी ओर देखा ।

विनयने हंस कर कहा—ईश्वरने तुमको जो धैर्य दिया है माँ, उसी की वजह से मेरे द्वारा परीक्षा ले रहे हैं ।

सुचरिताने ललितको ज़रा ठेल कर कहा—सुनती है भई ललिता हम लोगोंकी परीक्षा शायद समाप्त हो गई ! हम शायद उसमें पास नहीं हो सकीं ।

ललिताको इस बातचीतमें कुछ भी शामिल होते न देखकर हंस कर आनन्दमयीने कहा—अब हमारा विनय अपने धैर्यकी परीक्षा ले रहा है । तुम्हें उसने किस दृष्टिसे देखा है, सो तो तुम जानती नहीं हो । शामकी तुम लोगोंकी चर्चा के सिवा और कुछ बात ही नहीं करता । और परेश बाबू की बात उठने पर तो वह जैसे एकदम गल जाता है ।

आनन्दमयीने ललिताके मुख की ओर देखा । वह खूब जोर करके आँखें उठाये तो रही, लेकिन वृथा—अकारण ही—लाज हो उठी ।

आनन्दमयीने कहा—तुम्हारे बाबूजी के लिए तो उसने कितने ही लोगोंसे झगड़ा किया है ! उसके दलके लोगोंने तो उसे ब्राह्म समाजी कहकर जाति-च्युत करनेकी ठान रखा है ।—विन्, इस तरह अस्थिर हो

उठनेसे काम नहीं चलेगा बेटा—सच बात कह रही हूँ। इसमें लज्जा करने का तो कोई कारण मैं नहीं देखती। क्यों न बेटी ?

अबकी ललिताके मुखकी ओर देखते ही उसकी आँखें नीची हो गईं। सुचरिताने कहा—विनय बाबू जो हमें अपना आदमी ही जानते हैं, यह हम खूब जानती है किन्तु वह हम लोगोंके ही गुणसे नहीं—वह उनकी अपनी क्षमता है।

आनन्दमयीने कहा—सो तो मैं ठीक कह नहीं सकती बेटी। विनयको तो मैं तबसे देख रही हूँ जब वह इतना-सा था अब तक उसके मित्रों में एक मेरा गोरा ही था; यहाँ तक कि मैंने देखा है, इन लोगोंके अपने दलके जो आदमी हैं, उनके साथ भी विनय हिलमिल नहीं सकता। लेकिन तुम लोगोंके साथ उसके दो दिनके आलाप परिचयसे ही ऐसा हो गया है कि हम लोग भी अब उसका पता नहीं पाते। सोचा था, इसके लिए तुम लोगोंके साथ झगड़ा करूंगी; किन्तु इस समय देख रही हूँ, मुझे भी विनयके दलमें भरती होना पड़ेगा।

यह कह कर आनन्दमयीने एक बार ललिताकी ओर एक बार सुचरिताकी ठुठ्ठी उँगली से छू कर उसे चूम लिया।

सुचरिताने विनयकी दुर्दशा देखकर सहृदय होकर कहा—विनय बाबू बाबू जी भी आये हैं; वह बाहर कृष्णदयाल बाबूसे बातें कर रहे हैं।

सुनकर विनय चटपट बाहर चल दिया। तब गोरा और विनयकी आसाधारण मित्रताके प्रसंगको लेकर आनन्दमयी बातचीत करने लगीं। दोनों श्रोता इस विषयको मन लगा कर सुन रहे हैं, यह उन्हें अच्छी तरह मालूम हो गया। आनन्दमयी अपने जीवनमें इन्हीं दोनों लड़कोंको अपने मातृ स्नेहका परिपूर्ण अर्घ्य देकर पूजा करती आ रही हैं। संसारमें इनकी अपेक्षा बड़ा उनका और कोई नहीं था। उनके मुखसे उनके इन दोनों गोदके देवतों की कहानी स्नेहरससे ऐसी मधुर, ऐसी उज्ज्वल हो उठी कि सुचरिता और ललिता दोनों अतृप्त हृदयसे उसे सुनने लगीं।

गोरा और विनयके प्रति उनकी श्रद्धा न हो, यह बात न थी; बि आनन्दमयी सरीखी माता के ऐसे गहरे स्नेह के द्वारा उनके साथ और भी अधिक, और भी विशेष, और भी नवीन करके परिचय हुआ। आनन्दमयीके साथ आज परिचय होनेके बाद पूर्वोक्त मैजिस्ट्रेट ऊपर ललिताका क्रोध जैसे और भी बढ़ उठा। ललिताके मुँह मैजिस्ट्रेटके लिए जोशसे भरे तीव्र वचन सुनकर आनन्दमयी हँस उन्हींने कहा—बेटी गोराके आज जेलखानेमें होनेसे होने वाला दु मेरे हृदयको कैसा व्यथित कर रहा है, सो वह अन्तर्यामी ही जानते हैं लेकिन तो भी मैं उस मैजिस्ट्रेटके ऊपर क्रोध नहीं कर सकी। मैं गोराको जानती हूँ। वह जिस कामको अच्छा समझता है उसके आर्इन-कानून कुछ भी नहीं मानता। गोराका काम गोरा कर रहा और अपना कर्तव्य वे लोग भी कर रहे हैं। इसमें जिन्हें दुख मिल है वे दुख पावेंगे ही। मेरे गोराकी चिट्ठी अगर पढ़ कर देखो बेटी, तुम समझ सकोगी 'कि वह दुःखको नहीं डरा—किसीके ऊपर वृथा क्रोध भी उसने नहीं किया। जिस कामसे जो फल होता है वह निश्चय जान कर ही वह काम करता है।

यह कहकर मन लगाकर लिखी गई वह गोराकी चिट्ठी बक्सा निकाल कर आनन्दमयीने सुचरिताके हाथमें दी, और कहा—बेटी; द जोरसे पढ़ो, मैं और एक बार सुनूँ।

गोराकी वह अद्भुत चिट्ठी पढ़ी जा चुकनेके बाद तीनों जनी कु दर तक गुमशुम होकर बैठी रहीं। आनन्दमयी ने आँचलसे आँसू पोहें "उन आसुओंमें केवल मातृ हृदय की व्यथा ही नहीं थी, उसमें आन और गौरव भी मिला हुआ था।

ललिता विस्मित होकर आनन्दमयीके मुखकी ओर ताक रही थी ललिताके मनमें ब्राह्म परिवारका संस्कार खूब दृढ़ था; जिन स्त्रियों आधुनिक रीतिसे शिक्षा नहीं पाई, और जिन स्त्रियोंको वह पुरानी चाल द्विन्द्वश्रीके घरकी जानती थी उनके ऊपर उसे श्रद्धा नहीं थी। ललकपः

वरदासुन्दरी उसके जिस अपराधके प्रति लज्ज करके कइती थी कि हिन्दुओंके घरकी आरते भी ऐसा काम नहीं करतीं, उस अपराधके लिए ललिता बार-बार कुछ विशेष करके ही सिर नीचा कर लेती थी। आज आनन्दमयीके मुख से कुछ बातें सुनकर उसके अन्तःकरणने बार-बार विस्मयका अनुभव किया। उसके मनके भीतर आज एक भारी हलचल मची हुई थी; इसीसे उसने विनयके मुखकी ओर नज़र नहींकी, उसके साथ एक बात भी नहीं की। किन्तु आनन्दमयीके स्नेह, करुणा और शान्तिसे मण्डित मुखकी ओर देख कर उसके हृदयमें जो विद्रोहका ताप था, वह जैसे ठंडा हो गया—चारों ओरके सब लोगोंके साथ उसका सम्बन्ध जो हो आया। ललिताने आनन्दमयीसे कहा—गोरा बाबूने इतनी शक्ति कहाँसे पायी है यह आज आपको देखकर मेरी समझमें आगया।

आनन्दमयीने कहा—ठीक नहीं समझी। मेरा गोरा अगर साधारण लड़कोंकी तरह होता तो मैं कहाँसे बल पाती बेटी! तब क्या मैं उसके दुखको इस तरह सह सकती?

ललिताका मन आज क्यों इतना विकल हो उठा था, इसका थोड़ासा इतिहास कहनेकी आवश्यकता है।

इधर कई दिनसे सबेरे बिस्तरसे उठते ही ललिताके मनमें पहला खयाल यह आया है कि आज विनय बाबू नहीं आवेंगे। फिर भी दिन भर उसके मनने एक घड़ीके लिये भी विनयके आनेकी प्रतीक्षा करना नहीं छोड़ा। दम-दम भर पर उसने केवल यही सोचा है कि विनय शायद आया है; वह शायद ऊपर न आकर नीचेकी बैठकमें परेश बाबूके साथ बात चीत कर रहा है। इसी कारण दिन भर मैं कितनी बार वह आकारण ही इधरसे उधर घूमती फिरी है; इसका कुछ ठिकाना नहीं। अंतको दिन जब समाप्त हो जाता है, रातको जब वह बिस्तर पर सोनेको जाती है, तब वह सोच कर भी कुछ ठीक नहीं कर पाती कि वह अपने इस अशान्त मनको लेकर क्या करेगी—अपने मनको किस तरह समझावे-बहलावेगी। हृदय

जैसे फटने लगता है, रुलाई आती है, साथ ही क्रोध भी आता है। किस पर क्रोध आता है, यह समझना उसके लिये भी कठिन है। क्रोध शायद अपने ही ऊपर होता है। केवल बार-बार यही खयाल आता है कि यह क्या हुआ ! मैं किस तरह अपनेको समझाऊँगी ! किसी ओर कोई राह नहीं देख पड़ती ! इस तरह कितने दिन चलेगा ?

ललिता जानती है, विनय हिंदू है; उसके साथ किसी तरह उसका ब्याह नहीं हो सकता। फिर भी अपने हृदयको किसी तरह काबू में न ला सकनेके कारण लज्जा और भय से उसकी जान जैसे सूख गई है। यह उसने समझ लिया है कि विनयका हृदय उससे विमुख नहीं है। यह समझ लेनेके कारण ही अपने को संभालना उसके लिए आज इतना कठिन हो गया है। इसी कारण वह जब इस तरह अस्थिर होकर विनय की आशासे उसकी राह देखती रहती है, तब उसके साथ ही उसके मनके भीतर एक भय होता रहता है कि कहीं विनय आ न जाय। इसी तरह अपने साथ लड़ते-लड़ते आज सबेरे उसका धैर्य ठहर न सका। उसे जान पड़ा कि विनय के न आनेसे ही उसके हृदयके भीतर यह अशान्ति मची हुई है; एक बार मुलाकात हो जानेसे ही यह अस्थिरता दूर हो जायगी।

सबेरे वह सतीशको अपनी कोठरीमें खींच लाई। सतीश आज कल मौसीको पाकर विनयके साथ मित्रताकी चर्चाको एक तरहसे भूल ही गया था। ललिताने उससे कहा—विनय बाबूके साथ, जान पड़ता है तेरी लड़ाई हो गई है।

सतीशने ज़ोर के साथ इस अपवादको अस्वीकार किया। ललिताने कहा—वह बड़े भारी तो तेरे मित्र हैं ! तूही केवल विनय बाबू—विनय बाबू करता है वह तो तेरी ओर फिर कर भी नहीं देखते।

सतीशने कहा—हीश ! यह बात नहीं है—कभी नहीं है !

परिवारके भीतर लुप्त सतीश को अपना गौरव प्रमाणित करने के लिए इसी तरह बारम्बार गले का ज़ोर ज़ाहिर करना पड़ता है। आज

प्रमाणको उससे भी अधिक दृढ़ता करनेके लिए वह उसी समय विनयके घर पर दौड़ा गया। लौट आकर उसने कहा—वह तो घर पर हैं ही नहीं, इसीसे नहीं आये।

ललिताने पूछा—कई दिनसे क्यों नहीं आये ?

सतीशने कहा—कई दिनसे घर पर नहीं हैं।

तब ललिताने सुचरिताके पास जाकर कहा—दीदी, गौर बाबू की माँके पास हम लोगोंको एक बार जरूर जाना चाहिए।

सुचरिता—उन लोगोंसे हमारी जान-पहचान जो नहीं है ?

ललिता—वाह, गोरा बाबूके बाप तो हमारे बाबूजीके लड़कपनके मित्र हैं।

सुचरितको याद आ गया। उसने कहा—हाँ यह तो जरूर है।

सुचरिता भी अत्यन्त उत्साहित हो उठी। बोली—बहिन ललिता, तुम जाओ, जाकर बाबूजीसे चलनेको कहो।

ललिता—ना, मुझ से न कहा जा सकेगा; तुम जाकर कहो।

अन्तको सुचरिता ही परेश बाबूके पास गई। उनके आगे यह प्रसंग उठाते ही यह बोले—ठोक है, अब तक हमें हो आना चाहिये था।

भोजनके बाद जानेकी बात जब पकी हो गई, तब ललिता का मन एकाएक विमुख हो उठा। तब फिर न जाने कहाँसे अभिमान और संशय आकर उसे विपरीत ओर खींचने लगा। उसने जाकर सुचरितासे कहा—दीदी तुम बाबूजी के साथ जाओ। मैं न जाऊंगी।

सुचरिताने कहा—यह कैसे हो सकता है ? तू न जायगी तो मैं अकेले नहीं जा सकूंगी। मेरी बहन, मेरी रानी, चल गड़बड़ न कर।

अनेक अनुनय—विनयके बाद ललिता गई। किन्तु विनय के निकट वह जो परास्त होगई, विनय अनायासही उन लोगोंके घर न आकर भी रह सका और वह आज विनय को देखने दौड़ी जा रही है, इस पराभवके अपमानसे उसे भारी क्रोध होने लगा। विनयको देखपानेकी आशासे ही आनन्दमयीके घर जानेके लिये उसके मनमें एक आग्रह का भाव पैदा हुआ

था। किन्तु इसी बातको एक दम अस्वीकार करनेकी चेष्टा वह मनमें करने लगी, और अपनी वही जिद बनाए रखनेके लिये उसने न तो विनय की ओर एक बार आँख उठा कर देखा, न नमस्कार किया, और न उससे एक बात तक की। विनयने समझा, उसके मनकी गुप्त बात ललिताने जान ली है, और इसी कारण इस अवज्ञाके द्वारा वह इस तरह उसे प्रत्याख्यान कर रही है। ललिता उसे प्यार भी कर सकती है, यह अनुमान करनेके उपयुक्त आत्माभिमान विनयके नहीं था।

विनयने आकर सङ्कोचसे दरवाज़े के पास खड़े होकर कहा—परेश बाबू अब घर जाना चाहते हैं; इन लोगोंको खबर देनेके लिये उन्होंने कहा है। विनय, इस तरह खड़ा था कि उसे ललिता न देख पावे।

आनन्दमयीने कहा—यह भी कहीं हो सकता है ! मुँह मीठा किये बिना शायद चले जा सकेंगे ! अब और अधिक देर न होगी। तुम यहाँ जरा बैठो विनय, मैं जरा जाकर देख आऊँ। बाहर क्यों खड़े हो, भीतर आकर बैठो।

विनय ललिताकी ओर आइ करके किसी तरह दूर पर एक जगह बैठ गया। जैसे विनयके प्रति उसके व्यवहारमें कोई विलक्षणता नहीं हुई, ऐसे ही सहज भावसे ललिताने कहा—विनय बाबू अपने मित्र सतीशको आपने बिल्कुल ही त्याग कर दिया है या नहीं, यह जाननेके लिए वह आज सबेरे आपके घर गया था।

एकाएक देवबाणी सुन पढ़नेसे मनुष्य जैसे अचम्भे में आजाय, वैसे ही विस्मयसे विनय चौंक उठा। उसका वह चौंकना दिखाई दे जानेसे वह अत्यन्त लज्जित हुआ। अपनी स्वभाव-सिद्ध-निपुणताके साथ वह कुछ जवाब न दे सका; मुख और कानोंकी जड़ तक लाल करके उसने कहा—सतीश गया था क्या ? मैं तो घर पर था नहीं !

ललिताके इस एक साधारण बात कहेसे ही विनय के मनमें एक अपरिमित आनन्द उत्पन्न हुआ। ललिता नाराज़ नहीं है; ललिताके मनमें उसकी ओर से कोई सन्देह नहीं है।

देखते-देखते सब बाधा दूर हो गई। सुचरिताने हंस कर कहा—विनय बाबू हम लोगोंको एक भयंकर जानवर समझकर दूर हो गये हैं।

विनयने कहा—पृथ्वी पर जो लोग मुँह खोल कर नालिश नहीं कर सकते, चुप रहने हैं, वे ही उलटे अपराधी ठहराये जाते हैं। दीदी तुम्हारे मुँहसे यह कथन शोभा नहीं पाता। तुम आप ही बहुत दूर चली गई, इसीसे अब औरको दूर समझ रही हो।

विनयने आज पहले पहल सुचरिताको दीदी कहा। सुचरिताको सुननेमें यह सम्बोधन मधुर मालूम पड़ा। प्रथम परिचयसे ही विनयके प्रति सुचरिताके मनमें जो एक सौहार्द उत्पन्न हो गया था उसने दीदी कह कर सम्बोधन करते ही एक स्नेह पूर्ण बिशेष आकार धारण किया।

परेश बाबू अपनी लड़कियोंको लेकर जब बिदा हो गये, उस समय दिन ढलचुका था। विनयने आनन्दमयीसे कहा—माँ, आज तुम्हें कोई काम नहीं करने दूँगा, चलो ऊपरके कमरेमें।

विनय अपने चित्तकी उमंगको संभालनेमें असमर्थ हो रहा था। आनन्दमयीको ऊपरके कमरेमें ले जाकर फर्शके ऊपर अपने हाथसे चटाई बिछाकर विनयने उस पर बिठलाया। आनन्दमयीने विनयसे पूछा—बिन्नु बोल, तुम्हे क्या कहना है ?

विनयने कहा—माँ, मुझे कुछ भी नहीं कहना है; तुम्हीं अपने मनकी बातें सुनाओ।

विनयका मन यही सुननेके लिए छटपटकर रहा था कि आनन्दमयीको परेश बाबूकी लड़कियाँ कैसी लगतीं।

आनन्दमयीने कहा—अच्छा, इसीलिए तू शायद मुझे बुलाकर लाया है ! मैं कहती थी तुझको कुछ कहना है।

विनय—बुला कर न लाता, तो ऐसे सुन्दर सूर्यास्तकी शोभा कहाँसे देखतीं माँ !

उस दिन कलकत्तेकी छतों पर अगहनके सूखे मलिन भावसे ही अस्त हो रहे थे। बर्ण-छटाकी कोई विचित्रता नहीं थी। आकाशके छोर पर

धुंधले रंगके कुहरोंमें सुनहली आभा अस्पष्ट पड़ रही थी। किन्तु इस ग्लानसन्ध्याके धुंधले धूसर वर्णने भी आज विनयके मनको रंगीन कर डाला था। उसे जान पड़ने लगा, चारों दिशाओंने जैसे उसे खूब घेर लिया है—आकाश जैसे उसे स्पर्श कर रहा है।

आनन्दमयीने कहा—दोनों लड़कियाँ साक्षात् लक्ष्मी हैं।

विनयने इतनी ही प्रशंसा पर रुकने न दिया। अनेक पहलू उठा-उठाकर इसी आलोचनाको आगे बढ़ाता रहा। परेश बाबूकी लड़कियोंके सम्बन्धमें कितने ही दिनोंकी कितनी ही छोटी मोटी घटनाओंका प्रसंग उठा—उनमें से अधिकांश बिल्कुल ही मामूली थीं; किन्तु उस अग्रहणकी मलिन सन्नाटेकी सन्ध्यामें एकांत स्यानमें, विनयका उत्साह और आनन्दमयीकी उत्सुकता इन दोनोंके सहयोग से उन सब चुद्र गृह-कोणकी अप्रसिद्ध घटनाओंका इतिहासखण्ड एक गहरी महिमासे परिपूर्ण हो उठा।

आनन्दमयी एकाएक एक बार सांस छोड़ कर कह उठी—सुचरिताके साथ अगर गोराका ब्याह हो सके तो मुझे बड़ी खुशी हो।

विनय उछल पड़ा। बोला—माँ, मैंने यह बात अनेक बार सोची है। ठीक गोराके योग्य संगिनी सुचरिता दीदी हैं।

आनन्द०—किन्तु क्या ऐसा हो सकेगा ?

विनय—क्यों न होगा ? मुझे जान पड़ता है, गोरा भी सुचरिताको पसन्द करता है।

आनन्दमयीसे यह छिपा नहीं था कि गोराका मन किसी एक जगह अवश्य आकृष्ट हुआ है। विनयकी अनेक बातोंके बीचसे उन्होंने यह भी समझ लिया था कि वह लड़की सुचरिता ही है। थोड़ी देर चुप रहकर आनन्दमयी ने कहा—किन्तु सुचरिता क्या हिन्दूके घर ब्याह करना चाहेगी ?

विनय—अच्छा, माँ, गोरा क्या ब्राह्म परिवारमें ब्याह नहीं कर सकता ? तुम्हारी क्या इसमें सम्मति नहीं है ?

आनन्द०—मैं तो बड़ी खुशी से सम्मति दे दूंगी।

विनयने फिर पूछा—हाँ ?

आनन्दमयीने कहा—हाँ, अवश्य सम्मति दूंगी ! मनुष्य के साथ मनुष्यका मन मिलना ही विवाहकी सार्थकता है। उस समय कोई मन्त्र पढ़ने या न पढ़नेसे कुछ लाभ या हानि नहीं। किसी तरह भगवानका नाम ले लेना ही यथेष्ट है भैया।

विनयके मनके ऊपरसे एक बोझ सा हट गया। उसने उत्साहित होकर कहा—माँ तुम्हारे मुखसे जब इस तरहकी बातें सुनता हूँ, तब मुझे बड़ा आश्चर्य मालूम पड़ता है। ऐसी उदारता तुमने कहाँसे पाई ?

आनन्दमयीने हँसकर कहा—गोरासे पाई है !

विनयने कहा—गोरा तो इससे विरुद्ध ही कहता है !

आनन्द०—उसके कहनेसे क्या होता है ! मेरी जो कुछ शिक्षा है सब मुझे गोरासे ही प्राप्त हुई है। मनुष्य पदार्थ कितना सत्य है, और मनुष्य जिसके लिए दलबन्दी करता है—झगड़ा करके मरता है—वह कितना मिथ्या है, वह बात भगवानने उसी दिन मुझे समझा दी जिस दिन गोराको उन्होंने मेरी गोदमें भेजा। भैया, ब्रह्म कौन हैं और हिन्दू कौन हैं ? मनुष्यके हृदयकी मनुष्यके आत्माकी तो कोई भी जाति नहीं है। वहीं पर भगवान सबको मिलाने हैं और आप भी आकर मिलते हैं। उन्हें ठेल कर मंत्र और मतके ऊपर ही मिलानेका भार देने से कहीं काम चल सकता है !

विनयने आनन्दमयीके चरण छू कर कहा—माँ, तुम्हारी बातें मुझे बड़ी मीठी मालूम देती हैं ! मेरा आजका दिन सार्थक हो गया।

— —

सुचरिताकी मौसी हरिमोहिनीके कारण परेश बाबूके घर में बड़ी अशान्ति उत्पन्न हुई । इस अशान्तिका वर्णन करनेके पहले हरिमोहिनीने सुचरिताको जो अपना परिचय दिया था वह यहाँ संक्षेप में लिखा जाता है । उन्होंने कहा—“मैं तुम्हारी माँ से दो साल बड़ी थी । पिताके घरमें हम दोनों बहनोंके आदर की सीमा न थी । आदर क्यों न होता, उस समय अपने बापके घरमें केवल हमीं दोनों बालिकाओं ने जन्म लिया था । घर में और कोई लड़का बच्चा न था । चचा हम दोनों बहनोंको बराबर गोदमें लिये रहते थे । धरती पर पैर रखनेका हमें अवकाश नहीं मिलता था ।

मेरी उमर जब आठ वर्ष की हुई, तब कृष्णनगरके विद्यात चाधरी घरानेमें मेरा विवाह हुआ । वे जैसे ही कुलीन थे, वैसे ही धनी भी थे । किन्तु मेरे भाग्यमें सुख न लिखा था । व्याहके समय लेन-देन की बात पर मेरे ससुर के साथ पिताजी का झगड़ा हो गया । मेरे पिताके उस अपराधसे मेरे ससुर बहुत दिन तक बिगड़े रहे । मेरी ससुरालके सभी लोग कहने लगे—हम अपने लड़केका दूसरा व्याह करा देंगे तब देखेंगे कि उम लड़कीकी क्या दशा होती है । मेरी दुर्दशा देखकर ही पिताने प्रतिज्ञा की थी, अब कभी धनवान्के घर लड़कीका व्याह न करूँगा । इसीसे तुम्हारी माँ को गरीब के ही घरमें व्याह दिया था ।

मेरे ससुर के परिवार में बहुत लोग एक साथ रहते थे । नौ दस वर्षकी उम्रमें ही मुझे बहुत लोगोंकी रसेई बनाने का भार दिया गया । ५०-६० व्यक्ति निरर्थ भोजन करते थे । सबको खिला पिलाकर तब मैं किसी दिन सिर्फ़ खूबा-खूबा भात, और किसी दिन दाल-भात खाकर ही

रह जाती थी। किसी दिन लोगोंके खिलाते-पिलाते दो बज जाते थे। किसी दिन कुछ मात्र दिन रह जाता था तब मैं खाती थी। भोजन करने के बाद फिर तुरन्त रातके लिए रसोई चढ़ानी पड़ती थी। रातमें भी ग्यारह-बारह बजेके पूर्व मुझे कभी भोजन करने का अवसर नहीं मिलता था। मेरे सोनेके लिए कोई खास जगह न थी। जिस दिन जहाँ जगह मिल जाती, वहीं सो रहती थी। किसी दिन तो चटाई बिछाकर रात भर जहाँ की तहाँ अकेली पड़ी रहती थी।

घरके सभी लोगोकी मुझ पर अनादर-बुद्धि थी, मेरे स्वामी भी उस पर कुछ ध्यान न देते थे। वे भी बहुत दिनों तक मुझको दूर ही दूर रखकर उन लोगों के साथ मिले रहे।

जब मेरी उम्र सत्रह वर्षकी हुई तब मेरी कन्या मनोरमा ने जन्म लिया। लड़कीका जन्म होने से ससुर कुलमें मेरा अनादर और भी बढ़ गया। मेरे सब अपमान और दुःखोंके बीच वही लड़की एक मात्र सान्त्वना और विश्रामका स्थान था। मनोरमाको उसके बाप या घरके और लोग जैसा चाहिए, प्यार नहीं करते थे। इसीसे वह मुझीको अपना सर्वस्व जानती थी।

तीन वर्षके बाद जब मेरे एक लड़का हुआ, तबसे मेरी अवस्थाका परिवर्तन होने लगा। तबसे मैं गृहिणी कहलाने योग्य हुई। सब लोग मुझे कुछ-कुछ आदरकी दृष्टिसे देखने लगे। मेरे सास न थी, मेरे ससुर भी मनोरमाके जन्मके दो वर्ष बात संसारसे बिदा हो चुके थे। उनकी मृत्यु होते ही धन सम्पत्तिके लिए आपसमें कलह उपस्थित हुआ। मेरे देवोंने अपना अंश विभक्त कर लेनेके लिए मुकदमा दायर किया। आखिर उस मामलेमें बहुत रुपया बरबाद करके हम सब अलग हुए।

अब मनोरमाके व्याह का समय आया। अधिक दूर पर व्याह करनेसे पीछे लड़कीको देखना कठिन समझकर मेने कृष्णनगरसे पाँच-छः कोसके कासले पर राधानगर में उसका व्याह कर दिया। दूल्हा देखने में

बड़ा सुन्दर था। जैसा रङ्ग था, वैसा ही सुडौल चेहरा था। उसके कुछ धन सम्पत्ति भी थी।

जैसा मेरा समय पहले अनादर और कष्ट में बीता था, वैसे ही कपार फूटने के पूर्व विधाताने मुझे कुछ दिन सुख भी दिया था। अन्तमें मेरे स्वामी मुझे बड़े आदर और श्रद्धाकी दृष्टिसे देखने लगे। मुझसे बिना सलाह लिये कोई काम न करते थे। इतना बड़ा सौभाग्य मेरा विधातासे न देखा गया; हैजेकी बीमारीमें पड़कर चार रोज़के भीतर मेरा लड़का और मेरे पति दोनों जाते रहे।

धीरे-धीरे मैं अपने जमाईका परिचय पाने लगी। सुन्दर फूलके भीतर जो काला साँप छिपा था, उसे कोई कैसे जान सकता था। तुरे लोगोंकी रूग्णति में पड़कर वह मद्य-पान करने लग गया, पर मेरी लड़कीने भी यह मुझसे किसी दिन न कहा। जमाई जब-तब आकर, अपने घरकी अनेक आवश्यकताएँ दिखाकर, मुझसे रुपया माँग ले जाता था। मुझे तो किसीके लिए रुपया जमा करनेका कोई प्रयोजन न था इसीसे जब वह विनती करके मुझसे कुछ माँगता तो मुझे अच्छा ही लगता था। बीच-बीचमें मेरी लड़की मुझे रोकती थी और फटकार कर कहती थी कि तुम इस तरह इन्हें रुपया देकर इनके स्वभावको बिगाड़ती हो। रुपया हाथ आनेसे उसे कहाँ कैसे उड़ा डालते हैं, इसका पता नहीं। रुपया पाकर जो इनके जी में आता है, कर गुज़रते हैं। मैं समझती थी कि उसका पति मुझसे जो इस प्रकार रुपया लेता है, उससे अपने श्वशुर-कुलकी अप्रतिष्ठाके भयसे शायद मनोरमा मुझे रुपया देनेसे रोकती है।

तब मेरी ऐसी बुद्धि हुई कि मैं अपनी बेटीसे छिपाकर जमाईको रुपया देने लगी। मनोरमाको जब इसका पता लगा तब उसने एक दिन मेरे पास आकर और रो रोकर अपने स्वामीके दुराचारकी सब बातें कह सुनाईं। तब मैंने अपना सिर पीट डाला। दुःखकी बात और क्या कहें ? मेरे एक देवरने ही उसे मद्य पान की आदत लगाकर उसके स्वभावको बिगाड़ दिया था।

मैंने जब रुपया देना बन्द कर दिया और जब मेरे जमाईको सन्देह हुआ कि उसकी स्त्री ही रुपया नहीं देने देती, तब उसके ऊधम का अन्त न रहा। उसने मेरी लड़की पर घोर अत्याचार करना आरम्भ किया। वह मेरी लड़कीको भक्ति भक्तिके दुःख देने लगा। सबके सामने उसको मारने-पीटने और गालियाँ देने लगा। यह सब सुनकर मेरे दुःखकी सीमा न रही। वह मेरी लड़कीको दुःख न दे इसलिए मैं अपनी लड़की से छिपाकर फिर उसे रुपया देने लगी। जानती थी कि यह रुपया मैं पानीमें फेकती हूँ। किन्तु वह मनोरमाको हृदय दर्जेकी तकलीफ दे रहा है, यह खबर पातेही मैं गला फाड़-फाड़कर रोती थी और जमाईको रुपया देकर उसे सन्तुष्ट रखनेकी चेष्टा करती थी।

आखिर एक दिन—वह दिन मुझे खूब याद है, माघके कुछ दिन बाकी थे, सबेरेका समय था—मैं अपनी पड़ोसिनके साथ बाने कर रही थी। वह यही कह रही थी कि मेरे घरके पिछवाड़े जो बाग है उसमें आमकी अच्छी मञ्चरी आई है। उनी दिन पिछले पहर मेरे दरवाजे पालकी उतारी गई। देखा, मनोरमाने हँसते-हँसते आकर मुझे प्रणाम किया। मैंने कहा—कहो बेटी, क्या हाल है ?

मनोरमाने प्रसन्न मुखसे कहा—हाल अच्छा न रहनेसे बेटी क्या माँके घरमें हँसी-खुशीसे आ सकती है ?

मेरे समधी समझदार थे। उन्होंने मुझे कहला भेजा, बहूका पांव भारी है। सन्तान प्रसव होने तक वह अपनी माँके पास रहे तो अच्छा है। मैंने सोचा, यही बात सच है, किन्तु मेरा जमाई इस अवस्थामें भी मनोरमाको मार-पीटकर अपने जी की जलन बुझाता था। इसलिए गर्भावस्थामें अनिष्टके भयसे ही समधीने अपनी पतोहूको मेरे पास भेज दिया, यह मैं न जानती थी। मनोरमाने अपनी सासकी शिक्षाके अनुसार मुझसे कोई बात न कही। जब मैं उसे अपने हाथसे तेल लगाकर स्नान कराना चाहती थी तब वह कोई न कोई बहाना करके मुझे तेल लगाने न

देती थी। उसके कोमल श्रृङ्ग पर जो चोटके दाग थे वह अपनी माँको दिखलाना नहीं चाहती थी।

जमाई कभी-कभी आकर मनोरमाको अपने घर लौटा ले जानेके लिए ज़िद्द करता था। मेरी बेटी मेरे पास रहनेसे रुपया खींचनेमें उसे बाधा होती थी। आखिर उस बाधाको भी उसने न माना। रुपयेके लिए मनोरमाके सामनेही वह मुझे बार-बार दिक्र करने लगा। मनोरमा मुझे रुपया देने से बराबर रोकती थी कि 'मैं तुमको किसी तरह रुपया देने न दूँगी।' किन्तु मैं स्वभावकी बड़ी दुर्बल थी। जमाई पीछे मेरी लड़कीके ऊपर बहुत खूबा न हो, इस भयसे मैं उसे बिना कुछ दिये न रहती थी।

मनोरमाने एक दिन कहा—“माँ, तुम्हारा रुपया पैसा मैं अपने कब्जे मेंही रखूँगी” और यह कहकर मेरे हाथसे कुन्जी और बक्स जो कुछ था सब ले लिया। जमाईने आकर जब मुझसे रुपया पानेकी सुविधा न देखी और जब मनोरमाको वह किसी तरह राजी न कर सका तब उसने ज़िद्द पकड़ी कि मैं अपनी स्त्रीको अपने घर ले जाऊँगा। मैं मनोरमा से कहती थी, बेटी, उसे कुछ रुपया देकर विदा कर दो, नहीं तो न जाने वह क्या कर बैठेगा। किन्तु मेरी मनोरमा एक और जैसी कोमल थी दूसरी ओर वैसीही कठोर थी। वह कहती थी, नहीं रुपया किसी तरह नहीं दिया जायगा।

जमाईने एक दिन आकर आँखें लाल करके कहा—कल मैं पालकी भेज दूँगा, अगर अपनी बेटीको मेरे घर न भेज दोगी तो अच्छा न होगा। मैं पहलेसे ही कहे देता हूँ।

दूसरे दिन दो-पहरको पालकी आने पर मैंने मनोरमासे कहा—बेटी, अब देर करना उचित नहीं है, अगले हफ़्ते मैं किसीको भेजकर तुम्हें बुला लूँगी।

मनोरमाने कहा—आज जानेको मेरा जी नहीं चाहता। कुछ दिनके बाद इनसे आनेको कहो, तब मैं जाऊँगी।

मैंने कहा—बेटी ! पालकी लौटा देनेसे मेरे क्रोधी जामाता आपमें न रहेंगे । कुछ काम नहीं है तुम आज ही जाओ ।

मनोरमाने कहा—नहीं माँ, आज नहीं मेरे ससुर कलकत्ते गये हैं । आधे फागुन तक वे लौट आवेंगे, तब मैं जाऊँगी ।

मैंने न माना, कड़ा—नहीं, तुम जाओ ।

तब मनोरमा लाचार होकर जानेको तैयार हुई । मैं उसकी ससुरालके नौकर और कड़ारोंको खिलाने पिजानेमें लगी । उस दिन जानेके पहले उसके पास कुछ देर बैठती सो भी न हुआ । उस दिन उसके साथ दो-एक बात करती अपने हाथसे उसको भूषण वसन पहिराती उसका शृङ्गार करती, वह जो खानेको पसन्द करती सो उसे खिलाकर बिदा करती, ऐसा अवकाश मुझे न मिला । पालकी में सवार होनेके पहले उसने पैर छूकर मुझे प्रणाम किया और कहा—माँ, मैं अब जाती हूँ ।

मैं क्या जानती थी कि वह सचमुच मेरे घरसे सदाके लिए जाती है । वह जाना नहीं चाहती थी, मैंने बरजोरी उसे बिदा कर दिया । उस दुःखसे आज तक मेरी छाती जल रही है, वह किसी तरह ठण्डी नहीं होती ।

वह उसी रातको ससुराल पहुँची और उसी रातमें उसका गर्भपात हुआ । गर्भपात होनेके साथ उसकी भी मृत्यु हो गई । जब मुझे यह खबर मिली, उसके पूर्व ही उसकी लाश जला दी गई । मैं उसका मुँह भी देखने न पाई ।

जो बात कहने की नहीं, करने की नहीं, सोचने की नहीं सोचकर भी जिसका अन्त नहीं हो सकता वह दुःख क्या साधारण दुःख है, वह तुम न जानोगी, जाननेका कोई प्रयोजन भी नहीं ।

मेरे तो एक एक कर सभी चले गये, किन्तु तोभी विगति का अन्त न हुआ । मेरे स्वामी और पुत्रकी मृत्यु होते ही देवर लोग मेरी सम्पत्तिके ऊपर दाँत गड़ाने लगे । यद्यपि वे जानते थे कि मेरी मृत्युके अनन्तर मेरी

धन सम्पत्ति सब उन्हींकी होगी, तो भी उतने दिन तक धैर्य धारण करना उनके लिए कठिन हो गया। मैं इसमें किसको दोष दूँ ? सब दोष मेरे फूटे कपालका ही था। मेरे सदृश अभागिन का जीता रहना ही मेरा एक भारी अपराध था। संसारमें जो लोग अनेक प्रकारके स्वार्थों से संबन्ध रखते हैं वे मेरे सदृश अनावश्यक प्राणोंका जीना क्यों पसन्द कर सकेंगे ?

जब तक मनोरमा जीती रही तब तक मैं देवोंके बुलावेकी बातों में न आई। वे लोग मेरी सम्पत्ति हथियानेके लिए भाँति-भाँतिकी चेष्टा करने लगे। परन्तु मैं उन लोगोंके प्रपञ्चमें न फँसकर अपनी सम्पत्तिकी—जो मेरे अधिकार में थी—बराबर रक्षा करती रही। मैंने यही अपने मन में निश्चय किया था कि जब तक जीती हूँ क्यों अपना धन बरबाद करूँ। खर्च करके जो बचेगा वह मनोरमाको दे जाऊँगी। मैं अपनी कन्याके लिए रुपया जमा कर रही हूँ। यह सुनकर मेरे देवोंका जी जल उठा। वे लोग समझते थे मानों मैं उन्हींका धन चुराकर बेटीके लिए जमा कर रही हूँ। मेरे स्वामीका नीलकान्त नामक एक पुराना विश्वासी कर्मचारी था, वही मेरा सच्चा सहायक था। जब मैं अपने धनका कुछ अंश उन्हें देकर आपस में मेल कराना चाहती थी तब वह मुझे रोकता था और इसमें अपनी सलाह देनेको कभी राजी न होता था। वह कहता था, देखेंगे कि हमारे अंशका एक पैसा भी कोई कैसे ले सकता है। आखिर मेरा हक्क हड़पने के लिए देवोंकी ओर से भगड़ा होने लगा। इसी समय मेरी लड़कीका देहान्त हो गया। उसके दूसरेही दिन मेरे मंझले देवरने आकर मुझे वैराग्य लेनेका उपदेश दिया। कहा—भाभी ! ईश्वरने तुम्हें जिस दशामें पहुँचा दिया है, उससे तुम्हें अब घर रहना उचित नहीं। अब तुम किसी तीर्थ में जाकर अपने जीवनका शेष समय बिताओ। धर्म कर्म में मन लगाओ। हम लोग तुम्हारे खाने-पहिरनेका प्रबन्ध कर देंगे।

मैंने अपने गुरु महाराजको बुलाया और उनसे कहा—महाराजजी,

मैं इस असह्य यन्त्रणसे कैसे उद्धार पाऊँगी, उसका उपाय बता दीजिए। घरके किसी काममें मेरा जी नहीं लगता। मेरे हृदयमें शोककी आग दिन-रात जलती रहती है। मैं जहाँ जाती हूँ, जिधर जाती हूँ, कहीं मेरी यह ज्वाला शान्त नहीं होती। इस यन्त्रणसे मुक्त होने का कोई मार्ग नहीं सूझता।

गुरु महाशयने मुझको हरिमन्दिरके भीतर ले जाकर कहा—आजसे तुम इनका भजन करो। ये गोपी-रमणजी ही तुम्हारे स्वामी, एत्र, कन्या सब कुछ हैं। इनकी सेवा करनेही से तुम्हारे सब दुःख दूर होंगे।

तबसे मैं दिन रात ठाकुरजी की सेवा में हाजिर रहने लगी। उनको मैं अपना मन सौंप देनेकी चेष्टा करने लगी। किन्तु जब उन्हें मेरा मन लेना पसन्द न था तब मैं उनको कैसे अपना मन देती ? मुझ आभागिनका मन लेकर वे क्या करते ?

मैंने नीलकान्तको बुलाकर कहा—नील बाबू, मैंने अपनी सारी सम्पत्ति देवरीको लिख देनेका निश्चय किया है। वे वृत्तिके रूप में हर महीने मुझे कुछ रुपया दे दिया करेंगे।

नीलकान्त ने कहा—यह कभी नहीं हो सकता। आप स्त्री हैं। ये बातें आप क्या जानें ?

मैंने कहा—मैं अब सम्पत्ति लेकर क्या करूँगी ?

नील—यह आप क्या कहती हैं ? जो आपका अंश है वह क्यों छोड़ेगी ? इस तरहका पागलपन मत कीजिए।

नीलकान्त मेरे हक़ो किसीके हाथ देना नहीं चाहता था। मैं बड़ी मुश्किल में पड़ी। ज़मींदारीका काम मुझे विपरीत भी बढ़कर भयङ्कर मालूम हो रहा था। किन्तु संसारमें मेरा यही एकमात्र नीलकान्त विश्वासी था। मैं उसके मनको कष्ट देना भी नहीं चाहती थी। उसने कैसे कैसे दुःख झेलकर मेरे अंशको बचाया है, यह

सोचकर मैंने उसकी बात काटकर अपने मनसे कोई काम करना उचित न समझा ।

आखिर एक दिन मेरे मनमें क्या आया ! मैंने नीलकान्तसे छिपाकर देवरीके कहने पर एक कागज पर दस्तखत कर दिया । उसमें क्या लिखा था, यह मैं अच्छी तरह नहीं जात सकी ! मैंने सोचा मुझे सही करनेमें क्या डर है । मैं कौनसी वस्तु अपने पास रखना चाहती हूँ, जिसके चले जानेसे मुझे कष्ट हो । जब मैं यों ही अपनी सन्पत्ति देनेको तैयार हूँ तब कोई ठगकर ही क्या करेगा ? सब तो मेरे ससुरका ही है । उनका धन उनके बेटे पावें, इसमें मेरा क्या ?

लिखा पढ़ी, रजिस्टरी आदि सब हो गई । तब मैंने नीलकान्तको बुलाकर कहा—आर एण्ट न हो मेरे पास जो कुछ था, सब लिख पढ़ दिया । मुझे अब किनीसे कुछ प्रयोजन नहीं ।

नीलकान्तने चौंकर कहा—ओफ् ! यह क्या किया !

जब उसने दस्तावेज़की नकल पढ़ी, तब उसने जाना कि मैंने सच कहा है, सत्यही मैंने अपना सब अधिकार त्याग दिया है । यह जानकर नीलकान्तके क्रोधकी सीमा न रही । जबसे उसके मालिककी सृष्टि हुई तबसे मेरा हक बचानाही उसके जीवनका एक प्रधान उद्देश था । उसकी सारी बुद्धि और शक्ति उसी हककी हिफाजत में लगी रहती थी । इस हकको लेकर उसने कितने मामले मुमदमे लड़े, कितने वकील मुख्तारोंके घर देखे, कितने कष्ट सहे इसका ठिकाना नहीं । मेरे ही कामके पीछे वह दिन-रात बावज़ेकी तरह फिरा करता था और उसीमें सुख पाता था । उसे अपने घरका काम देखनेको भी समय न मिलता था । वह हक जब निर्दोष स्त्रीके कलम की नोकके एक ही घसीटेमें उड़ गया तब नीलकान्त का सब किया-धरा व्यर्थ हो गया । उसके मनको शान्त करना असम्भव हो गया ।

उसने हताश होकर कहा—जाओ आजसे तुम्हारे साथ मेरा सम्बन्ध टूट गया। मैं जाता हूँ।

मैंने देखा नीलकान्त भी मुझे छोड़कर जा रहा है। क्या मेरा भाग्य ऐसा खोटा है कि दुःखमें एक भी सहारा मेरे पास न रहा ! मैं अपने इस दुर्भाग्य पर बार-बार पछताने लगी। मैंने अपनी भूल स्वीकार कर नीलकान्तसे कहा—आप मुझ पर क्रोध न करें। मेरे पास कुछ रुपया एकत्रित है। मैं उसमें से अभी आपको पाँच सौ देती हूँ। आपकी पतोहू जब आपके घर आवे तब उसके लिए मेरे आशीर्वादके रूप में इन रुपयों का उसे गहना गढ़ा दीजिएगा।

नीलकान्तने कहा—मुझे अब इसकी ज़रूरत नहीं। मेरे मालिक का जब सब कुछ चला गया तब ये पाँच सौ रुपये लेकर मैं कौन सुख भोगूँगा। ये आप रहने दीजिए।—यह कहकर मेरे स्वामी का एक सच्चा शुभचिन्तक भी मुझे छोड़कर चला गया।

मैं पुनः घर में रहने लगी। मेरे देवरोंने मुझसे कहा—तुम किसी तीर्थ में जाकर रहो।

मैंने कहा—ससुरका घर ही मेरे लिए तीर्थ है। मेरे ठाकुरजी जहाँ रहेंगे वही मैं भी रहूँगी।

मैं जो अपने अधिकार में दो-एक घर लिये बैठी थी, यह भी उन लोगोंसे न देखा गया। वे मेरे घरोंमें अपनी सलतनत जमानेके लिए ब्यग्र हो उठे। मेरे किस घरको किस काम में लावेंगे, यह उन लोगोंने पहले ही ठीक कर लिया था। आखिर एक दिन उन्होंने कहा—जहाँ तुम्हारा जी चाहे अपने ठाकुरको ले जाओ हम लोग उसमें दस्तन्दाजी न करेंगे।

जब मैं इसमें कुछ रुझाव दिखाने लगी तब उन्होंने कहा—यहाँ रहनेसे तुम्हें खाना कपड़ा कौन देगा ?

मैंने कहा तुम लोगोंने जो परवरिश मुर्कुर कर दी है, वही मेरे लिए काफी है।

उन्होंने कहा — दस्तावेजमें कोई परवरिशका जिक्र नहीं है ।

तब मैं अपने ठाकुरजीको लेकर अपनी विवाह होनेके ठीक ३४ वर्ष बाद अपने ससुरके घरसे चल दी । नीलकान्तकी खोज करनेपर मालूम हुआ कि वह मेरे चलने के पूर्व ही वृन्दाबान चला गया ।

मैं गांव के तीर्थ-यात्रियोंके साथ काशी गई । किन्तु इस पापी मनको कहीं शान्ति न मिली । मैं ठाकुरजी से नित्य पुकार कर कहती थी— हे नाथ ! मेरे स्वामी मेरे बाल्यकालमें मेरे साथ जैसा सत्य भाव धारण किये हुए थे । तुम भी वैसा ही सत्य भाव धारण कर मुझे दर्शन दो । किन्तु उन्होंने मेरी प्रार्थना न सुनी । मेरे हृदयका ताप दूर न हुआ । मैं दिन रात रोया करती थी । हाय ! मनुष्यके प्राण भी कैसे कठिन होते हैं ।

मैं आठ वर्ष की उम्र में ससुराल गई थी, फिर लौट कर बापके घर न जा सकी । तुम्हारी माँके विवाहमें जानेके लिए मैंने बहुत चेष्टाकी परन्तु सब व्यर्थ हुआ । इसके अनन्तर पिताजीके पत्रसे तुम सबोंके जन्म का हाल मालूम हुआ । मैंने अपनी बहिनके मरनेका भी संवाद सुना उसे सुनकर मुझे जो दुःख हुआ सो क्या बताऊँ । तुम सबोंको, मातृ हीन होने पर भी, गोद में खिलाने का अवसर ईश्वर ने मुझे न दिया ।

तीर्थोंमें अभ्रण करके भी जब मैंने देखा कि माया मेरा साथ नहीं छोड़ती, हृदयका एक अवलम्ब पानेके लिए अब तक मेरे मनमें तृष्णा लगी है तब मैं तुम लोगोंकी खोज करने लगी । यद्यपि मैंने सुना था कि तुम्हारे पिताने सनातन धर्म को छोड़, ब्राह्म समाजियोंसे नाता जोड़ लिया है तथापि तुम लोगोंकी ममता मेरे मनसे न गई । तुम्हारी माँ मेरी सगी बहन थी । एक ही माँ के पेट से हम दोनों उत्पन्न हुई थीं ।

काशीमें एक सज्जन पुरुषके द्वारा तुम्हारा पता पाकर मैं यहाँ चली आई ।

— —

परेश बाबूने वरदासुन्दरीके न रहने पर हरिमोहिनीको अपने यहाँ टंका लिया और छत के ऊपरवाली कोठरीमें उसे जगड़ देकर ऐसा प्रबन्ध कर दिया कि जिसमें उसके पूजापाठ में कोई बिघ्न बाधा न हो ।

वरदासुन्दरी जब लौट आई तब वह अपने घरमें एक वैष्णवीको टंकी देख जल उठी । उसने परेश बाबूसे कड़े स्वर में कहा—आपने यह या किया है ? मैं एक परदेशी स्त्री को अपने यहाँ रहने देना पसन्द नहीं करती ।

परेश बाबूने कहा—हम लोगोका रहना तुम पसन्द करती हो और क'अनाथ विधवाका रहना पसन्द नहीं करती ?

सुचरिता प्रायः उम्रमें मनोरमाके बराबर की थी । हरिमोहिनी सुचरिताको मनोरमाकी ही भाँति देखने लगी और उसके साथ हरिमोहिनीका वभाव मिल गया था । सुचरिता बड़ी शान्त प्रकृतिकी थी । किसी-किसी समय हरिमोहिनी उसे पीछेसे आते देख चौंक उठती थी । उसे जान पड़ता था कि मनोरमा ही मेरे पास आ रही है । देखो, वह हँसती हुई खली आरही है । “आओ बेटी, आओ ! तुम्ही मेरी बेटी हो । तुम्ही मेरे हृदय की मणि हो,” यह कहकर सुचरिताके मुँह पर बड़े प्यारसे हाथ फेरकर और उसके मुँहको चूमकर आँसू बहाने लगती थी । सुचरिताकी प्रॉखोंमें भी आँसू उमड़ आते थे । वह उसके गलेसे लिपटकर कहती थी—गौसी, मैं भी तो माताका सुख बहुत दिन नहीं भोग सकी । आज वही वाई हुई माँ मुझे मिल गई है । मैं समझती हूँ, वही मुझे देखनेको आई है ।

दो ही दिन में सुचरिताके साथ उसकी मौसीका ऐसा गहरा सम्बन्ध हो गया कि सभी लोग दङ्ग हो रहे ।

वरदासुन्दरीको यह देखकर भी क्रोध हो आया । देखो तो, लड़की दो ही दिनमें उसके साथ ऐसे हिल मिल गई है, मानों हम लोगोसे उसका

कोई सम्बन्ध ही न हो ! मैंने इतने दिन इसको बेटीकी तरह पाजा-पोसा, सो कुछ नहीं । इतने दिन मौसी कहाँ थी, बचपनसे ही मैंने इसे सिखा पढ़ाकर होशियार किया है । किन्तु आज मौसीके पीछे एकदम दुत्त पड़ी है । दिन रात उसीके पास बैठी रहती है । मैं उन (परेश) से बराबर कहती आई हूँ कि आप सुचरिता को अच्छी कहकर प्रशंसा करते हैं सो बाहरसे वह भले ही अच्छी हो, किन्तु भीतरसे वह साफ नहीं हैं । उसके मनका कोई अन्त नहीं पा सकता । इतने दिन तक हम लोगोंने उसका जो कुछ किया सब व्यर्थ हुआ ।

वरदासुन्दरी जानती थी कि परेश बाबू मेरे दुःख पर ध्यान न देंगे इतना ही नहीं, हरिमोहिनीके ऊपर क्रोध प्रकट करनेसे परेश बाबूसे अपमानित होनेमें भी उसे कुछ सन्देह न था । इसीसे उसका क्रोध और भी बढ़ गया । परेश कुछ भी कहें किन्तु मेरा मत अधिकांश बुद्धिमान् लोगोंमें मिलता है । इसको प्रमाणित करनेके लिए वरदासुन्दरी अपना दल बढ़ाने की चेष्टा करने लगी । अपने समाजके क्या प्रधान क्या अप्रधान सभी लोगोंके आगे वह हरिमोहिनीके विषयमें समालोचना करने लगी । हरिमोहिनी हिन्दू है, वह देवता पूजती है, मेरी लड़कियाँ उसका यह कुसंस्कार देखकर बिगड़ जायगी इसपर वह अनेक प्रकारकी टीका टिप्पणी करने लगी ।

सिर्फ लोगोंके आगे समलोचना करके वरदासुन्दरीने सन्तोष नहीं वरन् वह सब प्रकारसे हरिमोहिनीको तकलीफ भी देने लगी । हरिमोहिनी का चौका बर्तन काने और पानी लाने के लिए एक भाला नौकर था । उसको वह हरिमोहिनीके कामके समय कोई दूसरा काम करनेको भेज देती थी । उसकी खोज होने पर कहती थी, क्यों रामदीन तो है । रामदीन जाति का दुसाध था । वरदासुन्दरी जानती थी की उसके हाथ का जल हरिमोहिनी ग्रहण न करेगी । किसीके यह कहने पर वह बोलती थी— “इतने नेमसे रहना चाहती है तो हमारे ब्राह्मणमें क्यों आई ? हमारे यहां सब नेम-धर्म न चलेगा ? हमारे यहां जाति-पाँतिका विचार नहीं

है। हम लोग छूआ-छूत नहीं मानतीं। हमारे घरमें रहकर हिन्दू धर्म निभाना चाहेगी, तो कैसे निभेगा ? मैं किसी तरह उसे इस काममें सहायता न दूँगी।

वरदासुन्दरी अनेक प्रकारके कष्ट देकर भी हरिमोहिनीको न भगा सकी। हरिमोहिनीने मानों कठिनसे कठिन कष्ट सहनेका प्रण कर लिया था। जब हरिमोहिनीने देखा कि पानी लानेवाला कोई नहीं है तब उसने रसोई बनाना एकदम छोड़ दिया। वह ठाकुरजीको दूध और फलोंका भोग लगाकर प्रसाद स्वरूप कुछ खाकर दिन काटने लगी। सुचरिताको यह देख बड़ा दुःख हुआ। मौसीने उसे बहुत तरहसे समझाकर कहा—बेटी, तुम खेद मत करो, यह मेरे लिए बहुत अच्छा हुआ है। मैं यही चाहती थी। इसमें मुझे कोई कष्ट नहीं, आनन्द ही होता है।

सुचरिताने कहा—अगर मैं दूसरी जातिके हाथका छूआ खना छोड़ दूँ तो तुम मुझे अपना काम करने दोगी ?

हरिमोहिनीने कहा—बेटी, तुम मेरे लिए अपना धर्म क्यों छोड़ोगी ? तुम जिस धर्मको मानती हो उसीके अनुसार चलो। मैं जो तुमको अपने पास बराबर दायिरा पाती हूँ, तुम्हें छातीसे लगाकर जी उठा करती हूँ यह क्या मेरे लिए थोड़ा सुख है ? परेश बाबू रिताके तुल्य तुम्हारे लिए पूज्य हैं, तुम्हारे गुरु हैं। उन्होंने तुमको जो शिक्षा दी है तुम वही मानकर चलो। उसीमें भगवान् तुम्हारा कल्याण करेंगे।

हरिमोहिनी वरदासुन्दरीका सब उपद्रव इस तरह सड़ने लगी, जैसे वह उसे कुछ समझती ही न हो। परेश बाबू जब नित्य सबेरे उसके पास आकर पूछते थे—कहो कुछ तकलीफ़ तो नहीं होती, तब वह कहती थी—नहीं, मैं बड़े आरामसे हूँ।

किन्तु वरदासुन्दरीका अनुचित व्यवहार सुचरिताको असह्य होने लगा। वह किसीके पास रोकर अपना दुखड़ा सुनाना न चाहती थी। विशेषकर परेश बाबूसे वरदासुन्दरीके कुव्यवहारकी शिकायत करना उसके

लिए असम्भव था । वह चुपचाप सब सहने लगी । भूलकर भी इस विषय में कोई बात कह देनेसे उसे पीछे बढ़ा सझोच होता था ।

अन्तमें इसका परिणाम यह हुआ कि सुचरिता धीरे-धीरे वरदासुन्दरी के हाथसे निकलकर हरिमोहिनीके हाथका खिलौना बन गई । दिन भर वह उसीके पास बैठी रहती थी । उसीके हाथका दिया कुछ प्रसाद पाकर रह जाती थी । आखिर सुचरिताका यह कष्ट हरिमोहिनीसे न देखा गया । हारकर उसे फिर रसोई बनानेका प्रबन्ध करना पड़ा । सुचरिताने कहा—मौसी, तुम मुझे जिस तरह रहनेको कहोगी, मैं उसी तरह रहूँगी । किन्तु तुम्हारे लिए जल मैं अपने हाथसे ला दूँगी । यह काम मैं दूसरेको न करने दूँगी ।

हरिमोहिनीने कहा—बेटी ! मैं अपने लिए कुछ नहीं कहती किन्तु इस जलसे ठाकुरजीकी पूजा कैसे करूँगी !

सुचरिता—मौसी, क्या तुम्हारे ठाकुरजी भी जाति-पाति मानते हैं ? क्या उन्हें भी प्रायश्चित्त करना होगा ? उनका भी कोई समाज है क्या ?

आखिर एक दिन सुचरिताकी भक्तिके आगे हरिमोहिनीको हार माननी पड़ी । उसने सुचरिताकी सेवा सम्पूर्ण रूपसे ग्रहणकी । सतीश भी बहनकी देखा-देखी मौसीकी 'रसोईमें' ही खाने लगा । इस तरह तीनों मिलकर परेश बाबूके घरमें अपना एक अलग ही आश्रम स्थापित कर रहने लगे । सिर्फ ललिता 'इन दोनों आश्रमोंके बीच सेतुरूप' होकर रहती थी । वरदासुन्दरी अपनी और बेटियोंको हरिमोहिनीके पास न जाने देती थी किन्तु ललिताको रोक-रखना उसके लिए कठिन था ।

वरदासुन्दरी अपनी ब्राह्म-बहिनोंको सभाके लिए प्रायः अपने घर बुलाने लगी । कभी कभी उसकी छतके ऊपर ही सभा होती थी । हरिमोहिनी अपनी स्वाभाविक सरलताके साथ उन स्त्रियोंका आदर करती थीं, किन्तु वे जो उसका अनादर करती थीं, यह उससे छिपा न रहा । वरदासुन्दरी हिन्दुओंके सामाजिक आचार-व्यवहार पर उसके सामने ही कड़ी समालोचना करती थी; और अनेक स्त्रियाँ हरिमोहिनीके प्रति विशेष लक्ष्य करके उस समालोचनामें साथ देती थीं ।

सुचरिता अपनी मौसीके पास रहकर ये सब बातें सुनचाप सह लेती थी । केवल वह अपने मनका भाव किसी तरह प्रकट कर देती थी कि मैं भी अपनी मौसीके साथ हूँ । जिस दिन भोजनका कुछ विशेष आयोजन होता उस दिन वरदासुन्दरी जब सुचरिताको खानेके लिए बुलाती थी, तब वह कहती थी—मैं न खाऊँगी !

“यह क्या ! मालूम होता है, हम लोगोंके साथ बैठकर तुम न खाओगी ?”

सुचरिता—नहीं ।

वरदासुन्दरी कहती थी—आजकल सुचरिता बड़ी हिन्दू हो गई है यह तुम लोग नहीं जानतीं । अब यह हम लोगोंका छुआ नहीं खाती !

हरिमोहिनी किसी किसी दिन व्यस्त होकर कह उठती थी—बेटी राधा रानी, जाओ, तुम खानेको जाओ ।

सुचरिता अपने समाजमें हरिमोहिनीके कारण इस तरह फटकारी जा रही थी, यह उसके लिए बड़ा ही कष्टकर हुआ । किन्तु सुचरिता इस कष्टको कुछ भी न लाती थी । एक दिन कोई ब्राह्म-स्त्री जूता पहिरे

कुतूहल-वश हरिमोहिनीके घरमें जाने लगी। सुचरिता रास्ता रोक कर खड़ी हो गई और बोली—इस घरमें मत जाना।

“क्यों ?”

“इस घरमें उनके ठाकुरजी हैं।”

“ठाकुरजी हैं ! मालूम होता है, तुम रोज़ ठाकुर पूजती हो !”

हरिमोहिनीने कहा—हाँ, रोज़ पूजा करती हूँ।

“ठाकुरजी पर तुम्हारी भक्ति है ?”

“मेरा वैसा भाग्य कहाँ जो उन पर मेरी भक्ति हो ? भक्ति होती तो मैं अपने जन्मको सफल समझती।”

उस दिन ललिता भी वहाँ मौजूद थी। उसने मुँह लाल करके अनकरिणी स्त्रीसे पूछा—तुम जिसकी उपासना करती हो, क्या उसकी भक्ति नहीं करती ?

‘वाह ! करती क्यों नहीं ?’

ललिताने सिर हिलाकर कहा—भक्ति तो तुम क्या करोगी ?—भक्ति नहीं करती हूँ, यह भी तुम नहीं जानती।

इस पर वह कुछ न बोली और चुपचाप वहाँसे चली गई।

हरिमोहिनीने अनेक यत्न किये जिसमें सुचरिता आचार-व्यवहारमें अपने दिलसे अलग न हो, किन्तु वह किसी तरह सफल न हो सकी।

इसके पहले हारान बाबू और वरदासुन्दरीके बीच कुछ मनमुटाव रहता था किन्तु वर्तमान घटनासे दोनोंमें खूब मेलजोल हो गया। वरदासुन्दरीने कहा—कोई कुछ कहे, ब्राह्मणसमाजके आदर्शको शुद्ध रखनेके लिए यदि कोई हृदयसे इच्छुक है तो वह हारान बाबू ही हैं। हारान बाबूने भी ब्राह्मणसमाजी परिवारको सब प्रकार निष्कलङ्क रखने का पूर्ण यश वरदासुन्दरीको ही दिया। उसकी इस प्रशंसाके भीतर परेश बाबूके प्रति एक विशेष आक्षेप था।

हारान बाबूने एक दिन परेश बाबूके सामने ही सुचरितासे कहा—सुना है कि आजकल तुमने ठाकुरका प्रवाद खाना आरम्भ किया है ?

सुचरिताका मुँह क्रोधसे लाल हो गया किन्तु ऐसा भाव करके — मानों उसने कुछ सुना ही नहीं — वह मेज पर रखे कलम दावात और पुस्तकों को सँवारकर रखने लगी । परेश बाबू ने एक बार स्नेहकी दृष्टिसे सुचरिता की ओर देखकर हारान बाबू से कहा — हम लोग जो कुछ खाते हैं सभी तो ठाकुरजीका ही प्रसाद है ।

हारान ने कहा — किन्तु सुचरिता हम लोगोंके ठाकुरजीको छोड़ना चाहती है ।

परेश — अगर यही बात है तो इसके विरुद्ध बोलनेसे क्या होगा ? उसमें बाधा डालनेसे क्या उसका प्रतिहार होगा ?

हारान बाबू — जो मनुष्य धारामें बहा जा रहा है उसे ऊपर लानेकी चेष्टा करना भी तो उचित है ।

परेश — उस बढ़ते हुए ब्यक्तिके सिर पर ढेजे मारनेको ही ऊपर लानेकी चेष्टा नहीं कते । हारान बाबू आप निश्चिन्त रहिए, मैं सुचरिता को इतने दिनोंसे देख रहा हूँ । अगर वह वे रास्ते चलती तो आप लोगों से पहले ही मैं समझ जाता और इस तरह बेफिक्र न रहता ।

हारान ने कहा — सुचरिता तो यहीं है । आप उसीसे क्यों नहीं पूछते ? सुना है, वह अब सबके हाथ का लूआ नहीं खाती । क्या यह झूठ है ?

सुचरिताने हारान बाबू की ओर आकर्षित हो कर कहा — बाबूजी भी यह जानते हैं कि मैं सबके हाथका लूआ नहीं खाती । यदि वे मेरे इस आचरणको बुरा नहीं मानते तो दूसरे के मानने ही से क्या ? यदि आपको मेरा यह आचरण अच्छा न लगे तो, अपनी खुशी है, जहाँ तक जी चाहे मेरी निन्दा कीजिए किन्तु पिताजीको क्यों दिक कर रहे हैं ? वे आप लोगों की कड़ी से कड़ी बातों को भी कितना सहन करते हैं क्या आप यह नहीं जानते ? शायद उसी का यह परिणाम है ?

हारान बाबू विस्मित होकर सोचने लगे कि सुचरिताने भी आजकल बातें करना सीख लिया है !

हारान बाबू की धारणा थी कि उनके समाजके लोगोंके व्यक्तिगत चरित्रमें जो अच्छा भला परिवर्तन हुआ है, उन्होंने किसी न किसी तरह उसका प्रधान कारण अपने ही को मान लिया है । उनका अप्रकट प्रभाव भी भीतर ही भीतर काम कर रहा है, इसमें भी उन्हें सन्देह न था । इतने दिन उनके सामने सुचरिताकी जब कभी किसीने विशेष रूपसे प्रशंसा की है तब उन्होंने ऐसा भाव धारण किया है, मानों वह मारी प्रशंसा हमारी ही हुई है । वह उपदेश, दृष्टान्त और अपने संसारके द्वारा सुचरिता के चरित्रको इस प्रकार सुधार रहे हैं कि इस सुचरिताके जीवन द्वारा ही जन-समाज में उनका अद्भुत प्रभाव प्रमाणित होगा । उनकी आशा, ऐसी ही थी ।

उस सुचरिता की शोचनीय अवगत दशासे हारान बाबूका अपनी योग्यताके सम्बन्धमें कुछ भी गर्व कम न हुआ । उन्होंने सब दोष परेश बाबूके । माथे मढ़ दिया । परेश बाबूकी सब लोग बराबर प्रशंसा करते आये हैं, किन्तु हारान बाबू कभी उसमें सहमत नहीं हुए । वह परेश बाबूको प्रशंसनीय नहीं समझते थे ।

हारान बाबूकी इन बातोंसे सुचरिता बहुत कष्ट पाने लगी, पर अपने लिए नहीं, परेश बाबूकी समालोचना ब्राह्मसमाजमें जहाँ-तहाँ हो रही है, यह अशान्ति किस उपायसे दूर की जाय ? इधर सुचरिता की मौसी भी बराबर समझ रही थी कि मैं विनीत भाव धारण कर जितनी ही सबसे बचकर चलनेकी चेष्टा करती हूँ उतनी ही इस घरके लोगोंके लिये उपद्रव स्वरूप होती जा रही हूँ । इस कारण सुचरिताकी मौसी जो मारे लज्जा और शोचके मरी जा रही थी यह देख सुचरिताका हृदय पीड़ित होने लगा । इस सङ्कटसे उद्धार पानेका कोई रास्ता सुचरिताको न सूझ पड़ा ।

इधर सुचरिताको शीघ्र ब्याह देनेके लिए वरदासुन्दरी परेश बाबूको बहुत दिक् करने लगी । उसने कहा—सुचरिता की जिम्मेवारी अब हम अपने ऊपर लेना नहीं चाहतीं । उसने अपने मनसे चलना आरम्भ किया है । अब यदि उसे आप व्याहने में विजम्भ करेंगे तो मैं अपनी लड़कियों को लेकर कहीं और जगह चली जाऊँगी । सुचरिताका विचित्र दृष्टान्त मेरी लड़कियोंके लिए बड़े अनिष्ट का कारण हो रहा है । कुछ दिनमें इसकी देखा-रेखा मेरी लड़कियाँ भी बिगड़ जायँगी । इसका कोई उपाय शीघ्र कीजिए नहीं तो इसके लिए आपको पीछे पछताना पड़ेगा । ललिता पहले ऐसी न थी, अब जो उसके जी में आता है कर बैठती है । उस दिन वह ऐसा काम कर बैठी, विनयके साथ चुपचाप चली आई, जिस कारण मैं लज्जा से मरो जा रही हूँ । क्या आप समझते हैं कि इस काम में सुचरिता का हाथ न था ! आप अपनी सब लड़कियोंसे बढ़कर सुचरिता पर प्यार करते हैं, इसके लिए मैं आपसे कभी कुछ नहीं कहती, किन्तु अब यह बात न चलेगी, यह मैंने आपसे अभी कह रक्खा है ।

सुचरिताके लिए तो नहीं, किन्तु घरके और लोगोंकी अशान्तिके कारण परेश बाबू चिन्तित हो पड़े थे । इस अशान्तिका कारण हरिमोहिनी का रहना ही था । वरदासुन्दरी इस बातको लेकर बड़ी गड़बड़ मचावेगी और अपने उद्योग में वह जितनी ही असफल होंगी उतनी ही गड़बड़को बढ़ाती जायगी, इस बातको परेश बाबू जानते थे । सुचरिताके विवाह का प्रस्ताव भी वरदासुन्दरीने यही सोचकर परेश बाबूसे किया था । यदि सुचरिता का ब्याह शीघ्र हो जाय तो सुचरिता के लिए भी अच्छा ही होगा, यह विचारकर परेश बाबूने वरदासुन्दरीसे कहा—अगर हारानबाबू सुचरिता को राज़ी कर सकें तो मैं इस सम्बन्धमें कोई उग्र न करूँगा ।

वरदासुन्दरीने कहा—उसे अब कितनी दफे राज़ी करना होगा ? वह कई बार तो अपनी सम्मति प्रकट कर चुकी है । आपके मनमें क्या है, सो मैं नहीं जानती ! आप इसके लिए इतना टाल मटोल क्यों कर रहे हैं !

परेश बाबूने कहा—हारान बाबूके प्रति सुचरिताके मन का भाव क्या है, यह मैं ठीक ठीक नहीं जानता। इसलिए उन दोनोंमें जब तक इस बात की निष्पत्ति न होगी तब तक मैं इस विषयमें ज़बरदस्ती कोई काम नहीं कर सकता।

वरदासुन्दरी ने कहा—उसके मनका भाव ठीक-ठीक न जानने की बात इतने दिन पीछे आपने स्वीकार की! इस लड़की के मनकी बात समझना बड़ा कठिन काम है। वह बोलती कुछ है और करती कुछ है। उसका बाहर-भीतर एक नहीं।

वरदासुन्दरी ने हारान बाबूको बुला भेजा।

इसी समय हारान बाबू घरमें प्रवेश करके सुचरिता के पास एक कुर्सी खींचकर बैठ गये। सुचरिता ने एक बार भी आँख उठाकर उनकी ओर न देखा।

हारान बाबूने कहा—सुचरिता, आज तुमसे एक विशेष बात कहना है मेरी बात पर ज़रा ध्यान दना होगा।

सुचरिता कुछ न बोली, सिर नीचा किये बैठी रही ठीक इसी समय ललिता घरमें आई।

हारान बाबूने कहा—ललिता! सुचरिताके साथ मुझे आज कुछ बातों का विचार करना है।

ललिताको वहाँसे जानेका उद्देश्य करते देख सुचरिता ने झट उसका आँचल पकड़ लिया। ललिताने कहा—‘हारान बाबूको तुम्हारे साथ कुछ बात करनी है।’ सुचरिता उसको कुछ उत्तर न दे ललिताका आँचल जोरसे पकड़े ही रही। तब ललिता सुचरिताके पास ही एक कुर्सी पर बैठ गई।

हारान बाबू किसी बाधासे दब जानेवाले आदमी न थे उन्होंने कथाकी भूमिका बाँधना छोड़ एकदम सुचरितासे कहा—विवाह में विलम्ब होना अब मैं उचित नहीं समझता। परेश बाबूको मैंने इसकी सूचना दी थी,

उन्होंने कहा—तुम्हारी सम्मति पाने पर ही सब बातें तय हो जायँगी फिर उसमें कोई बाधा न होगी। मैंने निश्चय किया है, इस रविवारके अगले रविवार को—

उनकी बात काटकर सुचरिता बीच ही में बोल उठी—नहीं।

सुचरिता के मुँहसे यह स्पष्ट और कर्ण-वृद्ध अत्यन्त सतिस “नहीं” सुनकर हारान बाबू ठिठक गये। सुचरिताको वह अपने ऊपर विशेष अनुरक्त समझने थे। वह एक मात्र “नहीं”, शब्द रूपी बाणसे मेरे प्रस्तावको बीच ही में काट गिरावेगी, ऐसा खयाल उनके मनमें कभी न हुआ था ! उन्होंने रुष्ट होकर कहा—नहीं ! नहीं के मानी क्या ? क्या तुम और देरी करना चाहती हो ?

सुचरिताने फिर कहा—नहीं ?

हारान बाबू ने आश्चर्यके साथ कहा—तो फिर ?

सुचरिताने सिर हिलाकर कहा—विवाहके लिए मेरी सम्मति नहीं है।

हारान बाबूने हताश होकर पूछा—सम्मति नहीं है, इसके मानी ?

ललिताने हँसकर कहा—हारान बाबू, आज आप मानी, का ‘अर्थ’ क्यों भूल गये ?

हारान बाबूने कड़ी दृष्टिसे ललिताकी ओर देखकर कहा—मानभंगा भूल जाने की भूल स्वीकार करना सहज है किन्तु जिस व्यक्तिकी बात पर मेरी बराबर श्रद्धा हो उसे मैं ठीक नहीं परख सका, यह स्वीकार करना सहज नहीं है।

ललिताने कहा—दूसरेके मनका भाव समझनेमें समय लगता है। परन्तु कभी-कभी अपने सम्बन्ध में भी यह बात सङ्घटित होती है। कितने ही लोग अपने मनका भाव आप ही शीघ्र नहीं समझने।

हारान बाबूने कहा—शुरूसे आज तक मेरी बात, विचार या व्यवहारमें कुछ वैषम्य नहीं आया है। मैं अपनेको कुछका कुछ जँचानेका किसीको अवसर नहीं देता, यह बात मैं जोर देकर कह सकता हूँ। सुचरिता ही कहे, मैं ठीक कहता हूँ या नहीं ?

ललिता कुछ कहना चाहती थी किन्तु सुचरिताने उसे रोक कर कहा—
आप ठीक कहते हैं, आपको मैं कोई दोप देना नहीं चाहती ।

हारान बाबूने कहा—यदि दोप देना नहीं चाहती तो मेरे साथ
अन्याय करना ही क्यों चाहती हो ?

सुचरिताने स्पष्ट स्वरमें कहा—यदि आप इसको अन्याय कहते हैं,
तो मैं अन्याय ही कहूँगी । किन्तु—

बाहर से आवाज़ आई—बहन ! घर में हो. ?

सुचरिता प्रसन्न होकर झट बोल उठी—आइए, विनय बाबू आइए ।

बहन, तुम भूल करती हो । विनय बाबू नहीं आये, मैं तो विनय
मात्र हूँ । मुझे विनय बाबू कहकर क्यों आदरके शिखर पर चढ़ाकर लजा
रही हो—यह कह विनयने घर में प्रवेश करते ही हारान बाबू को देखा ।
हारान बाबूके मुँह पर उदासीका चिह्न देखकर विनयने कहा—बहुत दिनसे
मेरे न आने के कारण आप नाराज़ तो नहीं हो गये हैं ?

हारानबाबूने इस परिहासमें योग देनेकी चेष्टा करके कहा—नाराज़
होनेकी तो बात ही है । किन्तु आज आप बे-मौके आये हैं—सुचरिताके
साथ मेरी कुछ विशेष वार्ता हो रही थी ।

विनयने घबड़ाकर कहा—यह देखिए, मेरा आना कब बे मौके न
होगा, यह मैंने आज तक समझा ही नहीं । इसी नासमझी के कारण यहाँ
आने का साहस भी नहीं होता ।—यह कहकर विनय बाहर जाने लगा ।

सुचरिताने कहा—विनय बाबू कहाँ चले ! बैठिए । इनके साथ जो
बात होनी थी वह खतम हो गई । आप बड़े अच्छे अवसर पर आगये ।

विनय समझ गया कि मेरे आनेसे सुचरिता एक सङ्कट से उद्धार पा
गई । वह प्रसन्न होकर एक कुर्सी पर बैठ गया और बोला—मैं किसीके
मनको दुखाना नहीं चाहता । जब कोई मुझे बैठने को कहता है तब मैं
बैठूँगा ही । मेरा स्वभाव ऐसा ही है । इसलिए सुचरिता बहन से यही
निवेदन है कि वे इन बातोंको समझ-बुझकर बोलें, नहीं तो विपत्ति में
फँसेंगी ।

हारान बाबू कुछ न बोलकर चुपचाप बैठे रहे। उन्होंने मनमें कहा—
अच्छा, मैं जब तक, अपने मनकी सब बातें सुचरिता से न कह लूंगा,
तब तक न टलूंगा।

बड़ी देर तक इस तरह बात-चीत होनेके पीछे यह बात स्पष्ट रूप
से समझ में आ गई कि हारान बाबू नहीं उठेंगे। तब सुचरिताने विनयसे
कहा—बहुत दिनोंसे मौसीके साथ आपकी भेंट नहीं हुई है, इसलिए वे
प्रायः रोज़ ही आपका जिक्र करती हैं। क्या आप एक बार उनको देखने
न चलेंगे ?

विनयने कुरसीसे उठकर कहा—जब मैं यहाँ आया हूँ तब बिना
उनको देखे कैसे जा सकता हूँ।

विनयको जब सुचरिता अपनी मौसीके पास ले गई तब ललिता ने
उठकर कहा—हारान बाबू, मुझसे तो अब आपका कोई विशेष प्रयोजन नहीं
है।

हारान बाबूने कहा—नहीं। मालूम होता है, तुम्हें और किसी जगह
कोई आवश्यक काम है, तुम जा सकती हो !

ललिता उसकी बातका मर्म समझ गई। उसने तुरन्त उद्धत भावसे
सिर हिलाकर उनकी सांकेतिक बातको खोलकर कह दिया—विनय बाबू
आज बहुत दिनोंमें आये हैं, मैं उनसे बातचीत करने जाती हूँ।

यह कहकर वह झट वहाँसे चली गई।

विनयको देखकर हरिमोहिनी बहुत प्रसन्न हुई। किन्तु उस पर इसका
कुछ विशेष स्नेह था, केवल इसी कारण नहीं। बल्कि इस घरमें बाहरका
जो कोई हरिमोहिनी को देखने आता था वह उसे एक विचित्र जीव की
तरह समझती थी। वे लोग ठहरे कलकत्ते के रहनेवाले, सभी अंगरेजी
और भाषा लिखने-पढ़ने में उसकी अपेक्षा श्रेष्ठ—उन सबोंके द्वारा
अपमानित होनेके कारण यह बड़े स्क्वॉचमें पड़ जाती थी। ऐसी
अवस्थामें विनय इसे एक अवलम्ब सा मिल गया था। विनय भी

कलकत्ते का रहनेवाला है। यह लिखा-पढ़ा भी किसी की अपेक्षा कम नहीं है तथापि वह हरिमोहिनी पर कुछ अश्रद्धा नहीं रखता। विनय इन्हें अपने घरके लोगों की तरह देखता था, इससे इनके मनमें बड़ा ही सन्तोष होता था। इसी कारण थोड़े ही परिचय से विनयको इनके यहाँ आत्मीय का स्थान मिल गया।

हरिमोहिनीके पास विनयके जानेके थोड़ी देर पीछे ललिता वहाँ तुलन्त कभी नहीं जाती थी—किन्तु आज हारान बाबू से गुप्त आलोपकी चोट खाकर वह सब सङ्कोच-बन्धनको तोड़ बड़ी निर्भीकताके साथ ऊपरवाली कोठरी में गई; और जाते ही विनय बाबूके साथ बेरोक बान करने भी लग गई। उनकी सभा खूब जम उठी। यहाँ तक कि बीच-बीच में उन सबके हँसनेका शब्द नीचे के घर में अकेले बैठे हुए हारान बाबू के कान की राह से भीतर प्रवेश कर हृदयको बेधने लगा। वह अब देर तक घर में अकेले न रह सके। वरदासुन्दरीके साथ वार्तालाप करके अपने मनकी मर्मान्तिक वेदना को दूर करना चाहा। वरदासुन्दरीने जब सुना कि सुचरिताने हारान बाबूके साथ विवाह करनेसे इनकार किया है तब वह एक दम अवीर हो उठी। उसने हारान बाबू से कहा—सीधेपन से आपका काम न होगा। जब वह बार बार अपनी सम्मति प्रकट कर चुकी है और ब्राह्म समाज के सभी लोग इस बातको जान चुके हैं और उसकी अपेक्षा कर रहे हैं तब आज उनके सिर हिलाने से जो सब बातें बदल जायँ, यह नहीं हो सकता। उसकी यह अस्वीकृति अब ब्राह्म न होगी। आप अपना दावा किसी तरह तरह न छोड़ें, यह मैं अभी आपसे कहे रखती हूँ। देखे वह क्या करती है ?

इस सम्बन्ध में हारान बाबू को उत्साह देना, धक्कती हुई आग में मानों घी डालना हुआ। वह अभिमानसे पिर उठाकर मन ही मन कहने लगे की सुचरिता को हारकर मेरी बात माननी ही पड़ेगी, मेरे

लिए सुचरिता का त्याग करना कुछ कठिन नहीं किन्तु मैं ब्राह्म समाजके सिरको नीचा कर देना कभी नहीं चाहता ।

विनयने हरिमोहिनी के साथ आत्मीयता दिखानेके अभिप्रायसे कुछ प्रसाद पानेकी इच्छा प्रकट की । हरिमोहिनी के झट उठकर एक छोटी सी थाली में ठाकुरजीका भोग लगा भीगा चना, कुछ मेवा मखन-मिसरी और केला तथा एक कटोरेमें थोड़ा सा दूध लाकर बड़े प्रेम से विनय के आगे रख दिया । विनय ने हँसकर कहा—‘मैं असमयमें भूख की बात चलाकर मौसी को तरुलीक़ देना चाहता था किन्तु मैं ही ठगा गया । यह कहकर वह खूब आडम्बर के साथ भोजन करने बैठा । इसी समय वरदासुन्दरी वहाँ आ पहुँची विनय ने अपने आसन पर बैठे ही बैठे ज़रा सिर नवाकर नमस्कार करने की चेष्टा करते हुए कहा—‘मैं बड़ी देर तक नीचे बैठा था । आपका दर्शन न हुआ ।’ वरदासुन्दरीने इसका कोई उत्तर न देकर सुचरिताके प्रति लक्ष्य करके कहा—यह तो यहाँ बैठी हैं ! मैं क्या जानती थी कि यहाँ सभा लगी है । सब आनन्द लूट रहे हैं । उधर बेचारे हारान बाबू सबेरेसे इसके लिए अपेक्षा किये बैठे हैं, मानों वे इसके बाग़ के माली हैं । मैंने बचपनसे इसको पाल-पोसकर इतना बड़ा किया है, अरे बाबू ! इतने दिन तो इसका ऐसा व्यवहार कभी न देखा था ! कौन जाने, आजकल यह सब सीख कहाँ से पा रही है । हमारे घरमें जो बात कभी न होती थी वही आजकल होने लगी है । समाज के लोगोंके आगे हम लोग मुँह दिखलाने योग्य न रहे । इतने दिन तक बड़े यत्न से जो शिक्षा दी गई थी वह सब दो ही दिन में न जाने कहाँ उड़ गई । यह क्या माजरा है, कुछ समझ में नहीं आता ।

हरिमोहिनीने डरकर सुचरितासे कहा—नीचे कोई बैठा था, यह मैं न जानती थी । बड़ा अन्याय हुआ । बेटी ! तुम शीघ्र जाओ, मैंने तुमको बिठा रक्खा, यह मुझसे बड़ी भूल हुई !

इसमें हरिमोहिनी की रत्नी भर भूल नहीं है, यह कहनेके लिए ललिता तुरन्त उद्यत हो उठी थी, परन्तु सुचरिताने चुपचाप जोर से उसका हाथ दबाकर उसे रोक दिया और वरदासुन्दरीकी बातका कोई प्रतिवाद न करके वह नीचे चली गई ।

यह बात पहले ही कही जा चुकी है कि विनयने वरदासुन्दरीका स्नेह अपनी ओर आकर्षित किया था । विनय जो मेरे घरके लोगों के साथ हिल मिलकर एक न एक दिन ब्राह्मणसमाज में सम्मिलित होगा, इस विषय में उसे सन्देह न था । मानो वह विनयको अपने हाथसे नये साँचेमें ढाल रही थी और इसका उसके मनमें बढ़ा गर्व था । उसने अपने समाजमें किसी-किसी पर प्रकाशित भी किया था । उसी विनयको आज विपत्तीके घरमें प्रतिष्ठित देख उसके मनमें जलन पैदा हुई और अपनी ललिता को अष्टाचारी विनयकी सहकारिणी देख उसके हृदय की ज्वाला दूनी हो भभक उठी । उसने रूखे स्वरमें कहा—ललिता, यहाँ क्या तुम्हारा कोई काम है ?

ललिताने कहा—हाँ, विनय बाबू आये हैं इसीसे—

वरदा सुन्दरीने कहा—विनय बाबू जिसके पास आये हैं, वही उनका आतिथ्य करे । अभी तुम नीचे चलो काम है ।

ललिताने मन में सोचा कि हारान बाबूने अवश्य ही विनयका, मेरा तथा सुचरिता का नाम लेकर माँ से कुछ ऐसा कहा है जिसे कहने का उनको कोई अधिकार नहीं था, यह सोचकर उसका मन अत्यन्त कठोर हो उठा । उसने प्रयोजन न रहने पर भी बड़ी प्रगल्भताके साथ कहा—विनय बाबू बहुत दिनमें आये हैं, इनके साथ कुछ बात करके तब मैं आऊँगी ।

ललिताकी बोलीसे ही वरदा सुन्दरी जान गई कि इस पर अब जोर न चलेगा । हरिमोहिनी के सामने ही फिर अपना पराभव बचाने की दृष्टिसे वह कुछ न बोली और विनयके साथ किसी प्रकार का सम्भाषण किये बिना ही चली गई ।

ललिताने विनयके साथ बातें करनेका उत्साह अपनी माँ के आगे जाहिर तो किया, किन्तु वरदासुन्दरी के चले जाने पर इस उत्साहका कोई लक्षण न देखा गया। तीनों व्यक्ति एक विचित्र भाव धारण कर चुग हो रहे। कुछ ही देर बाद ललिता वहाँ से उठकर अपने कमरेमें गई और भीतरसे किवाड़ लगा लिये।

इस घरमें हरिमोहिनी की ब्या दशा है, विनय बखूबी समझ गया। उसने बात-चीत करके क्रमशः हरिमोहिनी का सब वृत्तान्त सुन लिया सब बातोंके अन्तमें हरिमोहिनीने कहा—बाबू! मेरे समान अनाथा के लिए घर में रहना ठीक नहीं। किसी तीर्थ में जाकर देव सेवामें मन लगाती यह मेरे लिए अच्छा होता। मेरे पास जो कुछ रखा पैसा बच रहा है उससे कुछ दिन निर्वाह चल जाता। तब भी यदि यह अधम शरीर बचा रहता तो मैं किसी के घर में रसोई-पानीका काम करके भी किसी तरह दिन काट लेती मैं काशी में देख आई हूँ कि इस तरह कितने ही लोगोंका निर्वाह हो रहा है। किन्तु मैं तो बड़ी अभागिन, हूँ मेरे दुर्भाग्य कोई काम होने नहीं देता। जैसे झूठे हुए मनुष्यको एक सहारेकी लकड़ी मिल जाय और वह उसे किसी तरह छोड़ना न चाहे वैसे ही राधा-रानी और सतीश मेरे लिए आधार हो गये हैं। उनको छोड़कर कहीं जाने की बात मन में आते ही मेरे प्राण बावू खूख जाते हैं। इन दोनोंको कहीं छोड़ना न पड़े इसका भय दिन-रात मेरे मनमें लगा रहता है। इस चिन्तासे रात को नींद नहीं आती। अगर इन दोनों को छोड़कर जाना पड़ा तो मैंने इनके साथ इतना स्नेह किस लिए जोड़ा? तुमसे कहने में मुझे लज्जा नहीं। जबसे इन दोनोंको पाया है तबसे मैं ठाकुरजीकी पूजा ध्यान लगाकर कर सकी हूँ; यदि ये दोनों मेरे पास से अलग हो जायंगे तो ठाकुरजीकी पूजा में मेरा ध्यान न लगेगा।

यह कहकर हरिमोहिनीने अपने आँचल से आँखें पोछ डालीं।

सुचरिता नीचेभी दालानमें आकर हारान बाबूके सामने खड़ी हुई और बोली—आपको क्या कहना सुनना है, कहिए !

हारान०—बैठ जाओ ।

सुचरिता बैठी नहीं, चुनचाप खड़ी ही रही ।

हारानने कहा—सुचरिता, तुम मेरे साथ अन्याय कर रही हो ।

सुचरिताने कहा—आपने भी मेरे साथ अन्याय किया है !

हारानने कहा—क्यों कैसे ? मैंने तुमको जो वचन दिया, वह अब भी...

सुचरिताने बीच ही में रोक कर कहा—न्याय अन्याय क्या केवल मुंहकी बातसे ही होता है ? उसी वचन पर जोर देकर क्या आप अपने कामोंसे मेरे ऊपर अन्याचार करना चाहते हैं एक सत्य क्या सढस मिथ्या की अपेक्षा बड़ा नहीं है ? मैंने अगर सौ दफे भूल की हो, तो क्या आप जबरदस्ती मेरी उस भूल को ही अग्रगण्य करेंगे ? आज जब मुझे अपनी वह भूल मालूम पड़ गई है, तब मैं अपनी पहिले की किसी बात को स्वीकार नहीं करूंगी—स्वीकार करने से ही मेरा अन्याय होगा ?

हारान बाबू की समझमें किसी तरह यह बात नहीं आती थी किन्तु सुचरिता का ऐसा परिवर्तन किसी प्रकार सम्भव हो सकता है, उसकी पहिले की स्वाभाविक नम्रता और चुप रहनेकी—कम बोलने की—आदत आज जोड़ुइस तरह नष्ट हो गई है, उसका कारण उन्हीं का आचरण है, यह अनुमान करनेकी शक्ति और विनयका भाव उनमें नहीं था । उन्होंने मनमें सुचरिताके नये साथियों पर दोषारोपण करके सुचरिता से पूछा तुमने क्या भूल की थी ?

सुचरिताने कहा—यह बात मुझसे क्यों आप पूछते हैं ? पहले मेरा मन था, अब नहीं है, इतना ही क्या यथेष्ट नहीं है ?

हारानने कहा—ब्राह्म समाजके आगे जो हम जवाबदेह हैं समाज के आदमियों के आगे तुम क्या जवाब दोगी, और मैं ही क्या कहूंगा ? सुचरिता—मैं कुछ भी नहीं कहूंगी । आप अगर कहना चाहे तो कहेंगे कि सुचरिताकी अवस्था थोड़ी है, उसके बुद्धि नहीं है, उसकी मति अस्थिर है । जो जी चाहे वही कहियेगा ? किन्तु मेरी इस बारे में यही आखिर बात है—बस !

हारान०—आखिरी बात हो ही नहीं सकती । परेश बाबू अगर....

इसी बीचमें परश बाबू वहां आ गये । उन्होंने कहा—क्या पानू बाबू मेरी क्या बात आप कह रहे हैं ?

सुचरिता इस समय दालान से श्रन्यत्र जा रही थी । हारान बाबू ने पुकार कर कहा—सुचरिता जाना नहीं । परेश बाबूके सामने बात हो जाय ।

सुचरिता घूम कर खड़ी हो गई । हारानने कहा—परेश बाबू, इतने दिन बाद आज सुचरिता कहती है कि इस बिवाह में उनका मत नहीं है ! इतने बड़े विषय को लेकर उनको क्या इतने दिन तक लड़कपन या खेल करना उचित था ? यह जो निन्दनीय विघ्न उपस्थित हुआ इस बातके लिए क्या आपको भी जवाबदेह न होना होगा ?

परश बाबूने सुचरिताके सिर पर हाथ फेर कर स्नेह के स्वरमें कहा बेटी, तुम्हारे यहां ठहरने की जरूरत नहीं है' तुम जाओ ?

यह मामूली बात सुनते ही दम भर में सुचरिता की दोनों आँखों डबडबा आईं । वह चटपट वहाँसे चली गई ।

परेश बाबूने कहा सुचरिताने अपने मनको अच्छी तरह समझे बिना ही विवाहके लिए सन्मति दी थी—यह सन्देह बहुत दिनसे मेरे मनमें पैदा होने के कारण ही समाजके सब लोगोंके सामने आप लोगोंके सम्बन्ध को पक्का करनेके बारेमें मैं आपके अनुरोधका पालन नहीं कर सका था ।

हारानने कहा—सुचरिताने उस समय अपने मनको अच्छी तरह समझ कर ही सम्मति दी थीं, और इस समय बिना समझे ही असम्मति प्रकट कर रही है—इस तरह का सन्देह आपके मनमें नहीं उ-पन्न होता ?

परेशने कहा—दोनों ही बातें सम्भव हैं । किन्तु कैसा भी सन्देह क्यों न हो, ऐसी अवस्था में विवाह नहीं हो सकता ।

हारानबाबू—आप सुचरिताको अच्छी सजा न देंगे ?

परेश०—आप निश्चय जानते हैं, सुचरिताको मैं कभी अपनी शक्ति भर चुगी सजा नहीं दे सकता ।

हारान०—यही बात अगर होती तो सुचरिताका ऐसा परिणाम कदापि न हो सकता । आपके परिवार में आज कल जो बातें होने लगी हैं सो अब आरकी अविवेचनाका ही फल है, और यह बात मैं सादस करके आपके मुंह पर ही कह रहा हूँ !

परेशबाबूने जग हंस कर कहा—यह तो आप ठीक ही कह रहे हैं । अपने परिवारके अच्छे बुरे सभी परिणामोंकी जिम्मेदारी मैं न लूंगा, तो और कौन लेगा ?

हारान०—आपको इसके लिए पछुताना पड़ेगा ।

परेश०—पश्चात्ताप तो ईश्वर की दया है । अपराधको ही डरता हूँ, पानू बाबू, पश्चात्तापको नहीं ।

सुचरिताने प्रवेश करके परेश बाबूका हाथ पकड़ कर कहा—बाबूजी आपकी उपासनाका समय हो गया, चलिए ।

परेश०—पानू बाबू, तो क्या जरा बैठिएगा ?

हारान बाबू, केवल 'न' कह कर तेजीके साथ चले गये ।

सुचरिता दुबिधामें पड़कर अनेक कष्टोंका अनुभव करने लगी । नीतरसे बाहर तक कहीं उसको चैन नहीं । गाराके प्रति उसके मनका भाव इतने दिनसे अलक्षित रूपमें घनिष्ठ होता जा रहा था । गोराके जेल जानेके कारण जो कष्ट उसके मनमें हो रहा है, उसके दूर होनेका उसे कोई उपाय नहीं दिखाई देता । वह दिन-रात घोर चिन्तामें डूबी रहती है । किसीसे अपने मनका दुःख कह भी नहीं सकती । उसे इतना भी समय नहीं मिलता जो एकान्तमें बैठकर वह अपने मानसिक दुःख पर कुछ विचार कर सके । हारान बाबूने उसका मन फेरनेके लिए अपने समग्र समाजको उसके पास भेजकर उसे बाधित करनेका उपाय रचा है । वह समाचार पत्रमें भी इस सम्बन्धका उल्लेख करना चाहता है । सुचरिता की मौसी परेश बाबूके घरमें ठाकुरजीकी पूजा करती है, और सुचरिताको बहका रही है, इसका भी उल्लेख किया जायगा । यह सुनकर मौसी बड़ी बेचैन हो पड़ी है । मैं अब क्या करूँ, कहाँ जाऊँ, इसी सोचसे इसका कुछ निश्चय नहीं कर सकती । सुचरिता भी इसी सोचसे मरी जा रही है ।

इस सङ्कटके समय उसके एकमात्र अवलम्ब थे परेश बाबू । वह उससे कोई परामर्श लेना नहीं चाहती थी । उसे अनेक बातें कहनेको थीं, जिन्हें वह परेश बाबूके सामने कह नहीं सकती थी और कितनी ही बातें ऐसी थीं जो सङ्कोचवश वह उनके निकट प्रकट नहीं कर सकती थी । यद्यपि वह परेश बाबूसे कुछ कह नहीं सकती थी तथापि उसे पूर्ण विश्वास था कि वे मेरे हृदयका भाव जानते हैं । वह उन्हींको अपना माँ-बाप समझ बैठी है ।

आजकल जाड़ेके समय साँझको परेश बाबू बाग़में उपासना

करने न जाते थे। घरमें पच्छिम ओरकी एक छोटी सी कोठरीके खुले दरवाजेके सामने एक आसन बिछाकर वे उपासना करते थे। उनके उजले केशोंसे सुशोभित मुखमण्डल पर सायंकालिक सूर्यकी आभा पड़नेसे वह और भी दीप्तिमान् हो उठता था। उसी समय सुचरिता पैरोंकी आहट बचाकर चुपचाप उनके पास आकर बैठती थी। वह अपने अशान्त, अस्थित चित्तको मातो परेश बाबूकी गम्भीर उपासनामें डुबा रखती थी। आजकल उपासनाके अन्तमें प्रायः परेश बाबू नित्य देखते थे कि हमारी यह लड़की, यह शिष्या, चुपचाप हमारे पास बैठो है। वे उसको अनिर्वचनीय आध्यात्मिक माधुर्य द्वारा परिवेष्टित देख अन्तः करणसे चुपचाप आशीर्वाद देते थे।

परेश बाबूके जीवनकी गम्भीर शान्तिका कुछ सुख पानेकी इच्छासे सुचरिता कोई न कोई बहाना करके उपासनाके समय उनके पास जा बैठती थी। वह अपने चिन्तित चित्तमें शान्ति पहुँचानेके लिए परेश बाबूके पैरों पर मस्तक रखनेके सिवा और कोई सुगम उपाय न देखती थी।

सुचरिता अपने अटल धैर्यके साथ सब आघातोंको चुपचाप सह लेने हीमें अपना कल्याण समझती थी। उसका ख्याल था कि इस विषयमें कुछ न बोलनेसे आप ही आप सब बखेड़े मिट जायँगे। परन्तु यह न हुआ। उसे और ही उपायका अवलम्बन करना पड़ा।

बरदासुन्दरीने जब देखा कि क्रोध करके या धिक्कार देकरके सुचरिता को रात्री करना संभव नहीं है और परेश बाबूसे भी इस विषयमें सहायता पानेकी कोई आशा नहीं है तब हरिमोहिनीके प्रति वह भूखी बाधिनर्त्री तरह क्रुद्ध हो उठी। घरमें हरिमोहिनीका रहना उसे उठते-बैठते बेचैन करने लगा।

उस दिन बरदासुन्दरीके पिताके मृत्यु-दिनकी वार्षिक उपासना थी। इस उल्लेखमें उसने विनयको नेवता दिया था। उपासना सायंकालको होनेवाली थी। उसके पूर्व ही वह उपासना-गृहको सजा रही

थी। सुचरिता और वरदासुन्दरीकी लड़कियाँ भी उसकी सहायता कर रही थी।

इस समय एकाएक वरदासुन्दरीकी नज़र विनय पर पड़ी। वह उसके जीनेसे ऊपर हरिमोहिनीके पास जा रहा था। जब मनमें कुछ मालिन्य रहता है तब छोटी सी घटना भी बहुत बड़ी हो उठती है। विनयका यह ऊपरके कमरेमें जाना वरदासुन्दरीको ऐसा असह्य हो गया कि वह घरकी सजावट छोड़कर तुरन्त हरिमोहिनीके पास जा पहुँची। देखा, विनय चटाई पर बैठकर आत्मीयको भाँति विश्वस्त भावसे हरिमोहिनीके साथ बातचीत कर रहा है।

वरदासुन्दरीने कहा—तुम हमारे यहाँ जब तक जी चाहे रहो, मैं तुमको आदरसे रखूँगी। किन्तु तुम्हारे ठाकुरजी को मैं अपने यहाँ नहीं रहने दे सकती।

हरिमोहिनी देहातको रहनेवाली थी। ब्राह्मणके सम्बन्ध में उसकी धारणा थी कि वह किरिस्तानी धर्मकी ही एक शाखा है। कई दिनोंसे वह इसी बातको सोच रही थी और इस चिन्तासे व्याकुल हो रही थी कि अब क्या करना चाहिए। ऐसे ही अवसर पर आज वरदासुन्दरीके मुखसे यह बात सुनकर वह समझ गई कि अब सोच-विचार करने का समय नहीं है, अब कोई एक बात शीघ्र ही स्थिर करनी होगी। पहले उसने सोचा, कलकत्तेमें मकान किराये पर लेकर रहूँगी तो कभी-कभी सुचरिता और सतीशको भी देख सकूँगी, किन्तु मेरे पास जो थोड़ी सी पूंजी बच रही है, उससे कलकत्तेका खर्च नहीं चलेगा।

वरदासुन्दरी बग़रडरकी तरह आकर जब चली गई तब विनय सिर नीचा करके चुप हो बैठा रहा।

कुछ देर चुप रहकर हरिमोहिनीने कहा—मैं तीर्थको जाऊँगी, तुममेंसे कोई मुझे पहुँचा आवेगा ?

विनयने कहा—क्यों नहीं पहुँचा आऊँगा। किन्तु इसकी तैयारी

करनेमें दो चार दिनका बिलम्ब होगा । तब तक तुम मेरी माँके पास चलकर रहो ।

हरिमोहिनीने कहा—मेरा भार कुछ साधारण नहीं है । विवाताने मुझे कितना भारी बनाया है, यह मैं नहीं जानती । मेरा बोझ कोई नहीं ढो सकता । जब ससुरालमें भी विरक्ति आ पड़ने पर मुझे कोई न रख सका तब दूसरा कौन मुझ रख सकेगा ? अब किसीके घर जानेका काम नहीं । जो विश्वका भार धारण करते हैं अब उन्हीके चरण-कमलोंमें आश्रय लूँगी । अब यहाँ न रहूँगी, यह कहकर वह बार बार दोनों आँखें आँचलसे पोंछने लगी ।

विनयने कहा—यह कहनेसे क्या होगा ! मेरी माँके साथ किसीकी तुलना नहीं हो सकती । जो अपने जीवनका समस्त भार भगवान्‌को अर्पण कर चुकी है, वह दूसरे का भार उठानेमें कुछ भी रुद्धोच नहीं करती । जैसे परेश बाबू हैं, वैसी ही मेरी माँ है । एक बार मैं तुमको अपनी माँके पास ले चलूँगा । फिर तुम जहाँ जिस तीर्थमें जानेका कहोगी, वहाँ मैं पहुँचा आऊँगा ।

हरिमोहिनी—तो एक बार उनको इसकी खबर—

विनयमें ने कहा—मेरे जाने हीसे उन्हें खबर मिल जायगी । इसके लिए आप कुछ चिन्ता न करें ।

हरिमोहिनी—तो कल सबेरे—

विनय—कलकी क्या बात ! आज ही रातको चलिए ।

सन्ध्या समय सुचरिताने आकर कहा—विनय बाबू, आपको माँ बुलाती हैं, उपासनाका समय हो गया ।

विनयने कहा—माँकी साथ बात-चीत हो रही है, अभी मैं न चल सकूँगा ।

असलमें आज विनय को वरदासुन्दरीका, उपासनाका, निमन्त्रण किसी तरह स्वीकार न था । उसने मनमें कहा, यह सब आडम्बर है ।

हरिमोहिनीने घबराकर कहा—बाबू, तुम जाओ, मेरे साथ बात-चीत फिर होगी। वहाँ का काम पूरा हो जाय तब यहाँ आना।

सुचरिता ने कहा—अभी आपका वहाँ चलना अच्छा है।

विनयने समझा, अभी उपासना गृहमें मैं न जाऊँगा तो इस घरमें जिस उपद्रवका आरम्भ हुआ है वह और बढ़ जायगा। इसलिए वह उपासना स्थलमें गया तो, परन्तु उसका जाना पूर्ण रूपसे फलित न हुआ।

उपासनाके अनन्तर भोजनका प्रबन्ध था। विनयने कहा—अभी मुझको भूख नहीं है।

बरदासुन्दरीने कहा—भूखको दोष मत दीजिए। आप ऊपरसे ही भूखका निवारण कर रहे हैं।

विनयने हँसकर कहा—आपका कहना ठीक है, लोभी की ऐसी ही दुर्दशा होती है। वह वर्तमानकी अल्प प्राप्तिसे भविष्यके वृत्त लाभको खो बैठता है।—यह कहकर विनय जानेको उद्यत हुआ।

बरदासुन्दरीने कहा—मालूम होता है, आप फिर ऊपर जा रहे हैं ?

संक्षेपमें 'हाँ' कहकर विनय वहाँसे बाहर आ गया। दर्वाजेके पास सुचरिता खड़ी थी। विनयने उससे मीठे स्वरमें कहा—बहन, एक बार मौसी के पास तुम्हारा जाना आवश्यक है। शायद वह तुमसे कोई कामकी बात पूछेगी।

ललिता आगत जनोंके आतिथ्यमें नियुक्त थी; एक बार हारानबाबू उसे अपने पास आते देख बोल उठे—विनय बाबू तो यहाँ नहीं हैं, ऊपर गये हैं।

उनकी यह व्यङ्ग्य भरी बात सुनकर ललिता खड़ी हो उनके मुँहकी ओर दृष्टि करके निःसङ्कोच होकर बोली—मालूम है। वे मुझसे भेट किये बिना न जायेंगे। मैं यहाँ का काम पूरा करके अभी ऊपर जाऊँगी।

ललिताको किसी तरह चुप न कर सकने के कारण हारानबाबूके हृदयकी ज्वाला और भी बढ़ गई। विनय सुचरितासे कुछ कह गया और सुचरिताने कुछ ही देर पीछे उसका अनुसरण किया, यह भी हारान

बाबूने अपनी आँखों देखा । आज वह सुचरितासे बातचीत करनेका दंग निकाल बारबार विफल प्रयत्न हुए हैं । दो एक बार उनके द्वारा स्पष्ट रूपसे बुलाई जाने पर सुचरिताने उनकी बात अनसुनी कर दी है, जिससे सभा-स्थित लोगोंके सामने हारान बाबूने अपनेको विशेष अपमानित समझा । इससे उनका मन प्रसन्न न था ।

सुचरिताने ऊपर जाकर देखा कि हरिमोहिनी अपनी चोजोंको समेट गठरी बांधे इस भावसे बैठी है जैसे अभी कहीं जायगी । सुचरिताने पूछा—मौसी यह क्या ?

हरिमोहिनीने उसका कोई उत्तर न दे, रो कर कहा—सतीश कहाँ है, बेटी ! एक बार उसे बुला दो ।

सुचरिताने विनयके मुंहकी ओर देखा । विनयने कहा—इस घरमें मौसीका रहना सबको भारी मालूम होता है, इससे मैं इनको माँ के पास लिये जा रहा हूँ ।

हरिमोहिनीने कहा—वहाँसे मैंने तीर्थ-यात्राका विचार किया है । मेरे सद्यः अनाथाका इस तरह किसीके घरमें रहना ठीक नहीं । मुझे कोई अधिक दिन तक अपने घरमें रहने देना क्यों पसन्द करेगा ?

सुचरिता आप ही इस बातको कई दिनोंसे सोच रही थी । इस घरमें रहना मौसीके लिए अपमान है यह सुचरिता जान चुकी थी, इसलिए वह कोई उत्तर न दे सकी । चुप होकर उसके पास जा बैठी । सायङ्कालका अन्धकार घरमें छा गया है परन्तु अभी तक चिराग-बत्ती नहीं हुई है । हेमन्तके धुंधले आकाशमें कहीं कहीं तारे उगे हुए दिखाई दे रहे थे । किसके नेत्रोंसे आंसू गिर रहे हैं, यह इस अंधेरेमें दिखाई न दिया ।

जीने परसे ही सतीशका ऊँचे स्वरसे मौसीको पुकारने का शब्द सुन पड़ा । “क्या है बेटा ! आओ” कहकर हरिमोहिनी झट उठ खड़ी हुई । सुचरिताने कहा—मौसी, आज रातको कहीं जाना ठीक न होगा, कल सबेरकी यात्रा ठीक होगी । बाबूजीको जानेकी सूचना दिये बिना तुम कैसे जा सकोगी ! यह बड़ा अन्याय होगा ।

बिनयने वरदासुन्दरीके द्वारा किये गये हरिमोहिनीके अपमानसे उत्तेजित होकर इस बातको न सोचा था। उसने यही निश्चय किया था कि अब एक रात भी मौसीका इस घरमें रहना सुनासिब नहीं है। 'श्रीर आश्रयके अभावसे ही हरिमोहिनी सब कष्ट सहकर इस घरमें है, वरदासुन्दरीकी इस धारणाको दूर करनेके लिए वह हरिमोहिनीको यहांसे ले जानेमें कुछ भी विलम्ब करना नहीं चाहता था। सुचरिताकी बात सुनकर उसे धकसे स्मरण हो आया कि इस घरमें हरिमोहिनीका वरदासुन्दरीके साथ ही तो एक मात्र सम्बन्ध नहीं है। जिस व्यक्तिने इसका अपमान किया है, उसीको सबसे बड़ा समझना और जिसने बड़ी उदारताके साथ अपने सम्बन्धीकी भांति आश्रय दिया है, उसको भूल जाना उचित नहीं।

बिनयने कहा—हां, यह ठीक है। परेश बाबूको बिना जताये इस तरह जाना न्याय-विरुद्ध है।

सुचरिता जानती थी कि सोने के पहले परेश बाबू अपनी उपासना सम्बन्धी कोई पुस्तक पढ़ा करते हैं। कई दिन ऐसे समयमें सुचरिता उनके पास जाकर बैठी है और उसके अनुरोधसे परेश बाबूने उसे कुछ पढ़कर सुनाया है।

आज भी अपने सूने घरमें परेश बाबू चिराग जलाकर एमर्सनका ग्रन्थ पढ़ रहे थे। सुचरिता धीरे-धीरे उनके पास एक कुर्सी पर जा बैठी। परेश बाबूने पुस्तक रखकर एक बार उसके मुँहकी ओर देखा। सुचरिताका सङ्कल्प भङ्ग हुआ। वह जो बात कहनेके लिए आई थी, वह कह न सकी। सिर्फ इतना ही कहा—बाबूजी, क्या पढ़ते थे, मुझे पढ़कर सुनाइए।

परेश बाबू पढ़कर उसका गम्भीर आशय सुचरिता को समझाने लगे। जब रात के दस बज गये तब पढ़ना समाप्त हुआ। तब भी सुचरिता यह सोचकर कि सोनेके पूर्व परेश बाबूके मनमें किसी प्रकारका लोभ न हो, कोई बात कहे-सुने बिना ही धीरे-धीरे उठ खड़ी हुई और चल पड़ी। परेश बाबू उसे पुकार कर कहा—राधा।

वह लौट आई । परेश बाबू ने कहा—तुम अपनी मौसी की बात मुझसे कहने आई थीं ?

परेश बाबू मेरे मन की बात समझ गये, यह जानकर वह विस्मित हो बोली—हाँ, बाबूजी ! आज अब यह बात रहने दीजिए, कल सवेरे कहूँगी ।

सुचरिताके बैठने पर परेश बाबू ने कहा—तुम्हारी मौसीको यहाँ कष्ट होता है सो मैं समझता हूँ । उनका धर्म-विश्वास और आचरण लावण्यकी माँके ब्राह्मसंस्कारमें इतना अधिक आघात देगा यह मैं पहले न जान सका । अब देखता हूँ, वह उसे तकलीफ दे रही है, तब इस घरमें तुम्हारी मौसी कैसे रह सकेंगी ।

सुचरिताने कहा—मौसी तो यहाँसे जानेके लिए तैयार हैं ।

परेश बाबू ने कहा—मैं जानता हूँ, वे जायँगी । तुम्हीं दोनों उनके एकमात्र आत्मीय हो । तुम उनको भिखारिन की तरह बिदा कर सकोगी, यह मैं नहीं जानता । यह बात मैं कई दिनोंसे सोच रहा था ।

मौसीका रुकट परेश बाबू जानते हैं और उनके लिए चिन्तित हैं, इसका कुछ भी अनुभव सुचरिताको न था । मेरी मौसीका वृष्ट जाननेसे उन्हें दुःख होगा, इस भयसे इतने दिन तक वह बड़ी सावधानीसे चलती थी । भूलकर भी वह परेश बाबूके आगे इस विषयमें कुछ न बोलती थी । आज परेश बाबूकी बात सुनकर वह अचम्भेमें आ गई । उसकी आँखोंमें आँखों उमड़ आये ।

परेश बाबू ने कहा—तुम्हारी मौसीके लिए मैंने एक मकान ठीक कर रक्खा है ।

सुचरिताने कहा—किन्तु वह तो—

परेश बाबू—भाड़ा नहीं दे सकेंगी ! भाड़ा वे क्यों देंगी ? भाड़ा तुम देना ।

सुचरिता उनके कहने का मतलब न समझकर चुपचाप उनके मुंहकी ओर देखने लगी ।

परेश बाबूने हँसकर कहा—तुम अपने ही मकानमें रहने देना, तब भाड़ा न देना पड़ेगा ।

सुचरिता और भी आश्चर्यमें डूब गई । परेश बाबूने कहा—तुम नहीं जानती कि कलकत्ते में तुम्हारे दो मकान हैं । एक तुम्हारा और एक सतीश का । मृत्युके समय तुम्हारे पिता मुझे कुछ रुपया दे गये थे । उस रुपयेको किसी तरह बढ़ाकर उससे मैंने दो मकान मोल जिये हैं इतने दिन तक वे भाड़े पर उठा दिये गये थे । भाड़ेका रुपया जमा हो रहा था । तुम्हारे घर का भाड़ा कुछ दिनसे बन्द है । वह खाली पड़ा है । वहाँ रहनेमें तुम्हारी मौसीको कोई तकलीफ न होगी ।

सुचरिताने कहा—वहाँ क्या वह अकेली रह सकेंगी ?

परेश बाबूने कहा—तुम्हारे रहते वे अकेली क्यों रहेंगी ?

सुचरिताने कहा—मैं अभी आपसे यही बात कहनेके लिए आई थी मौसी जानेके लिए तैयार थी । मैं सोच रही थी कि उसे इस तरह अकेली कैसे जाने दूँगी । इसी लिए आई हूँ । आप जो कहेंगे वही करूँगी ।

परेश बाबूने कहा—इस घरके बगलमें जो यह गली है, इसके दो तीन घरके बाद ही तुम्हारा घर है । इस बरामदे पर खड़े होनेसे यह घर देख पड़ता है । वहाँ रहनेसे तुम लोगोंको अरुणित अवस्था में रहनेका भय न होगा । मैं तुम्हारी खबर लेता रहूँगा ।

सुचरिताके हृदयसे मानों एक बहुत बड़ा बोझ उतर गया । घड़ी में ग्यारह बज गये । फिर वे सोनेकी गये । सुचरिता भी अपनी मौसीके पास चली गई ।

दूसरे दिन सवेरे हरिमोहिनीने परेश बाबूके पास जाकर उन्हें प्रणाम किया। उन्होंने हड़बड़ाकर कहा—यह क्या ?

हरिमोहिनीने आँखोंमें आँसू भरकर कहा—आपका ऋण मैं किसी जन्ममें भी न चुका सकूंगी। मेरे सदृश इतनी बड़ी अनाथाके लिए आपने उपाय कर दिया है। यह आपके सिवा और कोई नहीं कर सकता था। प्रार्थना करने पर भी मेरा कोई उपकार करनेवाला यहाँ नहीं। आपके ऊपर भगवान्की बड़ी कृपा है, इसीसे आप मेरे सदृश अभागिनके ऊपर भी कृपा कर सके हैं।

परेश बाबू बड़े संकुचित हो उठे। उन्होंने कहा—मैंने तो आपका कुछ उपकार नहीं किया है। कुछ किया है तो राधा रानी (सुचरिता) ने।

हरिमोहिनीने रोककर कहा—मैं जानती हूँ, किन्तु राधा रानी भी तो आपकी ही है। उसका किया मैं आपका ही किया समझती हूँ। उसकी माँ जब चल बसी, उसके पिता भी न रहे, तब मैंने कहा कि लड़की बड़ी अभागिन है। किन्तु इसके बिगड़े नसीबको ईश्वर ऐसा अच्छा कर देंगे, यह मैं न जानती थी। ठीर-ठीर पर धूमती-फिरती आग्निर जब मैं कलकत्ते आई और आपके दर्शन मिले तब मैंने समझा कि भगवान्ने मुझ पर भी दया की है।

“मौसी, माँ आपको जिवाने आई है।” विनयने घरमें पैर रखनेके साथ यह बात हरिमोहिनीसे कहा। सुचरिताने उत्कण्ठित होकर कहा—वे कहाँ हैं ?

विनयने कहा—नीचे आरकी माँके पास बैठी है। सुचरिता झट नीचे चली गई।

परेश बाबूने हरिमोहिनीसे कहा—मैं आपके घरमें आपकी वस्तुओंको रख आता हूँ ।

परेश बाबूके चले जाने पर विनयने अचम्भेके साथ कहा—तुम्हारे घरकी बात मैं नहीं जानता ।

हरिमोहिनीने कहा—मैं भी तो नहीं जानती, केवल परेश बाबू जानते हैं । वह घर हमारी राधा रानीका है ।

विनयने यह सुनकर कहा—मैंने सोचा था कि विनय संसारमें किसीके काम आवेगा, पर अब यह आशा भी जाती रही । अभी तक तो मुझसे माँकी कुछ सेवा बन नहीं पड़ी है, जो काम मुझे करना चाहिए उसे वे आप कर रही हैं । मौसीका भी कुछ काम न करके मैं उसीसे अपना काम लूँगा । मेरे नसीबमें केवल लेना ही लिखा है, देना नहीं ।

कुछ देर बाद ललिता और सुचरिताके साथ आनन्दमयी आ पहुँची । हरिमोहिनीने कुछ आगे बढ़कर कहा—“भगवान् जब दया करते हैं तब किसी बातकी कमी नहीं रहती । बहन, आज तुम भी मिल गईं” यह कहकर उसे हाथ पकड़कर ले आई और चटाईके ऊपर बिठाया ।

हरिमोहिनीने कहा—बहन, तुम्हारी चर्चा छोड़कर विनयके मुँहमें और कोई बात ही नहीं है ।

आनन्दमयीने हँसकर कहा—बचपनसे ही उसको यह रोग है । वह जिस बातको पकड़ता है उसे शीघ्र नहीं छोड़ता । मौसीका नाम लेना भी अब शीघ्र ही शुरू होगा ।

विनयने कहा—हाँ, यह होगा । यह मैं पहले ही कह रखता हूँ ।

ललिताकी ओर देखकर आनन्दमयी मुसकुराती हुई बोली—जो वस्तु विनयके पास नहीं है उसका संग्रह करना वह जानता है, और संग्रह करके उसका आदर करना भी जानता है । तुम लोगोंको वह किस दृष्टिमें देख रहा है, यह भी मैं जानती हूँ । जिस बातको वह कभी

कल्पनामें भी नहीं ला सकता था, मानों उसे वह सहसा पा गया है। तुम लोगोंके साथ उसके परिचयकी घनिष्टता होनेसे मुझे जितना हर्ष हुआ है, वह मैं तुमसे क्या कहूँ। तुम्हारे इस घरमें विनयका जो इस तरह मन रम गया है इससे उसका बड़ा उतकार हुआ है, इस बातको वह बखूबी समझता है, और हृदयसे स्वीकार भी करता है।

ललिताने कुछ उत्तर देनेकी चेष्टाकी पर कुछ उत्तर न दे सकी। उसका मुँह लज्जासे लाल हो गया। सुचरिताने लज्जिताका सङ्कट देखकर कहा—विनय बाबू सबके हृदयका सद्भाव लाखते हैं इसी लिए सब मनुष्योंका सद्भाव इनके पास आकर एकत्र होता है। यह इनमें विशेष गुण है।

विनयने कहा—तुम विनयको जितना बड़ा समझती हो उसकी उतनी बड़ी इज्जत संसारमें नहीं है। यह बात मैं तुमको समझाना चाहता हूँ, परन्तु मेरे मनमें इतना अधिक अभिमान है जिससे मैं समझा नहीं सकता, इसके आगे मैं अब कुछ नहीं बोल सकता। मेरी बात यहीं तक रही।

इसी समय वरदासुन्दरीने ऊपर आकर हरिमोहिनीकी ओर दृक्पात तक न करके आनन्दमयीसे पूछा—आप हमारे घरको बनी कोई वस्तु खा सकेंगी ?

आनन्दमयीने कहा—खाने-पीनेमें क्या धरा है, हम आपके घरमें खानेसे क्या अज्ञात होंगी ? किन्तु आज नहीं, गोरा आ ले तब खाएँगी।

आनन्दमयी गोराके परोक्षमें, उसके विशुद्ध कोई काम कर न सकी।

वरदासुन्दरीने विनयकी ओर देखकर कहा—विनय बाबू तो यहाँ हैं, मैं समझती थी, वे अभी तक नहीं आये हैं।

विनयने तुरन्त कहा—मैं जो आया हूँ सो आप समझती हैं कि बिना आपसे भेंट किये ही चला जाऊँगा ?

वरदासुन्दरीने कहा—कल तो आप निमन्त्रित होने पर भी बिना भोजन किये चले गये। आज मालूम होता है, बिना निमन्त्रणके ही भोजन करेंगे।

विनय—इसका तो मैं अत्यन्त लोभो हूँ। मासिकके अलावा ऊपरी लाभकी ओर खिंचाव अधिक होता है।

हरिमोहिनी मन ही मन विस्मित हुई। विनय इस घरमें खाता-पीता है। आनन्दमयी भी कुछ आचार विचार नहीं करती। इससे उसका मन कुछ उदास हुआ।

वरदासुन्दरीके चले जाने पर हरिमोहिनीने सङ्कोचके साथ पूछा—बहन, तुम्हारे स्वामी क्या—

आनन्दमयी—मेरे स्वामी कट्टर हिन्दू हैं।

हरिमोहिनीको अपार आश्चर्य हुआ। आनन्दमयीने उनके मनका भाव समझकर कहा—बहन, जब मैं समाज को श्रेष्ठ मानती थी तब समाजको मानकर ही चलती थी। किन्तु भगवान् ने मेरे घरमें एक ऐसी घटना कर दी जिससे मुझे समाजको छोड़ना पड़ा। उन्होंने जब स्वयं आकर मुझे जातिसे खारिज कर दिया तब मैं अब किससे ढरूँ !

हरिमोहिनीने इस कैफियतका अर्थ न समझकर पूछा—तुम्हारे स्वामी ?

आनन्दमयी—इसके लिए वे मुझसे नाराज़ रहते हैं।

हरिमोहिनी—लड़के ?

आनन्दमयी—लड़के भी खुश नहीं हैं। किन्तु उन्हें खुश करने से ही क्या होगा ? बहन, मैं अपनी बात क्या कहूँ ? जो सर्वज्ञ हैं, वही समझेंगे।—यह कहकर आनन्दमयीने हाथ जोड़कर प्रणाम किया।

हरिमोहिनीने समझा, शायद कोई पादरीकी स्त्री आनन्दमयीको किरिस्तानिन बना गई है। उसके मनमें बड़ी लज्जा उत्पन्न हुई।

सुचरिताके साथ ही लावण्यलता, ललिता और लीलावती घूमने लगीं। वे बड़े उत्साहके साथ सुचरिताका नया घर सजानेकी गईं किन्तु उस उत्साहके भीतर गुप्त वेदनाके आँसू थे।

इतने दिन तक सुचरिता किसी न किसी ढङ्गसे परेश बाबूके छोटे बड़े कितने ही कान कर दिया करती थी। कभी फूल दानीमें फूल सजाकर रखती, टेबलके ऊपर पुस्तकें सँवारकर रख देती और उनका बिछौना अपने हाथसे धूममें सूखने को रख देती थी। नित्य स्नानके समय उनको समयका स्मरण करा दिया करती थी। इन कामोंको करके वह कभी अपने मनमें अभिमान न करती थी। सुचरिता आजकल जब परेश बाबूके कमरेका कोई साधारण काम करनेकी आती थी तब वह काम परेश बाबूकी दृष्टिमें बहुत बड़ा दिखाई देता था। और इससे उनके हृदयमें विशेष सन्तोष उत्पन्न होता था। यह काम अब दूसरे दिन दूसरेके हाथसे होगा, यह सोचकर सुचरिताकी आँखोंमें आँसू भर आते थे।

जिस दिन दो-पहरकी भोजन करके सुचरिताके नये घर में जानेकी बात थी उस दिन सबेरे परेश बाबूने अपने सुने कमरेमें उपासना करनेके लिए जाकर देखा कि उसके आसनके आगेकी भूमिको फूलोंसे सजाकर सुचरिता वहीं, एक कोनेमें, उनके आनेकी प्रतीक्षा कर रही है।

उपासना समाप्त हो जाने पर जब सुचरिताकी आँखोंसे आँसू गिरने लगे तब परेश बाबूने कहा— बेटी, रोती क्यों हो। पीछेकी ओर घूमकर मत देखो, आगे का मार्ग तय करनेकी चेष्टा करो, सङ्कोच करनेकी आवश्यकता नहीं। जैसा समय आ पड़े, सुख या दुःख जो तुम्हारे सामने आ जाय, उन सबोंको चुप-चाप सह लिया करो; और अपनी शक्तिके अनुसार जहाँ तक हो सके अच्छा काम करो। मनमें खेदको कभी आने न दो। प्रसन्न रहना ही जीवनका मुख्य उद्देश है। ईश्वरको सम्पूर्ण रूपसे

आत्म-समर्पण करके उन्हींको अपना एक मात्र सहायक समझो । इससे भूल होने पर भी लाभ के मार्गसे विचलित न हो सकोगी । और यदि अपनेको पूर्ण रूप से ईश्वरको समर्पित न करके अन्यत्र मन लगाओगी तो तुम्हारे सब काम कठिन हो जायेंगे । ईश्वर ऐसा ही करें जिसमें तुमको हमारे साधारण आश्रयकी आवश्यकता न हो ।

उपासनाके बाद दोनोंने बाहर आकर देखा कि बैठनेके कमरेमें हारान बाबू प्रतीक्षा किये बैठे हैं । सुचरिताने आजसे किसीके विरुद्ध मनमें किसी तरहका विद्रोह-भाव न रखनेका प्रण करके हारान बाबूको नम्रतापूर्वक नमस्कार किया । हारान बाबूने अपनेको अत्यंत हद करके गम्भीर स्वरमें कहा—सुचरिता, इतने दिन तक तुमने जिस सत्यका आश्रय किया था उससे आज पीछे हट रही हो । यह हम लोगोंके लिए बड़े शोकका अवसर है ।

सुचरिताने कुछ उत्तर न दिया, किन्तु जो रागिनी उसके मनके भीतर शान्ति और दयाके साथ मिश्रित होकर बज रही थी उसमें कुछ बेसुरी आवाज़ आ पड़ी ।

परेश बाबूने कहा—ग्रन्तयामी भगवान् जानते हैं कि कौन आगे बढ़ रहा है और कौन पीछे हट रहा है । बाहरी बातोंका विचार करके हम लोग वृथा उद्विग्न होते हैं ।

हारान बाबूने कहा—तो क्या आप कहना चाहते हैं कि आपके मनमें कोई आशङ्का नहीं है ? और आपसे पश्चात्तापका भी कोई कारण नहीं है ?

परेश बाबूने कहा—हारान बाबू, काल्पनिक आशङ्काको मैं मनमें जगह नहीं देता और अनुतापका कारण होना तभी मानूंगा जब मनमें अनुताप उत्पन्न होगा ।

हारान बाबू—यह जो आपकी कन्या ललिता अकेली विनय बाबूके साथ स्टोमर पर चली आई, क्या यह भी काल्पनिक है ?

सुचरिताका मुँह क्रोधसे लाल हो गया। परेश बाबू ने कहा—हारान बाबू, आरका मन किसी कारणसे उत्तेजित हो उठा है। इसलिए अभी इस सम्बन्धमें आरके साथ वार्तालाप करनेसे आपके प्रति अन्याय करना होगा।

हारान बाबू ने सिर उठाकर कहा—मैं किसी बातके जोशमें आकर कोई बात नहीं कह बैठता। मैं जो कहता हूँ, उस सम्बन्धमें मुझे बोलनेका पूर्ण अधिकार है। उसके लिए आप चिन्ता न करें। मैं आपसे जो कह रहा हूँ, वह मैं व्यक्तिगत भावसे नहीं कहता। मैं ब्राह्म-समाजकी ओरसे कहता हूँ। न क्रड़ना अन्याय होगा, यह समझकर ही मैं यह कहता हूँ कि यदि आप आँख मूँदकर न चलते तो विनय बाबूके साथ जो ललिता अकेली चली आई, इस एक घटनासे ही आप समझ जाते कि आपका यह परिवार ब्राह्म-समाजके लङ्करको तोड़कर बढ़ जानेका उपक्रम कर रहा है। यह केवल आपके ही अनुतापका कारण न होगा, इससे सारे ब्राह्म-समाजकी अप्रतिष्ठा होगी।

परेश बाबू ने कहा किसीका कोई बाहरी व्यवहार देखकर ही निन्दा करता है, किन्तु विचार करते समय भीतर की बात देखनी होती है। केवल किसी घटनासे मनुष्यको दोषी मत बनाइए।

हारान बाबू ने कहा—वह घटना कुछ ऐसी-वैसी घटना नहीं है। आप इस घटनाकी भीतरी बात सोचकर ही देखिए; आप ऐसे-ऐसे लोगोंको अपने घरमें आत्मीय भावसे ग्रहण करते हैं जो आपके घरके लोगोंको अपने समाजसे दूर ले जाना चाहते हैं। दूर ले ही तो गये, क्या यह आपको सूझता नहीं है ?

परेश बाबू ने कुछ रुष्ट होकर कहा—आपकी सूझ विलक्षण है। आपके साथ मेरा मत कैसे मिलेगा ?

हारान बाबू—सही है। नहीं मिलेगा। किन्तु मैं सुचरिताको ही साक्षी मानता हूँ। वही सच-सच कहे, कुछ दिनसे ललिताके साथ विनयका जो सम्बन्ध हुआ है वह क्या केवल बाहरी सम्बन्ध है ? क्या उस संबंधमें आन्तरिक

भाव नहीं पाया जाता ! सुचरिता ! तुम कहाँ चली ? तुम्हारे चले जानेसे काम नहीं बनेगा । इस बातका जवाब देना होगा । यह साधारण बात नहीं है ।

सुचरिताने झिड़क कर कहा—साधारण हो चाहे न हो, इससे आपको क्या ? इसमें आपको कुछ कहनेका अधिकार नहीं है ।

हारान बाबूने कहा—अधिकार नरःने पर मैं चुप ही न बैठ रहता बल्कि इसका खयाल भी न करता । समाजको तुम लोग भले ही न मानों किन्तु जब तक तुम लोग इस समाजमें हो तब तक समाज तुमलोगोंका विचार करेगा ही । तुम समाजके विरुद्ध कोई काम न कर सकोगी ।

ललिता बृण्डरकी तरह घरमें प्रवेश करके बोली—यदि समाजने आपको विचारकके पद पर नियुक्त किया हो तो इस समाजसे बाहर हो जाना ही हम सबके लिए अच्छा होगा ।

हारान बाबूने कुरसीसे खड़े होकर कहा—आपके आनेसे मैं बहुत प्रसन्न हुआ । आपके सम्बन्धमें जो नालिश दायर है उसका विचार आपके सामने ही होना ठीक है ।

क्रोधसे सुचरिता भी भौंहे तन गई । उसने कहा—हारान बाबू, आप अपने घरमें जाकर अपना इजलास करें । गृहस्थके घरमें आकर आप बड़ चढ़कर बोलें, उनकी निन्दा करें, आपके इस अधिकारको हम लोग किसी तरह नहीं मानेंगे । आओ बहन ललिता, बैठो ।

ललिता जहाँकी तहाँ खड़ी रही । उसने कहा—तुमनो बहन, मैं भागूंगी नहीं । हारान बाबूको जो कुछ कहना है, कहें । मैं सब सुन लेना चाहती हूँ । कहिए क्या कहते हैं ?

हारान बाबू एकाएक रुक गये ।

परेश बाबूने कहा—नहीं बेटी ! आज सुचरिता मेरे घरसे जायगी । आज सबेरे-सबेरे मैं किसी तरहकी अशान्ति या कलह होने न दूँगा । हारान बाबू ! आप बुद्धिमान हैं । हमसे अब कितने ही अपराध क्यों न हो, आज आपको सब माफ़ करने होंगे ।

हारान बाबू गम्भीर भाव धारण कर चुप बैठे रहे। सुचरिता जितना ही उनको छोड़ना चाहती थी, उतना ही बल करके वह इसको पकड़ रखना चाहते थे। उनको पूर्ण विश्वास था कि हम आसाधारण नैतिक बलसे अवश्य ही जीतेंगे। अब भी उन्होंने हठ छोड़ दिया हो, यह भी नहीं सुचरिताके प्रति उनका भाव वही है। अब उनके मनमें इस बातका सोच हुआ कि मौसीके साथ सुचरिता दूसरे मकानमें जायगी वहाँ उस पर मेरा ज़ार नहीं चलेगा। इसी सोचसे वे बेचारे लुब्ध थे। इसी लिये आज अपने ब्राह्मन्त्रको खूब तेज़ कर लाये थे। आज सवेरे ही वे मिज़ाज़को खूब कड़ा करके सब बातोंका फ़ैसला कर लेने को तैयार थे। आज सब सङ्कोचको मनसे हटाकर ही आये थे। किन्तु उनका विन्द दल भी उसी प्रकार संकोच दूर कर सकता है, ललितता और सुचरिता भी एकाएक तर्कसंसे तीर निकालकर खड़ी होंगी, इसकी कभी उन्होंने कल्पना भी न की थी। वो जानते थे कि जब हम अपने नैतिक अग्निबाणको बड़े वेग से चलावेंगे तब हमारे विपक्षीका सिर नीचा हो जायगा। किन्तु ऐसा न हुआ। अवसर भी हाथसे जाता रहा। किन्तु हारान बाबू हार माननेवाले न थे। उन्होंने मनमें कहा—सत्यकी जय होगी ही। पर यों ही तो जय होगी नहीं, इसके लिए लड़ाई करनी होगी। हारान बाबू कमर कसकर रणक्षेत्रमें प्रविष्ट हुये।

सुचरिताने हरिमोहिनीसे कहा—मौसी, मैं आज इन सबोंके साथ मिलकर भोजन करूँगी, तुम मनमें बुरा मत मानो।

हरिमोहिनी चुप हो रही। उसने मनमें विश्वास कर लिया था कि सुचरिता सम्पूर्ण रूपसे मेरी हा गई, मैं उससे जो कहूँगी वही करेगी। विशेष कर जब सुचरिता अपनी सम्पत्तिके बल स्वाधीन होकर अपना घर संभालने चली है तब हरिमोहिनीको अब किसी बातका ख़ाँक न रहेगा। वह सुचरिताको सोलह आने अपने पथ पर चला सकेगी। यही कारण है कि आज अब सुचरिताने आचार-विचार त्याग कर फिर सबके

साथ इकट्ठी होकर भोजन करनेका प्रस्ताव किया तब यह बात हरिमोहिनी को अच्छी न लगी और वह चुप हो रही ।

सुचरिताने उसके मनका भाव समझकर कहा—मैं तुमसे भव करती हूँ कि इससे ठाकुरजी प्रसन्न होंगे । मेरे उन्ही अन्तर्यामी ठाकुरने मुझे आज सबके साथ बैठकर भोजन करनेका आदेश दिया है । उनकी बात न मानूँगी तो वे नाराज होंगे । मैं उनकी नाराजगीको तुम्हारे क्रोध की अपेक्षा अधिक डरती हूँ ।

जबसे हरिमोहिनी वरदासुन्दरीके द्वारा अपमानित होने लगी तब से सुचरिताने उसके अपमानका अंश अपने ऊपर लेनेके लिए उसका आचार ग्रहण किया था और आज जब उस अपमानने छुटकारा पाने का दिन उपस्थित हुआ तब सुचरिता उसका आचार न मानकर क्यों चल रही है, हरिमोहिनी इस बातको भली भौंति नहीं समझ सकी । वह सुचरिताको समझा कर कोई बात न कहती थी । समझाना उसके लिए एक कठिन समस्या थी ।

कुछ देर चुप रहकर उसने कहा—देखी ! मैं तुमसे एक बात कहती हूँ । तुम्हारे जीमें जो आवे करो, किन्तु इस दुसाध नौकरके हाथका पानी मत पीओ ।

सुचरिताने कहा—क्या यह रामदीन बेहरा ही तो अपनी गायका दूध दुहकर तुमको दे जाता है ।

हरिमोहिनीने नेत्र विस्तारित करके कहा—तुमने तो ग़ज़ब किया । दूध और पानी एक हुआ !

सुचरिताने हँसकर कहा—अच्छा मौसी, रामदीन का दूध जल आज मैं न पीऊँगी । किन्तु सतीशसे तुम ऐसा करनेको कहोगी तो वह ठीक इसका उलटा काम करेगा ।

हरिमोहिनी—उसकी बात न्यायी है ।

हरिमोहिनी जानती थी कि पुरुषोंके आचार-विचारमें संयम नियमकी त्रुटि सहनी ही पड़ती है ।

हारान बाबूने प्रचण्ड रूप धारण कर रणक्षेत्रमें प्रवेश किया ।

ललिताको अग्निबोट पर विनयके साथ आये आज प्रायः पन्द्रह दिन हो गये हैं । यह बात दो-चार मनुष्योंके कानमें जा चुकी है और धीरे धीरे फैल रही है । ब्राह्म-समाजके हितैषी लोग पालकी गाड़ी करके परस्पर एक दूसरेके घर जाकर कह आये—आज कल जब ऐसी-ऐसी घटना होने लगी है तब ब्राह्म-समाजके भविष्यको घोर अन्धकारमें छिप गया समझना चाहिए । इसके साथ-साथ सुचरिता जो हिन्दू हुई है, और हिन्दूधर्मवाली मौसीके घरमें रहकर नियम निष्ठाके साथ ठाकुरजी की सेवा करके दिन बिता रही है, यह बात भी घर-घरमें फैलने लगी ।

बहुत दिनोंसे ललिताके मनमें एक बातका विवाद चल रहा था । वह नित्य रातको सोने के पहले कहती थी कि मैं कभी हार न मानूँगी और जागकर भी वह आँखें मलती हुई बोलती थी, चाहे जो हो, मैं कभी हार न मानूँगी, किसी तरह भा नहीं । यह मानसिक कलह और किसीके साथ नहीं, केवल विनयके साथ था । विनयकी चिन्ता उसके मन पर सम्पूर्ण रूपसे अधिकार किये बैठी थी । विनय नीचेके कमरेमें बैठकर बातें कर रहा है, जानते ही उसका कलेजा उछलने लगता था । उसके मनकी सोची हुई सब बात छूमन्तरकी तरह उड़जाती थी । विनय जहाँ दो दिन उसके घर न आया कि वह मारे सोचके मन ही मन पछाड़ खाने लगती थी । उसके ऊपर एक झूठ-मूठका क्रोध और अपने ऊपर रक्तानि उत्पन्न हो आती थी । बीच-बीचमें सतीशको किसी न किसी बहाने विनयके घर भेजती और सतीशके लौट आने पर खोद-खोदकर पूछती थी कि विनय क्या कर रहा है, विनयके साथ क्या बातें हुई, इत्यादि ।

एक दिन उसने परेश बाबूसे जाकर कहा — पिताजी ! क्या मैं किसी कन्या पाठशालामें शिक्षा देनेका भार नहीं ले सकती ?

परेश बाबूने अपनी लड़कीके मुंहकी ओर देखकर स्नेह-भरे स्वरमें कहा—क्यों नहीं ले सकती बेटी ! किन्तु वैसा गर्ल्स स्कूल है कहाँ ?

जिस समयकी बात हो रही है उस समय कन्या पाठशालाओंकी संख्या अधिक न थी । कहीं-कहीं साधारण पाठशालाएँ थीं और अच्छे घरकी स्त्रियाँ तब अध्यापिकाका काम करनेको आगे पैर न बढ़ाती थीं । ललिताने व्याकुल होकर कहा—क्या सचमुच पाठशालाएँ नहीं हैं ?

परेश बाबूने कहा —कहीं देखनेमें तो नहीं आती ।

ललिता—अच्छा, पिताजी ! क्या एक कन्या पाठशाला खोली नहीं जा सकती ?

परेश बाबू—क्यों नहीं खोली जा सकती ? परन्तु इसके लिए पूरा खर्च चाहिए । और इसमें अनेक लोगोंकी सहायता की दरकार है ।

ललिता जानती थी कि अच्छे कामकी ओर चित्तका झुकाव होना ही कठिन है किन्तु उसके साधन-पथमें जो इतनी बाधाएँ हैं, यह वही पहले नहीं समझती थी । कुछ देर चुम-चाप बैठकर वह वहाँसे उठकर धीरे-धीरे चली गई । परेश बाबू अपनी लड़कीके मानसिक दुःखका कारण ढूँढ़ने लगे, वे जब इस बातको सोचने लगे तब विनयके सम्बन्ध में जो हारान बाबू उस दिन कुछ कह गया था वह भी उन्हें याद हो आया । उन्होंने लम्बो साँस लेकर अपने मनमें पूछा—ताँ क्या मैंने भूल की है ? उसके सिवा कोई दूसरी लड़की होती तो विशेष चिन्ताका कारण न था, किन्तु ललिताके चरित्र को वे बहुत विशुद्ध मानते थे । छल प्रवृत्ति किसे कहते हैं, यह तो वह जानती ही नहीं । उसके सभी व्यवहारोंका सत्यसे सम्बन्ध है । सुख-दुःखको वह बराबर समझती है ।

उसी दिन दो पहरको ललिता सुचरितके घर गई । उसके घरमें सजा-वटकी कोई चीज़ देखनेमें न आई । घरके भीतर दो चटाइयाँ बिछी थीं । उसी पर एक ओर सुचरिताका और दूसरी ओर हरिमोहिनीका बिछोना

था। हरिमोहिनी चारपाई पर नहीं सोती है इस कारण सुचरिता भी उसके साथ एक घरमें नीचे बिछौना करके सोती है। बीवाल पर परेश बाबू का एक चित्र टंगा है। उस घरसे सटी कोठरीमें सतीशकी चारपाई बिछी है और एक कोनेमें एक छोटीसी टेबल पर दावात-कलम काँपी-स्लेट और किताबें आदि लिखने-पढ़नेका सामान जहाँ-तहाँ बिखरा पड़ा है। एक आध कापी और किताब टेबलके नीचे भी गिरी पड़ी है। सतीश स्कूल गया है। घरमें सन्नाटा छाया है।

भोजनके अनन्तर हरिमोहिनी अपनी चटाई पर लेटी है और नींद आनेकी बात जोह रही है। सुचरिता अपने सुले केशोको पीठकी ओर करके चटाई पर बैठी है और सिर नीचे किये, गोदमें तकिया रखकर हाथमें किताब लिये बड़े ध्यान से कुछ पढ़ रही है। उसके सामने और भी कितनी ही पुस्तकें पड़ी हैं।

ललिताको एकाएक घरमें आते देख सुचरिताने मानों लजाकर झट हाथकी किताबको बन्द कर नीचे रख दिया। फिर लज्जाको लज्जासे ही दबाकर उस किताबको हाथमें ले लिया। यह किताब गोराके लेखोंके संग्रह के सिवा और कुछ न थी।

हरिमोहिनी झट उठ बैठी और बोली 'आओ बेटी, ललिता, इधर आकर बैठो। तुम्हारा घर छोड़नेसे सुचरिता पर जो बीत रही है, सो मैं जानती हूँ। यहाँ उसका ज़रा भी जी नहीं लगता। जी बहलाने हीके लिए वह किताब लेकर पढ़ने बैठनी है। अभी मैं पड़ी-पड़ी यही सोच रही थी कि तुममेंसे कोई यहाँ आतो तो अच्छा होता—इतनेमें तुम यहाँ आ ही तो गई। बेटी, तुम बहुत दिन जीओगी।'

ललिताके मनमें जो बातें थीं, उन्हें सुचरिताके पास बैठकर सुनाना उसने आरम्भ किया। उसने कहा—'बहन, इस मइल्लेमें यदि लड़कियोंके लिए एक स्कूल खोल दिया जायातो कैसा हो ?

हरिमोहिनीने विस्मित होकर कहा—'इसकी बात तो सुनो। क्या तुम स्कूल खोलोगी ?

सुचरिता बोली—स्कूल कैसे जारी होगा ? कोई सहायता भी तो करे । ऐसा कोई देखनेमें नहीं आता जो हम लोगों को इस कार्य में सहायता देगा । बाबूजीसे इस बात का जिक्र किया था ?

ललिता—हम और तुम दोनों मिलकर पढ़ा सकेंगी । प्रार्थना करने पर शायद बड़ी बहन भी राजी हो जाय ।

सुचरिता—सिर्फ पढ़ाने हीकी बात तो नहीं है । किस प्रकार स्कूलका काम करना होगा, उसके लिए सब नियम चाहिए । एक मकानका प्रबन्ध करना होगा । विद्यार्थिनियों चाहिए और खर्चके लिए कुछ रुपये भी चाहिए । ये सब काम क्या योंही हो जायेंगे । हम दोनों इसका कहाँ तक क्या कर सकती हैं ?

ललिता—बहन, यह कहनेसे कुछ न होगा । ऐसा कौन काम है जो यत्न करनेसे नहीं हो सकता । छी होकर जन्म लिया है तो क्या इनसे मुंह छिपाकर घरमें पड़ी रहेंगी, क्या हम सब संसारका कोई काम न करेंगी ?

ललिताके मनमें जो दुःखका तार था, वह सुचरिताके हृदयमें बज उठा । वह कुछ जवाब न देकर मन ही मन सोचने लगी ।

ललिताने कहा—महल्लेमें तो छितनी ही बे-पढ़ी-लिखी लड़कियाँ हैं, हम लोग अगर उनको यों ही पढ़ाना चाहें तो वे बेहद खुश होंगी । उनमें जो पढ़ना चाहेगी उन्हें तुम्हारे इस घरमें लाकर हम-तुम दोनों मिलकर पढ़ा दिया करेंगी । इसमें खर्च की क्या जरूरत है ?

इस घरमें महल्लेके अज्ञात घरकी लड़कियोंको एकत्र करके पढ़ानेकी बात सुनकर हरिमोहिनी उद्विग्न हो उठी । वह लोगों की भीड़ भाड़से बचकर एकान्तमें पूजा-पाठ करके शुद्ध आचार-विचारसे रहना चाहती थी । इसलिए वह ठाकुरजीकी सेवामें व्याघात पहुँचनेकी सम्भावनासे आपत्ति करने लगी ।

सुचरिताने कहा—मौसी, तुम डरो मत; यदि लड़कियाँ जुटेंगी तो हम उन्हें नीचेके घरमें ही पढ़ा लिखा लेंगी । तुम्हारे इस ऊपरवाले

घरमें हम उत्पात करने न आवेंगी । सुनो ललिता बहन, यदि पढ़नेवाली लड़कियाँ मिलें तो मैं यह काम करने को राज़ी हूँ ।

ललिता—अच्छा, एक बार यत्न करके देखूँगी ।

हरिमोहिनी बार-बार कहने लगी—सभी बातोंमें तुम लोग किरिस्तानोंकी नक़ल करोगी तो कैसे चलेगा ? गृहस्थके घरकी लड़कियोंको स्कूलमें पढ़ते मैंने नहीं देखा ।

परेश बाबूकी छतके ऊपरसे समीपवर्ती घरोंकी छत परकी स्त्रियोंमें परस्पर वार्तालाप होता था । इस परस्परकी बात-चीतमें बड़े विस्मयका विषय यह था कि पासवाले घरकी स्त्रियाँ इस घरकी लड़कियोंकी, जवानी में भी, अब तक शादी न होने पर आश्चर्य करतीं और प्रायः रोज़ ही प्रश्न पर प्रश्न करती थीं । इसी कारण ललिता इस छतकी गप-शपसे जहाँ तक बनता, अलग रहती थी ।

इस छतके मित्रत्व विस्तारमें सबकी अपेक्षा लावण्यलता ही विशेष उत्साहित थी । दूसरेके घरका व्यावहारिक इतिहास जाननेकी उसे बड़ी चाह थी । उसके लिए यह एक विशेष कुतूहलका विषय था । पड़ोसियोंके घरका नित्य नया समाचार बाबूकी सहायतासे उसके कानोंमें आ जाता था । मानो यह सुननेका उसे एक रोग सा हो गया था ।

ललिताने अपने सङ्कल्पित गर्स स्कूलके लिये लड़कियोंके संग्रह करनेका भार लावण्यको सौंपा । लावण्यने जब हर एक छतवाली स्त्री से इस प्रस्तावकी घोषणा कर दी तब बहुतेरी लड़कियाँ उत्साहित हो उठीं । ललिता प्रसन्न होकर सुचरिताके घरके निचले खण्डको चूनेसे पोतवाकर खूब भाड़ बुझारकर साफ़ करवाने लगी और उसे लिखने-पढ़नेके उपयोगी सामानसे सजाने लगी ।

किन्तु उसका वह सजा सजाया स्कूलका घर सूना ही रह गया । पड़ोसके घरकी लड़कियोंके अभिभावक यह सुनकर कि हमारे घरकी लड़कियोंको फुसलाकर पढ़ानेके बहाने ब्राह्म-समाजमें ले जानेका प्रस्ताव हो रहा है, अत्यन्त क्रुद्ध हो उठे । जब उन्होंने सुना कि परेश बाबूकी

लड़कियोंके साथ हमारे घरकी बहू-बेटियाँ छत पर जाकर बात चीत करती हैं तब उन्होंने उन सबको ऊपर जानेकी एकदम मनाही कर दी और ब्राह्म पढ़ोसीकी लड़कियोंके साथ सङ्कल्प पर असाधु भाषाका प्रयोग किया। बेचारी लावण्यने नित्य नियमानुसार हाथमें कड़वी लेकर अपनी छत पर जाकर देखा कि पासवाली छतों पर नवयुवतियोंके बदले आज बूढ़ी बूढ़ी स्त्रियों आ जुटी हैं। आज और दिनकी सी बात न हुई। एकके भी मुँहसे उसने सादर सम्भाषण न सुना।

ललिता इतने पर भी बाज़ न आई। उसने कहा—बहुतेरी गरीब ब्राह्म-बालिकाओंका फ़ीसवाले स्कूलोंमें जाकर पढ़ना कठिन है, इसलिए उनको मुफ्त पढ़ाना स्वीकार करनेसे उनका विशेष उपकार हो सकता है।

इस विचारसे वह विद्यार्थिनियोंकी खोजमें रवथं लग पड़ी और सुधीरको भी लगा दिया।

उस समय परेश बाबूके घरकी लड़कियोंके पढ़ने-लिखनेका यश दूर दूर तक फैल गया था। यहाँ तक कि वह यश सत्यका भी अतिक्रम कर गया था। इसलिए कितने ही गरीब लड़कियोंके माँ-बाप खुश हो उठे कि वेही हमारी लड़कियोंको बिना फ़ीसके पढ़ावेंगी।

पहले पाँच-छः लड़कियोंको लेकर ही ललिताने स्कूल जारी कर दिया। इस स्कूलके क्या-क्या नियम होने चाहिए, कब क्या पढ़ाना होगा, इस विषयमें परेश बाबूसे परामर्श तक लेनेका अवसर ललिताको न मिला। वह एकाएक इस काममें प्रवृत्त हो गई। यहाँ तक कि सालके अखीरमें इम्तिहान हो जाने पर लड़कियोंको कैसा पुरस्कार देना चाहिए, इस विषय पर लावण्यके साथ ललिता तर्क वितर्क करने लगी। ललिता पुरस्कार या पाठके लिए जिन पुस्तकोंका नाम लेती थी उन्हें लावण्य पसन्द न करती थी और इस विषयमें लावण्य जो कुछ कहती थी, वह ललिताको पसन्द न आता था। लड़कियोंकी परीक्षा कौन लेगा, इस पर भी बहस हुई। लावण्य यद्यपि हारान बाबूको जी से पसन्द न करती थी तथापि वह उनके पाण्डित्यसे परिचित थी और उनकी विद्या

का सुयश सर्वत्र ख्यात है यह वह जानती थी। हारान बाबू उस पाठशालाके परीक्षक या निरीक्षक नियुक्त हों तो उस पाठशालाका विशेष नाम होगा, इस विषयमें उसे कुछ भी सन्देह न था किन्तु ललिताने इस बातको एकदम अस्वीकार कर दिया। हारान बाबूके साथ उसकी इस पाठशालाका कोई सम्बन्ध नहीं रह सकता।

दो ही तीन दिनके भीतर उसकी छात्रियोंकी संख्या घटते घटते क्वास खाली हो गया। ललिता अपने सूनू क्वासमें बैठकर लड़कियोंके आनेकी बाट जोहने लगी। किसीके पैरोंकी आहट सुनकर वह किसी छात्रीके आनेकी आशङ्कासे चकित हो उठती थी। इस प्रकार जब दो-पहर बीत गया तब उसने समझा कि किसीने विघ्न डाला है। कुछ न कुछ ज़रूर दालमें काला है।

पासमें जो छात्री रहती थी उसके घर ललिता गई। छात्री आँखोंमें आँसू भरकर रोती हुई सी बोली—माँ मुझको जाने नहीं देती है। उसकी माँने कहा—'वहाँ जानेमें अनेक बाधाएँ हैं। क्या हैं, यह स्पष्ट नहीं बताया ललिता बड़ी मानिनी है। वह दूसरी ओर अनिच्छाका लेश मात्र देखनेसे न हठ कर सकती है और न कारण ही पूछ सकती है। उसने कहा—अगर बाधा है तो मत भेजो।

इसके बाद ललिता जिस जिस घर में गई वहाँ यही बात सुनी कि सुचरिता अब हिन्दू हो गई है वह जाति-पौति मानती है, मूर्ति पूजती है, उसके घरमें जानेसे लड़कियोंके चित्त पर उसका प्रभाव पड़ सकता है।

ललिताने कहा—अगर यही एक मात्र उज्र हो तो मेरे ही घरमें स्कूल होगा।

किन्तु इससे भी आपत्ति का खण्डन न हुआ। इसमें कुछ और ही गोंठ लगी है। ललिताने अब और छात्रियोंके घर जाना उचित न समझ सुधीरको बुलाकर पूछा—सुधीर, सच-सच बतलाओ, क्या मामला है? क्यों लड़कियोंका आना एकाएक बन्द हो गया?

सुधीर—हारान बाबू तुम्हारे इस स्कूलके बिरुद्ध हो गये हैं । वह नहीं चाहते कि यह स्कूल चले ।

ललिता—सुचरिता बहनके घर ठाकुरजीकी पूजा होती है इसी से ?

सुधीर—सिर्फ इतना ही नहीं ।

ललिताने अधीर होकर कहा—और क्या ! कहते क्यों नहीं ?

सुधीरने कहा—बहुत बातें हैं ।

ललिता—शायद मैं अपराधिनी समझी गई हूँ ।

सुधीर चुप हो रहा । ललिताने क्रोधसे मुँह लाल करके कहा—यह स्टीमरके द्वारा मेरी उस जल-यात्रा का दण्ड है ! यदि मैंने वह अविचारका काम किया तो अच्छा काम करके प्रायश्चित्त करने का मार्ग हमारे समाजमें एकबारगी बन्द मालूम होता है ! क्या मेरे लिए सभी शुभ कर्म इस समाजमें निषिद्ध हैं ? मेरी और मेरे समाजकी आध्यात्मिक उन्नति का तुम लोगोंने क्या यही मार्ग ठीक किया है ?

सुधीरने बात को कुछ मुलायम करनेके, अभिप्रायसे कहा—विनय बाबूआदि कहीं इस विद्यालयके साथ सम्मिलित न हो पड़े, इसीका भय वे लोग करते हैं !

ललिताने क्रोधसे आग-बबूला होकर कहा—भय नहीं, समाजका भाग्य मानना चाहिए । योग्यतामें विनय बाबूके साथ बराबरी करनेवाले कितने आदमी ब्राह्म-समाजियोंमें हैं ?

सुधीरने ललितानेके क्रोधसे संकुचित होकर कहा—यह तो सही है । किन्तु विनय बाबू तो—

ललिता—यही न कहोगे कि वे ब्राह्म समाजके अन्तर्गत नहीं हैं । इसीसे ब्राह्म-समाज उनको दण्ड देगा । ऐसे समाजको मैं गौरवास्पद नहीं समझती ।

छात्रियोंको एकाएक अन्तर्ध्यान होते देख सुचरिता समझ गई थी कि ऐसा क्यों हुआ है, किसके द्वारा यह कुचक्र चल रहा है।

सुधीरके साथ बातें करके ललिता सुचरिता के पास गई और बोली—कहो बहन, कुछ सुना है ?

सुचरिताने मुसकुराकर कहा—सुना तो नहीं है किन्तु जानती, सब हूँ।

ललिताने कहा—क्या यह सब सहनेकी बात है ?

सुचरिता ने ललितामा हाथ पकड़ कर कहा—सहनेमें क्या मानहानि है ? पिताजी कैसे सहनशील हैं ? सब बातों को वे कैसे सह लेते हैं, देखती नहीं हो ?

ललिता—बहन, मैं तुम्हारी बात काट नहीं सकती, किन्तु मेरे मनमें कभी-कभी ऐसा होता है कि कोई बात सह लेना एक तरहसे अन्यायको स्वीकार करना है। अन्याय को न सहना ही उसके प्रति उचित व्यवहार है।

सुचरिताने कहा—तुम क्या करना चाहती हो, सो कहो।

ललिता—मैं क्या करूँगी इस पर मैंने अभी तक ध्यान नहीं दिया है। मैं यह नहीं बता सकती कि क्या करूँगी परन्तु कुछ करना ही होगा। हम लोगों के सदृश कर्तव्य परायण स्त्रियोंके पीछे जो लोग ऐसे खोटे भावसे पड़े हैं, वे अपनेको चाहे जितना बड़ा क्या न मानें परन्तु वास्तवमें वे नोच मनुष्य हैं। वे भले ही उत्पात मचावें मैं उनसे क्षार माननेवाली नहीं। कभी नहीं, किसी तरह नहीं। इसके लिए जो उनके जी में आवे करें।—यह कहते ही ललिता ने जोर से जमीन पर पैर पटका।

सुचरिता कुछ उत्तर न देकर धीरे-धीरे ललिता के हाथ पर हाथ फेरने लगी ; कुछ देर पीछे बोली—ललिता बहन, एक बार बाबुजी से पूछ देखो वे क्या कहते हैं ?

ललिताने खड़ी होकर कहा—मैं अभी उनके पास जाती हूँ।

ललिताने अपने घरके फाटकके पास आकर देखा, विनय सिर झुकाये बाहर जा रहा है। ललिताको आते देख वह कुछ देर तक खड़ा हो रहा। ललिताके साथ मैं दो एक बातें करूँ या नहीं, इस बातको वह मन ही मन सोचने लगा। किन्तु उसने अपनेको रोक ललिताके मुंहकी ओर देखे बिना ही उसे नमस्कार किया। वह सिर झुकाये ही झट चल दिया।

ललिताके हृदयमें मानों आगकी तपो बड़ीं जुम गई। वह बड़ी तीव्र गतिसे फाटक पार करके एकाकए अपनी माँ के कमरेमें गई उसकी माँ उस समय टेबलके ऊपर एक लम्बी लता खर्च की बड़ी खोलकर बड़े ध्यान से कोई हिसाब करने को चेष्टा कर रही थी।

ललिता एक कुर्सी खींचकर टेबलके पास बैठ गई तो भी वरदासुन्दरीने सिर न उठाया। ललिताने कहा—माँ !

वरदासुन्दरी—“बैठो बेटी, मैं यही—देखो बड़ी देरसे—” यह कह कर वह बही के ऊपर और भी झुक पड़ी।

ललिताने कहा—मैं तुमको विशेष कष्ट न दूंगी। सिर्फ एक बात जानना चाहती हूँ। विनय बाबू आये थे ?

वरदासुन्दरी बहीकी ओर नज़र किये किये ही बोली हों।

ललिता—उनके साथ तुम्हारी क्या बात-चीत हुई ?

वरदासुन्दरी—बहुत कुछ बातें हुईं।

ललिता—मेरे सम्बन्धमें कुछ बात हुई है ?

वरदासुन्दरीने भागने का कोई रास्ता न देख कलम फेंक बहीसे सिर उठाकर कहा—हाँ बेटी ! हुई थी। जब देखा कि बात दिनों दिन बढ़ती जा रही है, समाज के लोग चारों ओर निन्दा कर रहे हैं, तब लाचार होकर उन्हें सावधान कर देना पड़ा।

लज्जासे ललिताका सिर झुक गया। उसका कलेजा धड़कने लगा। उसने पूछा—क्या पिताजीने विनय बाबूको यहाँ आनेसे मना कर दिया है ?

वरदासुन्दरी - वे इन बातोंको थोड़े ही सोचते हैं ? यदि सोचते तो शुरूसे ही ऐसा क्यों होने पाता ?

ललिता—क्या हारान बाबू यहाँ आ सके'गे ?

वरदासुन्दरीने भौंहे तानकर कहा—सुनो तो इसकी बात ? हारान बाबू क्यों नहीं आवे'गे ?

ललिता—तो विनय बाबू क्यों नहीं आ सके'गे ?

वरदासुन्दरीने फिर बड़ी हाथमें लेकर कहा—ललिता, मैं तुमसे नहीं जीत सकती । अभी जाओ, मेरा जी मत जलाओ । मुझे बहुत काम हैं ।

ललिता जब दोपहरको सुचरिताके घर स्कूत्रकी तैयारी करने गई थी तब वह अच्छा अवसर पा वरदा सुन्दरी ने विनयको बुलाकर अपना वक्तव्य कह सुनाया था । उसने सोचा था कि ललिताको इसकी खबर ही न मिलेगी । जब उसकी कलाई इस तरह खुल पड़ी तब वह नई विपत्ति की आशङ्का करके डर गई । उसने समझा कि अब इस विरोध की शान्ति शीघ्र न होगी और सहज ही इसका निबटारा भा न होगा । अपने व्यवहार ज्ञानहीन पतिके ऊपर उसका सब क्रोध उबल पड़ा । ऐसे अबोध पुरुषके साथ घरका काम चलाना खींके लिए बड़ी बिडम्बना है ।

ललिता अपने अशांत चित्तको लेकर वायुवेगसे चल पड़ी । नीचेके कमरेमें बैठे परेश बाबू चिट्ठी लिख रहे थे । वहाँ जाकर एकदम उनसे पूछ बैठी—पिताजी, क्या विनय बाबू हम लोगोके साथ मिलनेके पात्र नहीं हैं ?

प्रश्न सुनते ही परेश बाबू घरकी अवस्था को समझ गये । उनके घरके लोगोंके विषयमें उनके समाजमें जो आन्दोलन मच रहा है, वह परेश बाबू से छिपा न था । इसके लिए उन्हें कभी-कभी बड़ी चिन्ता करनी पड़ती है । विनयके प्रति ललिताके मनका भाव खिंच गया है, इस सम्बन्धमें यदि उनके मनमें सन्देह न होता तो वे बाहरकी बात पर कुछ भी ध्यान न देते ! किन्तु विनयके ऊपर यदि यथार्थमें ही ललिताका अनुराग उत्पन्न हुआ तो ऐसी अवस्थामें क्या करना उचित है, यह प्रश्न वे कई बार अपने मनसे पूछ चुके हैं । जबसे उन्होंने खुल्लमखुल्ला ब्राह्म-धर्मकी दीक्षा ली है

तबसे यही पहले पहल उनके घरमें एक सङ्कटका समय उपस्थित हुआ है । इसलिए एक ओर उन्हें समाजका भय भीतर ही भीतर कष्ट दे रहा है और दूसरी ओर उनकी समस्त चित्तवृत्ति सिमट कर उनसे कह रही है कि ब्राह्मधर्म-ग्रन्थ के समय जैसे एक मात्र ईश्वरकी ओर दृष्टि रखकर ही मैं कठिन परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ हूँ, सत्यको ही सुख-सम्पत्ति-समाज आदि सबके ऊपर मानकर यह जीवन चिरकालके लिए धन्य हो चुका है, वैसे ही अब भी यदि कठिन परीक्षाका दिन आ गया है तो उसी सत्यकी ओर लक्ष्य रखकर मैं उत्तीर्ण हूँगा ।

ललिताके प्रश्नके उत्तरमें परेश बाबूने कहा—विनयको तो मैं बहुत अच्छा समझता हूँ । उसकी जैसी ही बिया और बुद्धि है वैसा ही चरित्र भी उत्तम है ।

कुछ देर चुप रहकर ललिता बोली—गौर बाबूकी सां इधर दो दफ़े घर आई हैं । मैं सुचरिता बहनके साथ आज एक बार उनके घर जाना चाहती हूँ ।

परेश बाबू सदसा कोई उत्तर न दे सके, वे बखूरी जानते थे कि जब हमारे घरकी आलोचना ब्राह्म-समाज में सर्वत्र हो रही है तब इस प्रकार वहां आने जाने से निन्दा और भी बढ़ जायगी । किन्तु उनकी आत्मा बोल खठी कि जब तक यह अन्याय नहीं है तब तक मैं रोक न सकूँगा । उन्होंने कहा—अच्छा, ज.ओ ! मुझे काम करना है नहीं तो मैं भी तुम्हारे साथ चलता ।

स्वप्नमें भी विनयको इस बातकी आशङ्का न थी कि इष्ट मित्र और अतिथि की भाँति जहाँ मैं नित्य बेखटके जाता आता हूँ वहाँ एक ऐसी सामाजिक ज्वालामुखी पहाड़ छिपा है जो किसी समय भयंकर गोले बरसावेगा। जब वह पहाड़, आरंभ में परेश बाबूके घरमें उनके परिवार के लोगोंसे मिलने जाता था तब उसके मनमें बड़ा सङ्कोच होता था। उसे यह ठीक-ठीक मालूम न था कि मेरे अधिकारकी सीमा कहाँ तक है, इसलिए वह फूँक-फूँककर पैर रखता था। उसके जी में बराबर डर लगा रहता था कि मुझे कोई काम अनुचित न हो पड़े। क्रमशः जब उसका भय दूर हो गया तब उसके मन से सब तरहकी झिझक हट गई। आज जब अपने पुराण यह बात सुनो कि मेरे व्यवहार से ललिता को समाजके लोगोंके सामने निन्दित होना पड़ा है तब विनयका माथा ठनका।

एक दिन दोपहरको वरदासुन्दरीने चिट्ठी लिखकर विनयको बुलाकर पूछा—विनय बाबू, आप तो हिन्दू हैं ? विनयके हाँ' कहने पर फिर उसने पूछा—हिन्दू समाजको तो आप छोड़ न सकेंगे ? विनयके इसे अस्मभव बताने पर वरदासुन्दरीने कहा—“तो क्यों आपने”—इस“क्यों” का कोई उत्तर विनयके मुँह में न आया। वह अपराधीकी भाँति सिर नीचा किये बैठा रहा। उसने समझा मानों मेरी चोरी पकड़ी गई। मेरी एक ऐसी बात सब लोगोंके सामने जाहिर हो गई है, जिसे मैंने सूर्य, चन्द्र और वायुसे भी छिपा रखना चाहा था। वह बार-बार इसी बातको सोचने लगा, परेश बाबू क्या कहते होंगे, ललिता अपने मन में क्या कहती होगी और सुचरिता ही मुझे कैसा समझती होगी। हाँ, किसी देवदूतके धोखेसे इस इन्द्रपुरीमें जो कुछ दिनके लिए मुझे स्थान मिल गया था, सो आज अनधिकार-प्रवेशकी सारी लज्जा सिर पर धारण कर मुझे यहाँसे सदाके लिए निर्वासित होना पड़ेगा।

इसके अनन्तर परेश बाबू के कोठे का दरवाजा पार करते ही उसने ललिता को देखा, जिससे उसकी इच्छा हुई कि ललिता से इस अन्तिम बिदा के समय मिल लूँ और उसके आगे अपमान का बोझ सिर पर लेकर पूर्व पश्चिम के सम्बन्ध सूत्र को अच्छी तरह तोड़कर ही जाऊँ। किन्तु किस तरह इसमें सफलता होगी, इसका एक भी उपाय उसे न सूझा। इससे वह ललिता के मुँह की ओर देखे बिना ही चुपचाप हाथ जोड़कर चला गया।

घर से बाहर निकल कर उसका मन इस तरह छटपटाने लगा जैसे पानी से बाहर सूखी धरती पर मछली आ पड़ी हो। वह जिधर जाता है उधर ही अपने को निराधार पाता है। मानों उसके जीवन का सहारा किसीने छीन लिया हो। उसे सारा संसार अन्धकारमय दीखता है। इस विश्वव्यापिनी उदासीनता और शून्यता में वह आपही एक अद्भुत जीव सा हो गया। वह क्या था और क्या हो रहा ! क्यों ऐसा हुआ, क्या हुआ, कैसे हुआ, इन बातों को वह उस हृदयहीन सूने स्थान से बार-बार पूछने लगा।

विनय स्वप्नार्वाथ की भाँति चलते-चलते आनन्दमयी के घर आ पहुँचा। किन्तु वहाँ उसे न पाया। तब वह छतों के ऊपर उस सूने कोठे में गया जिसमें गोरा सोता था।

छत के ऊपर कपड़े सुखने को ढाले गये थे। तीसरे पहर को, धूप कम होने पर जब आनन्दमयी उन्हें उठाने आई तब गोरा के कोठे में विनय को देखकर वह अचरभेमे आ गई। आनन्दमयी ने ऋट उसके पास आकर उसकी पीठ पर हाथ रखकर कहा—विनय, तुम्हारा मुँह क्यों सूख गया है ? तुम ऐसे उदास क्यों दीखते हो ? ठीक ठीक कहो बेटा।

विनय उठ बैठा और बोला—माँ, मैं जब पहले परेश बाबू के घर जाने आने लगा तब गोरा को मेरा वहाँ जाना-आना अच्छा न

लगता था, वह मुझ पर क्रोध करता था उसके क्रोधको मैं तब अयुक्त समझता था, किन्तु उसका क्रोध अयुक्त नहीं था, मेरी ही मूर्खता थी ।

आनन्दमयीने मुस्कुराकर कहा—तू तो मेरा चतुर लड़का है। इसीसे मैं तुझसे कभी कुछ नहीं कहती। अब इस बीचमें तुमने अपने भीतर मूर्खताका कौन सा लक्षण देखा ?

विनयने कहा—माँ, हमारा समाज और समाजोंसे एकदम जुदा है, इस बातको मैं कभी न सोचता था। उन सबोंके बन्धुत्व व्यवहार और भेट मुलाकातसे मुझे बड़ा आनन्द होता था और कुछ उपकार भी जान पड़ता था। इसीसे मैं उनके पास एकदम खिंच गया था। किन्तु इस बातको मैंने एक बार भी कभी न सोचा था कि यह घनिष्टता किसी दिन मेरे लिए विशेष चिन्ताका कारण होगी।

आनन्दमयी—तुम्हारी बात सुनकर अब भी तो मेरे मनमें किसी चिन्ताका उदय नहीं होता।

विनयने कहा—माँ, तुम नहीं जानती कि मैं समाजमें उन सबोंके प्रति एक भारी अशान्ति फैलानेका अपराधी हुआ हूँ। लोगोंने इस प्रकार निन्दा करना आरम्भ कर दिया है कि मैं अब वहाँ जाने योग्य नहीं हूँ—

आनन्दमयी बोली—गोरा एक बात बार बार मुझसे कहता था, वह मुझे खूब याद है। वह कहता था कि जहाँ भीतर किसी जगह कोई अन्याय छिपा है, वहाँ बाहर शान्ति रहने पर भी अमङ्गल की आग सुलगती रहती है और वह किसी दिन भभककर अवश्य हानि पहुँचाती है। यदि उनके समाजमें अशान्ति फैली है तो तुम्हें अनुताप करनेकी कोई आवश्यकता नहीं। देखना, इससे अच्छा ही फल होगा। हाँ, तुम्हें अपना व्यवहार शुद्ध रखना चाहिए।

इसी बातका तो विनयके मनमें भारी छटका था। मेरा अपना

व्यवहार शुद्ध है या नहीं, यह ठोक ठोक उसकी समझमें न आता था। इसका फैसला वह आप न कर सकता था। ललिता जब अन्य समाज की है, उसके साथ विवाह होना जब सम्भव नहीं है तब उस पर विनयका अनुराग होना ही, एक गुप्त पापकी तरह, उसे सन्ताप दे रहा था और इस पापके दुस्तर प्रायश्चित्तका जो समय उपस्थित हुआ है, इस बातको सोचकर वह और भी व्याकुल हो रहा था।

विनय सहसा बोल उठा—माँ, शशिमुखीके साथ जो मेरे विवाहका प्रस्ताव हुआ था वह हो जाने हीसे अच्छा होता। जहाँ मेरा अधिकार है वहीं किसी तरह मेरा बद्ध हो रहना उचित है। मैं इस तरह बद्ध होकर रहना चाहता हूँ जो वहाँसे फिर किसी तरह हिल न सकूँ।

आनन्दमयीने हँसकर कहा—समझ गई, तुम शशिमुखी को अपने घरकी बहू बनाकर नहीं, किन्तु उसे घरकी साँकल बनाकर रखना चाहते हो। शशिका ऐसा भाग्य कहाँ !

इसी समय दरबानने आकर ख़बर दी, परेश बाबूके घर की दो स्त्रियाँ आई हैं। सुनतेही विनयकी छाती धड़क उठी। उसने समझा, मुझको सावधान करने ही के लिए वे दोनों आनन्दमयीसे शिकायत करने आई हैं। उसने खड़े होकर कहा—तो मैं अब जाता हूँ।

आनन्दमयीने झट खड़ी हो उसका हाथ पकड़कर कहा—विनय, अभी मत जाओ। नीचेके कमरेमें बैठो।

नीचे जाते समय विनय यों मन ही मन कहने लगा—इसकी तो कोई आवश्यकता न थी। जो हो गया सो हो गया। मैं तो मर जाने पर भी अब वहाँ नहीं जा सकता। अपराधका उत्ताप जब आग की तरह एकाएक हृदयमें धधक उठता है तब उस उत्तापसे जल भरने पर भी अपराधीकी वह शोकाग्नि शीघ्र नहीं बुझती।

सड़कके सामने नीचे गोराकी जो बैठक थी उसमें जब विनय जा रहा था उसी समय महिम अपनी तोदको अचकनके बटन बन्धनसे मुक्त करते-करते आफ़िससे अपने घर लौट आया। उसने विनयका हाथ पकड़कर कहा—वाह ! विनय बाबूतो भले मौके पर मिल गये। मैं तुमको कई दिनोंसे खोज रहा था।—यह कहकर वह विनयको बड़े आदरसे गोराकी बैठकमें ले गया और उसे एक कुरसी पर बिठाकर आप भी बैठा। पाकेटसे पानका डिब्बा निकालकर उसने एक बीड़ा विनयको दिया।

“अरे कोई है ! तम्बाकू भरकर ले आओ।” नौकरको यह आज्ञा दे उसने काम की बात चलाई। पूछा—विनय बाबू, उस विषय में तुमने क्या निश्चय किया ?

अब तो विनय का भाव पहलेसे बहुत कोमल दिखाई पड़ा। यद्यपि विशेष उत्साह ललित न हुआ तथापि यह भी नहीं, कि बात टाल देने की कोई चेष्टा दिखाई दी हो। तब महिम ने एक बारगी विवाह का दिन सुहूर्त पक्का करना चाहा।

विनयने कहा—गोरा आ लें।

महिम ने आश्चर्य होकर कहा—उसके आनेमें तो अभी कई दिनों की देर है। अच्छा, कुछ जलपान करोगे तो मगाऊँ ? कहे क्या कहते हो ? आज तुम्हारा मुँह बहुत सूखा दीखता है। स्वास्थ्य में किसी तरह की गड़बड़ तो नहीं हुई !

विनयसे जलपान का आग्रह कर चुकने पर महिम अपनी जुधा निवारण करने हवेलीके भीतर गया। गोरा की टेबल पर से कोई किताब खींचकर विनय उसके पन्ने उलटाने लगा। इसके बाद किताबको टेबल पर फेंककर कमरे के भीतर टहलने लगा।

नौकरने आकर कहा—माँ बुलाती हैं।

विनय ने पूछा—किसको ?

नौकर—आपको ।

विनय—वहाँ और लोग हैं ?

नौकर—जी हाँ ।

छतके ऊपर पैर रखते ही सुचरिताने पहले ढी की तरह अपने स्वाभाविक स्निग्ध कण्ठसे कहा—“आइए, विनय बाबू ।” यह सुधा-सिद्धित स्वर सुनकर विनयने मानों आशातीत धन पाया ।

विनय जब घरके भीतर आया तब उसको देखकर सुचरिता और ललिता को बड़ा आश्चर्य हुआ । उन्होंने सोचा कि विनय को न जाने क्या हो गया है, जिसका चिह्न इस थोड़े से ही समयमें इसके चेहरे पर झलकने लगा है । जैसे किसी सरस श्यामल खेत पर टिड्डो-दलके उतर पड़नेसे वह सूख जाता है, उसी खेतकी तरह विनय का सदास्य मुख फीका हो गया है । ललिताके मन में वेदना और कष्ट के साथ-साथ कुछ आनन्द का आभास दिखाई दिया ।

और दिन होता तो ललिता एकाएक विनयके साथ बात न करती—किन्तु आज जैसे ही विनय घरमें आया वैसे ही उसने कहा—विनय बाबू, आपसे एक बातका विचार करना है ।

विनय के हृदयमें यह शब्द आनन्दके रूपमें लहराने लगा । वह मारे खुशीके भौंचक सा हो रहा । उसकी मुरझाई हुई आशा-लता ललिताके शीतल वाक्य-जलमें एकाएक लहलहा उठा । विनयके उदास चेहरे पर तुरन्त प्रसन्नता की झलक दिखाई देने लगी ।

ललिताने कहा—हम कई बहनें मिलकर एक छोटी सी कन्या-पाठशाला खोलना चाहती हैं ।

विनयने उत्साहित होकर कहा—कन्या-पाठशाला स्थापित करना तो बहुत दिनसे मेरे जीवन का एक सङ्कल्प है ।

ललिता—आपको इस कार्यमें हमारी सहायता करनी पड़ेगी ।

विनय—मुझसे जहाँ तक हो सकेगा, पीछे न हटूँगा । मुझे क्या करना होगा, बताइए ।

ललिता—हम लोगों को ब्राह्म समझकर हिन्दू लोग हमारा विश्वास नहीं करते । इस विषय में आपको कुछ भार अपने ऊपर लेना होगा ।

विनयने प्रसन्न होकर कहा— आप अन्देशा न करें । मैं वह भार लेने को तैयार हूँ ।

आनन्दमयी —हाँ, यह अवश्य भार लेगा ! लोगोंको बातों में भुलाकर वश में कर लेना यह खूब जानता है ।

ललिता—पाठशालाका काम किस नियमसे करना होगा, उसके लिए क्या सामान दरकार है, समय नियत करना, क्लासबन्दी करना, किस क्लास में कौन सी किताब पढ़ाई जायगी—ये सब काम आप कीजिएगा ।

ये सब काम भी विनयके लिए कुछ कठिन नहीं हैं । किन्तु वह कुछ सोचकर एकाएक ठिठक गया । वरदासुन्दरी ने जो अपनी लड़कियोंके साथ उसे मिलनेको मना कर दिया है और समाजमें उन सबोंके विरुद्ध जो आन्दोलन हो रहा है, इसको कुछ भी खबर क्या ललिताको नहीं है । ऐसी हालत में विनय यदि ललिताका अनुरोध रखने की प्रतिज्ञा करे तो वह अन्याय या ललिताके लिए अनिष्ट तो न होगा ? यह प्रश्न उसे आघात पहुँचाने लगा । इस ओर ललिता यदि किसी शुभ कार्य में उससे सहायता की प्रार्थना करे तो उस अनुरोधका यथा साध्य पालन करना विनय अपने जीवनका प्रधान उद्देश समझेगा । उसे अस्वीकार करनेकी शक्ति विनय में कहाँ ?

ललिताकी बातसे सुचरिताको भी बड़ा आश्चर्य हुआ । स्वप्नमें भी उसे इसकी भावना न थी कि ललिता एकाएक इस तरह विनयसे कन्या-पाठशालाके लिए अनुरोध करेगी । एक तो विनयके विषयमें समाजमें चारों ओर घोर आन्दोलन हो रहा है, उस पर फिर ऐसा बर्ताव ! ललिता सब बातें जान वृत्तकर अपनी इच्छासे ऐसा काम करने को उद्यत हुई है, यह देख सुचरिता डर गई । ललिताके मनमें विद्रोह का भाव जाग उठा है, यह वह समझ गई । किन्तु क्या बेचारे विनयको इस विद्रोहमें सम्मिलित

करना उचित है ? सुचरिता अपने मनके आवेशको न रोक सहसा बोझ ठो—इस विषयमें एक दफ्ते पिताजीसे सलाह कर लेना आवश्यक है । विनय बाबूको कन्या-पाठशाला की इन्सपेक्टरीका पद पानेकी अभी पूरी आशा न करनी चाहिए ।

सुचरिताने जो चतुराईके साथ इस प्रस्तावमें बाधा डाली, यह विनय समझ गया । इससे उसके मनकी आशङ्का और भी बढ़ गई । यह बात भली भाँति जान पड़ी कि जो सङ्कट उपस्थित हुआ है उसे सुचरिता जानती है और ललितासे भी वह छिपा नहीं है, तब ललिता क्यों इस तरह करती है । कुछ भी स्पष्ट ज्ञात नहीं होता ।

ललिता ने कहा—पिता जी से तो पूछना ही होगा । विनय बाबू राजी हों तो पिता जी से पूछ लूँगी । वे कभी आपत्ति न करेंगे । उन्हें भी हमारे इस विद्यालयमें योग देना होगा । आनन्दमयीकी ओर देखकर कहा—आपको भी हम न छोड़ेंगी ।

आनन्दमयी ने हँसकर कहा—मैं तुम्हारे स्कूलके घरको झाड़-बुहार आऊँगी, इससे अधिक काम मेरे द्वारा और क्या होगा ।

विनय ने कहा—यही यथेष्ट होगा । स्कूल एकबारगी स्वच्छ हो जायगा ।

सुचरिता और ललिता के चले जाने पर विनय एकाएक पैदल ही ईडन गार्डन की ओर चल दिया । महिम ने आनन्दमयी के पास आकर कहा—विनय मेरे उस प्रस्ताव पर बहुत कुछ राजी हो गया है । अब जहाँ तक हो सके शीघ्र काम कर लेना अच्छा है । क्या जाने फिर कहीं मति फिर जाय ।

आनन्दमयी ने विस्मित होकर कहा—क्या कहते हो ! विनय फिर कब राजी हुआ ? मुझसे तो उसने कुछ नहीं कहा ।

महिम—आज ही मेरे साथ उसकी बातचीत हो गई है । वह कहता है, गोराके आने पर मुहूर्त्त स्थिर किया जायगा ।

आनन्दमयी ने सिर हिलाकर कहा—महिम, मैं तुमसे कहती हूँ, तुमने ठीक नहीं समझा ।

महिम—मेरी बुद्धि चाहे जितनी मोटी हो, किन्तु सीधी बात समझने के योग्य मेरी उमर जरूर हुई है, यह तुम निश्चय जानो ।

आनन्दमयी—मैं जानती हूँ, तुम मुझ पर क्रोध करोगे, किन्तु इस बात में जरूर कोई न कोई बखेड़ा खड़ा होगा ।

महिम ने मुंह लटकाकर कहा—बखेड़ा खड़ा करने से ही खड़ा हो जाता है ।

आनन्दमयी—महिम, तुम जो कहोगे सब सहूंगी, किन्तु जिस बात से कोई उपद्रव होगा मैं उसमें शामिल न हो सकूंगी । यह केवल तुम्हारी ही भलाई के लिए है ।

महिम ने रुष्ट होकर कहा—मेरी भलाई की बात सोचने का भार यदि मेरे ही ऊपर रहने दो तो तुम्हें कोई बात सोचने-समझने की आवश्यकता न पड़े और मेरा भी इसी में भला होगा । बल्कि शशिमुखी का ब्याह हो जाने पर फिर जहाँ तक तुमसे हो सके मेरी भलाई की चिन्ता करना कहो क्या कहती हो ?

आनन्दमयी ने इसका कुछ उत्तर न दे एक लम्बी साँस ली । महिम पाकेट से पान का डिब्बा निकालकर उसमें से एक बीड़ा पान ले मुंह में रख चबाते-चबाते चला गया ।

ललिताने आ कर परेश बाबूसे कहा—“हम लोग ब्राह्म हैं, इसलिए कोई हिन्दू लड़की हमारे पास पढ़ने नहीं आना चाहती। इसीसे सोचती हूँ, हिन्दू-समाजके किसी आदमीको इस मामलेमें शामिल करनेसे काम में सुबिधा होगा। क्या कहते हो बाबू जी ?

परेशबाबू ने पूछा—हिन्दू समाजका आदमी कहाँ मिलेगा ?

ललिताने कहा—क्यों, मिलेगा क्यों नहीं ? यही देखो, विनय बाबू हैं।

परेश बाबूने कहा—विनय ! विनय राज़ी क्यों होंगे ?

ललिताने कहा—“सो वह राज़ी हो सकते हैं।

परेश बाबू ज़रा देर स्थिर होकर बैठे रहे। फिर बोले - सब बातों पर गौर कर के देखने पर कभी नहीं राज़ी होंगे।

ललिता ने कहा—बाबू जी, तो फिर हम लोगोंका यह स्कूल किसी तरह चल न सकेगा !

परेश बाबू ने कहा—इस समय उसके चलने में अनेक बाधाएँ देख पड़ रही हैं। चेष्टा करने से बहुत सी अप्रिय बातें ज़ोर पकड़ेंगी।

ललिता अब वहाँ अधिक देर न ठहर कर अपने कमरे में जाकर देखा, ढाक से उस के नाम एक चिट्ठी आई है। हस्ताक्षर देख कर मालूम हुआ कि उसकी बचपन की सहेली शैलबाला की लिखी चिट्ठी है। उसका ब्याह हो चुका है, और वह अपने स्वामी के साथ बांकीपुर में रहती है।

चिट्ठी में लिखा था—“तुम लोगों के बारे में तरह तरह की बातें सुनकर मन बहुत खराब हो रहा था। बहुत दिन से सोचती हूँ कि चिट्ठी लिख कर खबर लूँ—लेकिन फुरसत ही नहीं मिलती। किन्तु परसों एक

आदमीसे (उसका नाम नहीं बताऊंगी) जो खबर मिली, उसे सुन कर तो जैसे सिर पर गाज गिर पड़ी ! मैं तो सोच भी नहीं सकती कि ऐसा सम्भव हो सकता है । किन्तु जिन्होंने लिखा है, उन पर अविश्वास करना भी कठिन है । किसी हिन्दू युवकके साथ तुम्हारे विवाहकी सम्भावना उपस्थित है ? यह बात अगर सत्य हो, तो...इत्यादि-इत्यादि ।’

क्रोधसे ललिताके सारे शरीरमें जैसे आग जग गई । वह घड़ी भर भी रुक न सकी । उसी दम चिट्ठीके उत्तर में लिखा—‘ खबर सच है कि नहीं, इसके लिये तुम्हारा प्रश्न करना ही मुझे आश्चर्यकी बात जान पड़ता है । ब्रह्म-समाजके आदमीने तुमको जो खबर दी है, उसकी सचाई भी क्या जांचनी होगी ! इतना अविश्वास उसके उपरान्त, किसी हिन्दू युवकके साथ मेरे विवाहकी सम्भावना होनेकी खबर पाकर तुम्हारे सिरपर गाज गिर पड़ी है, किन्तु मैं तुमसे निश्चय कह सकती हूँ ब्राह्म-समाजमें भी ऐसे कुछ सुप्रसिद्ध साधु-युवक हैं, जिनके साथ विवाहकी आशङ्का वज्रपात ही के तुल्य भयंकर है और मैं ऐसे भी दो एक हिन्दू युवकोंको जानती हूँ जिनके साथ दयाह होना हर एक ब्राह्म-कुमारीके लिए गौरव और सौभाग्य की बात है । इससे अधिक और एक भी बात मैं तुमसे कहना नहीं चाहती ।’

इधर उस दिन-दिन भरके लिये परेश बाबूका काम काज बन्द हो गया । वह चुर चाप बैठे बैठे बहुत देर तक सोचते रहे । उसके बाद सोचते हुए धीरे-धीरे सुचरिताके घरमें जाकर उपस्थित हुए । परेश बाबूका चिन्तित मुख देख कर सुचरिताका हृदय व्यथित हों उठा । काहेके लिए उन्हें चिन्ता है, सो भी वह जानती है, और इसी चिन्ताको लेकर वह कई दिनसे दुःखी हो रही है ।

परेशबाबू सुचरिताके साथ एक एकांत स्थानमें बैठे, और बोले—बेटी, ललिताके सम्बन्धमें चिन्ताका समय उपस्थित हुआ है ।

सुचरिताने परेश बाबूके मुखपर अपनी कष्टपूर्ण दृष्टि स्थापित करके कहा—जानती हूँ बाबू जी ।

परेश बाबू — मैं समाजके द्वारा होने वाली निन्दाकी बात नहीं सोचता । मैं सोचता हूँ—अच्छा ललितता क्या... ।

परेश बाबू के संकोच को देख कर सुचरिताने खुद उस मामलेको स्पष्ट कर लेनेकी चेष्टा करते हुए कहा—ललितता बराबर अपने मनकी बात मेरे आगे खोल कर कह देती है । किन्तु इधर कुछ दिनसे वह मेरे आगे उस तरह अपने हृदयकी थाह नहीं देती । मैं खूब समझ रही हूँ कि...

परेश बाबू बीच ही में बोल उठे—ललितताके मनमें ऐसे किसी भाव का उदय हुआ है, जिसे वह आप भी स्वीकार करना नहीं चाहती । मैं तो सोच कर भी कुछ ठीक कर पाता कि क्या करनेसे उसकी ठीक मीमांसा हो जा सकती है । अच्छा, तुम क्या कहती हो, विनयको अपने परिवारके भीतर जाने आने देकर ललितता का कुछ अनिष्ट किया गया है ?

सुचरिता—बाबू जी, आप तो जानते हैं, विनय बाबूमें कोई भी दोष नहीं है, उनका स्वभाव-चरित्र निर्मल है । साधारणतः उनके जैसे स्वभावके सरल भद्र पुरुष कम ही देख पड़ते हैं ।

परेश बाबू जैसे कोई एक नया तत्त्व पा गये । वह कह उठे—ठीक कहा तुमने राधे, ठीक कहा ! वह अच्छे आदमी हैं कि नहीं, यही देखने की बात है—अन्तर्यामी ईश्वर भी वही देखते हैं । विनयको भला आदमी सज्जन समझनेमें मैंने जो भूल नहीं की है, उसके लिए मैं उन्हीं अन्तर्यामी स्वामीको बारम्बार प्रणाम करता हूँ ।

एक गोरख धन्धा सुलभ गया — परेश बाबूके जैसे जान आ गई । परेश बाबू अपने देवताके निकट अन्याय करके अपराधी नहीं हुए हैं यह सोच कर उनके मनमें फिर किसी प्रकारकी कुछ भी ग्लानि नहीं रही । यह अम्बंत सहज बात इतनी देर तक न समझ कर वह क्यों इस तरह पीड़ाका अनुभव कर रहे थे, यह सोच कर उन्हें बड़ा आश्चर्य मालूम पड़ा । सुचरिता के सिर पर हाथ रख कर उन्होंने कहा—तुम्हारे निकट मुझे आज एक नई शिक्षा मिली बेटी !

सुचरिता उसी दम उनके पैर छूकर कहने लगी—ना ! ना ! यह क्या कहते हैं आप बाबू जी !

परेश बाबूने कहा—संप्रदाय ऐसी चीज़ है कि वह इस सबसे सहज बातको ही बिलकुल भुला देती है कि मनुष्य सब मनुष्य ही हैं । मनुष्य स्वयं ब्राह्म, हिंदू, मुसलमान आदि समाजके गढ़े हुए नामोंकी बातको विश्व सत्यकी अपेक्षा बड़ी बना डालकर एक गोरखधन्धा तैयार कर लेता है । अब तक मैं वृथा ही उसमें भटकता हुआ मर रहा था !

ज़रा देर चुप रह कर फिर कहने लगे—ललिता अपनी कन्या पाठशालाका विचार किसी तरह छोड़नेको तैयार नहीं है । वह इस सम्बन्धमें विनयकी सहायता लेनेके लिए मेरी सम्मति चाहती है ।

सुचरिता—ना बाबू जी, अभी कुछ दिन उसे रहने दीजिए !

परेश बाबू—क्यों अभी रहने क्यों दिया जाय ।

सुचरिता—नहीं तो मा बहुत नाराज़ हो उठेंगी ।

परेश बाबूने सोच कर देखा, यह बात तो ठीक है ।

चार दिन बाद एक चिट्ठी हाथमें लिये हारान बाबू वरदासुन्दरीके निकट आ कर उपस्थित हुए। आज कल परेश बाबूकी आशा उन्होंने बिलकुल ही छोड़ दी है।

हारान ने वह चिट्ठी वरदासुन्दरी के हाथमें देकर कहा—मैंने पहले ही से आप लोगोंको सावधान कर देनेकी बहुत चेष्टाकी है ! उसके लिए आप लोगोंका अप्रिय भी हो गया हूँ। इस समय चिट्ठीसे ही आप समझ सकेंगी कि भीतर-ही-भीतर मामला कहां तक आगे बढ़ गया है।

शैलबालाको ललिताने जो चिट्ठी लिखी थी, वही वह चिट्ठी थी। वरदासुन्दरीने उसे पढ़ा। फिर कहने लगी—आप ही बताइए, मैं किस तरह जान सकती हूँ ! कभी जो मैं मनमें भी नहीं ला सकी, वही हो रहा है। मगर मैं कहे रखती हूँ आपसे इसके लिये मुझको दोष न दीजियेगा। सुचरिताको तो आप सब लोगोंने ही मिलकर 'बहुत भली-बहुत भली' कहकर एकदम गिर पर चढ़ा लिया था; 'ब्राह्म समाजमें ऐसी और कोई भी लड़की नहीं है' कहकर आप ही लोगोंने उसका दिमाग असमान पर चढ़ा दिया है। अब अपनी उस आदर्श ब्राह्म कुमारी की कीर्ति संभालिए। विनय और गोराको तो वही इस घर में लाई है। मैं फिर भी विनयको बहुत कुछ सुधार कर अपनी ही राह पर खींच कर लिये आ रही थी; मगर उसके बाद उसने न जाने कहांसे अपनी एक मौलीको लाकर हमारे ही घरमें मूर्ति पूजा शुरू कर दी, और विनयको भी ऐसा विगाड़ दिया कि अब वह मुझे देखते ही भाग खड़ा होता है। इस समय जो कुछ हो रहा है, उसकी जड़में आप लोगोंकी वह सुचरिता ही है। मैं बराबर पहले ही से जानती थी कि वह लड़की कैसी लड़की है; लेकिन कभी कोई आधी बात उसे नहीं कही। मैं हमेशासे उसे इस तरह पालती पोसती और

आदर प्यार करती आ रही हूँ कि किसी को यह नहीं मालूम हो सका कि वह मेरी अपनी पेट की लड़की नहीं है। आज उसी का अच्छा फल मुझे उससे मिला ! इस समय मुझे यह चिट्ठी बेकार आप दिखाते हैं आपही लोग जो जान पड़े, सो कहें ! मैं नहीं जानती।

हारान बाबूने यह बात आज स्पष्ट स्वीकार करके अत्यन्त उदार भावसे पश्चात्ताप प्रकट किया कि उन्होंने पहले वरदासुन्दरीको पहचाना नहीं था—वह उनके सम्बन्धमें भूल कर बैठे थे। अन्तको परेश बाबूको बुलाकर वही चिट्ठी उनके हाथमें दे दिया, परेशने दो तीन बार उसे पढ़कर कहा—तो फिर, क्या हुआ !

वरदासुन्दरीने उत्तेजित हो कर कहा—क्या हुआ ! और क्या होना चाहिए ! अब और बाकी ही क्या रहा ! ठाकुर पूजा, जाति-पाँति का पचड़ा मानना, सभी तो हो गया, अब केवल हिन्दूके घर तुम्हारी लड़की का व्याह्र होना भर ही रह गया है ! वह भी हो जाय—बस ! उसके बाद प्रायश्चित्त करके हिन्दू-समाजमें दाखिल हो जाओगे—मैं लेकिन कहे रखती हूँ...।

परेशने जरा हँसकर कहा—तुमको कुछ भी कहना न होगा। कमसे कम अबभी करने का समय नहीं हुआ ! मेरा कहना यह है कि तुम क्यों यह ठोकर किये बैठी हो कि हिन्दूके घरमें ही ललितता का व्याह्र ठीक हो गया है। इस चिट्ठीमें उस तरहकी कोई बात मैं देखता नहीं।

वरदा०—क्या होनेसे तुम देख पाते हो, सो तो आज तक मैंने समझ नहीं पाया। समय रहते पहले ही अगर तुम देख पाते, तो आज इतनी बड़ी घटना घटती ही नहीं। बताओ तो, चिट्ठीमें आदमी इससे बढ़कर और कहां तक खोजकर लिख सकता है !

हारान०—मुझे जान पड़ता है, ललितता को यह चिट्ठी दिखाकर उसका अभिप्राय क्या है, यह उसीसे पूछना उचित है। आप लोग अगर अनुमति दें, तो मैं ही उससे पूछ सकता हूँ।

इसी समय सहसा आंधी की तरह उस स्थानमें प्रवेश करके ललिता ने कहा—बाबू जी, यह देखो, ब्राह्म समाजसे आजकल इस तरह की गुमनाम-चिट्ठियाँ आती हैं !

परेश बाबूने ललितासे चिट्ठी लेकर पढ़ी । विनयके साथ ललिताका ब्याह गुप्त रूपसे पक्का हो गया है, यह निश्चित मानकर पत्र लेखक ने तरह-तरह की भर्त्सना, धमकी और उपदेशकी बातोंसे यह चिट्ठी पूर्ण की है । उसीके साथ यह सब चर्चा भी थी कि विनयका मतलब अच्छा नहीं है, वह दो दिन बाद ही अपनी ब्राह्म समाजी स्त्री को त्याग करके फिर हिन्दूके घरमें ब्याह कर लेगा—इत्यादि ।

परेशके पढ़ चुकने पर हारान बाबूने वह चिट्ठी लेकर पढ़ी । उसके बाद कहा—ललिता यह चिट्ठी पढ़कर तो तुम्हें क्रोध आता है, किन्तु ऐसी चिट्ठी लिखने का कारण क्या तुमने आपही नहीं खड़ा कर दिया है ? अच्छा, बताओ, तुमने अपने हाथसे यह चिट्ठी किस तरह लिखी है !

वह दूसरी चिट्ठी देखकर दम भर ललिता स्तब्ध हो कर खड़ी रही । उसके बाद बोली—जान पड़ता है, शायद शैलके साथ इस सम्बन्धमें आपकी चिट्ठी पत्री चल रही है ?

हारानने इसका स्पष्ट उत्तर न देकर कहा—ब्राह्म समाजके प्रति कर्त्तव्य स्मरण करके शैल तुम्हारी यह चिट्ठी भेज देनेके लिये बाध्य हुई है ।

ललिता कठिन भावसे तन कर खड़ी हो कर बोली—अब ब्राह्म-समाज क्या कहना चाहता है, कहे !

हारानने कहा—विनय बाबूके और तुम्हारे सम्बन्धमें यह जो अफवाह फैल रही है, उस पर यद्यपि मैं किसी तरह विश्वास नहीं कर सकता; किन्तु तो भी, तुम्हारे मुखसे मैं उसका स्पष्ट प्रतिवाद सुनना चाहता हूँ ।

ललिताकी दोनों आँखें अङ्गारेकी तरह जलने लगी । उसने एक कुर्सीकी पीठ काँपते हुए हाथसे जोरसे पकड़ कर कहा—क्यों, किसी तरह भी विश्वास नहीं कर सकते ?

परेश बाबूने ललिताकी पीठ पर हाथ फेर कहा—ललिता, इस समय तुम्हारा मन स्थिर नहीं है। यह बात-चीत पीछे मेरे साथ होगी—अभी रहने दो !

हारानने कहा—परेश बाबू, आप बातको दबा देनेकी चेष्टा न कीजिए !

ललिता फिर प्रज्वलित हो कर बोली—दबा देनेकी चेष्टा बाबू जी करेंगे। बाबू जी आप लोगोंकी तरह समयके प्रकाशसे नहीं डरते—सत्यको बाबू जी ब्राह्म-समाजसे भी बड़ा जानते हैं ! मैं आपसे स्पष्ट कहे देती हूँ, मैं विनय बाबूके साथ व्याह को कुछ भी असम्भव या अन्याय नहीं समझती !

हारान कह उठे—किन्तु क्या यह पक्का होगया कि वह ब्राह्म धर्मकी दीक्षा ग्रहण करेंगे ?

ललिताने कहा—कुछ भी ठीक नहीं हुआ। और, ऐसी ही क्या बात है कि दीक्षा लेनी ही होगी !

वरदासुन्दरीने अब तक कोई बात नहीं कही थी। उनकी इच्छा थी कि आज हारान बाबूकी ही जीत हो, और अपना अपराध स्वीकार करके परेश बाबूको पश्चात्ताप करना पड़े। मगर अब उनसे रहा नहीं गया। बोल उठीं—ललिता, तू पागल हो गई है क्या ! कहती क्या है !

ललिताने कहा—नहीं माँ, यह पागलपनकी बात नहीं—जो कुछ मैंने कहा है, वह खूब सोच समझ कर ही कहा है ! मुझे लोग इस तरह चारों ओरसे बांधने आवेंगे, तो मैं उसे कभी सह नहीं सकूँगी। मैं हारान बाबू, वगैरहके इस समाजके बन्धनसे अपनेको मुक्त करूँगी !

हारानने कहा—ठच्छल्ललताको तुम मुक्त कहती हो !

ललिता—ना, नीचताके आक्रमणसे, असत्यकी गुत्तामीसे, छुटकारे को ही मैं मुक्त कहती हूँ ! जहाँ पर मैं कोई अन्याय कोई अधर्म नहीं देखती, वहाँ ब्राह्म-समाज क्यों मुझे स्पर्श करेगा, क्यों बाधा देगा ?

हारान बाबू ने कहा—परेश बाबू, यह देखिये ! मैं जानता था, कि अन्तको ऐसी ही एक घटना घटित होगी । मुझसे जहाँ तक हो सका, मैंने आप लोगों को सावधान करने की चेष्टा की—लेकिन कुछ फल नहीं हुआ !

ललिताने कहा—देखिये पानू बाबू, आपको भी सावधान कर देने का एक विषय है । आपकी अपेक्षा जो लोग सभी बातोंमें बड़े हैं, उन्हें सावधान कर देनेका अहंकार आप अपने मनमें न रखियेगा ।

इतना कहकर ललिता वहाँसे निकल कर चली गई ।

वरदासुन्दरी ने कहा—यह सब क्या हो रहा है ! अब क्या करना चाहिये उसी की सलाह को !

परेश०—जो कर्तव्य है, उसीका पालन करना होगा । किन्तु इस तरह हड़कामे के साथ सलाह करनेसे तो कर्तव्यका निश्चय नहीं होता । मुझे ज़रा माफ करना होगा । इस सम्बन्धमें मुझसे कुछ न कहो । मैं जरा अकेले बैठना चाहता हूँ !

—

सुचरिता सोचने लगी—ललिता यह क्या कर बैठो ! कुछ देर चुप रह कर ललिताके गलेमें हाथ ढाँककर सुचरिताने कहा—मगर मुझे तो बहन, डर लग रहा है !

ललिताने पूछा—काहेका डर है ?

सुचरिताने कहा—इधर ब्राह्म-समाजमें चारों ओर हलचल मच गई है, किन्तु इधर आगर अन्तर्को विनय बाबू न राजी हुए तो !

ललिताने सिर झुकाकर दृढ़ स्वरसे कहा—वह अवश्य ही राजी होंगे !

सुचरिताने कहा—तू तो जानती है बहन, पानू बाबू माँ को यह आश्वासन दे गये हैं कि विनय कभी अपने समाजको छोड़कर यह व्याह करने को राजी न होंगे । ललिता, क्यों तू ने सब पहलुओं पर विचार किये बिना पानू बाबूके आगे यह बात इस तरह कह डाली !

ललिताने कहा—कह डालनेके लिये अब भी मुझे पछतावा नहीं हो रहा है ! पानू बाबूने सोचा था कि वह और उनका समाज मेरा, शिकार के जानवर की तरह, पीछा करके मुझे एकदम अथाह समुद्रके किनारे तक ले आया है । यहाँ मुझे आत्म-समर्पण करने के लिये लाचार ही होना पड़ेगा । वह नहीं जानते, मैं इस समुद्र में फँद पड़नेसे नहीं डरती; उन के शिकारी कुत्तोंके पीछा करनेसे विवश होकर उनके फन्देमें घुसनेसे ही डरती हूँ ।

सुचरिताने कहा—अच्छा, एक बार ज़रा बाबू जी से सलाह करके देखूँ ।

ललिताने कहा—बाबू जी कभी शिकारियोंके दलमें शामिल न

होंगे, यह मैं तुमसे निश्चय कहती हूँ। उन्होंने तो कभी हम लोगों को ज़ज़ीरमें बांधना नहीं चाहा। उनके मतके साथ जब किसी दिन कुछ हमारी राय नहीं मिलती है, तब क्या उन्होंने ज़रा भी क्रोध या नाराज़गी ज़ाहिर की है—क्या कभी ब्राह्म-समाजके नाम की दुहाई देकर हमारा मुंह बन्द कर देने की चेष्टा की है? इसीके लिये मैं कितनी ही बार कितना ही नाराज़ हुई हूँ; किन्तु बाबू जी को अगर कुछ भय था, तो यही की कहीं हम खुद सोचने-विचारने का साहस न खो बैठें। इस तरह करके जब उन्होंने मनुष्य बनाया है, तब अन्तको क्या वह पानू बाबू जैसे समाजके जेल-दरोगाके हाथमें हमको सौंप देंगे?

सुचरिताने कहा—अच्छा, मान लिया, बाबू जीने कुछ बाधा न डाली। उसके बाद क्या किया जायगा, बोलो?

ललिताने कहा—तुम लोग अगर कुछ न करोगे, तो मैं खुद।

सुचरिता व्यस्त हो उठ कर बोली—ना, ना, तुम्हें कुछ भी न करना होगा बहन! मैं इसका कुछ उपाय करती हूँ।

सुचरिता परेश बाबूके पास जानेको प्रस्तुत हो रही थी। इसी समय परेश बाबू खुद शामको उसके पास आकर उपस्थित हुए।

परेश बाबूने कोमल स्वरसे कहा—राधे, सब सुना तो होगा।

सुचरिता—हाँ बाबूजी, सब सुन चुकी हूँ। मगर आप इतनी चिन्ता क्यों करते हैं?

परेश—मैं तो और कुछ नहीं सोचता, मुझे चिन्ता यही है कि ललिताने जो तूफ़ान उठाकर खड़ा कर दिया है, उसके सारे आघातोंको वह सह सकेगी?

सुचरिताने कहा—समाजकी ओरसे होने वाला कोई उत्पीड़न ललिताको किसी दिन भी परास्त नहीं कर सकेगा, यह मैं आपसे ज़ोर देकर कह सकती हूँ।

परेशने कहा—मैं यह बात खूब निश्चय करके जानना चाहता हूँ कि

ललिता केवल क्रोधके आवेशमें आकर विद्रोह करके उद्धत भाव नहीं प्रकट कर रही है ।

सुचरिताने सिर झुकाकर कहा—न बाबूजी, अगह यह बात होती, तो मैं उसकी बान बिलकुल सुनती ही नहीं ! उसके मनमें जो बात खूब गहरी जमी हुई थी, वही अकस्मात आघात पाकर एक दम बाहर निकल पड़ी है ! इस समय उस बातको किसी तरह दबा देनेकी चेष्टा करनेसे ललिता जैसी लड़कीके लिए वह कभी भला न होगा । बाबूजी, विनय बाबू तो आदमी बड़े अच्छे हैं ।

परेश०—अच्छा, विनय क्या ब्राह्म समाजमें आनेको राज़ी होगा ?

सुचरिता—सो तो मैं ठीक कह नहीं सकती । अच्छा बाबूजी, एक बार गोरा बाबूकी माँके पास हो आऊँ ?

परेश०—मैं भी यही सोच रहा था कि उनके पास हो आना अच्छा होगा ।

आनन्दमयीके घरसे रोज सवेरे विनय एक बार अपने घर आता था । आज सवेरे आने पर उसे एक चिट्ठी मिली । चिट्ठी में किसी का नाम नहीं था । चिट्ठी में इस बारे में लग्वा चौड़ा उपदेश था कि ललिताके साथ ब्याह करने से वह विनय के लिए किसी तरह सुखदायक नहीं हो सकता, और ललिताके लिए भी वह अमङ्गल ही का कारण होगा । सब के अन्त में यह लिखा था कि इतने पर भी अगर विनय ललिता को व्याहने से निवृत्ति न हो, तो यह बात वह सोचकर देखे की ललिता का फेफड़ा कमजोर है—डाक्टर लोग उसके तब-रोग की आशंका करते हैं ।

विनय इस तरहकी गुमनाम चिट्ठी पाकर हतबुद्धि सा हो गया । विनयने कभी खयाल भी नहीं किया कि कूठ मूठ भी ऐसी बातकी सृष्टि हो सकती है । कारण यह तो किसीसे छिपा नहीं है । समाजकी बाधाके कारण ललिताके साथ विनयका विवाह किसी तरह नहीं हो सकता । किन्तु ऐसी चिट्ठी जब उसके हाथमें आकर पहुँची है, तब समाजके बीच इस सम्बन्धमें निस्सन्देह बहुत अधिक आलोचना हो गई है । इससे समाजके आदमियोंके निकट ललिता कितनी और कैसी अपमानित हो रही है, यह सोचकर विनयका मन चंचल और दुखी हो उठा ।

विनय इस तरह चञ्चल होकर जिस समय बरामदेमें टहल रहा था, उसी समय देखा, हारान बाबू रास्तेमें चले आ रहे हैं । उसी समय उसकी समझमें आगया कि वह उसीके पास आ रहे हैं । और, उस गुमनाम पत्रके पीछे एक बहुत बड़ी हलचल मौजूद है, यह भी उसने निश्चय जाना ।

और दिनकी तरह विनयने अपनी स्वभाव सिद्ध प्रगल्भना नहीं प्रकट की । वह हारानको कुर्सी पर बिठा कर चुपचाप उनके बोलनेकी प्रतीक्षा करने लगा ।

हारानने कहा—विनय बाबू, आप तो हिन्दू हैं न ?

विनय — हाँ, हिन्दू तो हूँ ही ।

हारान—मेरे इस प्रश्नसे नाराज न होएगा । अनेक समय ऐसा होता है कि हम लोग चारों ओरकी अवस्था पर विचार किये बिना अंधे होकर चलते हैं—इससे संसारमें दुःखकी सृष्टि होती है । ऐसी जगह पर यदि कोई ये सब प्रश्न उठावे कि हम क्या हैं, हमारी सोमा कहाँ है, हमारे आचरण का फल कहाँ तक पहुँचता है, तो वह अप्रिय सत्य होने पर भी प्रश्नकर्ताको अपना मित्र ही समझियेगा ।

विनयने हँसनेकी चेष्टा करके कहा—वृथा आप इतनी भूमिका बाँध रहे हैं । अप्रिय प्रश्नसे पागल हो उठकर किसी प्रकार अत्याचार करनेका स्वभाव ही मेरा नहीं है । आप बेखटके, अपनेको निरापद समझकर मुझसे सब तरहके प्रश्न कर सकते हैं ।

हारान०—मैं आपके ऊपर किसी इच्छाकृत अपराधका दोषारोपण नहीं करना चाहता । किन्तु विवेचनाकी त्रुटिका फल भी विगम विगमय हो उठ सकता है, यह बात आपसे अगर न भी कही जाय तो, उसे आप खुद समझ सकते हैं ।

विनयने मन-ही-मन विरक्त हो कर कहा—जिसके कहनेकी आवश्यकता नहीं है, उसे भलेही आप न कहें अब असल बात जो हो, वही कहिये ।

हारान०—आप जब हिन्दू-समाज में हैं, और उस समाज को छोड़ना भी जब आपके लिये असंभव है, तब परेश बाबूके परिवारके भीतर क्या आपका इस तरह आना-जाना उचित है, जिससे समाजमें उनको लड़कि यों के सम्बन्धमें कोई अप्रिय बात उठ सके ?

विनयने कुछ देर गम्भीर होकर और चुप रहकर कहा—देखिये पानू, बाबू समाजके आदमी किस घटनासे कौन बात पैदाकर लेंगे यह बहुत कुछ इनके अपने स्वभाव पर ही निर्भर है । उसकी सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर मैं नहीं ले सकता । परेश बाबू की लड़कियोंके सम्बन्धमें भी यदि

आप लोगोंके समाजमें किसी प्रकार की आलोचना का ठठना सम्भव हो, तो उसमें उन लड़कियोंके लिये लज्जाका विषय उतना नहीं है जितना कि आप लोगोंके समाजके लिये ।

हारान०—किसी कुमारीको उसकी माँ का साथ छोड़कर अगर बाहरी मर्दके साथ अकेले एक जहाज पर भ्रमण करनेके लिये प्रस्थित दिया जाय, तो उस सम्बन्ध में किस समाज को आलोचना करने का अधिकार नहीं है यह मैं आपसे पूछता हूँ ।

विनय०—बाहर की घटनाको भीतरके अपराधके साथ आप लोग भी अगर एकही आसन दें, तो फिर हिन्दू-समाज को छोड़कर आप लोगोंके ब्राह्म समाजमें आने की क्या जरूरत थी ! सो वह चाहे जो हो पानू बाबू इन सब बातोंको उठाकर बहस करनेकी कोई जरूरत मैं नहीं देखता । मेरा क्या कर्त्तव्य है, सो मैं खुद सोचकर ठीक करूँगा । आप इस सम्बन्ध में मेरी कुछ सहायता न कर सकेंगे ।

हारान०—मैं आपसे अधिक कुछ नहीं कहना चाहता मेरा अन्तिम वक्तव्य यही है कि आप को इस समय परेश बाबूके परिवारसे दूर रहना होगा । नहीं तो अत्यन्त अन्याय होगा । आप लोगोंने परेश बाबूके भीतर प्रवेश करके केवल एक अशांति पैदा कर दी है । आप लोगों को यह खबर नहीं है कि आपने उन लोगोंका कैसा अनिष्ट किया है ।

हारान बाबूके चले जाने पर विनयके मनके भीतर एक वेदना शूलकी तरह चुभने लगी ।

(५०)

जिस समय विनयके घर पर हारान बाबूका आगमन हुआ, ठीक उसी समय अविनाशने आनन्दमयीके पास जाकर खबर दी कि विनयके साथ ललिताका ब्याह पक्का हो गया ।

आनन्दमयीने कहा—यह बात कभी सच नहीं है ।

अविनाश—क्यों सच नहीं है ? विनयके लिए क्या यह असम्भव है ?

आनन्द०—सो मैं नहीं जानती, लेकिन इतनी बड़ी बात विनय कभी मुझसे छिपा न रखता ।

अविनाश ने बारम्बार यह कहा कि उसने यह खबर ब्राह्म-समाजके एक खास आदमीसे पाई है, और वह पूर्ण विश्वास योग्य है । विनयका ऐसा शोचनीय परिणाम अवश्य ही होगा—इस बातको वह बहुत पहलेसे ही जानता था, यहाँ तक कि गोराको भी उसने इस बारेमें सावधान कर दिया था, यही आनन्दमयीके निकट घोपणा करके अविनाश बड़े आनन्द से नीचेकी दालानमें महिमको भी यह शुभ समाचार सुना गया ।

आज विनय जब आया, तब उसका मुँह देख कर ही आनन्दमयी समझ गई कि उसके अन्तःकरणमें एक विशेष दुःख उत्पन्न हुआ है । उसे भोजन कराकर, अपनी कोठरीमें बुला ले जाकर आनन्दमयीने बिठलाया; और पूछा—विनय, तुझे क्या हुआ है, बता तो ?

विनय—माँ, यह चिट्ठी पढ़ कर देखो ।

आनन्दमयीके पत्र पढ़ चुकने पर विनयने कहा—आज सवेरे हारान बाबू मेरे डेरमें आये थे । वह मुझे बहुत डाँट फटकार गये हैं ।

आनन्द०—क्यों ?

विनय—वह कहते हैं, मेरा आचरण उन लोगोंके समाजमें परेश बाबूकी लड़कियोंकी निन्दाका कारण बन गया है ।

आनन्दमयी — लोग जो कहते हैं कि ललिताके साथ तेरा ब्याह ठीक हो गया है, इसमें तो मुझे निन्दाका विषय कुछ भी नहीं देख पड़ता !

विनय—विवाह अगर सम्भव होता तो बेशक कुछ निन्दाकी बात न होती । किन्तु जहाँ जिसकी कोई सम्भावना नहीं है, वहाँ इस तरहकी अफवाह उड़ाना कितना बड़ा अन्याय है खास कर ललिताके बारेमें इस तरहकी अफवाह उड़ाना अत्यंत नीचता है—बढ़ी ही बुजदिली है !

आनन्द०—तुझमें अगर कुछ भी पौरुष हो, तो इस निन्दा और अपमानके हाथसे तू अनायास ही ललिताकी रक्षा कर सकता है ।

विनयने विस्मित होकर कहा—किस तरह माँ ?

आनन्दमयी—किस तरह क्या ? ललितासे ब्याह करके !

विनय०—क्या कहती हो माँ ! अपने विनयको क्या तुम समझती हो, सो तो मेरी कुछ समझमें नहीं आता ! तुम सोचती हो, विनय अगर एक बार केवल कह दे कि मैं ब्याह करूँगा, तो जगत्में उसके ऊपर बात ही नहीं उठ सकती—केवल मेरे इशारेकी अपेक्षा में ही सब लोग नजर लगाये बैठे हैं !

आनन्द०—तुझे तो इतनी बातें सोचनेकी जरूरत मैं नहीं देखती । तू अपनी तरफसे जो कुछ कर सकता है उतना ही करनेसे तू अपने फर्जसे छुट्टी पा जायगा । तू कह सकता है कि मैं ब्याह करनेको राजी हूँ ।

विनय०—मैं अगर ऐसी असंगत बात कहूँगा, तो क्या वह ललिताके लिये अपमानजनक न होगी ?

आनन्द०—उसे तू असंगत क्यों कहता है ! तुम दोनोंके ब्याहकी अफवाह जब उड़ चुकी है, तब निश्चय ही वह संगत समझ कर ही उड़ाई गई है । मैं तुमसे कहती हूँ कि तुम्हें कुछ संकोच न करना होगा ।

विनय—लेकिन माँ, गोराका ख्याल भी तो करना है ।

आनन्दमयीने दृढ़ स्वरमें कहा—ना, भैया इस मामले में गोराके ख्यालकी जरूरत ही नहीं है । मैं जानती हूँ वह नाराज़ होगा—क्रोध

करेगा, और मैं नहीं चाहती कि तुझ पर वह क्रोध करे। लेकिन तू क्या करेगा ! ललिताके ऊपर अगर तुझे श्रद्धा हो, तो उसके सम्बन्धमें सदाके लिये समाजमें एक अपमान रख छोड़ना तुझसे हो ही नहीं सकता—तू ऐसा होने ही नहीं दे सकता।

विनयने कहा—मां, तुमको जितना ही देखता हूँ, उतना ही विस्मित हो जाता हूँ ! तुम्हारा मन एकदम इस तरह साफ़ कैसे हुआ ! तुम्हें क्या पैरोंसे नहीं चलना पड़ता—ईश्वरने क्या तुमको पङ्ख दे रखे हैं ? तुम संसार पथमें चलनेमें कहीं नहीं अटकती !

आनन्दमयीने हँसकर कहा—ईश्वर ने मेरे अटकने की कोई सामग्री नहीं रखी ! मेरी सारी राह एकदम साफ़ कर दी है ?

विनय—लेकिन, मा, मैं मुझसे चाहे जो कहूँ, मेरा मनतो अटक जाता है ! इतना समझता-बूझता हूँ, पड़ता सुनता हूँ, बहस करता हूँ, मगर अकस्मात् अचानक देख पाता हूँ कि मेरा मन बिल्कुल मूर्खही रह गया है।

इसी समय महिम्ने वहाँ पैर रखते ही विनयसे ललिताके सम्बन्ध में ऐसे अत्यन्त उजडुपन और रूखेपनसे प्रश्न करना शुरू कर दिया कि विनयका हृदय सङ्कोचसे पीड़ित हो उठा। वह आत्म दमन करके सिर झुकाकर चुपचाप कुछ उत्तर न देकर बैठा रहा। तब महिम सब पलोंके प्रति तीक्ष्ण आघात करके अत्यन्त अपमान करने वाली कुछ बातें कहकर वहाँसे चला गया।

विनय चारों ओर इस तरह लाँछना की मूर्ति देखकर सन्नाटेमें आकर बैठ रहा। आनन्दमयीने कहा—जानता है विनय, अब तेरा क्या कर्त्तव्य है ?

विनयने सिर उठाकर उनके मुँहकी ओर देखा। आनन्दमयीने कहा—तुझे उचित है कि तू एक बार परेश बाबूके पास जा। उनके साथ बातचीत करनेसे ही सब साफ़ हो जायगा।

सुचरिताने अचानक आनन्दमयी को देखकर विस्मित होकर कहा—
मैं तो आपही के पास जानेके लिये तैयार हो रही थी ।

आनन्दमयीने हंसकर कहा—तुम मेरे पास आने को तैयार हो रही हो, यह तो मैं नहीं जानती थी, किन्तु तुम जिस बातके लिये आनेकी तैयार हो रही थी, उसकी खबर पाकर मुझसे रहा न गया, मैं चली आई ।

आनन्दमयी को खबर मिलने की बात सुनकर सुचरिता को सचमुच बड़ा आश्चर्य हुआ । आनन्दमयीने कहा—बेटी, विनयकी मैं अपने लड़के ही की तरह जानती हूँ । उसी विनयके सम्पर्कसे उस समय भी, जब तुम को देखा सुना नहीं था, मैंने तुम्हें मन ही-मन कितनी ही असीसे दी है । तुम लोगोंके साथ कोई अन्याय होनेकी बात सुनकर भला मैं किम तरह स्थिर रह सकती हूँ ? मेरे द्वारा तुम लोगों का कुछ उपकार हो सकेगा या नहीं, सो तो नहीं जानती; किन्तु मन न जाने कैसा हो उठा, इसीसे तुम लोगोंके पास दौड़ी आई हूँ । बेटी, विनयकी ओरसे कुछ अन्याय हुआ है क्या ?

सुचरिता—कुछ भी नहीं । जिस बातको लेकर खूब हलचल मची हुई है, उसके लिये जल्लिता ही जिम्मेदार हैं । जल्लिता अचानक किसीसे कुछ कहे-सुने बिना ही स्टीमर पर चली आवेंगी, इसकी विनय बाबू ने कल्पना भी नहीं की थी । मगर लोग इस ढंगसे इस बात को उठा रहे हैं, जैसे वे दोनों जने गुस्से से इसके लिये सलाह कर चुके थे । उधर जल्लिता ऐसी तेजस्विनी लड़की है कि इसकी कुछ भी सम्भावना नहीं कि वह प्रतिवाद करे, या किसी तरह समझाकर सब खुलासा हाल किसीसे कहे कि असलमें किस तरह क्या घटना हुई थी ।

आनन्द०—इसका तो कुछ एक उपाय करना ही होगा। इन सब बातों को सुननेके बादसे विनयके मनमें तो रत्तीभर भी शान्ति नहीं है। वह तो अपने को ही अपराधी माने बैठा है।

सुचरिताने अपना लाल हो रहा मुख जरा नीचे करके—कहा अच्छा, आप क्या समझती हैं कि विनय बाबू...।

आनन्दमयीने संकोच पीड़ित सुचरिता को अपनी बात पूरी करने न देखकर कहा—दखो बेटी, मैं तुमसे कहती हूँ ललिताके लिये विनयको जो करने को कहोगी, वह वही बिला उभ्र करेगा। विनयको मैं उसके बचपनसे देखती आती हूँ। वह अगर एक बार आत्म समर्पण कर दे, तो फिर कुछ भी अपने हाथमें नहीं रख सकता सर्वस्व ही समर्पण कर देता है। इसी कारण मुझे बहुत भय रहता है कि कहीं उसका ऐसी जगह मन न जाय, जहाँसे उसे कुछ भी फेर पाने की कोई आशा न की जा सकती हो !

सुचरिताके मनके उपरसे एक बोझ हट गया। उसने कहा—ललिता के सम्मतिके लिये आप को कुछ भी चिन्ता न करनी होगी—मैं उसका सब हाल जानती हूँ। किन्तु विनय बाबू क्या अपना समाज छोड़ने को राजी होंगे ?

आनन्द—समाज शायद उसे त्याग कर सकता है, किन्तु वह पहले से ही गले पड़कर क्यों समाज त्याग करने जायगा बेटी, इसका क्या कुछ प्रयोजन है ?

सुचरिता—आप क्या कहती हैं माँ ? विनय बाबू हिन्दू समजामें रहकर ब्राह्म धरकी लड़की व्याहेंगे ?

आनन्द—वह अगर ऐसा करनेको राजी हो तो उसमें तुम लोगोंको क्या आपत्ति है ?

सुचरिता को अत्यन्त गढ़बढ़भाला जान पड़ा उसने कहा—मेरी तो समझ में नहीं आता कि ऐसा किस तरह सम्भव होगा !

आनन्द—मुझे तो यह खूब ही सहज जान पड़ता है बेटी । देखो, मेरे घरमें जो नियम चलता है, उस नियम को मानकर मैं नहीं चल पाती और इसीलिये लोग मुझे क्रिस्तान भी कहते हैं । किसी काम-काजके समय मैं अपनी इच्छासे ही अलग रहती हूँ । तुम सुनकर हंसोगी बेटी, गोरा मेरी दाजानमें पानी तक नहीं पीता । किन्तु इसीसे मैं यह क्यों कहूँगी कि यह घर मेरा घर नहीं है यह समाज मेरा समाज नहीं है । मैं तो कह ही नहीं सकती । सब निन्दा और अपमान सिर आँखों पर धारण कर मैं यही घर और यही समाज लिये हुए हूँ—और उसमें मेरा तो कुछ काम नहीं अटकता, मुझे तो कुछ कठिनाई नहीं होती है । अगर इस तरह अटकाव हो कि आगे काम न चल सके तो फिर ईश्वर जो राह दिखावेंगे वही राह पकड़ूंगी । किन्तु जो मेरा है, उसे अंत तक अपना ही कहूँगी । हाँ वे अगर मुझे स्वीकार न करें, तो उसकी बात वे जाने ।

सुचरिता की समझमें अब भी मामला साफ़ नहीं हुआ । उसने कहा—मगर देखिये, ब्राह्म-समाज का जो मत है, विनय बाबू का अगर...

आनन्द—उसका मत भी तो उसी तरह का है । ब्राह्म-समाज का मत तो दुनियासे निराला नहीं है । तुम्हारे पत्रोंमें जो सब उपदेश छपते हैं, उन्हें तो विनय अक्सर पढ़कर सुनाया करता है । मुझे तो किसी जगह फर्क नहीं समझ पड़ता ।

इसी समय 'सूची दीदी' कहकर कोठरीमें प्रवेश करते ही आनन्द-मयी को देखकर ललिता लज्जासे लाल हो उठी । उसने सुचरिता का मुख देखकर ही समझ लिया कि अब तक उसी की बातें हो रही थीं । कोठरीसे भाग सकनेसे ही उसकी जान जैसे बचती ; किन्तु उस समय वहाँसे भाग छड़े होने का उपाय न था ।

आनन्दमयी कह उठी—आओ बेटी ललिता, आओ !

यह कह कर हाथ पकड़ कर उसे ज़रा विशेष रूपसे पास खींच कर आनन्दमयीने बिठलाया। जैसे ललितता उनकी कुछ विशेष रूपासे अपनी चीज़ हो उठी है।

अपनी पहले बात चीतके सिलसिलेमें ही आनन्दमयी सुचरितासे कहने लगी—देखो बेटी, भलेके साथ बुढ़का मिलना ही सबसे कठिन है, किंतु तो भी पृथ्वी पर उनका भी मिलन देखा जाता है, और उससे भी सुख दुःखके साथ चलता जाता है। यह भी नहीं है कि सब समय सर्वथा उसका फल बुरा ही हो, भलाई भी होती है। यह भी जब सम्भव हुआ, तब केवल मत का ज़रा फर्क जहाँ है, वहाँ उस ज़रासे फर्कके लिये दो आदमी, जिसका हृदय मिल चुका है, क्यों नहीं मिल सकते—यह तो मेरी समझ में नहीं आता। मनुष्यका असल मेल क्या मत पर ही निर्भर है ?

सुचरिता सिर झुकाये बैठी रही। आनन्दमयीने कहा—तुम्हारा ब्राह्म-समाज भी क्या मनुष्यके साथ मनुष्यको मिलने न देगा ? ईश्वरने भीतर जिनको एक कर दिया है उनको तुम्हारा समाज क्या बाहरसे अलग कर रखेगा ?

आनन्दमयी जो इस विषयको लेकर इतने ऐसे आंतरिक उत्साहके साथ आलोचना कर रही थीं, सो क्या केवल ललितताके साथ विनयके व्याहकी बाधा दूर करने हीके लिये सुचरिताके मनमें इस सम्बन्धमें कुछ दुविधाके भावका अनुभव करके वह दुबधा दूर करनेके लिए उनका समग्र मन जो उद्यत हो उठा, इसके भीतर क्या और एक उद्देश्य नहीं था ? सुचरिता अगर ऐसे संस्कारमें फंसी रहे, तो उससे किसी तरह काम नहीं चलेगा। विनयके ब्राह्म हुये बिना व्याह न हो सकेगा, यही अगर सिद्धांत हुआ, तो बड़े दुःखके समय भी आनन्दमयी जो इधर कुछ दिनसे जिस आशाको प्रश्रय देकर खड़ा कर रही थीं वह मिट्टी में मिल जायगी ! आज ही विनयने यह प्रश्न उनसे पूछा था कि माँ, ब्राह्म-समाजमें क्या नाम लिखाना होगा ? यह भी क्या स्वीकार करूँगा ?

आनन्दमयीने इसके उत्तरमें कहा था —ना, ना, इसकी तो कुछ जरूरत नहीं देखती ।

घिनयने पूछा — अगर वे लोग इसके लिए जिद्द करें —जोर डालें ?

आनन्दमयीने देर तक चुप रह कर कहा —ना, यहाँ पर जोर नहीं डाला जा सकेगा—जोर नहीं चलेगा ।

सुचरिता आनन्दमयीकी इस आलोचनामें शरीक नहीं हुई—वह चुपके बैठी रही । उन्होंने समझा सुचरिताका मन अब भी अनुमोदन नहीं करता ।

आनन्दमयी मनमें सोचने लगीं—मेरा मन जो समाजके सब संस्कारों को छोड़ सका है, सो इसी गोराके स्नेहसे । तो क्या गोराके ऊपर सुचरिता का मन नहीं आया ? अगर मन आता, तो वह छोटी सी बात ही इतनी बड़ी न हो उठती ।

आनन्दमयीका मन जरा उदास हो गया । गोराके जेलखानेसे छूटनेमें और केवल दो दिन बाकी है । वह अपने मनमें सोच रही थीं कि उसके लिये एक सुख का क्षेत्र प्रस्तुत हो रहा है । अबकी चाहे जिस तरह हो गोरा को बन्धनमें बांधना ही होगा, नहीं तो वह कहां, किस विपत्तिमें जा पड़ेगा, इसका कुछ ठिकाना नहीं । किन्तु गोराको बांध लेना तो ऐसी वैसी लड़की का काम नहीं है । इधर हिन्दू-समाज की किसी लड़कीके साथ गोराका व्याह करना भी अन्याय होगा । इसी कारण इतने दिन तक अनेक कन्याके ब्याह की चिन्तासे पीड़ित पिताओं की आर्जी उन्होंने एक दम नामंजूर कर दी थी । गोरा कहता है कि मैं ब्याह न करूँगा । उन्होंने माँ होकर एक दिन भी इसका प्रतिवाद नहीं किया । इससे लोगोंके बड़ा आश्चर्य होता था । अबकी गोराके दो एक लक्षण देखकर वह मन-ही-मन उफुल्ल हो उठी थीं । इसी कारण सुचरिताके मौन-विरोध ने उन्हें बड़ी चोट पहुंचाई । किन्तु सहज ही हाल छोड़ने वाली स्त्री नहीं है । मनमें कहा —अच्छा देखा जायगा ।

परेश बाबूने कहा—विनय, तुम एक सङ्कटसे ललिताका उद्धार करने के लिये ऐसा दुःसाहसिक काम करो, यह मैं नहीं चाहता। समाजकी आलोचनाका विशेष मूल्य नहीं है। आज जिस विषय पर तरह-तरहकी गप्पें उड़ रही हैं दो दिनके बाद वह किसीको याद भी न रहेगा।

ललिताके प्रति कर्तव्य पावन हीके लिये विनय कटिबद्ध होकर आया था और इस विषयमें उसे कुछ भी सन्देह न था। वह जानता था कि इस विवाहसे समाजमें विरोध उपस्थित होगा। और इससे भी बढ़कर उसे यह भय था कि गोरा बहुत क्रोध करेगा। किन्तु केवल कर्तव्य बुद्धिकी दुहाई देकर इन सब अप्रिय कल्पनाओंको उसने मनसे हटा दिया था। ऐसी अवस्थामें परेश बाबूने जब एकाएक उसकी कर्तव्य-बुद्धि पर असम्मति प्रकटकी तब विनयने उसे किसी तरह काटना न चाहा।

उसने कहा—मैं आपके स्नेह-ऋणको कभी चुका न सकूँगा। मेरे कारण यदि आपके घरमें दो दिनके लिये भी कोई तनिक सी अशान्ति हो तो वह मैं कभी नहीं सह सकता।

परेशबाबू—विनय, तुम मेरे कहनेका आशय ठीक-ठीक नहीं समझते। मेरे ऊपर जो तुम्हारी श्रद्धा है उससे मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ। किन्तु उस श्रद्धाको शिरोधार्य करके कर्तव्य पावनके अभिप्रायसे जो तुम मेरी कन्यासे व्याह करनेको प्रस्तुत हुए हो यह मेरी कन्याके लिये गौरवकी बात नहीं। इसीलिये मैंने तुमसे कहा था कि कोई ऐसा भारी सङ्कट नहीं, जिसके लिए तुम्हें कुछ त्याग स्वीकार करनेकी आवश्यकता हो।

जो हो, विनयको कर्तव्यके हाथसे छुटकारा मिला। किन्तु पिंजरेका द्वार खुला पानेसे पक्षी जैसे झटपट उड़जाता है वैसे विनयका मन निकृष्ट के खुले मार्ग पर दौड़ न सका। कर्तव्य-बुद्धिको उपलक्ष्य करके वह

बहुत दिनोंसे संयमके बन्धनको अनावश्यक समझ उसे तोड़ बैठा है। जहाँ उसका मन ढरकर एक पग आगे बढ़ता और फिर अपराधीकी भाँति पीछे हट आता था, वहाँ अब वह निर्भय हो डेरा ढाल बैठा है। अब उसको वहाँसे लौटाना कठिन है। जो कर्तव्य बुद्धि उसे घसीटकर यहाँ तक ले आई है वह कह रही है कि अब ज़रूरत नहीं, चलो, यहाँसे लौट चलो। मन कहता है, नहीं तुमको ज़रूरत नहीं है तो तुम लौट जाओ; मैं यहीं रहूँगा।

परेश बाबूने जब कोई भाव छिपा रखनेका अवसर न दिया तब विनयने कहा—आप ऐसा न समझें कि मैं किसी कर्तव्यके अनुरोधसे यह कष्ट स्वीकार करना चाहता हूँ। यदि आप सम्मति दें तो मेरे लिये इससे बढ़कर और सौभाग्य क्या हो सकता है। केवल मुझे भय है, पीछे—

सत्यप्रिय परेश बाबूने सझोच रहित होकर कहा—तुम जिस बातका भय करते हो उसकी कोई बुनियाद नहीं। मैंने सुचरितासे सुना है, ललिता का मन तुमसे विमुख नहीं है।

विनयके मनमें एक आनन्दकी विद्युत् चमक गई। ललिताके मनकी एक गूढ़ बात सुचरितासे प्रकट हुई है। कब, कैसे प्रकट हुई? दोनों सखियोंमें इस तरहके गुप्त भाषण होनेका रहस्यमय सुख, विनयके हृदयमें तीव्र आघात पहुंचाने लगा।

विनयने कहा—यदि आप मुझे योग्य समझते हैं तो इससे बढ़कर मेरे लिये आनन्दकी बात और क्या हो सकती है।

परेश बाबू—तुम ज़रा ठहरो, मैं ऊपरसे हो आऊँ।

वे वरदासुन्दरीसे सलाह लेने गये। वरदासुन्दरीने कहा—विनयको ब्राह्म-धर्मकी दीक्षा लेनी होगी।

परेश बाबू—हाँ, वह तो लेनी ही होगी।

वरदासुन्दरी—यह पहले ही ठीक हो जाना चाहिए। विनयको यहीं बुलाओ न।

ऊपर आने पर विनयसे वरदासुन्दरीने कहा—तो दीक्षाका दिन निश्चित हो जाय ।

विनयने कहा—दीक्षाकी क्या आवश्यकता है ?

वरदासुन्दरी—आवश्यकता नहीं है ? यह क्या कहते हो ? दीक्षा ग्रहण किये बिना ब्राह्म समाजमें तुम्हारा ब्याह कैसे होगा ?

विनय कुछ न बोला, सिर नीचा करके बैठा रहा । विनय हमारे घर में विवाह करने को राजी हुआ है, यह सुनकर परेश बाबूने समझ लिया था कि वह दीक्षा ग्रहण करके ही ब्राह्म समाजमें प्रवेश करेगा ।

विनयने कहा—ब्राह्म-समाजके धार्मिक मत पर तो मेरी श्रद्धा है और अब तक मेरा व्यवहार भी उसके विरुद्ध नहीं हुआ है । तो फिर विरोध भावसे दीक्षा लेनेकी जरूरत क्या ?

वरदासुन्दरीने कहा—यदि मत मिलता है तो दीक्षा लेने ही में क्या रति है ?

विनयने कहा—मैं एकदम हिन्दू-समाजको छोड़ दूँ, यह मुझसे न हो सकेगा ।

वरदासुन्दरीने कहा—तो इस बातकी आलोचना करना ही आपके लिये अनुचित हुआ है । क्या आप हम लोगोंका उपकार करने हीके लिए, दया करके, मेरी कन्याके साथ ब्याह करनेको राजी हुए हैं ?

विनयको इस बातकी बड़ी चोट लगी । उसने देखा, उसका प्रस्ताव सचमुच इन लोगोंके लिए अपमानजनक हो उठा है ।

शिष्ट विवाह (सिविल मैरिज) का आईन पास हुए प्रायः एक वर्ष हुआ था । उस समय गोरा और विनयने समाचार पत्रोंमें इस कानूनके विरुद्ध तीव्र समलोचना की थी । आज उस शिष्ट (सिविल) विवाहको स्वीकार कर विनय अपने को हिन्दू न माने, यह बड़ी मुश्किल बात है ।

विनय हिन्दू-समाजमें रहकर ललितासे ब्याह करे, यह बात परेशबाबू की आत्माने स्वीकार न की । लम्बी साँस लेकर विनय उठ खड़ा हुआ और परेश बाबू तथा वरदासुन्दरीको प्रणाम करके कहा—मुझे माफ़

कीजिए। मैं अब इस बातको बढ़ाकर अपराधी बनना नहीं चाहता ! यह कहकर वह घरसे चला गया ।

सीढ़ीके पास आकर उसने देखा, सामने बरामदेके एक कोनेमें छोटा डेस्क लेकर ललिता अकेली बैठी चिट्ठी लिख रही है। पैरोंकी आहट सुनते ही ललिताने आँख उठाकर विनयके मुँहकी ओर देखा। उसकी क्षणिक दृष्टिने विनयके चित्तको चञ्चल कर दिया। विनयके साथ ललिता का कुछ नया परिचय नहीं है। कई बार उसने उसके मुँहकी ओर देखा है। किन्तु आज उसकी दृष्टिमें कुछ और ही रहस्य भरा था। ललिताके मनकी जो बात सुचरिता जान गई है, वह आज ललिताके कण्ठ-भरे नेत्रोंमें उमड़कर सजल मेघकी भाँति विनयको दिखाई दी। विनयकी भी उस ओर टकटकी बँध गई। वह बड़े कष्टसे अपने मनकी गतिको रोककर ललितासे कुछ सम्भाषण किये बिना सीढ़ीसे उतर कर चला गया।



गोराने जेलसे छूटकर देखा कि परेश बाबू और विनय फाटकके बाहर उसकी प्रतीक्षामें खड़े हैं ।

परेश बाबूको शान्ति और स्नेहसे भरा स्वाभाविक शान्त मुँह देखकर उसने जैसी प्रसन्नता और भक्तिसे उनके चरणोंकी धूल सिरमें लगाई वैसी भक्ति या प्रसन्नता इसके पूर्व उसने कभी नहीं दिखाई थी । परेश बाबू ने गोरामें बड़े प्यारसे गले लगाया ।

गोराने हँसकर विनयका हाथ पकड़ कर कहा—विनय, स्कूलसे आरम्भ कर कालेज तक हम तुम दोनोंने एक साथ शिक्षा प्राप्तकी, सदा एक साथ रहे । किन्तु इस विद्यालयमें मैं तुम्हें छोड़कर अकेला चला आया ।

विनय न तो इसपर हँस ही सका और न कोई बात ही बोल सका ।

गोराने पूछा—माँ कैसी हैं ?

विनय—अच्छी तरह हैं ।

परेश बाबूने कहा—आओ ! तुम्हारे लिये देरसे गाड़ी खड़ी है ।

तीनों गाड़ी में सवार होकर ढक पर पहुँचे फिर स्टीमरके द्वारा चल करके दूसरे दिन सबेरे सबके सब कलकत्ते पहुँचे । गोरामें कई महीनो में घर आनेकी बात सुन पहले ही से उसके घरके फाटक पर दर्शकोंकी खासी भीड़ जम गई थी ! किसी तरह उन लोगोंके हाथ से छुटकारा पाकर गोरा भीतर आनन्दमयीके पास जा पहुँचा । आनन्दमयी आज खूब सबेरे स्नानादिक कर्म करके उससे मिलनेके लिए प्रस्तुत हो बैठी थी । गोराने उनके पैरोंमें गिरकर प्रणाम किया आनन्दमयीके आँखोंसे आँसू बहने लगे । इतने दिन जिन आँसुओंको वह रोके हुए थी उन्हें आज किसी तरह न रोक सकी ।

कृष्णदयाल गङ्गास्नान करके उषोहि घर पर आये त्योंही गोरा उनसे मिलने गया। दूर ही से उनको प्रणाम किया। कृष्णदयाल संकुचित हो कुछ दूर एक आसन पर बैठे। गोराने कहा—पिताजी, मैं प्रायश्चित्त करना चाहता हूँ।

कृष्णदयाल—इसका तो मैं कोई प्रयोजन नहीं देखता। तुमको यह सब करना न होगा। मैं इसमें अपनी सम्मति नहीं दे सकता।

आनन्दीमयीने चौकेने गोरा और विनयका आसन रखवाया।

भोजन करके जब दोनों मित्र छतके ऊपरवाली निर्जन कोठरीमें जा बैठे तब उन दोनोंमें पहले कौन क्या बात बोले, इसी का कुछ देर मन ही मन विचार होता रहा। इस एक महीनेके भीतर विनयके संबन्ध में जो एक नई बात उठ खड़ी हुई है, वह आज गोरा से कैसे कहे यह उसकी समझ में न आया। गोरा परेश बाबूके घरके लोगों का कुशल-समाचार पूछना चाहता था, परन्तु कुछ न पूछ सका। विनय स्वयं उसकी चर्चा करेगा, यह सोच वह उसकी अपेक्षा कर रहा था। हाँ, उसने परेश बाबूसे उनकी लड़कियोंका कुशल अवश्य पूछा था। किन्तु वह केवल शिष्टताका प्रश्न था। “वे सब अच्छी तरह हैं” इस समाचारसे भी कुछ अधिक व्योरेवार हाल जानने के लिए उसका मन विशेष उत्सुक था।

विनय सावधान होकर बैठा और बोला—इधर एक अनिवार्य घटनासे ललिताके साथ मेरा सम्बन्ध बेतरह उलझ गया है। यदि मैं उससे ब्याह करूँगा तो बहुत दिनों तक उसे समाज में अन्याय और अमूलक अपमान सहना पड़ेगा।

गोरा—कैसे क्या उलझ गया है, यह सुना चाहता हूँ।

विनय—इसके भीतर बहुत बातें हैं, जो क्रमशः तुमसे कहूँगा। किन्तु इस बातको तुम अभी मान लो।

गोरा—अच्छा, मैं मान लेता हूँ। किन्तु इस सम्बन्धमें मेरा कहना यही है कि यदि घटना अनिवार्य है तो उसका दुःख भी अनिवार्य समझो।

यदि समाजमें ललिताको अपमान का दुःख भोगना ही बड़ा है तो उसका कोई उपाय नहीं ।

विनय—किन्तु उस दुःख का निवारण करना तो मेरे हाथ में ? ।

गोरा—है तो अच्छा ही है । किन्तु यह इठ करनेसे तो न होगा । कोई अन्य उपाय न रहने से चोरी करना या खून करना भी तो मनुष्य के हाथ में है किन्तु यह क्या कोई कर्त्तव्य है ? ललिताके साथ विवाह करके तुम उसके प्रति कर्त्तव्य करना चाहते हो, क्या यही तुम्हारे कर्त्तव्य की इतिश्री है ? अपने समाजके प्रति तुम्हारा कोई कर्त्तव्य नहीं ?

विनय—मालूम होता है, इस जगह तुम्हारे साथ मेरा मत न मिलेगा । मैं व्यक्तिकी ओर आकृष्ट होकर समाजके विरुद्ध कोई बात नहीं बोलता । मैं कहता हूँ, व्यक्ति और समाज दोनोंके ऊपर एक धर्म है । उपाके ऊपर दृष्टि रखकर चलना होगा । जैसे व्यक्तिका बचाना मेरा परम कर्त्तव्य नहीं वैसे समाजका मन रखना भी मेरा परम कर्त्तव्य नहीं । एक मात्र धर्मकी रक्षा करना ही मेरा परम कर्त्तव्य है ।

गोरा—जो धर्म व्यक्तिगत नहीं, समाजगत नहीं, उसको मैं धर्म नहीं मानता । विनयकी आंखें रङ्ग गई । उसने कहा—मैं मानता हूँ । व्यक्ति और समाजकी भित्ति पर धर्म नहीं है, धर्मकी दीवार पर ही व्यक्ति और समाज स्थित है । समाज जिसे चाहे उसीको यदि धर्म मान लिया जाय तो यह समाजका मानों एक तरहसे नाश करना हुआ । यदि समाज मेरी किसी धर्म-सङ्गत स्वाधीनतामें बाधा डाले तो इस अनुचित बाधाको न मानकर चजने ही मैं समाजके प्रति कर्त्तव्य पालन कहा जायगा । यदि ललितासे मेरा ब्याह करना अन्याय नहीं है, वरंच उचित है, तो ऐसी अवस्थामें समाज प्रतिकूल होनेके कारण उससे निरस्त हो जाना ही मेरे लिए अर्थम होगा ।

गोरा—न्याय अन्याय क्या अकेले तुम्हारे ही ऊपर निर्भर है ? इस विवाहके द्वारा तुम अपनी भावी सन्तानोंको कहाँ ले जाओगे, इस बातको भी तो एक बार सोचो ।

विनय — इसी तरहके सोच विचारसे मनुष्य सामाजिक अन्याय को चिरस्थायी कर डालता है। साहबकी जात खाकर जो किरानी कई दिनों तक अपमान सहन करता है उसे तुम दोष क्यों देते हो ? वह भी तो अपनी सन्तानकी बात सोचकर ही वैसा करता है।

गोरा — मैं तुम्हारे साथ वितण्डावाद करना नहीं चाहता। इसमें तर्ककी बात कुछ नहीं है। इसमें केवल हृदयके द्वारा एक समझनेकी बात है। ब्राह्म-बालिकाके साथ ब्याह करके तुम देशके सर्व साधारण लोगोंसे अपनेको अलग करना चाहते हो, यही मेरे लिए अत्यंत खेदका विषय है। तुम यह काम कर सकते हो, पर मुझसे तो ऐसा काम कभी नहीं हो सकता। इसी जगह मुझमें और तुममें प्रभेद है। समझ-बूझमें अन्तर नहीं है। मेरा प्रेम जहाँ है, वहाँ तुम्हारा नहीं। तुम जहाँ दूरी चलाकर अपनेको मुक्त करना चाहते हो वहाँ तुम्हारा कुछ भी मोह नहीं, परन्तु मेरे तो वहाँ होठों प्राण आते हैं। मैं अपने भारतवर्षको चाहता हूँ। तुम चाहे उसे जितना दोष दो। जितनी गालियाँ दो, मैं उसीको चाहता हूँ। उससे बढ़कर मैं अपनेको या और किसी मनुष्य को नहीं चाहता। मैं ऐसा कोई काम करना नहीं चाहता हूँ जिससे भारतवर्षके साथ मेरा रत्ती भर भी विच्छेद हो।

विनय कुछ उत्तर देना ही चाहता है था कि इतनेमें गोराने कहा— नहीं तुम वृथा मेरे साथ विवाद करते हो। सारी दुनिया जिस भारतको त्याग रही है, जिसका अपमान कर रही है, उसीके साथ मैं अपमानके आसन पर बैठना चाहता हूँ। यह जातिभेद का भारतवर्ष, यह कुसंस्कार भरा भारतवर्ष, यह मूर्तिपूजक भारतवर्ष मेरा है और मैं इसका हूँ। तुम यदि इससे अलग होना चाहते हो तो मुझसे भी अलग होगे।

यह कहकर गोरा कमरे से निकलकर छतके ऊपर घूमने लगा। विनय चुपचाप बैठा रहा। नौकरने आकर गोराले कहा कि आपको माँ जी बुला रही हैं।

गोरा जब आनन्दमयीके पास गया, तब उसके मुँह पर प्रसन्नता झलक रही थी। मालूम होता था जैसे उसकी आँखें सम्मुख स्थित सब पदार्थों के पीछे कोई अपूर्व मूर्ति देख रही हैं। गोरा का चित्त आनन्दसे उद्भ्रान्त था इस कारण वह पहलेको भाँति न पहचान सका कि घरमें माँके पास कौन बैठा है।

सुचरिताने खड़ी हो कर गोराको अभिवादन किया। गोराने कहा — अम्मा ! आप आई हैं, बैठिए।

“आप आई हैं,” गोराने ऐसे भावसे कहा, जैसे सुचरिताका आना असधारण रूपसे हुआ है। मानों इसका आगमन एक विशेष आविर्भाव है।

एक दिन इसी सुचरिताको देखकर, उसके साथ बातचीत करके, गोरा घर छोड़कर भाग गया था। जितने दिन वह अपने ऊपर भाँति भाँतिके कष्ट और देशका काम लेकर घूम रहा था, उतने दिन सुचरिताकी बातको वह मनसे बहुत कुछ अलग रखता था। मानो सुचरिता उसके स्मृतिपथ से हट गई थी। परन्तु कैदखानेके भीतर वह सुचरिताके स्मरणको किसी तरह मनसे दूर न कर सका। एक दिन वह था, जब गोराके मनमें कभी इस बातका उदय तक न होता था कि भारतवर्ष में स्त्रियाँ हैं। इतने दिन बाद सुचरिताको देखकर ही स्त्रियोंका अस्तित्व उसके मनमें उदित हुआ। जिस विषयका ज्ञान उसे स्वप्नमें भी न था, वह एकाएक हृदय-पट पर प्रतिबिम्बित होनेसे उसका बलिष्ठ स्वभाव काँप उठा।

जेलसे बाहर होते ही गोराने जब परेश बाबूको देखा, तब उसका मन आनन्दसे उल्लसित हो उठा। वह केवल परेश बाबूसे भेंट होनेका ही आनन्द न था बल्कि उस आनन्दके साथ गोराकी इन कई दिनोंकी सज्जनी कल्पनाने भी बहुत कुछ अपनी माया मिला दी थी, पहले यह उसकी समझमें न आया किन्तु कुछ ही देरमें वह समझ गया। स्टीमर पर आते-आते उसने भली भाँति अनुभव किया कि परेश बाबू जो उसे खींच रहे हैं, वह केवल अपने ही गुणसे नहीं।

गोराका मन उस समय भावके आवेशमें पड़ा था वह सुचरिताको एक व्यक्ति विशेष नहीं देख रहा था, वह उसे एक भावके रूपमें देख रहा था । भारतीकी नारी-प्रकृति सुचरिताकी मूर्तिमें उसके आगे प्रकट हुई । भारतमें गृहको पुण्य, सौंदर्य और प्रेमसे मधुर और पवित्र करनेके लिये ही इसका आर्त्तिभाव गोराको समझ पड़ा । जो लक्ष्मी भारतके शिशुको पालकर बड़ा करती है, रोगीकी सेवा करती है, तापग्रस्तको सान्त्वना देती हैं, सुच्छको भी प्रेमके गौरवसे प्रतिष्ठा देती हैं । जिन्होंने दुःख और दुर्गतिमें भी हममें से दीनतम पुरुष को भी त्याग नहीं किया — अविज्ञा नहीं की, जो हमसे पूजा पानेके योग्य होकर भी हममेंसे अयोग्यतम पुरुषकी भी अनन्य भाव से पूजा करती आ रही हैं, जिनके निपुण सुंदर दोनों हाथ हम लोगोंके काममें उत्सर्ग किये हुये हैं, और जिनका चिर सहनशील क्षमापूर्ण प्रेम अत्यंत दानके रूपमें हमने ईश्वरसे पाया है, उन्हीं लक्ष्मीके एक प्रकाशको गोरा अपनी माताके पास प्रत्यक्ष बैठे देखकर गभीर आनन्दकी अनुभूतिसे पूर्ण हो उठा ।

इसीसे गोराने जब सुचरितासे कहा — आप आई हैं, तब वह केवल प्रचलित शिष्टाचारके सम्भाषणरूपमें उसके मुखसे नहीं निकला — इस अभिवादन सम्भाषणके भीतर उसके जीवनका एक नया मिला हुआ आनंद और विस्मय भरा हुआ था ।

काराबासके चिन्ह कुछ-कुछ गोराके शरीर में मौजूद थे । वह पहलेकी अपेक्षा अधिक रोगी-सा दुर्बल हो गया है । जेलके भोजनमें उसकी अश्रद्धा और अरुचि रहनेके कारण उसने महीने भर तक एक प्रकारसे उपवास ही किया, है । उसका उज्ज्वल शुभ वर्ण भी पहलेकी अपेक्षा कुछ मलीन हो गया है । उसके केश बहुत छोटे करके छांटे जानेके कारण मुखका दुबला-पन और भी अधिक देखा जाता है ।

गोराके शरीरकी इस शीर्णताने ही सुचरिताके मनमें विशेष करके एक वेदनापूर्ण सम्मानका भाव जगा दिया । उसका जी चाहने लगा कि वह प्रणाम करके गोराकी चरण-रज मस्तिक में लगा ले ! जिस प्रज्वलित आगका धुआँ और काष्ठ फिर नहीं देख पड़ता, उसी विशुद्ध अग्निकी शिखा के समान उसे गोरा देख पड़ा । एक करुणा मिश्रित भक्तिके आवेगसे सुचरिताका अन्तःकरण कांपने लगा । उसके मुँहसे कोई बात नहीं निकली ।

आनन्दमयीने कहा—मेरे लड़की अगर होती, तो कैसा सुख होता, सो अबकी बार मुझे जान पड़ा है गोरा । तू जितने दिन यहाँ नहीं था, उतने दिन सुचरिताने मुझे कितनी सात्वना दी है, सो मैं तुझसे क्या कहूँ ! बेटी, तुम शरमा रही हो, लेकिन तुमने मेरे दुःखके दिनोंमें मुझे कितना सुख दिया है, यह बात तुम्हारे सामने कहे बिना मुझसे रहा कैसे जा सकता है !

गोराने गहरी कृतज्ञतासे परिपूर्ण दृष्टिसे सुचरिताके लज्जित मुखकी ओर एक बार देखकर आनन्दमयीसे कहा—माँ, तुम्हारे दुःखके समय वह तुम्हारे दुःखका भाग लेने आई थी, और आज तुम्हारे सुखके दिनमें भी तुम्हारा सुख बढ़ाने आई हैं ! जिनका हृदय महान और उदार है, उनकी ऐसी ही अकारण मैत्री होती है ।

विनयने सुचरिताका संकोच देखकर कहा—दीदी चोरके पकड़ लिए जाने पर वह चारों ओरसे सज़ा पाता है । आज तुम इन सभीके निकट पकड़ गई हो, उसीका यह फल भोग रही हो । अब भागोगी कहाँ ? मैं तुमको बहुत दिनसे पहचानता हूँ, किन्तु किसीके आगे कुछ ज़ाहिर नहीं किया, चुप मारे बैठा हूँ—मनमें मैं खूब जानता हूँ कि अधिक दिन तक कुछ छिपा नहीं रहता ।

आनन्दमयीने हँसकर कहा—तुम चुप क्यों नहीं हो ! तुम चुप रहने वाले लड़के हो न !—जिस दिनसे इसने तुम लोगोंसे जान पहचान कर पाई है बेटी उसी दिनसे बराबर तुम्हारे गुण गाकर भी इसका जी नहीं भरता !

विनय—सुन रखो दीदी, मैं गुणप्राही हूँ, अकृतज्ञ नहीं हूँ, इसकी शहादत और सबूत सब सामने हाज़िर है।

सुचरिता—इससे तो वह केवल अपने गुणका ही परिचय दे रहे हैं।

विनय—किन्तु मेरे गुणका परिचय मेरे निकट आप कुछ नहीं पावेंगी। अगर मेरे गुणका परिचय प्राप्त करना चाहें, तो माँके पास आइएगा—आश्चर्यसे अवाक् हो जाइयेगा—उनके मुखसे जब अपने गुण सुनता हूँ, तो मैं खुद ही आश्चर्य-चकित हो जाता हूँ ! माँ अगर मेरा जीवनचरित्र लिखें, तो मैं अभी मरनेको तैयार हूँ।

आनन्द०—सुनती हो लड़केकी बातें !

गोरा—विनय, तुम्हारे माँ-बापने तुम्हारा नाम सार्थक ही रक्खा था !

विनय०—जान पड़ता है, उन्होंने मुझसे और किसी गुणकी प्रत्याशा नहींकी थी, इसीसे वे मेरे विनय गुणकी ही दुहाई दे गये हैं। नहीं तो उन्हें हास्यास्पद होना पड़ना।

इसी तरह प्रथम आलापका संकोच दूर हो गया।

विदा होते समय सुचरिताने विनयसे कहा—आप ज़रा एक बार हमारे उधर न आइएगा !

विनयने यह समझ लिया था कि ललिताके साथ उसके विवाहके सङ्गकी आलोचना करनेके लिए ही सुचरिता उसको बुला गई है । स प्रस्ताव को उसके तय कर देनेसे ही तो मामला खतम नहीं हो गया । सकी जब तक आयु है, तब तक किसी पक्षका छुटकारा नहीं हो सکتा ।

विनय सुचरिताके घर जब पहुँचा । हरिमोहिनी उस समय रसोई नानेका उद्योग कर रही थीं । विनय वहाँ रसोईके द्वार पर ब्राह्मण संतान ; मध्यान-भोजन का दावा मन्जूर करा कर ऊपर चला गया ।

सुचरिता कुछ सिलार्ईका काम कर रही थी । उसने उसी पर नज़र ख कर अंगुली-चालन करते करते कहा—देखिये विनय बाबू, हाँ भीतरकी बाधा नहीं है, वहाँ क्या बाहरकी प्रतिकूलताको मान कर चलना होगा ?

गोराके साथ जिस समय बहस हुई थी, उस समय विनयने उसके वैरुद्ध युक्तियोंका प्रयोग किया था । किन्तु जब सुचरिताके साथ उसी विनय की आलोचना होने लगी, तब उसने उससे उल्टे पक्ष की युक्तियोंका प्रयोग किया । ऐसी दशामें यह कौन खयाल कर सकेगा कि गोराके साथ उसका कुछ भी मत विरोध है !

विनयने कहा — दीदी, बाहर की बाधाको तुम लोग भी तुच्छ नहीं मानते !

सुचरिता—उसका कारण है विनय बाबू ! हमारी बाधा ठीक बाहरकी बाधा नहीं है । हम लोगोका समाज धर्म-विश्वके ऊपर ही प्रतिष्ठित है । किन्तु आप जिस समाजमें हैं, उसमें आपका बन्धन केवल सामाजिक बन्धन-मात्र है । इसी कारण यदि ललिताको ब्राह्मण-समाज छोड़ कर जाना

हो, तो उसमें जितनी भारी क्षति है, आपके समाज त्यागने में आपकी उतनी क्षति नहीं हो सकती ।

‘धर्म मनुष्य की व्यक्तिगत साधनाकी वस्तु है; उसे किसी समाजके साथ लपेटना उचित नहीं’—इसी बातको लेकर विनय बहस करने लगा ।

इसी समय सतीश एक चिट्ठी और एक अंगरेजीका अखबार लेकर वहां उपस्थित हुआ । विनयको देख कर वह अत्यन्त आनन्दसे उत्तेजित हो उठा—शुक्रवारको किसी तरह रविवार बना देनेके लिये उसका मन अवीर हो उठा । देखते-देखते विनय और सतीशकी बातचीतकी महफिल जम उठी । इधर ललिताकी चिट्ठी और उसके साथके भेजे गये अखबारको सुचरिता पढ़ने लगी ।

उस ब्राह्म समाजी अखबारमें एक खबर यह थी कि किसी प्रसिद्ध ब्राह्म परिवारमें हिन्दू समाजके युवकके साथ ब्याह होनेकी जो आशंका उत्पन्न हुई थी, वह हिन्दू-युवककी असम्मति होनेके कारण दूर हो गई है । इसी उपलक्ष्यको लेकर उक्त हिन्दू-युवककी निष्ठाके साथ तुलना करके उस ब्राह्म परिवारकी शोचनीय दुर्बलताके सम्बन्धमें खेद भी प्रकट किया गया था ।

सुचरिताने अपने मनमें कहा, चाहे जिस तरह हो, विनयके साथ ललिताका ब्याह कराना ही होगा । किन्तु वह तो इस युवकके साथ बहस करके न होगा । सुचरिताने अपने यहाँ आनेके लिये ललिताको एक चिट्ठी लिख दी । उसमें यह नहीं लिखा कि विनय वहाँ मौजूद है ।

हरिमोहिनीने कमरेमें प्रवेश करके पूछा विनय इस समय कुछ जल-पान करेगा या नहीं । विनयने उत्तरमें कहा—ना । तब हरिमोहिनी कमरेके भीतर आकर बैठ गई ।

हरिमोहिनी जितने दिन परेशके घर थीं, उतने दिन विनयके ऊपर उनका खूब आकर्षण था । किन्तु जबसे सुचरिताको लेकर वह जुदे घरमें रह कर अलग अपनी गिरस्ती बाँव बैठी हैं, तबसे इन सब लोगों

का आना-जाना उनके लिये अत्यन्त अहचिकर हो उठा है । आजकल आचार-विचारमें सुचरिता जो उन्हें सम्पूर्ण मान कर नहीं चलती, उसका कारण उन्होंने इन सब लोगोंके सङ्ग-शेषको ही ठोक कर लिया है । यद्यपि वह जानती है कि विनय ब्राह्म-समाजी नहीं है, तो भी उन्हें इसका स्पष्ट अनुभव हो रहा है कि विनयके मनमें कोई हिन्दू-संस्कारकी दृढ़ता भी नहीं है । इसीसे अब वह पहलेकी तरह उत्साहके साथ इस ब्राह्मण बालक को बुलाते जाकर ठाकुर जी के प्रसाद का अपव्यय नहीं करती थीं ।

आज बातचीतके सिलसिलेमें हरिमोहिनी विनयसे पूँछ बैठी—अच्छा भैया, तुम तो ब्राह्मणके लड़के हो; फिर क्यों संध्या-पूजा कुछ भी नहीं करते ?

विनय०—मौसी, दिन रात पाठ रटनेके फेरमें पड़ कर गायत्री-संध्या बगैरह सब कुछ भुल गया हूँ !

हरिमो०—परेश बाबूने भी तो लिखा-पढ़ा है—वह तो अपने धर्म को मान कर उसके अनुसार सबेरे-शाम कुछ पूजा-उपासना अवश्य करते हैं ।

विनय०—मौसी वह जो कुछ करते हैं, सो तो केवल मन्त्र रट कर नहीं किया जा सकता । उनके समान अगर कभी हो सकूंगा, तो उनकी तरह उनकी राह पर चलूंगा ।

हरिमोहिनीने कुछ तीव्र स्वरमें कहा—तब तक न हो बाप-दादे हीकी तरह उन्हींकी राह पर क्यों न चलो । न दार न उधर, यह क्या अच्छा है ? आदमीका एक कुछ तो धर्मका परिचय होता ही है । न राम, न गंगा, भैया रे—यह कैसा ढंग है !

इसी समय ललिता कमरेमें प्रवेश करके विनयको देखते ही चौंक उठी । हरिमोहिनीसे पूछा —दीदी कहाँ हैं ?

हरिमो०— राधारानी नहाने गई हैं !

ललिताने आवश्यक कैफ़ियतके तौर पर कहा—दीदीने मुझे बुला भेजा था ।

हरिमो०—तब तक बैठौ न, वह अभी आती ही होगी !

ललितिका और भी हरिमोहिनीका मन अनुकूल नहीं था । हरिमोहिनी इस समय सुचरिताको उसके पहलेके सारे घिरावसे मुक्त करके सम्पूर्ण रूपसे अपनी मुट्ठीमें, अपने आधीन कर लेना चाहती हैं । पेश बाबूकी और लड़कियाँ यहाँ जल्दी-जल्दी नहीं आतीं, एक मात्र ललितिका ही जब-तब आकर सुचरिताको लेकर बातचीत किया करती है । मगर वह मौसीको अच्छा नहीं लगता । वह अक्सर दोनोंकी बातचीतमें खलल डाल कर सुचरिताको किसी न किसी कामका नाम लेकर वहाँसे उठा ले जानेकी चेष्टा करती हैं । या यह कहकर खेद प्रगट करती हैं कि आजकल सुचरिता पहलेकी तरह मन लगा कर पढ़ने लिखने नहीं पाती । मगर उधर सुचरिता जब पढ़ने लिखनेमें ध्यान देती है, तब वह यह कहनेसे भी बाज नहीं आती कि औरतोके लिये अधिक पढ़ना लिखना अनावश्यक और अनिष्टकर है । असल बात यह है कि वह जिस तरस अनन्य भावसे सुचरिताको घेर कर बिल्कुल अपने घेरेमें रखना चाहती हैं वैसा किसी तरह कर नहीं पातीं । इसीसे कभी सुचरिताके साथियों पर और कभी उसकी शिक्षा पर दोषारोपण करती हैं ।

ललितिका और विनयको लेकर अथवा ताक पर बैठे रहना हरिमोहिनीके लिये सुख कर हो, यह बात नहीं; तथापि उन दोनों पर चिढ़ होनेके कारण ही वह वहाँ पर उस समय बैठी रहती । उन्होंने समझ लिया था कि विनय और ललितिकाके बीच एक रहस्यपूर्ण सम्बन्ध है । इसीसे उन्होंने मन ही मन कहा—तुम्हारे समाजमें चाहे जो और जैसी रीति हो, मैं अपने इस घरमें यह सब निर्लज्जताके साथ मिलना जुलना, यह सब ईसाइयोंकी लीला कभी न होने दूँगी ।

उधर ललितिकाके मनमें भी एक विरोधका भाव उठ खड़ा हुआ था । कल सुचरिताके साथ आनन्दमयीके घर जानेका उसने भी इरादा किया था;

किन्तु जानेके समय किसी कारण वह जा नहीं सकी। गोराके ऊपर लज्जिता की भारी श्रद्धा है, किन्तु विरोधका भाव भी अत्यन्त तीव्र है। इस ख्याल को वह किसी तरह अपने मनसे भगा नहीं पाती थी कि गोरा सभी तरह उसके प्रतिकूल है। यहां तक कि जिस दिन गोरा जेलखानेसे छूटा है उसी दिनसे विनयकी ओर भी उसके मनके भावमें एक परिवर्तन हो गया है। कई दिन पहले भी इस बातको खूब स्पर्धाके साथ ही उसने मनमें स्थान दिया था कि विनयके ऊपर उसका एक जोर और देखल है। किन्तु अब यह कलरना करते ही वह विनयके विरुद्ध कमर बांधकर खड़ी हो गई कि गोराके प्रभावको विनय किसी तरह अपने ऊपरसे हटा नहीं सकेगा।

लज्जिताको कमरेमें प्रवेश करते देखते ही विनयके मनमें एक अन्दोलन प्रवृत्त हो उठा। लज्जिताके सम्बन्धमें विनय किसी तरह अपने सहज भावकी रक्षा नहीं कर सकता। जबसे उन दोनोंके विवाहकी संभावनाका समाचार या अक़वाह समाज में फैल गई है, तबसे लज्जिताको देख पाते ही विनयका मन, बिजलीसे चंचल सुंबक-शलाकाकी तरह, स्पंदित होता रहता है।

कमरेमें विनयको बैठे देखकर सुचरिताके ऊपर लज्जिताको क्रोध हुआ उसने समझा, आनन्द्युक्त विनयके मनको अनुकूल करनेके लिए ही सुचरिता उसको पीछे पड़ गई हैं और इस टेढ़े को सीधा करने के लिये आज उसकी पुकार हुई है।

उसने मौसीकी ओर देखकर कहा—दीदीसे कह देना, इस समय मैं अब और टूट नहीं सकती। फिर किसी समय आऊंगी।

यह कहकर विनयकी ओर दृष्टिपात मात्र न करके लज्जिता तेज़ी के साथ चली गई। तब फिर विनयके पास हरिमोहिनी का बैठे रहना अनावश्यक होनेके कारण वह भी घरके काम धंधेके बहाने उठ गई।

नहा धोकर और सतीशको खिलाने-पलानेके बाद स्कूल भेजकर सुचरिता जब विनयके पास आई, उस समय वह सलाटेमें बैठा हुआ था।

सुचरिताने पहलेका प्रसंग फिर नहीं उठाया। विनय भोजन करने बैठा, लेकिन उसके पहले कुत्ता नहीं किया।

हरिमोहिनीने कहा—अच्छा भैया, तुम तो हिंदू आचार-विचारकी कोई बात मानते ही नहीं,—फिर तुम्हारे ब्राह्म हो जानेमें ही क्या दोष था ?

विनयने मन-ही-मन कुछ आघात पाकर कहा—हिंदू-धर्मको जिस दिन मैं छुआ दूँ और खाने-पीनेका निरर्थक नियम मात्र जानूँगा, उस दिन ब्राह्म, ईसाई, मुसलमान आदिमें से कुछ एक हो जाऊँगा। अब भी हिंदू धर्म के ऊपर मुझे उतनी अश्रद्धा नहीं हुई है।

विनय जब सुचरिताके घरसे बाहर निकला उस समय उसका मन अत्यंत विकल हो रहा था ! वह जैसे चारों ओरसे ही धक्के खाकर एक आश्रय-हीन शून्यके भीतर आ पड़ा था।

‘क्यों मैं ऐसे अस्वाभाविक स्थानमें आकर पहुँच गया’, यही सोचते सोचते सिर नीचा करके विनय धीरे धीरे सड़क पर चलने लगा। हेदुआ तालाब के पास आकर वहाँ एक पेड़के नीचे बैठ गया। अब तक उसके जीवनमें छोटी बड़ी जो कोई समस्या आकर उपस्थित हुई है उसने अपने मित्र गोराके साथ आलोचना करके, बहस करके, उसकी मोर्मासा कर ली है। आज वह राह भी नहीं खुली है—आज उसे अकेले ही सोचना विचारना होगा।

सूर्यके ढल पड़ते ही जहाँ पर छाया थी, वहाँ धूर आ गई। तब विनय तर-तल छोड़कर फिर सड़क पर चलने लगा। कुछ दूर जाते ही अचानक सुन पड़ा—“विनय बाबू ओ विनय बाबू !” और उसके बाद ही सतीशने आकर उसका हाथ पकड़ लिया ! उस दिन शुक्रवार था, स्कूलकी पढ़ाई खत्म करके सतीश उस समय घरको लौट रहा था।

सतीशने कहा—चलिए विनय बाबू, मेरे साथ घर चलिए !

विनय०—यह क्या हो सकता है सतीश बाबू !

सतीश—क्यों नहीं हो सकता ?

विनय०—इतना जल्दी जल्दी तुम्हारे घर जानेसे लोग उसे सह कैसे सकेंगे ?

सतीशने विनयकी इस युक्तिको बिल्कुल ही प्रतिवादके अयोग्य समझ कर केवल इतना ही कहा—नहीं; चलिए !

परेश बाबूके घरके सामने होकर ही सुचरिताके घर जाना होता है ! परेश बाबूके घरके नीचेके खरड का बैठरखाना रास्तेसे ही देख पड़ता है । उस बैठरुके सामने पहुँचते ही सिर उठाकर एक बार उधर देखे बिना विनय से नहीं रहा गया । उसने देखा, टेबिल के सामने परेश बाबू बैठे हैं—कुछ बातचीत कर रहे हैं या नहीं यह नहीं जाना जा सका; और, ललिता रास्तेकी ओर पीठ करके परेश बाबूकी कुर्सीके पास एक छोटेसे बेंतके मोढ़े पर छात्री की तरह चुपचाप बैठी है ।

सुचरिताके घरसे लौट आनेके बाद जो घोम ललिता के हृदयको असह्य रूपसे अशान्त बना रहा था; उसे दूर करनेका और कोई उपाय वह नहीं जानती थी, इसीसे धीरे-धीरे परेश बाबू के पास आकर बैठी थी । परेश बाबूके भीतर ऐसा एक शक्तिका आदर्श था कि असह्यशील ललिता अपनी चंचलता दबानेके लिए कभी-कभी उनके पास आकर चुपचाप बैठी रहती थी । परेश बाबू अगर पूछते थे कि क्या है ललिता ? तो वह कहती थी—कुछ नहीं बाबूजी तुम्हारी इस कोठरी में खूब ठण्डक है ।

आज ललिता चोट खाये हुए हृदयको लेकर उनके पास आई है, यह परेश बाबू स्पष्ट समझ गये थे । उनके अपने अन्तःकरणके भीतर भी एक चेदना छिपी हुई मौजूद थी । इसीसे उन्होंने धीरे-धीरे ऐसी एक बात उठाई थी जो व्यक्तिगत जीवनके सुख दुःखके बोझको एक दम हलका कर दे सकती है ।

पिता और कन्याकी इस निर्जन आलोचनाके दृश्यको देखकर दम भर के जिने विनयके पैर रुक गये—सतीश क्या कह रहा था, सो उसके कानों

तक पहुँचा ही नहीं। सतीशने उस घड़ी उससे युद्ध विद्याके सम्बन्धमें एक अत्यन्त जटिल दुर्लभ प्रश्न किया था। एक बाधाके दल को पकड़ कर बहुत दिन तक सिखाकर अपने पक्ष की सेना के अभ्रभागमें खड़ा करके द्ध किया जाय तो इस युक्तिसे जयकी सम्भावना कैसी है, यही उस का प्रश्न था। अब तक दोनों मित्रोंके सवाल जवाब बिना किसी बाधा के चले आ रहे थे, अबकी एकाएक बाधा पाकर सतीशने विनयके मुखकी ओर देखा; उसके बाद विनयकी दृष्टि का अनुसरण करके परेश बाबूके बैठकखानेमें नजर डालने ही वह ऊँचे स्वर से चिल्लाकर कह उठा— दोदी-दोदी ! ओ ललिता दोदी ! यह देखो, मैं विनय बाबूको रास्तेसे पकड़ लाया हूँ।

सतीशके इस बहादुरी दिखानेसे लज्जाके मारे विनय के पसीना आ गया। पल भरके भीतर ही बैठक के भीतर ललिता कुर्सी छोड़कर उठ खड़ी हुई। परेश बाबूने गलीकी ओर मुँह फेर कर देखा—सब मिठाकर एक भारी काण्ड हो गया है।

तब विनय सतीशको बिदा कर लाचार होकर परेश बाबूके घरमें घुसा।

बैठकमें जाकर विनयने देखा, ललिता चली गई है। उसे सब कोई शान्ति भङ्ग कराने वाले दस्यु को तरह देखते हैं, यह ध्रयाल करके विनय संकुचित हो उठा, और कुर्सी पर बैठ गया।

शारीरिक स्वास्थ्य इत्यादिके सम्बन्धमें प्रश्न करके साधारण शिष्टाचार हो चुकते ही विनयने एकदम कहना शुरू कर दिया कि मैं जब हिन्दू-समाजके आचार-विचारको श्रद्धाके साथ नहीं मानता, और नित्य ही उसका उल्लङ्घन करता रहता हूँ, तब ब्राह्म-समाजका आश्रय ग्रहण करना ही मैं अरना कर्तव्य समझ रहा हूँ। मेरी यही इच्छा है कि मैं आप हीके निकट दीक्षा ग्रहण करूँ।

यह इच्छा और यह विचार पन्द्रह मिनट पहले तक भी विनयके

मनमें स्पष्ट आकारमें कदापि न था। परेश बाबू लण भर चुप रह कर बोले—अच्छी तरह सब बातों पर गौर करके देख तो लिया है न ?

विनय—इसमें और तो कुछ सोचने या गौर करनेकी बात नहीं है, केवल यही देखनेका विषय है कि मेरा कार्य न्याय है या अन्याय। सो वह खूब सादी सी बात है। हम लोगोंने जो शिक्षा पाई है, उसके द्वारा मैं किसी तरह निष्कपट चित्तसे केवल आचार-विचारको ही उल्लंघनीय धर्म नहीं मान सकता। इसी कारण मेरे व्यवहार अथवा आचरणमें पग पग पर अनेक प्रकारकी असंगति देख पड़ती है—जो लोग श्रद्धाके साथ हिन्दू समाजका आश्रय लिए हुए हैं, उनके साथ संसर्ग रखनेके कारण उनको मैं केवल आघात ही पहुँचाया करता हूँ। यह मैं अत्यन्त अन्याय कर रहा हूँ, इस बारेमें मेरे मनको कुछ भी सन्देह नहीं है। ऐसे स्थलमें, ऐसी दशामें, और कोई बात न सोच कर अपने अन्यायको दूर करनेके लिये ही मुझे प्रस्तुत होना होगा। नहीं तो मैं अपनी ही दृष्टिमें अपने सम्मानकी रक्षा न कर सकूँगा।

परेश बाबूको समझानेके लिए इतनी बातोंका प्रयोजन नहीं था, ये सब बातें विनयने अपने मनको जोरदार बनानेके लिए ही कहीं। वह एक न्याय-अन्याय के द्वन्द्व-युद्धके बीच में ही पड़ गया है, और इस युद्धमें सब त्याग कर न्यायके पक्षमें ही जय प्राप्त करनी होगी—यह बात कह कर उसकी छाती फूल उठी, फैल गई। मनुष्यत्व की मर्यादा तो रखनी ही होगी। परेशने पूछा—धर्म विश्वासके बारेमें ब्राह्म समाजके साथ तुम्हारा मन तो मिलता है न ?

विनय ज़रा देर चुप रह कर बोला—आपसे सच बात कहूँ, पहले मुझे ख्याल था कि मेरा शायद एक कुछ धर्म विश्वास है, और उसे लेकर उसके लिए अनेक लोगोंके साथ अक्सर बहुत कुछ वाद-विवाद भी किया है, किन्तु आज मैंने निश्चय जान लिया कि धर्म विश्वास मेरे जीवनमें परिणत नहीं पा सका—पक्का नहीं हुआ। और, इतना कुछ जो मैं समझ सका हूँ, सो केवल आपको देखकर। मेरे जीवनमें धर्मका कोई सत्य प्रयोजन

नहीं पढ़ा, और उसके प्रति मेरा सत्य विश्वास नहीं पैदा हुआ, इसी कारण मैंने कल्पना और युक्ति कौशलके द्वारा इतने दिन हम लोगोके समाजके प्रचलित धर्मको तरह-तरहकी सूक्ष्म व्याख्याओंसे केवल तर्क निपुणताका रूप दे रक्खा है। यह सोचनेकी मुझे जरूरत ही नहीं होती कि कौन धर्म सत्य है।

परेश बाबूके साथ बातें करते-करते ही विनय अपनी वर्तमान अवस्था के अनुकूल युक्तियोंको आकार देकर साक्षात् उपस्थित करने लगा। यह काम वह ऐसे उत्साहके साथ करने लगा, जैसे अनेक दिनके तर्क-वितर्कके बाद वह इस स्थिर सिद्धान्तमें आकर पहुँचा है।

तथापि परेश बाबूने और भी कुछ दिनका समय लेनेके लिए उससे कहा, और अपने इस कथन पर खास तौर पर जोर दिया। इससे विनय ने सोचा, उसकी दृढ़ताके ऊपर परेश बाबू को संशय है। अतएव उसका आग्रह भी उतना ही बढ़ने लगा। उसका मन एक सन्देह-रहित स्थान पर आकर खड़ा हुआ है, किसी कारणसे अब उसके जरा भी ढिगनेकी सम्भावना नहीं है—यही उसने बार-बार कहना शुरू किया। दोनों ओर से ललिताके साथ विवाहका कोई जिक्र ही नहीं हुआ।

इसी समय घरके किसी कामके लिए वरदासुन्दरीने वहाँ प्रवेश किया जैसे विनय वहाँ उपस्थित ही नहीं है, ऐसे भावसे अपना काम करके वह वहाँसे जानेको उद्यत हुई। विनयने समझा था, परेश बाबू अभी वरदासुन्दरीको बुलाकर उसके मत परिवर्तनकी नई खबर उन्हें जतावेंगे। किन्तु उन्होंने कुछ भी छीसे नहीं कहा। वास्तवमें परेश बाबूकी अब भी यही धारणा थी कि अभी किसीसे यह समाचार कहनेका समय ही नहीं आया। उनको इच्छा थी कि यह बात अभी-सभीसे छिपी रहे, किन्तु वरदासुन्दरी जब विनयके प्रति सुस्पष्ट अवज्ञा और क्रोध प्रकट कर चले जानेको उद्यत हुई, तब किसी तरह विनयसे छुप नहीं रहा गया। उसने गमनोन्मुख वरदासुन्दरीके पैरोंके पास सिर नवाकर प्रणाम किया, और कहा—मैं आज आपके पास ब्राह्म समाजमें दीक्षा लेनेका प्रस्ताव लेकर आया हूँ। मैं

अयोग्य हूँ, किन्तु आप लोग मुझे योग्य बना लेंगे, यही मुझे भरोसा है ।

सुनकर विस्मृत वरदासुन्दरी घूम कर खड़ी हो गई, और धीरे-धीरे भीतर आकर बैठ गई । उन्होंने जिज्ञासाकी दृष्टिसे परेश बाबूके मुखकी ओर देखा ।

परेशने कहा — विनय बाबू दीक्षा लेनेके लिये अनुरोध करते हैं ।

सुनकर वरदासुन्दरीके मनमें एक जय लाभका गर्व अवश्य उपस्थित हुआ, किन्तु सम्पूर्ण आनन्द नहीं हुआ ! यह क्यों ? इसका कारण यही है कि उनके मनमें भीतर ही-भीतर बड़ी इच्छा थी कि अब की दफे परेश बाबूको यथेष्ट शिक्षा मिल जाय—अपनी लापरवाहीको सज़ा पाकर उनकी आंखें आइन्दाके लिए खुल जायं । उनके स्वामीको भारी और बहुत पश्चात्ताप करना होगा, इस भविष्यवाणीकी घोषणा वह खूब ज़ोरके साथ बारम्बार कर चुकी थी । और, इसी कारण सामाजिक आन्दोलनसे परेश बाबूको यथेष्ट विचलित न होते देख कर वरदासुन्दरी मन ही मन अत्यन्त असहिष्णु हो उठ रही थी । इसी बीचमें सारे संकटकी ऐसे अच्छे ढंगसे एक मीमांसा हो जाना वरदासुन्दरीको विशुद्ध प्रसन्नता नहीं पहुंचा सका । उन्होंने मुल्लका भाध गम्भीर बनाकर कहा—यह दीक्षाका प्रस्ताव और कुछ दिन पहले ही अगर होता, तो हम लोगोंको इतना अपमान, इतना दुःख, न उठाना पड़ता ।

परेशने कहा—हम लोगोके दुःख, कष्ट या अपमान की तो कोई बात हो नहीं रही है—विनय बाबू दीक्षा लेना चाहते हैं ।

वरदासुन्दरी कह उठी—केवल दीक्षा ?

विनयने कहा—वही अन्तर्यामी जानते हैं कि आप लोगो का दुःख अपमान सब मेरा ही है ।

परेश—देखो विनय, तुम धर्म की दीक्षा लेना जो चाहते हो, उसे एक आवान्तर विषय न करो । मैं तुमसे पहले और भी एक दिन कह चुका हूँ कि हमारे किसी सामाजिक संकटमें पड़ने की कल्पना करके तुम किसी गुस्तर-कार्यमें प्रवृत्त न होना ।

समय आ पहुँचा है। क्या जाने किस अयोग्य या बदमाश लड़केके हाथ पड़ जाय, यही सोचकर मुझे तो रातको नींद नहीं पड़ती।

विनयने कहा—आप इतना घबराते क्यों हैं, अभी तो अच्छा लड़का ढूँढनेके लिए समय है।

महिम—अपने अगर कोई लड़की होती तो समझते कि क्यों इतना घबड़ा रहा हूँ। साल-साल करके उमर आप ही बढ़ती है, लेकिन वर तो आप ही से घर पर आ नहीं जाता ! इसीसे जितने ही दिन बीतते हैं, उतना ही मन व्याकुल हो उठता है। अब तुम अगर ज़रा भरोसा दो, तो न हो कुछ दिन धैर्य भी धारण कर सकता हूँ।

विनय—मेरा तो बहुत लोगोंसे यहाँ आलाप-परिचय नहीं है—कलकत्तेमें आपके घरके सिवा और किसीका घर नहीं जानता, यह कहना भी शकत न होगा। तो भी मैं तलाश करके देखूँगा।

महिम—शशिमुखीके स्वभाव और चरित्रको तो जानते हो।

विनय—जानता क्यों नहीं। उसे बचपनसे देखता आता हूँ—बड़ी भली, भोलीभाली लड़की है।

महिम—तो फिर और जगह तलाश करनेकी क्या ज़रूरत है भैया ! वह लड़की मैं तुम्हारे ही हाथ में समर्पण करूँगा।

विनयने व्यस्त हो उठ कर कहा—आप कहते क्या हैं ?

महिम—क्यों, बेजाँ क्या कहता हूँ ! अवश्य ही कुलमें तुम हम लोगोंसे बहुत बड़े हो—लेकिन विनय, इतना पढ़ लिख कर भी अगर तुम कुलका ढोंग मानोगे तो बस फिर हो चुका !

विनय—ना ना, कुलकी बात नहीं है, लेकिन अवस्था तो...

महिम—वाह ! शशीकी अवस्था क्या कम है ! हिन्दूके घरकी लड़की मेम साहब तो है नहीं। हमारे समाजमें तो इसी अवस्थामें लड़की ब्याह दी जाती है। फिर शास्त्र में भी तो लिखा है—कन्याया द्विगुणो वरः।

महिम सहज में छोड़ देनेवाला आदमी नहीं था। विनयको उसने

—बह तो ब्राह्म समाजके किसी कार्यकर्ताको जानते पहचानते नहीं हैं — हम लोग ही सब बन्दोबस्त कर देंगे । मैं आज अभी पानू बाबूको बुलाये भेजती हूँ । अब तो और समय नहीं है—परसों ही तो रविवार है !

इसी समय देखा गया, सुधीर बैठकघरानेके सामनेसे ऊपर जा रहा है । वरदासुंदरीने उसे बुलाकर कहा—सुधीर, विनय बाबू परसों हमारे समाज में दीक्षा लेंगे ।

सुधीर अत्यन्त प्रसन्न हो उठा । सुधीर मन ही-मन विनयका एक विशेष भक्त था । विनयके ब्राह्म-समाजमें अपने दिलमें पानेकी खबरसे उसे भारी उत्साह हुआ । विनय जैसी बढ़िया अँगरेजी लिख सकता है, उसको जैसी विद्या बुद्धि है, उसके देखते उसका ब्राह्म-समाज में शामिल न होना ही उसके लिए अत्यन्त असङ्गत सुधीरको जान पड़ता था । विनय जैसा आदमी किसी तरह ब्राह्म-समाजके बाहर नहीं रह सकता, इसीका प्रमाण पाकर सुधीरकी छाती गर्व और आनन्दसे फूल उठी । उसने कहा किन्तु परसों रविवार तक ही क्या इसकी तैयारी हो सकेगी ? बहुतोंको खबर ही नहीं पहुँच सकेगी ।

सुधीरकी बड़ी इच्छा है कि विनयकी दीक्षाको एक दृष्टांत या आदर्श की तरह सर्व-साधारणके सामने उपस्थित किया जाय ।

वरदासुंदरीने कहा — ना, ना, इसी-रविवारको हो जायगी । सुधीर, तुम दौड़ जाओ, पानू बाबूको जल्द बुला लाओ ।

जिस अभागके दृष्टांत द्वारा सुधीर ब्राह्म-समाजको अजेयशक्ति वाला सर्वत्र घोषित करनेकी कल्पनासे उत्तेजित हो उठ रहा था; उसका चित्त उस समय सङ्कुचित होकर एकदम बूंद सा बना जा रहा था । जो काम मनके भीतर केवल तर्क और युक्तिसे विशेष कुछ भी नहीं था उसीका बाहरी चेहरा देखाकर विनय व्याकुल हो उठा ।

पानू बाबूकी पुकार पड़ते ही विनय उठ खड़ा हुआ । वरदासुंदरीने कहा—ज़रा बैठ जाओ, पानू बाबू अभी आते हैं ज्यादा देर न होगी ।

विनय—ना, मुझे माफ़ कीजियेगा ।

वह इस समय इस घिरावसे दूर हट जाकर खुलेमें सब बातों पर अच्छी तरह गौर करनेका मौक़ा पावे तो उसकी जान बचे ।

विनयके उठते ही परेश बाबूने उठकर उसके कंधे पर एक हाथ रख कर कहा— विनय, चट पट कुछ न करो— शांत होकर स्थिर होकर सब बातें सोच कर देखो । अपने मनको पूर्ण रूपसे अच्छी तरह समझे बिना जीवन के इतने बड़े एक काम में प्रवृत्ति होना ठीक नहीं । ऐसा न करना ।

वरदासुन्दरीने जब हारान बाबू को बुझाकर सब बातें कहीं तब वह कुछ देर गम्भीर भाव धारण किये बैठे रहे और बोले—इस विषयमें एक बार ललितासे भी पूछ लेना आवश्यक जान पड़ता है ।

ललिताके आनेपर हारान बाबू अपने गाम्भीर्यकी मात्राको सात सीढ़ी ऊपर चढ़ा कर बोले—देखो ललिता, तुम्हारे जीवनके एक बहुत बड़े दायित्वका समय आ पहुँचा है । एक ओर अपना धर्म और दूसरी ओर अपने मनकी प्रवृत्ति, इन दोनोंके बीचमें तुमको मार्ग बनाकर चलना होगा ।

यह कहकर हारान बाबू चुप हो रहे और ललिताके मुँहकी ओर देखने लगे । वह जानते थे कि हमारी इस न्यायान्निदोत दृष्टिके सामने भीरुता ठहर नहीं सकती । कपट भाव जलकर खाक हो जाता है । हमारी यह तेजोमय आध्यात्मिक दृष्टि ब्राह्म समाजकी एक अमूल्य सम्पत्ति है ।

ललिता कुछ न बोली, चुप हो रही ।

हारान बाबूने कहा—शायद तुम सुन चुकी हो, तुम्हारी अवस्था पर दृष्टि करके या किसी दूसरे ही कारणसे विनय बाबू आखिर हमारे समाजमें दोला लेनेको राजी हुये हैं ।

ललिताने पहले यह बात न सुनी थी । सुननेसे उसके मनमें बया भाव उत्पन्न हुआ, इसे भी उसने प्रकाशित न किया । उसकी आँखें मानों निनिमेष हो गईं । वह पत्थरकी प्रतिमाकी भाँति स्थिर हो बैठी रही ।

हारान बाबूने कहा—विनयकी इस बाध्यतासे परेश बाबू वास्तवमें बड़े प्रसन्न हैं । किन्तु इसमें वास्तविक आनन्द होनेकी कोई बात है या

नहीं, यह तुम्हींको निश्चय करना होगा। इस लिये मैं आज तुमसे ब्राह्म-समाजके नाम पर अनुरोध करता हूँ कि अपनी उन्माद-भरी प्रवृत्तिको तब तक एक ओर हटा रखो, और केवल धर्मकी ओर दृष्टि करके अपने मन से पूछो—इसमें प्रसन्न होनेका यथार्थ कारण क्या है ?

ललिता अब भी कुछ न बोली। हारान बाबूने समझा, ललिता मेरे मतमें आ गई है। मेरी दृष्टिका प्रभाव अवश्य कुछ काम करेगा। अतएव वह दूने उत्साहके साथ बोले—दीक्षा! दीक्षा जीवनकी एक पावनी शक्ति है, क्या वही बात आज एक अनधिकारीसे मुझसे कहनी पड़ेगी ! उस दीक्षाको कलुषित करना होगा ! सुख, सुविधा या प्रेमाशक्ति के खिचावसे हम ब्राह्म-समाजमें असत्यको घुसने दें, कपटको सादर आह्वान करें ! क्यों, ललिता ! तुम्हारे जीवनके साथ ब्राह्म समाजकी इस दुर्गतिका इतिहास क्या सदाके लिए मिश्रित न हो रहेगा ? ललिता इस पर भी कुछ न बोली, और वहाँ से चली गई।

वरदासुन्दरीको भी हारान बाबूकी बात अच्छी न लगी। अब वह किसी तरह विनयको छोड़ना न चाहती थी। उसने हारानबाबूसे अनेक व्यर्थ अनुनय-विनय करके, आखिर रुष्ट होकर, उसे बिदा कर दिया। वह इस कारण-बड़ी कठिनाईमें पड़ी कि उसने न तो परेश बाबूको अपने पक्षमें कर पाया और न हारानबाबूको ही।

जब तक दीक्षा लेने की बातको विनय मामूली तौरसे देख रहा था तब तक बड़ी दृढ़ताके साथ अपने संकल्पको प्रकाशित कर रहा था। किन्तु जब उसने देखाकि इसके लिए उसे ब्राह्म-समाजमें निवेदन करना होगा और इस विषय पर हारान बाबूके साथ परामर्श करना पड़ेगा तब वह एकाएक घबरा गया। मैं कहां जाकर किससे सलाह लूँ, यह उसकी समझ में न आया। यहाँ तक कि आनन्दमयीके पास जाना भी उसके लिए कठिन हो गया। सड़क पर जाकर टहलनेकी शक्ति भी उसमें न रही। इसी से वह अपने ऊपर वाले सुने कमरे में जाकर तख्त पर लेट रहा।

साँझ होनेमें अब विलम्ब नहीं है। अंधेरे घरमें चिराग जलाने के लिए नौकरको आते देख विनय मना करना ही चाहता था कि इतनेमें किसीने विनयको नीचे से पुकारा।

विनयकी जान में जान आई। मातों उसे मरु भूमिमें जल मिला। इस समय एकमात्र सतीशको छोड़ कर और कोई उसे आराम न दे सकता था। विनय होशमें आया। ‘क्या है सतीश बाबू’ यह कह कर वह झट बिछौने से उठा और खाली पैर धड़धड़ाते हुए जीनेसे नीचे उतर पड़ा।

उसने देखा, आँगनमें जीनेके सामने ही सतीशके साथ वरदासुंदरी खड़ी हैं। फिर वही बात वही विचार। विनय बड़ी घबराहटके साथ सतीश और वरदासुंदरीको ऊपरके कमरेमें ले गये।

वरदा सुन्दरीने सतीशसे कहा—बेटा सतीश तू कुछ देरके लिए बरामदेमें जाकर बैठ।

विनयने उसे कितनी ही चित्राङ्कित पुस्तकें देकर पासवाले एक कमरे में चिराग जलाकर, बिठाया।

वरदा सुंदरीने कहा—विनय, तुम तो ब्राह्म समाजमें किसीको जानते नहीं हो। तुम एक चिट्ठी लिखकर मुझे दे दो, मैं कल सबेरे स्वयं जाकर सम्पादक महाशय को देकर सब बन्दोबस्त कर दूंगी जिससे परसों रविवारको ही तुम्हारी दीक्षा हो जाय। तुमको अब कुछ भी तरद्दुद करना न पड़ेगा।

विनय इस पर कोई उज्र न कर सका। उसने वरदा सुन्दरीकी आज्ञा के अनुसार एक चिट्ठी लिखकर उसको दे दी। जो हो, उसे अब एक मार्गको आवश्यकता थी जिससे कि लौटने या दुर्घिधामें पड़ने का उपाय न रह जाय।

ललिताके साथ विवाह की चर्चा भी वरदासुन्दरीने छेड़ दी। वरदासुन्दरीके चले जाने पर विनयके मनमें कुछ और ही भाव का उदय होने लगा यहाँ तक की ललिताका स्मरण भी अब उसके हृदय में असह्य हो गया।

वरदा सुन्दरी घर लौटकर आशा करने लगी कि ललिता को आज मैं प्रसन्न कर सकूंगी। ललिता विनयको हृदयसे चाहती थी 'यह वरदा-सुन्दरी भली भाँति जानती थी। इसी लिए उन दोनोंके विवाहकी बात पर समाजमें पहले खूब आन्दोलन मचा था। पीछे वह अपनेको छोड़ सभीको इसके लिए अपराधी समझने लगी। कई दिनों तक उसने एक तरह से ललिताके साथ बातचीत करना छोड़ दिया था। किन्तु आज जब उस बात का फैसला हो गया तब वह अपनी इस सफलताको ललिताके निकट प्रकाशित करके उसके साथ सन्धि स्थापन करनेके लिए व्यग्र हो उठी। ललिताके पिताने तो सब मिटो कर दिया था ललिता स्वयं भी तो विनयको रास्ते पर न ला सकी हारान बाबूमे भी कोई सहायता न मिली अकेली वरदासुन्दरी हीने सब उलझनों को सुलझाया है।

यों सोचते-सोचते जब वह घर आई तब उसने सुना कि ललिता आज सबेरे ही सोनेको चली गई है; उसका जी अच्छा नहीं है। वरदासुन्दरीने मन ही मन हँसकर कहा—मैं उसका जी अच्छा कर दूंगी।

एक चिराग जला हाथमें ले, ललिताके शयन गृहमें जाकर देखा, वह अबभी बिछौने पर न सोकर एक आराम कुर्सी पर पड़ी है।

ललिता—तुरन्त उठ बैठो और बोली—मैं तुम कहाँ गई थी ?

उसके स्वरमें कुछ तीव्रता थी। वह पहले ही सुन चुकी थी, कि मां सतीशको लेकर विनयके घर गई हैं।

वरदासुन्दरीने कहा—मैं विनयके घर गई थी।

ललिता—क्यों ?

इस क्योंसे वरदासुन्दरीके मनमें कुछ क्रोध हुआ। ललिता समझती है, मैं केवल इसका अनिष्ट ही करती फिरती हूँ। जा तू बड़ी अकृतज्ञ है !

वरदासुन्दरीने कहा—क्यों गई थी, यह मैं बताती हूँ। यह कहकर विनयकी वह चिट्ठी उसने ललिताकी आँखोंके सामने रख दी। वह चिट्ठी

पढ़ कर ललिताका मुंह लाल हो गया। वरदासुन्दरी अपनी कार्य-सफलता प्रकट करनेकी इच्छासे कुछ बढ़ा-चढ़ाकर बोली—यह चिट्ठी क्या विनयके हाथसे सहज ही निकल सकती थी ! मैंने बड़ी-बड़ी युक्तियों से यह चिट्ठी उसे लिखवाई है, यह काम दूसरेसे कदापि न हो सकता।

ललिता दोनों हाथोंसे अपना मुंह ढाक कर आराम कुर्सी पर पड़ रही। वरदासुन्दरीने समझा, मेरे सामने ललिता अपने हृदयके प्रवल वेगको प्रकाशित करनेमें लजाती है। वह कोठेसे बाहर हो गई।

दूसरे दिन सबेरे चिट्ठी लेकर ब्राह्म-समाजमें जानेके समय वरदासुन्दरीने देखा, ललिताने उस चिट्ठीको टुकड़े टुकड़े कर फाड़ डाला है।



दिनो तीसरे पहर जब सुचरिता परेशबाबूके पास जाने का विचार कर रही थी तब नौकरने आकर खबर दी, एक बाबू आये हैं। कौन बाबू ? विनय बाबू ? नौकरने कहा—नहीं, अन्यन्त गोरे रङ्गका एक लम्बा सा बाबू है। सुचरिता बोली—बाबू को ऊपर के कमरे में ले जाकर बिठाओ।

आज सुचरिता कौन कपड़ा पहने हुए है और कैसे पहने हुए है, इसका कुछ भी खयाल उसके मनमें न था। इस समय बड़े आईनेके पास खड़ी होकर उसने देखा तो उसे वह कपड़ा किसी तरह पसन्द न आया। एक तो कपड़ा उसके पसन्द लायक नहीं, दूसरे वह भी मामूली तरहसे पहने हुए थी, जिसे देखकर वह और भी लज्जित हुई। पर उस समय कपड़ा बदलने का समय न था। काँपते हुए हाथ से आँचल और बालोंको सँवारकर, सुचरिता धड़कते हुए हृदयको लेकर ऊपरके कमरेमें गई। देखा ठीक सामने गोरा कुर्सी पर बैठा है।

“मौसी आपको देखनेके लिए बहुत दिनोंसे व्याकुल हो रही हैं, मैं उनको खबर दे आती हूँ” यह कह कर वह चौखटके भीतर हरिमोहिनी को लेने के लिये चली गई।

कुछ देरमें सुचरिता हरिमोहिनीको साथ लेकर आई। हरिमोहिनी कुछ दिनसे विनयके मुँहसे गोराका मत, विश्वास, निष्ठा और उसका जीवन वृत्तांत सुनती आई है।

आज गोराकी ओर देखते ही हरिमोहिनी एकदम आश्चर्यमें डूब गई। ऐ ! यह तो सच्चा ब्राह्मण है। मानों होमकी प्रज्वलित अग्नि है। मानों यह कर्पूरकाय महादेव है। उसके मनमें एक ऐसी भक्तिका सञ्चार हुआ कि गोराने जब उसको प्रणाम किया तब वह संकुचित हो गई और अपनेको प्रणाम लेनेके अयोग्य जान कुण्ठित हो उठी।

हरिमोहिनीने कहा—बेटा ! तुम्हारे बिषयमें मैंने बहुत बातें सुनी हैं, तुम्हीं गौर हो ? तुम यथार्थमें गौर हो !

किस बुद्धिसे हाकिमने तुमको जेल दिया मैं यही सोच रही हूँ ।

गोराने हंसकर कहा—अगर आप मजिस्ट्रेट होतीं तो जेलखानेमें चूहे छल्लन्दरका ढेरा होता ।

हरिमोहनीने कहा—नहीं बाब संसारमें चोर डाकुओंकी क्या कमी है जो उनके बदले साधुओंको जेलकी कष्ट भोगना पड़े । क्या मजिस्ट्रेटके आँखें न थी ? न तुम चोर न डाकू, फिर उसने तुम्हें कैदकी सजा क्यों दी ? तुम तो भगवानके पूरे भक्त हो; सच्चे देश हितैषी हो; यह तुम्हारा चेहरा देखने ही से मालूम होता है । जेलखाना मौजूद है इसलिये क्या जिसे पाओगे उसीको जेलमें धाँध दोगे ? अरे दादा ! यह कैसा न्याय है ।

गोराने कहा—मनुष्यके मुँह की ओर देखने से पीछे भगवानके रूप का स्मरण न हो आवे इसीसे मजिस्ट्रेट केवल कानूनकी किताबकी ओर देखकर काम करता है किसी मनुष्य का मुँह देखकर काम नहीं करता । अगर वह ऐसा करता तो मनुष्य को बेत, कैद, द्वीपान्तरवास और फाँसी की सजा देकर क्या उसकी आँखों में नींद आती या उसे खाना अच्छा लगता ?

हरिमोहिनी—जब छुटी मिलती है तब मैं राधारानीसे तुम्हारी रचनाबली पढ़वा कर सुनती हूँ । कब तुम्हारे मुँहसे अच्छी-अच्छी बातें सुनूँ, मैं इसी प्रत्याशामें इतने दिन से थी । मैं भूख खा और जन्म की दुखिनी हूँ न हित की सब बातें मेरी समझमें आती हैं और न समझ कर उन पर ध्यान ही देती हूँ । किन्तु अब तुमसे कुछ ज्ञानकी शिक्षा पाऊँगी, यह मुझे दृढ़ विश्वास है ।

गोराने नम्रतासे सिर झुका लिया । उसने इस बातका कुछ उत्तर नहीं दिया ।

हरिमोहनीने कहा—आज तुमको कुछ खाकर जाना होगा । तुम्हारे सदृश विशुद्ध ब्राह्मण कुमारको मैंने बहुत दिनोंसे नहीं खिलाया है ।

आज जो कुछ मौजूद है उसीसे मुंह मीठा कर लो। किसी दिन तुमको मेरे घर अच्छी तरह भोजन करना होगा। मैं आज ही नेवता दे रखती हूँ।

यह कहकर जब हरीमोहिनी गोराके लिए जल-पानको व्यवस्था करने गई तब सुचरिता की छाती धड़कने लगी।

गोरा झट पूछ बैठा—आज विनय आपके यहाँ आया था ?

सुचरिता दबी जवान से बोली —जी हाँ।

गोरा—उसके बादसे विनयके साथ मेरी भेंट नहीं हुई है, किन्तु वह क्यों आया था यह मैं जानता हूँ।

गोरा यह कहकर चुप हो रहा सुचरिता भी चुप हो रही।

कुछ देरके बाद गोरा ने कहा—आप लोग जो ब्राह्म-मत के अनुसार विनय का व्याह कर देना चाहती हैं यह क्या उचित है ?

इस बातकी ठेस लगनेसे सुचरिताके मनसे सङ्कोचका भाव एकदम दूर हो गया। उसने गोराके मुँहकी ओर देखकर कहा—क्या आप मुझसे यही कहलाना चाहते हैं कि ब्राह्म मतसे विवाह होना अच्छा नहीं है ?

गोरा—मैं आपसे केवल यही नहीं कहलाना चाहता; मैं तो आपसे बहुत कुछ सीखानेकी आशा रखता हूँ, यह आप निश्चय जानो।

आप किसी एक दलकी व्यक्ति नहीं हैं, यह आपको अपने मनमें विचारना चाहिए और पाँच आदमियोंकी बातमें पढ़कर आप अपने तर्क हीन न समझें।

सुचरिता सावधान होकर बैठी और बोली—क्या आप किसी दलमें नहीं हैं।

गोरा—नहीं, मैं तो हिन्दू हूँ। हिन्दू कोई दल नहीं, कोई सम्प्रदाय नहीं। हिन्दू एक जाति है। यह जाति इतनी बड़ी है कि कोई इस जाति के जातित्वको किसी संज्ञाके द्वारा सीमा-बद्ध करे, यह नहीं हो सकता।

सुचरिता—यदि हिन्दू कोई सम्प्रदाय नहीं तो वह साम्प्रदायिक झमेलेमें क्यों पड़ता है ?

गोरा—मनुष्यको कोई मारने जाता है तो वह अपनेको क्यों बचाना चाहता है ? वह सजीव है, उसके प्राण हैं, इसी लिये न ? पत्थर ही एक ऐसा निर्जीव पदार्थ है जो सब प्रकारके आघातोंको चुपचाप सह लिया करता है ।

सुचरिताने कहा—जिसे मैं धर्म समझती हूँ उसे यदि हिन्दू आघात समझें तो ऐसी दशामें आप मुझे क्या करनेकी सलाह देंगे ?

गोरा—तब मैं आपको यही सलाह दूंगा कि जिसको आपने कर्तव्य समझ लिया है वह यदि हिन्दू-जातिकी इतनी बड़ी सत्ताके लिये हानिकारक आघात गिना जाय तो आपको खूब सोच विचार कर देखना होगा कि आपकी समझमें कोई भूल या धर्मान्धता तो नहीं है । आपने सब ओर भली भाँति सोचकर देखा है कि नहीं ? अपने दलके लोगोंके संस्कारको केवल अभ्यास या आलस्य वश सत्य कहकर एक इतना बड़ा उत्थात करनेको प्रवृत्ति होना ठीक नहीं ।

सुचरिता कुछ उत्तर देनेकी चेष्टा न कर चुपचाप गोराकी बात सुनती जा रही थी । यह देखकर गोराके मनमें दयाका सञ्चार हो आया वह ज़रा रुककर कोमल स्वरमें बोला—मेरी बातें शायद आपको सुनने में कठोर मालूम हुई हों, पर इससे आप मुझे विरुद्ध पक्षका मनुष्य समझ मनमें विद्रोहका भाव न रखें । अगर मैं आपको धिक्कर पक्षकी समझता तो आपसे ये सब बातें न कहता । आपके हृदयमें जो एक स्वाभाविक उदार शक्ति है, वह समाजके भीतर रहकर संकुचित हो रही है, इसीका मुझे बड़ा खेद है ।

सुचरिताका मुँह लाल हो गया । उसने कहा—नहीं, नहीं, आप मेरे लिये कुछ सोच न करें । आपको जो करना हो, कहिए । मैं उसे समझनेकी चेष्टा करूँगी ।

गोराने कहा—मुझे अब और कुछ कहना नहीं है। आप भारतवर्ष को अपनी सरल बुद्धि और सरल हृदयके द्वारा देखें। इसे आप प्यार करें। भारतवर्षके लोगोको यदि आप अवाहकी दृष्टिसे देखेंगी तो अवश्य उन्हें तुच्छ समझ उनका अपमान करेंगी। तब आपको केवल उनकी भूल ही भूल सुझेंगी। जहाँसे उनके सम्पूर्ण गुण-दोष देख पड़ेंगे वहाँ तक आप न पहुँच सकेंगी। ईश्वरने इन्हें भी मनुष्य बनाया है। इनका विचार भिन्न है, मार्ग भी एक नहीं। इनका विश्वास और संस्कार भी अनेक प्रकारके हैं। किन्तु सभीका आधार एक मनुष्यत्व है।

सुचरिता सिर नीचा किये सुन रही थी। उसने एक बार गोरामें मुँहकी ओर देखकर कहा—आप मुझे क्या करनेको कहते हैं ?

गोरा—और कुछ नहीं कहता, मैं सिर्फ इतना ही कहता हूँ कि आपको यह बात खूब सोचकर देखनी होगी कि हिन्दू धर्म पिताकी भाँति—नाना भावोंके, नाना मतोंके, लोगोको अपनी गोदमें लेनेके लिये सदा प्रस्तुत रहता है—अर्थात् एक हिन्दू धर्म ही ऐसा है जो संसारमें मनुष्योंको मनुष्य समझ अङ्गीकार करता है; समाजका व्यक्ति जान उसे मनुष्यसे भिन्न जातिका जीव नहीं मानता। हिन्दू धर्म मूर्खको भी मानता है, जानीको भी मानता है।

इसी समय सतीश घरमें आया। और धीरे धीरे बोला—हारान बाबू आए हैं। सुचरिता चौक उठी, मानों किसीने चाबुक मारा हो। हारान बाबूका आना उसे अच्छा न लगा। उसे किसी तरह टाल देनेकी मैं उसने अपना वुशल समझा और उसका आना गोरामें जाहिर न हो, यह भी उसकी आन्तरिक इच्छा थी। सतीशकी धीमी आवाज गोरामें काग तक न पहुँची होगी, यह समझ कर सुचरिता झट वहाँसे उठी। उसने जीनेसे नीचे उतर हारान बाबूके सामने खड़ी होकर कहा—मुझे क्षमा कीजिए, आज आपके साथ बातचीत करनेकी सुविधा न होगी।

हारान बाबू—सुविधा क्यों न होगी ?

सुचरिता इसका सीधा उत्तर न देकर बोली—कल यदि आप पिता जी के यहां आवें तो मुझसे भेंट हो सकेगी ।

हारान बाबू—मालूम होता है, इस समय आपके यहां कोई बीठा है ?

इस प्रश्नको भी सुचरिताने उड़ा दिया । उसने कहा—आज मुझे फुरसत नहीं । आज कृपा कर मुझे लमा करें ।

हारान बाबू—किन्तु सड़कसे गौर बाबू का कठस्वर .वा है, मालूम होता है वे अभी यहां हैं ।

इस प्रश्नको वह टाल न सकी, मुंह लाल करके बोली—हाँ, हैं तो ।

हारान बाबूने कहा—अच्छी बात है, उनसे भी मुझे कुछ कहना था । यदि आपको बात-चीत करनेकी फुरसत न हो तो कोई हर्ज नहीं, मैं तब तक गौर बाबूसे बात-चीत करूँगा ।

यह कहकर और सुचरितासे सम्मतिकी प्रतीक्षा किये बिना ही वह जीनेसे ऊपर जाने लगे । सुचरिता हारान बाबूके प्रति कोई लक्ष्य न करके ऊपरके कमरेमें गई और गौरबाबूसे बोली—मौसी आपके लिए जलपान तैयार करने गई हैं, उन्हें देख आऊँ ।—यह कहकर वह शीघ्रतासे चली गई और हारान बाबू गम्भीर भाव धारण करके एक कुर्सी पर जा बैठे ।

हारान बाबूने गौरासे कहा—आप कुछ दुर्बल दिखाई देते हैं ?

गोरा—जी हाँ, दुर्बल होनेका कारण ही था ।

हारान बाबूने कण्ठस्वरको कुछ कोमल करके कहा—इसीसे तो, ओफ़ ! आपको बड़ा कष्ट सहना पड़ा है ।

गोरा—जितने कष्टकी आशा की जाती है उससे अधिक कुछ भी नहीं हुआ ।

हारान—विनय बाबूके सम्बन्धमें आपसे कुछ पूछना है । आपने सुना ही होगा कि उन्होंने आगामी रविवारको ब्राह्मसमाजमें दीक्षा लेनेका निश्चय किया है ।

गोरा—जी नहीं, मैं तो नहीं सुना ।

हारान बाबूने पूछा—आपकी इसमें सम्मति है ?

गोरा—विनय तो मेरी सम्मतिकी अपेक्षा नहीं रखता ।

हारान बाबू—क्या आप समझते हैं कि विनय बाबू आपके विश्वासके साथ यह दीक्षा लेनेको तैयार हुए हैं ?

गोरा—जब वह दीक्षा लेनेको राजी हुआ है, तब आपका यह पूछना बिल्कुल अनाश्यक है ।

हारान बाबू—जब प्रवृत्ति प्रबल हो उठती है तब हम लोगों को यह विचारकर देखनेका अवसर नहीं मिलता कि किसे मानना चाहिए और किसे नहीं । आप तो मनुष्यों का स्वभाव जानने ही हैं ।

गोरा—जी नहीं, मैं मनुष्यके स्वभावके ही विषयमें व्यर्थ आलोचना नहीं करता ।

हारान बाबू—आपके साथ मेरा या मेरे समाजका मत नहीं मिलता । तो भी मैं आप पर श्रद्धा रखता हूँ । मैं बखूबी जानता हूँ कि आपको अपने विश्वाससे, चाहे वह सत्य हो या मिथ्या, कोई किसी प्रलोभनसे हटा नहीं सकता । किन्तु—

गोराने रोककर कहा—मुझ पर जो आपकी कुछ श्रद्धा बच रही है क्या वह इतनी मूल्यवान है कि उससे वञ्चित होने के कारण विनयको विशेष हानि सहनी पड़े । संसारमें भली बुरी वस्तुएँ अवश्य हैं किन्तु आप अपनी श्रद्धा या अश्रद्धा द्वारा उनका मूल्य निरूपण करें तो भलेही करें, पर बात इतनी है कि आप संसार के लोगोंसे उसे ग्रहण करने के हेतु आग्रह न करें ।

हारान बाबू—बहुत अच्छा, उस बात की मीमांसा अभी न होनेसे भी काम चल जायगा । किन्तु मैं आपसे पूछता हूँ कि विनय जो पेशे बाबूके घर विवाह करना चाहते हैं सो क्या आप उसमें रोकटोक न करेंगे ?

गोराने लाल आँखें करके कहा—मैं विनयके सम्बन्धमें आपके साथ क्या यह आलोचना कर सकता हूँ ? जब आप मानव स्वभावसे परिचित

हैं तब आपको यह भी जानना उचित था कि विनय मेरा मित्र है, आपका नहीं।

हारान बाबू—इस घटनाके साथ ब्राह्म-समाजका सम्बन्ध है, इसलिए मैंने यह बात चलाई है, नहीं तो—

गोरा—मैं तो ब्राह्म समाजका कोई नहीं हूँ, मुझसे आपका यह कहना न कहने के बराबर है।

इसी समय सुचरिता घर में आई। हारान बाबूने उससे कहा—
सुचरिता, तुमसे मुझे कुछ कहना है।

यह कहनेकी कोई आवश्यकता न थी। गोराके सामने सुचरिताके साथ अगनी विशेष घनिष्ठता प्रकट करने ही के लिए हारान बाबूने निःप्रयोजन यह बात कही थी। सुचरिताने इसका कुछ उत्तर न दिया। गोरा भी अपने आसन पर अटल भावसे बैठा रहा। हारान बाबूको सुचरिता के साथ बात करनेका अवकाश देनेको उसने वहाँ से हट जाने की कोई चेष्टा न की।

हारान बाबूने कहा—सुचरिता, उठो, उस कमरे में चलो तो तुमसे मुझे जो कहना है, वह मैं कह दूँ।

सुचरिताने इस बात को अनसुनी कर गोरा की ओर देखकर कहा—गौरमोहन बाबू, आपके लिए जलपानका सब सामान ठीक हो गया। आप उस कमरे में चलिए। मौसी जलपान लेकर यहीं आती, परन्तु वे हारान बाबू के सामने नहीं निकलतीं इसी लिए वे बड़ी देर से आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं।

यह आखिरी बात हारान बाबू के मन में चोट पहुँचाने ही के मतलब से सुचरिताने कही। आज उसने बहुत सहा है, तो भी चोट के बदले चोट लगाये बिना न रह सकी।

गोरा उठा। हारान बाबू घृष्टकी तरह बोले—मैं तब तक बैठता हूँ।

सुचरिता—व्यर्थ क्यों बैठिएगा ? आज आपसे बातचीत करने का समय न रहेगा ।

तो भी हारान बाबू न उठे । सुचरिता और गोरा दोनों वहाँ से चले गये ।

गोरा को इस घरमें इस प्रकार बैठे देख और सुचरिता के व्यवहार पर लक्ष्य करके हारान बाबूका मन लोहा लेनेको तैयार हो गया । क्या सुचरिता ब्राह्म-समाजसे यों भ्रष्ट हो नीचे गिर जायगी ? उसकी रक्षा करनेवाला कोई भी नहीं है ? जैसे होगा, इसका प्रतिरोध करना ही होगा ।

हारान बाबू दराज़से कागज़ खींच सुचरिता को पत्र लिखने बैठे । हारान बाबूके मनमें कितने भी अन्ध विश्वास थे । उनमें एक यह भी था कि सत्य को दुहाई देकर जब हम किसी को फटकार बताते हैं तब हमारा ओजस्वी वाक्य विफल नहीं हो सकता ।

भोजन के उपरान्त हरिमोहिनीके साथ बड़ी देर तक बात करके गोरा जब अपनी छड़ी लेने के लिए सुचरिताके कमरेमें गया तब सूर्यास्त हो चुका था । सुचरिता की टेबल पर बत्ती जलाई जा चुकी थी । सारान बाबू चले गये हैं । सुचरिताके नामकी लिखी एक चिट्ठी टेबल पर खुली पड़ी है । वह इस तरह से रखी हुई हैं कि घर के भीतर प्रवेश करते ही उस पर दृष्टि पड़े ।

उस चिट्ठीको देखते ही गोराके हृदयका भाव बदल गया । जो पहले मन्खन से भी मुलायम था वह एकाएक पत्थर से भी बढ़कर कठोर हो गया । चिट्ठी हारान बाबूके हाथ की लिखी है, इसमें कोई सन्देह न रहा । सुचरिता पर जो हारान बाबूका एक विशेष अधिकार है यह गोरा जानता था । उस अधिकारमें कोई अन्तर आ पड़ा है, यह वह न जानता था । आज जब शतीशने सुचरिताके कानमें हारान बाबूके आने की बात कही और सुचरिता चौंकर बड़ी शीघ्रतासे नीचे चली गई तथा फिर थोड़ी ही देर बाद उसे अपने साथ ऊपर ले आई तब गोराके मनमें

बढ़ी चिन्ता हुई। इसके बाद जब हारान बाबूको घरमें अकेला छोड़ सुचरिता गोराको जलपान करानेके लिए ले गई तब यह व्योहार भी गोराको अच्छा न लगा परन्तु अधिक घनिष्टताकी जगह ऐसा खुला व्यवहार हो सकता है, यह समझ कर गोराने इसे आत्मीयताका ही लक्षण समझा। इसके अनन्तर टेबल पर यह चिट्ठी देखकर गोराके मनमें एक भारी धक्का लगा। पत्र बढ़ी ही र समय चलु है। वह बाहरसे केवल नाम दिखाकर भीतर सब बातें रख लेती है जिससे मनुष्य भौतिक-भौतिक तर्क-वितर्क करने लग जाते हैं, मूल कुछ न रहने पर भी उन्हें आकाश-पातालकी बातें सोचनी पड़ती हैं।

गोराने सुचरिताके मुँहकी ओर देखकर कहा -- मैं कल आऊंगा।

सुचरिताने नीची नज़र करके कहा -- बहुत अच्छा।

विनयने आनन्दमयीसे कहा — मां, मैं परसों ब्राह्म समाजमें दीक्षा लूंगा !

आनन्दमयीने विस्मित होकर कहा — यह कैसी बात है विनय ? दीक्षा लेना क्या ऐसा ही जरूरी हो पड़ा है ?

विनय — हां, दीक्षा लेना जरूरी हो पड़ा है ।

आनन्द० — तेरा जो कुछ विश्वास है, उसे लेकर क्या तू हमारे समाज में रह नहीं सकता ?

विनय — रहनेसे पपट करनेका पाप होगा ।

आनन्द० — कपट न करके रहनेका क्या तुझे साहस नहीं है ? समाज के लोग उस दशामें कपट देंगे — तो वह पष्ट सहकर तू रह नहीं सकेगा ?

विनय — मां, मैं अगर हिन्दू-समाजके मतमें न चलूँ तो...

आनन्द० — हिन्दू-समाजमें अगर तीन सौ ते'निस करोड़ मत चल सकते हैं, तो तेराही मत क्यों नहीं चलेगा ?

विनय — मगर मां हमारे समाजके लोग अगर बहे' कि तुम हिंदू नहीं हो, तो मेरे जबरदस्ती कहनेसे ही क्या मैं हिंदू बना रहूंगा ।

आनन्द० — मुझे तो मेरे समाजके लोग ईसाई कहते हैं — मैं तो काम काज आनन्द-उत्सवके अवसर पर उन लोगोंके साथ एक जगह बैठकर खाती-पीती नहीं । तो भी मुझे उनके ईसाई कहनेसे ही उनकी वह बात मुझे मान लेनी ही होगी, ऐसा तो मैं नहीं समझती जिसे मैं उचित जानती-मानती हूँ उसके लिए कहीं भाग कर बैठ रहनेको मैं अन्याय समझती हूँ ।

विनय इसका उत्तर देने जा रहा था । आनन्दमयीने कुछ कहने न देकर कहा — विनय मैं तुझे बहस न करने दूंगी । यह बहसकी बात नहीं है !

मुझसे कुछ छिपा सकता है ? मैं देख पा रही हूँ कि मेरे साथ बहस करनेका बहाना लेकर तू ज़बरदस्ती अपनेको बहलानेकी चेष्टा करता है । किन्तु इतने बड़े गुस्तर मामलेमें इस तरह धोखाधड़ी चलाने का इरादा मत कर !

विनयने सिर झुका कर कहा—लेकिन माँ, मैं तो चिट्ठी लिखकर वचन दे आया हूँ कि कल दीक्षा लूंगा ।

आनन्द०—यह हो न सकेगा । परेश बाबूसे अगर तू समझा कर कहेगा, तो वह कभी दीक्षा लेनेके लिये तुझ पर दबाव न डालेंगे ।

विनय—परेश बाबूको तो इस दीक्षा लेनेके मामलेमें कुछ उत्साह नहीं है ! वह इस अनुष्ठानमें सम्मिलित नहीं हैं ।

आनन्द०—तो फिर कुछ सोचना न होगा ।

विनय—ना, मा, बात पक्की हो गई है, अब लौटाई नहीं जा सकेगी । ना, किसी तरह नहीं ।

आनन्द०—गोरासे तो कहा है ?

विनय०—गोराके साथ मेरी भेंट नहीं हुई ।

आनन्द०—क्यों, गोरा इस समय घरमें नहीं है क्या ?

विनय—ना । खबर मिली है कि वह सुचरिताके घर गया था ।

आनन्दमयीने विस्मित होकर कहा—वहाँ तो वह कल गया था ।

विनय—आज भी गया है ।

इसी समय आँगनमें पालकीके कहारोंकी आवाज़ सुन पड़ी । आनन्दमयीके नाते रिश्ते की किसी स्त्रीके आनेकी कल्पना करके विनय बाहर चला गया ।

ललिताने आकर आनन्दमयीको प्रणाम किया । आज आनन्दमयीने किसी तरह ललिताके आनेकी प्रत्याशा नहीं की थी । विस्मित होकर ललिताके मुखकी ओर देखते ही वह समझ गई कि विनयकी दीक्षा आदिके मामलेको लेकर कहीं पर कुछ रुझाव उपस्थित हुआ है, और इसीसे ललिता इस समय उनके पास आई है ।

उन्होंने बात छेड़नेकी सुविधा कर देनेके लिये कहा—बेटी, तुम्हारे आनेसे मुझे बड़ी खुशी हुई। अभी विनय यहीं था, कल वह तुम्हारे समाजमें दीक्षा लेगा, यही जिक्र अभी मेरे साथ हो रहा था।

ललिता...वह दीक्षा क्यों ले रहे हैं ? उसका क्या कुछ प्रयोजन है ?

आनन्दमयीने विस्मित होकर कहा—प्रयोजन नहीं है बेटी ?

ललिता—मैं तो सोचकर कुछ प्रयोजन नहीं देख पाती ?

आनन्दमयी ललिताका अभिप्राय न समझ सकने के कारण चुप होकर उसके मुँहकी ओर ताकने लगीं।

ललिताने सिर नवाकर कहा—अकस्मात् इस तरह दीक्षा लेने जाना उनके लिये अपमानकी बात है। यह अपमान वह काहेके लिये स्वीकार करने जाते हैं ?

काहेके लिये ? यह बात क्या ललिता नहीं जानती ? इसके भीतर क्या ललिताके लिये आनन्दमयीकी बात कुछ भी नहीं ?

आनन्दमयीने कहा—कल दीक्षाका दिन है, वह पक्की जबान दे चुका है—अब उसे पलटने का कुछ उपाय नहीं है। विनय तो यही कह रहा था।

ललिताने आनन्दमयीके मुखकी ओर अपनी प्रदोत दृष्टि स्थिर करके कहा—इन सब मामलोंमें पक्की बातचीतके कुछ भी माने नहीं है। यदि परिवर्तन आवश्यक हो, तो वह करना ही होगा !

आनन्द०—बेटी तुम मुझसे लज्जा न करो। मैं सब बातें तुमसे खुलासा करके कहती हूँ। अभी कुछ ही देर हुई। मैं विनयको समझा रही थी कि उसका धर्म विश्वास चाहे जो और चाहे जैसा हो समाजको त्याग करना उसे उचित भी नहीं है, जरूरी भी नहीं है। मुँह से चाहे जो वह कहे, वह भी इस बातको नहीं समझता—यह भी मैं नहीं कह सकती। लेकिन बेटी उसके मन का भाव तुमसे तो छिपा नहीं है। वह निश्चय जानता है कि समाजको छोड़े बिना तुम लोगों के साथ उसका

सम्बन्ध हो नहीं सकता । लज्जा न करो बेटी ठीक ठीक कहो यह बात सच है कि नहीं ?

ललिताने आनन्दमयीके आगे सिर उठाकर कहा—मां तुम्हारे आगे मैं बिल्कुल लज्जा नहीं करूंगी । मैं तुमसे सच कहती हूँ कि मैं यह कुछ नहीं मानती मैंने खूब अच्छी तरह सोचकर देख लिया है—मनुष्य का कोई भी धर्म, विश्वास, समाजसे क्यों न हो उसे छोड़कर ही मनुष्य परस्पर मिल सकते हैं—यह बात कभी हो ही नहीं सकती । तब तो बड़ी बड़ी दीवारें उठाकर एक एक सम्प्रदायको एक एक घेरेके भीतर रख देना ही उचित है ।

आनन्दमयीका सुख आनन्दकी आभासे उज्ज्वल हो उठा । उन्होंने कहा—आहा, तुम्हारी बातें सुनकर मुझे बड़ा आनन्द हुआ । मैं तो यही बात कहती हूँ ! एक मनुष्यके साथ मनुष्यका रूप गुण या स्वभाव कुछ भी नहीं मिजता, तब भी तो उस भेद के कारण दो मनुष्य के मिलने में कोई रुकावट नहीं होती—फिर मत और विश्वासके भेद से ही क्यों रुकावट होगी ! बेटी, तुमने मेरी जान बवालो, मुझे विनयके लिये गयी चिन्ता हो रही थी । मुझे मालूम है कि उसने अपना मन और सभी कुछ तुम लोगोंको दे दिया है । तुम लोगोंके साथ सम्बन्धमें यदि उसके कहीं पर कुछ आघात लगेगा तो, उसे वह तो किसी तरह सह नहीं सकेगा इसीसे उसे इस काममें बाधा देने से मेरे मनमें कैसी व्यथा हो रही थी, सो वह अन्तर्यामी ही जानते हैं । किन्तु उसका कैसा सौभाग्य है उसका ऐसा संकट तुमने इतने सहज में दूर कर दिया—यह क्या कम बात है ? अच्छा एक बात तुमसे पूछती हूँ—परेश बाबूके साथ क्या यह बात चीत कुछ हुई है ?

ललिताने लज्जाकी दबा कर कहा—नहीं हुई । किन्तु मैं जानती हूँ वह ये सब बातें ठीक समझेंगे ।

आनन्द०—वह क्यों न समझेंगे ? अगर वह ऐसे समझदार न

होते, तो ऐसी बुद्धि, ऐसा मनका जोर तुम कहाँसे पाती ? बेटी मैं विनय को बुला लाऊँ । तुमको खुद बातचीत करके उससे सब बातें तयकर लेना उचित है । इसी समय मैं एक बात और तुमसे कह लूँ बेटी । विनयको मैं उस समय से देखती आ रही हूँ, जब वह जरा सा था । वह ऐसा लड़का है कि उसके लिये चाहे जितना दुःख तुम लोग स्वीकार कर लो, वह उस सारे दुःखको सार्थक कर देगा । यह मैं जोर देकर कहती हूँ । मैंने अक्सर सोचा है कि विनय को जो प्राप्त करेगी ऐसी कौन भाग्यवती होगी ! बीच बीचमें अनेक बार अनेक सम्बन्ध आये; मगर मुझे कोई पसंद नहीं हुआ आज देखती हूँ वह भी कम भाग्यशाली नहीं है ।

इतना कहकर आनन्दमयीने उंगली छुआ कर ललिताके चिबुकका सुस्पर्श किया और विनयको बुलाकर ले आई । कौशलसे लछमिनियाको दालान में बिठाकर वह ललिताके लिये खाने पीनेके प्रबन्ध कराकरके अन्यत्र चली गई ।

आज अब ललिता और विनयके बीच संकोचका अवकाश नहीं था । उन दोनों के जीवन में जिस एक कठिन संकट का आविर्भाव हुआ है उसी के आह्वानसे उन्होंने परस्परके सम्बन्धको सहज और बढ़ा करके देखा । आज उनके बीच में किसी आवेश के भावने आकर रंगीन पर्दा नहीं डाल दिया । उन दोनोंके हृदय मिल गये हैं और उनके दोनों जीवनो की धाराएं गंगा और यमुना की तरह एक पुण्य तीर्थ में मिल कर एक होने के लिये परस्पर निकट हो आई है—इस बारेमें कुछभी कोई आलोचना न करके इस बातको बिनीत गंभीर भावसे सुपचाप अंकुठित चित्तसे मान लिया । समाजने उन दोनों जनों को बुलाया नहीं किसी मतने उन दोनों जानों को मिलाया नहीं, उनका यह बन्धन कोई कृत्रिम बन्धन नहीं है इस बात को स्मरण करके उन्होंने अपने मिलनको ऐसे एक धर्मका मिलन अनुभव किया, जो धर्म अत्यंत वृद्धत उदार भावसे सरल है, जो किसी छोटी बातके लिये झगड़ा नहीं करता जिसमें कोई पंचायत का पण्डित बाधा नहीं दे सकता । ललिताका मुख और आँखें

उज्ज्वल हो उठीं । उसने कहा — आप झुक कर अपनेको हीन बना कर मुझे प्रणम करने आवें, यह अगौरव मुझसे सहा न जायगा । आप जिस जगह हैं, वही अविलम्बित बने रहें, यही मैं चाहती हूँ ।

विनयने कहा—आपकी भी जहाँ प्रतिष्ठा है, वही स्थिर रहें—आपको कुछ भी हिलना न होगा । प्रीति यदि प्रभेदको स्वीकार नहीं कर सकती, तो फिर जगत्में किसी तरहका प्रभेद क्यों है ?

दोनोंने प्रायः बीस मिनट तक जो बातचीतकी, उसका सारांश बस इतना हो सकता है, जो कि ऊपर कहा गया । वे इस बातको भूल गये कि हिन्दू हैं, या ब्राह्म । उनके मनके भीतर यही बात स्थिर दीप-शिपाकी तरह जलने लगी कि वे दो मानवात्मा हैं ।

— —

परेशबाबू उपासनाके उपरांत अपनी बैठकके सापनेके बरामदेमें चुपचाप बैठे थे। सूर्य अभी अभी अस्त हुए थे।

इसी समय ललिताको साथ लिए विनयने वहां प्रवेश कर उनको प्रणाम किया।

परेश बाबू दोनोंको इस तरह वहां पर उरस्थित होते देखकर कुछ विस्मित हुये। पास बैठने देनेके लिए कुर्सी न होनेके कारण उन्होंने कहा—चलो, घरके भीतर चलो। विनयने कहा—ना, आप उठें नहीं। यह कह कर वह वहीं जमीन पर बैठ गया। ललिता भी ज़रा हट कर परेश बाबूके पैरोंके पास बैठ गई।

विनयने कहा—हम दोनों जने एक साथ आपका आशीर्वाद लेने आये हैं। यही हमारे जीवनकी सत्य दीक्षा होगी।

परेश बाबू विस्मित होकर दोनोंके मुंहकी ओर ताकने लगे।

विनयने कहा—बंधे हुये नियमके अनुसार बंधे हुये शब्दोंके द्वारा समाजमें प्रतिज्ञा ग्रहण मैं नहीं करूंगा। जिस दीक्षासे हम दोनों .जनोंका जीवन नत होकर सत्यके बन्धनमें बंधेगा, वह दीक्षा आपका आशीर्वाद ही है। हम दोनों ही जनोंका हृदय भक्तिसे आपके ही चरणों के निकट प्रणत हुआ है। हम दोनोंका जो मंगल है, वह ईश्वर आपके हाथसे दे देंगे।

परेश बाबू कुछ देर तक कोई बात न कह कर स्थिर भावसे बैठे रहे। परेश बाबूने कहा—विनय तो तुम ब्राह्म न होगे ?

विनय — ना।

परेश—तुम हिन्दू-समाजमें ही रहना चाहते हो ?

विनय—हां।

परेशबाबूने ललिताके मुखकी ओर देखा। ललिताने उनके मनका भाव समझकर कहा—बाबूजी, मेरा जो धर्म है, वह मेरा है, और सदा रहेगा।

मुझे असुविधा हो सकती है, कष्ट भी हो सकता है; किन्तु जिन लोगों के साथ मेरे मत का, यहाँ तक कि आचरण का, मेल नहीं है, उन्हें गौर वनाकर दूर हटाकर रखते दिना मेरे धर्म में बाधा पड़ने की बात में किसी तरह अपने मन में नहीं ला सकती।

परेश बाबू चुप रहे। ललिता ने फिर कहा—महले मुझे जान पड़ता था, ब्राह्म-समाज से अलग होना जैसे समस्त सत्य से अलग होना है। किन्तु इधर कुछ दिन से मेरी वह धारणा बिलकुल जाती रही है।

परेश बाबू स्नान भाव से ज़रा मुसकराये थं।

ललिता ने कहा—बाबू जी, मैं तुमको यह जताने में असमर्थ हूँ कि मुझमें कितना बड़ा परिवर्तन हांगया है। ब्राह्म-समाज के भीतर मैं जिन सब लोगों को देख रही हूँ, उनमें से अनेक के साथ मेरा धर्म-मत एक होने पर भी उनके साथ तो मेरा किसी तरह ऐक्य नहीं है, तो भी 'ब्राह्म-समाज' के नाम का आश्रय लेकर उन्हो को मैं विशेष करके अपना कहूँ, और पृथ्वी के अन्य सभी मनुष्यों को अपने से दूर रखूँ, इसका कुछ भी अर्थ आज कल मैं नहीं समझ पाती !

परेश बाबू ने अपनी विद्रोही कन्या की पीठ पर धीरे-धीरे हाथ फेरते कहा—व्यक्तिगत कारण से जिन समय मन उत्तेजित रहता है, उस समय क्या विचार ठाक तोर से किया जा सकता है ? पूर्व-पुरुष से लेकर सन्तान-सन्तति पर्यन्त मनुष्यकी जो एक पूर्वापरता है, उसके मङ्गल को देखने के लिए समाज का प्रयोजन होता है। वह प्रयोजन तो कृत्रिम प्रयोजन नहीं है। तुम लोगों के भावी वश के भीतर जो दूर व्यापी भविष्य निहित है, उसका भार जिसके ऊपर स्थापित है, वही तुम्हारा समाज है। उसकी बात क्या न सोचोगी।

विनय ने कहा—हिन्दू समाज तो है।

परेश—हिन्दू-समाज अगर तुम लोगों का भार न ले, अगर तुम लोगों को न स्वीकर करे ?

विनय ने आनन्दमयी की बात याद करके कहा—उसे अपने तई

स्वीकार कराने का भार हम लोगों को लेना होगा। हिन्दू-समाज तो सदा से बराबर नए-नए संप्रदायों को आश्रय देता आया है। हिन्दू समाज सभी धर्म-संप्रदायों का समाज हो सकता है।

परेश—जबानी बहस में एक चीज को ढग में दिखाया जा सकता है, किन्तु कार्य के समय वह ढग पाया नहीं जाता। नहीं तो कोई क्या खुशी में पुरातन समाज को छोड़ सकता है? जो समाज मनुष्य के धर्म-बोध को बाहरी आचार की बेड़ियां डाल कर एक ही जगह कैद करके बिठा रखना चाहता है, उसे मानने से अपने को चिर दिन के लिए काठ की पुतली बना कर रखना पड़ता है।

विनय—हिन्दू-समाजकी अगर वही संकीर्ण अवस्था हो गई हो, तो उससे उसे मुक्ति देनेका भार हम लोगों को लेना होगा। जहाँ घरकी खिड़की और दरवाजों की संख्या बढ़ा देने से ही घर में हवा और प्रकाश आ सकता है, वहाँ कोई चिढ़ कर पक्की इमारतको 'गरा' देना नहीं चाहता।

ललिता कह उठी—बाबूजी, मैं इन सब बातोंको समझने में असमर्थ हूँ! किसी समाजकी उन्नतिका भार लेनेके लिये मेरा कोई इरादा नह। किन्तु चारों ओर से ऐसा एक अन्याय मुझे धक्के देता हुआ ठेग रहा है कि मेरे प्राण जैसे हफि उठे हैं। किसी भी कारणसे यह सब सहकर सिर नवाकर रहना मुझे उचित नहीं है। उचित अनुचित भी मैं अच्छी तरह नहीं समझती, किन्तु बाबूजी, मुझसे यह सदा न जायगा।

परशुबाबूने स्नेहपूर्ण स्वर में कहा—और भी कुछ समय ठहरना क्या अच्छा न होगा? इस समय तुम्हारा मन चंचल है।

ललिता—ठहरने में मुझे कुछ आपत्ति नहीं है। किन्तु मैं निश्चय जानती हूँ, मिथ्या बातें और अन्याय, अत्याचार और भी बढ़ता ही रहेगा। इसीसे मुझे बड़ा भय होता है कि असह्य होने के कारण पीछे अकस्मात् कहीं ऐसा कुछ न कर डालूँ, जिससे तुमको भी कष्ट मिले।

तुम यह न खयाल करो बाबूजी कि मैंने कुछ सोचा नहीं। मैंने खूब अच्छी तरह सोचकर देखा है कि मेरा जैसा संस्कार और शिक्षा है, उससे ब्राह्म-समाज के बाहर शायद मुझे बहुत संकोच और कष्ट स्वीकार करना होगा; किन्तु मेरा मन कुछ कुण्ठित नहीं होता—वह मन के भीतर एक ज़ोर पैदा हो रहा है, एक आनन्द हो रहा है। मुझे अगर कुछ चिन्ता है, तो बस यही बाबूजी कि पीछे मेरा कोई काम तुम्हें कुछ कष्ट न पहुँचावे !

यह कहकर ललिता धीरे धीरे परेश बाबू के पैरों पर हाथ फेरने लगी।

परेश बाबू ने ज़रा मुसकराकर कहा—बेटी, मैं अगर केवल अपनी ही बुद्धि के ऊपर भरोसा करता, तो मेरी इच्छा और मत के विरोध से कोई काम होने पर मैं दुःख पाता। तुम लोगों के मनमें जो आवेग उपस्थित हुआ है, वह संपूर्ण अमङ्गल है—यह बात मैं ज़ोरके साथ कह नहीं सकता। मैं भी एक दिन विद्रोह करके घर छोड़कर निकल आया था—किसी सुविधा या असुविधा की बात नहीं सोची। समाजके ऊपर आजकल जो यह वात-प्रतिवात चल रहा है, इससे समझ पड़ता है कि उन्हीं जगदीश्वर की शक्ति का कार्य चल रहा है। वह परम पिता अनेक ओरसे तोड़फोड़ कर, गड़ कर, संशोधन करके, किस चीज को किस भाव से खड़ा करेंगे, यह मैं क्या जानूँ ! ब्राह्म-समाज या हिन्दू समाजका खयाल उन्हें नहीं है—वह मनुष्यको केवल देखते हैं।

परेश बाबू कुर्सी छोड़कर उठ खड़े हुए, और बोले—विनय तुम लोग सब बातोंको साफ़ करके सोच-विचार कर नहीं देखते। तुम्हारे अंकले या और किसी के मतामत की बात नहीं हो रही है। विवाह तो केवल व्यक्तिगत बात नहीं है, वह एक सामाजिक कार्य है—यह भूल जाने से कैसे चलेगा ? तुम लोग कुछ अवकाश लेकर सोच कर देखो ! अभी कोई राय पक्की न कर डालो।

इतना कहकर परेश बाबू वहाँसे बागको चले गये, और वहाँ अकेले ही टहलने लगे ।

ललिता भा वहाँ से जानेके लिये उद्यत होकर फिर ज़रा ठहर गई, और उसने विनय की ओर पीठ करके कहा—इस लोगोंकी इच्छा अगर अनुचित इच्छा न हो, और वह इच्छा अगर किसी एक समाजके विधानके साथ आद्यन्त न मिले तो सिर नीचा करके हमारे पीछे लौट जाने की बात किसी तरह मेरी सम्झ में नहीं आती । समाजमें असत्य व्यवहारके लिये स्थान है, केवल न्याय संगत आचरण के लिये ही स्थान नहीं है ? विनयने धीरे-धीरे ललिताके पास आकर खड़े होकर कहा—मैं किसी भी समाज को नहीं डरता । हम दोनों जने मिल कर अगर सत्यका आश्रय ग्रहण करें तो हमारे समाज जैसा इतना बड़ा समाज और कहा पाया जायगा ?

वरदासुन्तीने इसी समय आंश्वीकी तरह दोनों जनोंके सामने आकर कहा—विनय, मैं सुना है, तुम दीक्षा न लोगे—क्यों ?

विनय—दीक्षा मैं योग्य गुरु से लूंगा—किसी समाज से नहीं ।

ललिताने कहा—विनय बाबूकी दीक्षाके बारेमें ब्राह्म-समाजके सब आदमियोंकी तो सम्मति नहीं है । ब्राह्म-समाजका मुख पत्र तो तुमने पढ़ कर देखा है ? ऐसी दीक्षा लेने की ज़रूरत क्या है ?

वरदा०—दीक्षा लिये बिना विवाह कैसे होगा ?

ललिता—क्यों न होगा ?

वरदा०—हिन्दू-मत से होगा क्या ?

विनय—सो हो सकता है । जो कुछ बाधा है, वह मैं दूर कर दूंगा ।

कुछ देर तक वरदासुन्दरीके मुखसे बात नहीं निकली । उसके बाद रुँधे हुए गले से उन्होंने कहा—विनय, जाओ, तुम जाओ ! इस घर में फिर तुम न आना ।

सुचरिता निश्चय जानती थी कि गोरा आज आवेगा। सबेरेसे ही उसका कलेजा घड़क रहा था। सुचरिता के मनमें गोरा के आगमन की प्रत्याशा के आनन्दके साथ-साथ कुछ भय भी मिला हुआ था। गोरा उसे जिस ओर खींच रहा था, और बालपन से उसका जीवन-वृत्त अपनी जड़ और डाल-पात लेकर जिस ओर फैल रहा था, इन दोनों के बीच पड़कर वह घबरा रही थी। मैं अपना पैर किस ओर बढ़ाऊँ, यह उसकी समझ में न आता था।

कल जब उसकी मौसीके घरमें गोरा ने ठाकुरजी को प्रमाण किया तब सुचरिता के मनमें यह बात बेतरह खटकती। गोरा ने प्रणाम तो किया ही है, क्या उसका विश्वास भी ऐसा ही है, या उसने ऊपर के मनसे प्रणाम किया है? इस बातको बारं बार सोचकर वह किसी तरह अपने मनको शान्त न कर सकी।

सुचरिता के कमरे में गोरा ने ज्योंही पैर रक्खा त्योंही सुचरिता ने पूछा—क्या आग इस मूर्ति की भक्ति करते हैं?

गोरा ने एक अस्वाभाविक बलके साथ कहा—हाँ, भक्ति करता हूँ।

यह सुनकर सुचरिता सिर नवाकर चुप हो रही। उसकी इस मन्त्र नीरव वेदनासे गोराके मनमें कुछ चोट लगी। वह झट बोल उठा—देखो, मैं तुमसे सच कहता हूँ। मैं ठाकुरजीकी भक्ति करता हूँ या नहीं, यह ठीक-ठीक नहीं कह सकता। किन्तु मैं अपनी देश-भक्ति की भक्ति करता हूँ। इतने दिनोंसे समस्त देशकी पूजा जहाँ पहुँचती है, वही स्थान मेरे लिए पूज्य है। मैं किरिस्तान पादरीकी भक्ति वहाँ किसी तरह विष दृष्टि नहीं डाल सकता।

सुचरिता मन ही मन कुछ सोचती हुई गोरा के मुँह की ओर देखती रही। गोरा ने कहा—मेरी बातको ठीक-ठीक समझना तुम्हारे

लिए बड़ा कठिन है, यह मैं जानता हूँ । क्योंकि लगातार इतने दिनों तक एक सम्प्रदायके भीतर होने से इन सब विषयों पर सहज दृष्टिपात करने की तुम्हारी शक्ति चली गई है । जब तुम अपनी मौसीके घरमें ठाकुरजीको देखती हो तब तुम केवल पत्थर को ही देखती हो । लेकिन मैं तुम्हारी मौसीके भक्तिपूर्ण हृदयको ही देखता हूँ । उसे देखकर क्या मैं कभी क्रोध कर सकता हूँ या अपमान कर सकता हूँ । क्या तुम समझती हो कि यह हृदय का देवता पत्थर का देवता है ?

मैं किसीको धर्मशिक्षा दे सकूँ ऐसी योग्यता मुझमें नहीं है; किन्तु मेरे देश के लोगों की भक्ति पर तुम लोग हँसो, इसे मैं कभी नहीं सह सकूँगा । तुम अपने देश के लोगोंसे पुकारकर कहती हो,—तुम मूर्ख हो, मूर्तिपूजक हो; मैं उन सभीको बुलाकर जताना चाहता हूँ कि नहीं, तुम मूर्ख नहीं हो, तुम पौत्तलिक नहीं हो, तुम शानी हो, तुम भक्त हो । हम लोगोंके धर्मत्व में जो महत्व है, भक्तित्व में जो गम्भीरता है, उस पर श्रद्धा-प्रकाश के द्वारा मैं अपने देश के हृदय को जाग्रत करना चाहता हूँ । जहाँ उसकी सगति है, वहाँ उसके गौरवको मैं स्थापित करना चाहता हूँ । मैं अपने देश-वासियों का सिर नीचा होने न दूँगा । यही मेरा प्रण है । तुम्हारे पास भी आज मैं इसी लिए आया हूँ । जब से मैंने तुमको देखा है तबसे एक नई बात मेरे मनमें अनुभूत हुई है । इतने दिन तक मैं उस बातको न सोचता था । अब मैं समझता हूँ कि केवल पुरुषकी दृष्टिसे ही भारतवर्ष पूर्ण रूपसे देखा नहीं जायगा । हमारे देशकी स्त्रियोंकी दृष्टि जिस दिन उस पर पड़ेगी उसी दिन उसका देखना सफल होगा । तुम्हारे साथ एक-दृष्टिसे मैं अपने देशको कब देखूँगा, यह उक्त इच्छा मेरे मन को जला रही है । अपने भारतवर्ष के लिए हम अकेले मरने को तैयार हैं, किन्तु बिना तुम्हारी सहायताके उसका अन्वकार पूरे तौर से दूर न हो सकेगा । अगर तुम उससे दूर रहोगी तो भारतवर्ष की सेवा जैसी चाहिए, न होगी ।

हाय ! कहाँ वह भारतवर्ष ! कहाँ कितनी दूर पर यह सुचरिता थी ! कहाँ से भारतवर्ष का यह साधक आ पड़ा । यह भाव में भूला हुआ साधक सबको हटाकर क्यों इसी के पास आ खड़ा हुआ ! सबको छोड़कर क्यों उसने इसीको पुकारा ! कोई सन्देह न किया, कोई बाधा न मानी । कहा, तुम्हारे न रहने से काम न चलेगा । मैं तुमको लेने ही के लिए आया हूँ । तुम्हारे दूर रहनेसे यज्ञ पूरा न होगा । सुचरिता की आँखों से आँसुओं की धारा बह चली । क्यों बह चली, यह वह समझ न सकी ।

गोरा ने सुचरिता के मुँह की ओर देखा । उस दृष्टिके सामने सुचरिता ने अपनी आँसू-भरी आँखें नीचे न कीं । ओस-कणसे भरे हुए कमल-पुष्पकी भोंति वे आँखें आत्म-विस्मृत भाव में गोरा के मुँह की ओर विकसित हो रहीं !

हरिमोहिनीका कण्ठस्वर सुन गोरा चौंकर पड़ा और मुँह फिराकर घरकी ओर देखने लगा ।

हरिमोहिनीने कहा—बेटा, कुछ मुँह मीठा करके जाना ।

गोरा भट बोल उठा—आज नहीं, आज मुझे माफ़ कीजिए, मैं अभी जाता हूँ ।

यह कहकर गोरा और किसी बात की अपेक्षा न करके बड़ी तेज़ी से चला गया ।

कुछ ही देर बाद परेश बाबू आ गये । सुचरिता के कमरे में पहुँच कर उन्होंने कहा—

बिनय अब दीक्षा न लेगा ।

सुचरिता कुछ न बोली । परेशने कहा—बिनयके दीक्षा लेनेके प्रस्ताव पर मुझे पूरा सन्देह था, इसीसे मैं उसके अस्वीकार करने से कुछ विशेष क्षुब्ध नहीं हुआ । किन्तु ललिता की बात के टङ्गसे मालूम हुआ है कि दीक्षा न लेने पर भी बिनय के साथ ब्याह करने में उसे कोई बाधा नहीं दिखाई देती ।

मुचरिता हठात् खूब जोरसे बोल उठी—नहीं, कभी नहीं होगा ।

परेशबाबू ने अचम्भे के साथ पूछा—क्या नहीं होगा ?

मुचरिता—विनयके ब्राह्म न होनेसे ब्याह कैसे होगा ?

परेश—हिन्दू-मत से ।

मुचरिता ने सिर हिलाकर कहा—नहीं, नहीं, आज-कल ये क्या बातें हो रही हैं । ऐसी बात मन में आने देना भी उचित नहीं । क्या अन्तमें शालग्राम पूजकर ललिताका ब्याह होगा ? यह मैं किसी तरह होने न दूँगी ?

गोरा ने मुचरिताके मनको अपनी ओर खींच लिया है, कोई यह न कहे, इसलिए आज वह हिन्दू-मतसे विवाह की बात पर एक अस्वाभाविक आक्षेप प्रकट कर रही है । इस आक्षेप के भीतर की असल बात यही है जिससे परेशबाबू समझे कि मुचरिता उनको छोड़ कहीं न जायगी । वह अब भी उनके समाज का, उनके मतका, उनके उपदेश का उल्लङ्घन न करेगी । वह उनके शिक्षा-रूपी बन्धन को किसी तरह तोड़ न सकेगी ।

परेश ने कहा—विवाह के समय शालग्रामको साक्षी रूप में न रखने को विनय राजी हो गया है ।

इसमें तुम क्या कहती हो ?

मुचरिता कुछ सोचकर बोली—तो हमारे समाज में ललिताको निकल जाना पड़ेगा ?

परेश—इसके विषयमें मुझे बहुत चिन्ता करनी पड़ी है । किसी मनुष्यके साथ जब समाजका विरोध हो तब दो बातें सोचनी पड़ती हैं । दोनों दलोंमें न्याय किस ओर है, दोनों दलोंमें प्रबल कौन है । समाज की प्रबलतामें तो सन्देह ही नहीं हो सकता, अतएव विद्रोही को दुःख भेलना पड़ेगा । ललिता बार-बार मुझसे कहती है कि 'मैं केवल दुःख सहनेको ही तैयार नहीं हूँ वरन् इसमें आनन्दका अनुभव भी कर रही

हूँ ।' यदि यह बात सत्य हो और इसमें कोई अन्याय न पाया जाय तो मैं उसे क्यों रोकूँ ?

सुचरिता—पिताजी, यह कैसे होगा ?

परेश—मैं जानना हूँ कि इसमें कोई सङ्कट अवश्य उपस्थित होगा । किन्तु ललिताके साथ विनयके व्याहमें जब कुछ दोष नहीं, वरन ब्याह होना ही उचित है, तब यदि समाजमें विग्रह उपस्थित हो तो उस विग्रह को हम विग्रह नहीं मानेंगे । मनुष्यको समाजके दबावमें पड़कर कर्तव्य से संकुचित हो रहना ठोक नहीं । मनुष्यका कर्तव्य सोचकर समाजको ही अपनी स्थिति सुधारनी चाहिए । इस कारण जो लोग दुःख स्वीकार करने को राजी हैं, मैं उनकी निन्दा नहीं कर सकता ।

सुचरिता ने कहा—इसमें तो सबसे बढ़कर आप ही को दुःख स्वीकार करना होगा ।

परेश—यह बात सोचने की नहीं है ।

सुचरिता ने पूछा—तो क्या आपने सम्मति दे दी है ?

परेश ने कहा—नहीं, अभी तो नहीं, दी है किन्तु देनी ही होगी । ललिता जिस मार्ग में जा रही है, उस मार्ग में मुझे छोड़ कौन उसे आशीर्वाद देगा और ईश्वरको छोड़ उसका सहायक कौन होगा ?

परेशबाबू जब चले गये तब सुचरिता स्थिर होकर बैठी रही । वह जानती थी कि परेश बाबू ललिताको हृदयसे कितना प्यार करते हैं । वही ललिता नियत मार्ग को छोड़कर एक अपरिचित मार्गसे चलने को तैयार हो गई है । इससे उनका मन कितना व्याकुल हो रहा है, यह समझनेमें उसको कुछ कठिनाई न रही ।

आज सबेरे से गोरा के घर खूब धूमधाम है । पहले महिमने हुक्का पीते-पीते वहाँ आकर गोरासे पूछा—मालूम होता है, इतने दिन बाद विनय ने अपना बन्धन काट डाला ?

गोरा की समझमें यह बात न आई । वह भाईके मुँहकी ओर देखने लगा । महिमने कहा—मेरे आगे कपट करने से क्या होगा ? तुम्हारे मित्रकी बात तो अब छिपी नहीं रही । सर्वत्र डङ्का पिट गया । यह देखो न ।

यह कहकर महिमने गोरा के हाथमें एक समाचारपत्र दिया । उसमें रविवारको विनयके ब्राह्म-समाजमें दीक्षा लेनेकी बात खूब बढ़ा-चढ़ाकर छपी गई थी ।

गोराने जब कहा—मैं यह हाल नहीं जानता तब महिमने पहले उसके इस कथन पर विश्वास नहीं किया । पीछे वह विनयके इस गहरे कपट व्यवहार पर बार-बार आश्चर्य करने लगा, और चलते समय कह गया कि स्पष्ट वाक्य से शशिमुखीके ब्याहमें सम्मति देकर उसके बाद जब विनय अपनी सम्मति बदलने लगा था तभी हमको समझ लेना चाहिए था कि उसके सर्वनाशका आरम्भ हो गया है ।

अविनाश हाँफते-हाँफते आकर बोला—गोरा यह क्या ! जिसका कभी स्वप्नमें भी अनुभव न हुआ था विनय बाबूने आखिर—

अविनाश अपने कथनको पूरा भी नहीं कर सका । विनयकी इस लाञ्छनासे उसको इतना दर्प हो रहा था कि इस पर कृत्रिम खेद करना उसके लिए कठिन हो पड़ा ।

देखते-देखते गोराके दलके प्रधान-प्रधान सभी लोग आ जुटे । विनयके विषयमें उन सभीमें खूब उत्तेजना-पूर्ण आलोचना होने लगी । अधिकांश लोग एकमतसे बोले—इस घटनामें आश्चर्यकी कोई बात

नहीं। कारण यह कि विनयके व्यवहारमें बराबर एक दुविधा और दुर्बलताका लक्षण दिखाई देता आया है। वास्तवमें हमारे दिलमें विनयने कभी मनसा वाचा कर्मणा आत्म-समर्पण नहीं किया। बहुतोंने कहा—‘विनय आरम्भसे ही अपनेको किसी तरह गोरा के बराबर धर्मनिष्ठ बनानेकी चेष्टा करता था और यह बात हमें न सुझाती थी।’ और लोग जहाँ भक्तिका सङ्कोच रहनेके कारण गोरासे यथोचित दूर रहते थे वहाँ विनय ज़बर्दस्ती उससे ऐसा लिपटा रहता मानों वह सर्वसाधारणसे भिन्न है और गोराका समकक्ष है; गोरा विनयको चाहता था इसलिए सब लोग उसकी इस स्पर्द्धाको सह लेते थे—इस प्रकारके बे-रोक-टोक अहङ्कारका यही परिणाम हुआ करता है।

उन लोगोंने कहा—हम लोग विनयके सहस विद्वान् नहीं हैं, हम लोगोंमें अत्याधिक बुद्धि भी नहीं है, किन्तु मैया हम लोग एक आदर्श को मानकर चलते हैं। आचार्यने जो पथ दिखा दिया है उसे छोड़ नहीं सकते। हम लोगोके जो मनमें है वह मुंहमें है। हम आज कुछ करें और कन कुछ, यह हम लोगोसे नहीं हो सकता। इससे भले हो हम लोगों को कोई मूर्ख कहे, निर्बोध कहे, चाहे जो कहे।

गोराने इन बातोंमें कुछ योग न दिया। वह चुपचाप शान्त बैठा रहा।

जब सब लोग एक-एक कर चले गये, तब गोराने देखा कि विनय उसके कमरेमें न आकर ज़ीनेसे ऊपर जा रहा है। इससे गोराने झट कोठेसे निकल उसे पुकारा—विनय !

विनय ज़ीनेसे उतरकर गोराके कोठेमें आया। गोराने कहा—विनय बाबू ! मैं नहीं जानता कि मैंने तुम्हारे साथ, बिना जाने, क्या अन्याय किया है जो तुमने मुझे एकाएक इस तरह परित्याग कर दिया है।

आज गोराके साथ कुछ न कुछ विवाद अवश्य होगा, यह बात विनय पहले ही से सोचकर दिलकी मज़बूत करके ही आया था। जब

विनयने गोराका मुँह उदास देखा, और उसके कण्ठस्वर में स्नेह-जनित वेदनाका अनुभव किया तब वह मनको जिस कठोरताका कवच पहिनाकर लाया था, वह कवच एक ही पलमें टुकड़े-टुकड़े हो उड़ गया।

वह बोले उठा—भाई गोरा, तुमने समझनेमें भूल की है। जीवन में अनेक परिवर्तन होते हैं; कितनी ही वस्तुओंका त्याग करना पड़ता है। किन्तु इससे मैं मित्रत्व को क्यों छोड़ूँगा ?

गोरा ने ज़रा ठहरकर कहा—विनय, क्या तुमने ब्राह्म धर्मकी दीक्षा ले ली है ?

विनय—नहीं; न ली है और न लूँगा।

गोरा—जलिता से ब्याह करोगे ?

विनय—हाँ।

गोरा—हिन्दू-पद्धतिसे ?

विनय—हाँ।

गोरा—ग़रेश बाबूकी राय है !

विनय—यह उनकी चिट्ठी देख लो।

गोरा ने परेशकी चिट्ठी दोमर्तबा पढ़ी। उसके अन्त में यही लिखा था—“मैं अपनी पसन्द या ना-पसन्दकी बात न कहूँगा, तुम्हारी सुविधा या असुविधाकी भी कोई बात कहना नहीं चाहता। मेरा क्रिम मत पर विश्वास है, मेरा समाज क्या है, यह तुम जानते हो। ललिताने बचपन से क्या शिक्षा पाई है और क्रिम संस्कारके बीच पलकर वह मनुष्य हुई है, यह भी तुमसे छिपा हुआ नहीं है। इन सब बातोंको अच्छी तरह देख-सुनकर तुमने अपना मार्ग ठीक कर लिया है। अब मुझे कुछ कहना नहीं। जहाँ तक मेरी बुद्धि सोच सकी है, मैंने सोच लिया है। सोचकर यही देखा कि तुम दोनोंके विवाहमें बाधा देनेका कोई धर्म-सङ्गत कारण नहीं। क्योंकि तुम पर मेरी पूर्ण श्रद्धा है। इस जगह समाजमें यदि कोई बाधा हो तो तुम उसे स्वीकार करनेको बाध्य नहीं। मुझको केवल इतना ही कहना है कि यदि तुम समाजको

लौघना चाहते हो तो इसके लिए तुमको समाजसे बड़ा बनना होगा। यदि तुम अपनेको बड़ा न बना सकोगे तो समाज-बन्धनको तोड़कर निकल जाना तुम्हारे लिए श्रेयस्कर न होगा। तुम्हारा प्रेम, और तुम्हारा सम्मिलित जीवन, केवल प्रलय-शक्तिकी सूचना न देकर उत्पत्ति और पालनका तत्त्व धारण करे, इस पर सदैव ध्यान रखना होगा। केवल इसी एक काममें सहसा एक प्रचण्ड दुःसाहस दिखलानेसे काम न चलेगा। इस दुःसाहसके अनन्तर तुमको अपने जीवन के समस्त कार्यको वीरतत्व-सूत्रमें गूँथना होगा; नहीं तो तुम बहुत नीचे उतर आओगे। क्योंकि बाहरसे समाज तुमको सर्वसाधारण की श्रेणीमें भी नहीं रख सकेगा। यदि तुम अपने प्रभावसे इन साधारण मनुष्योंकी अपेक्षा बड़े न हो सकोगे तो साधारण लोगोंकी दृष्टि में भी तुम छोटे जँचोगे। वे लोग भी तुम्हें नीची दृष्टि से देखेंगे। तुम्हारे भविष्य शुभा-शुभके लिए मेरे मनमें यथेष्ट आशङ्का बनी है। किन्तु इस आशङ्काके कारण तुमको रोक रखनेका मुझे कोई अधिकार नहीं। क्योंकि संसार में जो साहस करके अपने जीवनके द्वारा नये-नये प्रश्नों की मीमांसा करनेको तैयार हैं वे ही समाजको बड़ा बना सकते हैं। जो केवल सामा-जिक नियम मानकर चलते हैं वे केवल समाजको ढाँते हैं, उसे आगे बढ़ाना नहीं चाहते। इसलिए मैं अपनी भीरुता और चिन्ता लेकर तुम्हारा मार्ग न रोक्कूँगा। तुमने जिसे अच्छा समझा है, अनेक विघ्न रहते भी उसका पालन करो। ईश्वर तुम्हारी सहायता करे। ईश्वर अपनी सृष्टिको किसी एक अवस्थामें बाँधकर नहीं रखता। वह उसको अनेक अवस्थाओं में बदलता रहता है। जो संसारके पथ-प्रदर्शक हैं वहीं तुम लोगों को मार्ग दिखावे। मेरे ही मार्ग से तुमको सदा चलना होगा, ऐसा आदेश मैं नहीं दे सकता। तुम्हारी अवस्थाके जब हम थे, तब हम भी रस्ती खोलकर किनारेसे सम्मुख वायुकी ओर नाव ले चले थे। किसीके निषेध-वाक्य पर हमने ध्यान न दिया था। आज भी उसके लिए हम पश्चात्ताप नहीं करते। यदि अनुताप करनेका कारण सङ्घ-

टिन होता तो उसी, से क्या ? मनुष्य मूल करेगा, उसके कितने ही साधन व्यर्थ भी होंगे, वह दुःख भी पावेगा; किन्तु इससे वह हाथ पर हाथ रखकर बैठ न रहेगा । जो उचित समझेगा उसके लिए वह आत्म समर्पण करेगा ही । इसी तरह यह निमल-जलवाली संसार-नदी की धारा चिरकाल तक बहती रहेगी । इसमें कभी कभी किनारा टूटकर कुछ कालके लिए क्षति पहुँच सकती है, इस भयसे उसके प्रवाहको बाँध देना प्रलयको बुलाना है, यह मैं भली भाँति जानता हूँ । अतएव जो शक्ति तुमको अनिवार्य वेगसे सामाजिक नियमके बाहर खींचकर लिये जा रही है उसीको भक्तिपूर्वक प्रमाण करके मैं उसके हाथ तुम दोनोंको सौंरता हूँ । वही तुम दोनोंकी जीवन-मम्बन्धी सारी निन्दा, ग़ज़ानि और आत्मीय जनोंके चिरविच्छेदको सार्थक करे । जो तुम दोनों को दुर्गम पथ पर लिये जा रही है, वही तुमको गन्तव्य स्थान तक पहुँचा देगी ।”

इस चिट्ठीको पढ़कर गोरा चुप हो रहा । उसे चुर देख विनयने कहा—परेश बाबूने अपनी ओर से जैसी सम्मति दी है वैसे ही तुमको भी सम्मति देनी पड़ेगी ।

गोरा—परेश बाबू सम्मति दे सकते हैं, क्योंकि नदीकी जिस धारा में किनारे टूटते हैं, वह उन्हां की है; परन्तु मैं सम्मति नहीं दे सकता, क्योंकि हमारी धारा किनारे (वंश) की रक्षा करती है । हमारे इस किनारे पर हजारों लाखों वर्ष की गगनभेदी कीर्ति विद्यमान है । हम कुछ नहीं कह सकते, यहाँ प्रकृतिका नियम ही काम करेगा ।

विनय ने कहा—अच्छा तुम इतना ही बतलाओ कि तुम हमारे इस विवाहको पसन्द करोगे या नहीं ।

गोरा—नहीं करूँगा, कदापि नहीं ।

विनय—और—

गोरा—और क्या, तुम्हें छोड़ दूँगा । तुमसे कोई सम्पर्क न रखूँगा ।

विनय—अगर मैं तुम्हारा मुसलमान मित्र होता तो ?

गोरा—तो उसकी बात ही अलग होती। पेड़की डाल दूट कर यदि आप हो अलग हो पड़े तो ये उसे किसी तरह फिर पूर्ववत् अपना नहीं बना सकता। किन्तु बाहर से जो लता आकर उससे लिपटती है उसे वह आश्रय देता ही है। यहाँ तक कि अन्धड़ से दूटकर गिर पड़ने पर भी उसे नहीं छोड़ता। किन्तु अपना जब पराया हो जाय तो उसको छोड़ने के सिवा और कोई गति नहीं। इसी लिए तो इतने विधि-निषेध हैं, इतनी खैचातानी है।

विनय—इसीसे कहता हूँ कि त्याग का कारण इतना हलका और उसका विधान इतना सुलभ होना उचित न था। जिस समाजमें अत्यन्त साधारण आघात लगनेसे ही जुदाई होती है और वह जुदाई हमेशाके लिए रह जाती है उस समाजमें मनुष्यको स्वच्छन्द होकर चलने-फिरने और काम-धन्धा करने में कितनी बाधा पहुँचती है, क्या तुम इस बातको सोचकर नहीं देखते ?

गोरा—उस चिन्ताका भार मेरे ऊपर नहीं, समाजके ऊपर है। समाज उसकी, जैसी चाहिए, चिन्ता कर रहा है।

विनयने हँसकर कहा—मैं भी इतने दिनों तक ये सब बातें इसी तरह कहता था—आज मुझे भी यह बात किसीके मुँहसे सुननी होगी, यह कौन जानता था। बात बनाकर बोलनेका दण्ड आज मुझे अवश्य भोगना पड़ेगा, यह मैं अच्छी तरह समझ गया हूँ।

गोरा—भुनगा जब आगमें गिरने जाता है तब वह भी ठीक तुम्हारी भाँति, इसी तरह, तर्क करता है। इसलिए मैं भी अब तुमको व्यर्थ समझानेकी चेष्टा न करूँगा।

विनयने कुरसी से उठकर कहा—अच्छी बात है, तो मैं जाता हूँ, एक बार माँ से भेट कर आऊँ।

हरिमोहिनीने पूछा—राधारानी, कल रातको तुमने ब्यालू क्यों नहीं की ?

सुचरिताने चकित होकर कहा—की तो थी ।

हरिमोहिनीने उसकी ढकी हुई भोजन-सामग्री दिखाकर कहा—कहाँ खाया है, सब सामान तो रक्खा हुआ है ।

तब सुचरिता को स्मरण हो आया कि कल खानेकी बात उसे याद न थी ।

हरिमोहिनी ने रूखे स्वर में कहा—ये बातें अच्छी नहीं । मैं तुम्हारे परेश बाबूको जहाँ तक जानती हूँ, वे तुम्हारे इन रङ्ग-ढङ्गो को पसन्द नहीं करेंगे । उनके दर्शनसे मनुष्य का मन शान्त होता है । यदि वे तुम्हारी आज-कलकी चाल-ढाल की ये बातें जानेंगे तो क्या कहेंगे ।

हरिमोहिनीके कहनेका उद्देश क्या है, यह सुचरिता समझ गई । पहले तो उसके मनमें कुछ संकोच हो आया । गोरा के साथ मेरे व्यावहारिक सम्बन्धकी नितान्त साधारण स्त्री-पुरुषके सम्बन्धके साथ तुलना करके एक ऐसे अपवाद का कटाक्ष मेरे ऊपर हो सकता है, इस बातको उसने कभी न सोचा था । इसलिए हरिमोहिनीकी टेढ़ी बात से वह झुब्ध हो गई । किन्तु वह फिर तुरन्त ही संभलकर बैठी और हरिमोहिनी के मुँह की ओर देखने लगी ।

सुचरिता ने उसी समय निश्चय कर लिया कि मैं गोरा के संबंध की बातोंमें किसीके आगे कुछ संकोच न करूँगी । उसने हरिमोहिनीसे कहा—मौसी, तुम तो जानती ही हो, कल गोरा बाबू आये थे । उनके मुँहसे निकले हुए गंभीर विषयने मैंने मनको इस तरह विमुग्ध कर दिया कि मुझे खानेकी भी सुधि न रही ।

हरिमोहिनी जैसी बात सुनना पसन्द करती थी ठोक वैसी गोरा की बात न होती थी। वह भक्तिकी बात सुनना चाहती थी। किन्तु गोराके मुँहसे भक्तिकी बात वैसी सरस और रोचक न निकलती थी।

आज सबेरे गोरा जब सुचरिता के घर पहुँचा तब हरिमोहिनी ठाकुर जी की पूजा कर रही थी। सुचरिता अपनी बैठकमें टेबल पर पुस्तक आदि वस्तुओंके सँवारनेमें लगी थी। ठोक इसी समय सतीशने आकर खबर दी कि गौर बाबू आये हैं। सुचरिता सुनकर विशेष उत्कण्ठित न हुई। मानो वह पहले ही से जानती थी कि गौर बाबू आज आवेंगे।

गोरा कुरसी पर बैठते ही बोला—आखिर विनयने हम लोगों को छोड़ ही दिया।

सुचरिता—छोड़े गे कैसे ! वे तो ब्राह्म-समाज में सम्मिलित नहीं हुए।

गोरा—ब्राह्म-समाज में सम्मिलित हो जाता तब तो कोई बात ही न थी। तब वह किसी तरह हमारे पास ही रहता। वह हिन्दू-समाजका गला खूब कसकर पकड़े हुए है, यही बात सबसे बढ़कर कष्टप्रद है। इससे हमारे समाज का वह एकदम छोड़ देता तो बड़ा उपकार करता।

सुचरिता ने मन में गहरी चोट खाकर कहा—आप समाज को इस प्रकार अत्यन्त एकान्त दृष्टि से क्यों देखते हैं ? समाज के ऊपर जो आप इतना अधिक विश्वास रखते हैं यह क्या आपका स्वाभाविक विश्वास है, या अपने ऊपर बलप्रयोग करके ही ऐसा करते हैं ?

गोरा—ऐसी अवस्थामें यह बलप्रयोग करना ही स्वाभाविक है। जहाँ गिरने का खौफ है, वहाँ पैर पर जोर देकर ही चलना होता है। यह चारों ओर जो विरुद्धता का साम्राज्य फैल रहा है, उससे मरे वाक्य और व्यवहारमें कुछ बाहुल्य पाया जाता है, यह अस्वाभाविक नहीं है।

सुचरिता—यह जो चारों ओर आप विरुद्धता देख रहे हैं, उसे

एकाएक अन्याय और अनावश्यक क्यों समझ रहे हैं ? यह समयकी गतिमें समाज बाधा दे तो समाजको आघात सहना ही पड़ेगा ।

गोरा—प्रमयकी गति जलकी तरङ्ग की भाँति होती है । वह पार्श्ववर्त्ती भूमिको काटकर गिराती है, इससे हम यह नहीं मान सकते कि सूखी जमीनका कटकर गिरना ही उसका धर्म है । तुम यह मत समझो कि हम समाजकी भली-बुरी बातों पर कुछ विचार नहीं करते । वह विचार करना इतना सहज हो गया है कि आज-कलकेछोकरे भी विचारक हो उठे हैं ।

किन्तु मैं तुमसे सच कहता हूँ कि तुम्हारी समझ उन सबोंसे कहीं बढ़कर है । तुम्हारी दृष्टि जहाँ तक पहुँचती है, उनमें किसीकी दृष्टि वहाँ तक पहुँचते नहीं देखी । तुममें गहरी दृष्टि-शक्ति है, यह मैं तुमको देखकर पहले ही समझ गया था । इसीसे मैं अपने इतने दिनों-की हृदयकी सब बातोंको लेकर तुम्हारे पास आया हूँ । मैंने अपने जीवनकी घटनाओंको खोलकर तुम्हारे सामने रख दिया है । तुम उस पर विवेचना करो । मैं तुमसे कोई बात सङ्काचवश छिपाना नहीं चाहता ।

सुचारेता—आप जब इस तरह बोलते हैं तब मेरे मनमें बड़ी व्याकुलता मालूम होती है । आप मुझसे क्या चाहते हैं, कहिए । मैं किस लायक हूँ, मुझे क्या करना होगा ? मैं आपकी आशाको कहीं तक पूरी कर सकूँगी, यह मैं नहीं जानती । मेरे हृदयमें जो एक भाव का आवेग आ रहा है, वह क्या है मैं कुछ नहीं समझती । सच पूछिए तो मुझे भय केवल इतना ही है कि मेरे ऊपर जो आपका विश्वास है उसे किली दिन अपनी भूल समझकर कहीं आपको पछताना न पड़े ।

गोराने गम्भीर स्वर में कहा—भूलकी बात क्या कहती हो । तुमको अच्छी तरह जाँचकर ही मैंने तुम पर विश्वास किया है । तुममें कितनी बड़ी शक्ति है, यह मैं तुम्हें दिखा दूँगा । तुम मनमें किसी बात का

शोच न करो । तुम्हारी योग्यता प्रकट करने का भार मेरे ऊपर है । तुम मरें ही भरोसे यह बात रहने दो ।

सुचरिता चुन हो रही । भरोसे रहने देनेमें अब उसे क्या बाकी रहा, यही उसने मौन धारण द्वारा सूचित किया । गोरा ने फिर कुछ न पूछा और चुन हो रहा । बड़ी देर तक घर में सन्नाटा छाया रहा ।

हरिमोहिनी ठाकुरकी पूजा करके रसोई-घरमें जा रही थी । सुचरिता के निःशब्द कमरेमें कोई मनुष्य है यह भी उसे न जान पड़ा । किन्तु घरके भीतर दृष्टि डालकर हरिमोहिनी ने देखा, सुचरिता और गोरा चुपचाप बैठे कुछ सोच रहे हैं, दोनोंमें किसी तरह का कोई सम्भाषण नहीं है । तब उसका क्रोध अपनी सीमा तक पहुँच गया । किसी तरह अपनेको संभाल द्वार पर खड़ी हो उसने पुकारा—राधारानी ।

सुचरिता उठकर उसके पास गई । हरिमोहिनीने माँठे स्वरमें कहा—बेटी, आज एकादशी है, मेरा जी अच्छा नहीं है । तुम रसोई-घरमें जाकर चूल्हा जलाओ, मैं तब तक गौर बाबूक पास बैठती हूँ ।

माँसीका भाव देख सुचरिता उद्ब्रम होकर रसोई-घरमें चली गई । घरमें हरिमोहिनीके आते ही गारा ने उसे प्रणाम किया । वह कोई बात न बोलकर कुर्सी पर बैठ गई । कुछ देर मुह फुलाये चुन रही, फिर गोरा की ओर देखकर बाली—तुम तो ब्राह्म नहीं हो !

गोरा—जी नहीं ।

हरिमोहिनी—हमारे हिन्दू-समाजको तुम मानते हो ?

गोरा—जी हाँ, मानता हूँ ।

हरिमोहिनी—तो तुम्हारा यह व्यवहार कैसा है ?

हरिमोहिनीके इस प्रतिकूल भाषणका कुछ अर्थ न समझ गोरा चुपचाप उसके मुहकी ओर देखने लगा ।

हरिमोहिनीने कहा—राधा रानी अब अबोध बालिका नहीं है, वह अब सयानी हुई । तुम उसके आत्मीय नहीं हो, तुमसे उसका कोई नाता भी नहीं । तब इस तरह, रोज-रोज आकर उसके साथ घंटों

बातें करना कैसी बात है ! वह स्त्री है, घर का काम-धन्धा करेगी । उसका इन सब बातोंमें रहने की क्या ज़रूरत ? इससे उसका मन दूसरी ओर जा सकता है । तुम तो बड़े ज्ञानी हो—देशके सभी लोग तुम्हारी प्रशंसा करते हैं । किन्तु हमारे देशमें ये बातें कभी नहीं थीं । किसी शास्त्र में भी नहीं लिखी हैं ।

यह सुनकर गोरा के मनमें बड़ा धक्का लगा । सुचरिता के सम्बन्ध में ऐसी बात मैं किसीके मुह से सुन सकता हूँ, इसका स्वप्नमें भी विचार उसने नहीं किया था ।

वह कुछ देर चुप रहकर बोला—ये ब्राह्म-समाजमें हैं । इनको बग-बर इसी तरह सबके साथ मिलते देवता हूँ, इसीमें मैंने इस बात पर कभी ध्यान नहीं दिया ।

हरिमोहिनी—वह ब्राह्म-समाजमें है, यह बात मैंने मान ली, किन्तु तुम तो हिन्दू-समाजमें हो, तुम तो इन बातोंको कभी पसन्द नहीं करते । तुम्हारा उपदेश सुनकर आजकल के कितने ही मनुष्य चैनन्ध लाभ करते हैं । तुम्हारा व्यवहार ऐसा होनेसे लोग तुम्हारी बात कैसे मानेंगे ? कल, बड़ी रात तक, तुमने उसके साथ बात-चीतकी, ता भी तुम्हारा कहना खतम न हुआ । आज फिर सवेरे ही आ पहुँचे । वह भी सवेरे से तुम्हारे पास बैठी रही । न भाण्डार में गई, न रसोई-घरमें गई । आज एकादशके दिन वह मेरी कुछ सहायता करती, यह भी उससे न हुआ । क्या यही शिक्षा उसको दी जा रही है ! तुम्हारे घरमें भी तो बहू-बेटिया हैं, क्या घरका सभी काम-धन्धा बन्द करके तुम उन्हें भी ऐसी ही शिक्षा देते हो-या और ही कोई उन्हें इस तरह शिक्षा दे तो तुम पसन्द करोगे ?

गोरा के पास इन बातोंका कोई उत्तर न था । उसने इतना ही कहा—ये ऐसी ही शिक्षा पाकर इतनी बड़ी हुई हैं इसलिए मैं इनके साथ बातचीत करने में कुछ बुग नहीं मानता ।

हरिमोहिनी—वह भले ही शिक्षा पाये हुए हो किन्तु जितने दिन मेरे पास है, और मैं जब तक जीती हूँ, यह बात न चलेगी। उसको मैं बहुत कुछ उमर रास्तेसे लौटा लाई हूँ। जब मैं परेश बाबूके घर में थी तब चारों ओर यह अफ़साह फैल गई थी कि मेरे साथ मिलकर वह हिन्दू हो गई है। इसके बाद इस घरमें आने पर न मालूम तुम्हारे विनयके साथ क्या-क्या बातें होने लगीं। फिर उसका मिज़ाज बदल गया। मुना है, अब वे ब्राह्मणके घर ब्याह करने जाते हैं, जायें। बड़ी-बड़ी कंठनाईसे विनयको यहाँसे हटाया है। एकके हटने ही फिर दूसरा आ गया। हारान नामका एक आदमी आने लगा। उसे जब मैं आते देवती थी, भट सुचरिता को लेकर ऊपरके कमरे में जा बैठा था। वह अपना अधिकार यहाँ न जमा सका। इस तरह मैं उन लोगो से बचकर इसे बहुत कुछ अपने मत पर ला सकी हूँ। इस मकानमें आने पर उसने सबका छुआ खाना आरम्भ किया था। कलसे उसने ऐसा करना बन्द किया है। कल रसोई-घरसे अपना भोजन वह आग ही ले गई। एक दुमाव नौकर नित्य पानी लाता था, उसे पानी लानेको मना कर दिया है। आपसे मैं हाथ जोड़कर यही बिनती करती हूँ कि आप लोग उसे अब मत बहकाइए। उसके सुधरे साभाव को स्थिर रहने दीजिए। संसार में जो कोई मेरे थे, सब मर गए, सिर्फ यही एक—मेरी जो कुछ समझिए—बच रही है; इसके भी अपने समीपीय आत्मीय जनों में मुझे छोड़ और कोई नहीं है। इसे आप छोड़ दीजिए। इसके पुराने घरमें तो कितनी ही बड़ी-गड़ी लड़कियाँ हैं, लावण्य है, लीला है, वे भी बुद्धिमती और पढ़ो-लिखी हैं। यदि आप को कुछ विशेष वार्तालाप करना हो तो उनके पास जाकर कीजिए, कोई आपको न रोकेंगा।

गोरा कुछ न बोला, ज्यों का त्यों बैठा रहा। हरिमोहिनी उसे चुप देख फिर बोली—आप सोच कर देखिए, अब कहीं इसका ब्याह कर देना ही होगा। उम्र हो गई है। आप क्या कहते हैं, वह सदा

इसी तरह अविवाहित ही रहेगी ? गृहस्थ-धर्म में आना भी तो स्त्रियों का एक आवश्यक कर्म है ।

इस विषय में साधारण भाव से गोरा के मन में कोई सन्देश न था । उसका भी मत यही था किन्तु सुचरिता के संबन्धमें उसने आज तक कभी अपने मन का प्रयोग करके नहीं देखा । सुचरिता गृहिणी होकर किसी एक गृहस्थ के घर के भीतर गृहकार्य में नियुक्त है, वह कल्पना रूपसे भी कभी उसके मनमें न आया था । वह सोचता था, सुचरिता जैसी आज है वैसी ही सदा रहेगी ।

गोरा ने पूछा—आपने अपनी बहनोतीके ब्याह की बात सोची है या नहीं ?

हरिमोहिनी—सोचनी ही होगी । मैं न सोचूंगी तो कोन सोचेगी ?

गोरा—क्या हिन्दू-समाजमें उसका ब्याह हो सकेगा ?

हरिमोहिनी—चेष्टा करके देखूंगी । यदि वह ठिकानाके साथ रहे, ठीक तरह से चले तो मैं उसको हिन्दू-समाजमें चला दे सकूंगी । इन बातों को मैंने मन ही मन ठीक कर रक्खा है । इतने दिन तक उसकी जैसी गति-विधि थी, इससे साहस करके कुछ कर नहीं सकती थी । अब दो दिनसे देखती हूँ कि उसका स्वभाव फिर कुछ बदला जाता है, उसका हृदय कुछ-कुछ कोमल हुआ जाता है, इसी से कुछ भरोसा होता है ।

गोरा ने इस सम्बन्धमें अधिक पूछताछ करना उचित न समझा, पर तो भी वह बिना पूछे न रह सका । पूछा—क्या कोई उपयुक्त वर कहीं ढूँढ़ा है ?

हरिमोहिनी—हाँ, ढूँढ़ा तो है । वर अच्छा ही है—केनास—मेरा देवर । कुछ दिन हुए, उसकी स्त्री मर गई है । पसन्द लायक सयानी लड़की नहीं मिलती, इसी से इतने दिन से बैठा है नहा तो वैसा बाँका लड़का कहाँ मिलेगा ! राधारानी के साथ उसका ठीक भिज्ञान होगा ।

गोरा के हृदय में जितनी ही मुइयाँ चुभने लगी उतना ही वह कैलास के सम्बन्ध में प्रश्न करने लगा ।

हरिमोहिनीके देवरोंमें कैलास ही अपने विशेष यत्नसे थोड़ा-बहुत लिखा-पढ़ा था । कहाँ तक पढ़ा था, यह हरिमोहिनी न बतला सकी । अपने भाई-बन्धुओंमें वही विद्वान् कहलाता है । गाँवके पोस्टमास्टरके खिलाफ ज़िले में जो दरखास्त दी गई थी वह कैलासचन्द्र के ही हाथ की लिखी थी । उसने ऐसा मुजलित भाषा में सब बातें लिख दी थीं कि पोस्ट आफिसका एक बड़ा बाबू स्वयं आकर तहकीकात कर गया था । इससे गाँवके सभी लोगों ने कैलासकी योग्यता पर आश्चर्य प्रकट किया । इतनी गम्भीर शिक्षा पाने पर भी आचार और धर्ममें कैलासकी निष्ठा कुछ कम नहीं हुई है ।

कैलासका सारा इतिहास सुन लेने पर गोरा उठ खड़ा हुआ । हरिमोहिनीको प्रणाम करके वह चुल्चाप चलता हुआ ।

ज़ोनेसे उतरकर गोरा जब अग्निसे सदर फाटक की ओर जा रहा था तब अग्निके एक ओर रसोई-घर में सुचरिता रसोई बनाने में लगी हुई थी । गोरा के पैरोंकी आहट पाकर वह द्वार पर आ खड़ी हुई । गोरा किसी ओर दृक्-गत न करके बाहर चला गया । सुचरिता लम्बी साँस लेकर फिर रसोई के काममें लगी ।

गोरा जब गलीके मोड़के पास आया तब हारान बाबू से उसकी भेंट हुई । हारान बाबू ने ज़रा हँसकर कहा—आज इतने सबेरे ही ।

गोरा ने इसका कोई जवाब न दिया । हारान बाबू ने फिर जग मुसकुराकर पूछा—मालूम होता है, वहीं गये थे । सुचरिता घर ही पर है ?

गोरा—जी हाँ ।

हकरयह कवह बड़ी तेज़ीसे आगे बढ़ गया । हारान बाबू ने साँधे सुचरिता के मकानमें घुसकर रसोई-घरके खुले द्वार की ओर भाँककर

देखा। सुचरिता को देखते ही वह द्वारके सामने खड़ा हो रहा। सुचरिता के भागने का रास्ता बन्द हो गया। मौसी भी उसके पास न थी !

हारान बाबूने पूछा—गोरासे अभी गली के मोड़ पर भेट हुई थी। मालूम होता है, वे बड़ी देरसे वहीं थे ?

सुचरिता उसकी बातका कोई जवाब न दे रसोई के बर्तन-वासन ले अत्यन्त व्यस्त हो उठी। मानो अभी दम लेनेकी कुसत नहीं है, ऐसा भाव उसने दिखाया। किन्तु हारान बाबू इससे बाज़ आनेवाले न थे। उसने उसी जगह खड़े होकर बातचीत करना आरम्भ कर दिया। हरिमोहिनीने ज़ीनेसे नीचे उतर दो-दोन बार खाँसा। इसमें भी कुछ फल न हुआ। हरिमोहिनी हारान बाबू के सामने ही चनी आती, किन्तु वह जानती थी कि एक बार यदि मैं इनके सामने आऊँगी तो इस घर में इस उद्यमशील युवक के अदम्य उत्साहसे मे और सुचरिता दोनों कहीं आत्म-रक्षा न कर सकेंगी। इस कारण वह हारान बाबू की पगछीही देखते ही इतना बड़ा घूँघट काढ़ती थी कि देखनेसे मालूम होता था, वह कलकी आई नई बहू है।

हारान बाबूने कहा—सुचरिता, मैं नहीं जानता कि आखिर तुम किस रास्ते चलांगी और कहाँ जा पहुँचोगी। शायद तुमने सुना ही होगा कि ललिताके साथ विनय बाबूका हिन्दू मतसे ब्याह होगा। तुम जानती हो इसका दोष किमके माथे मड़ा जायगा ?

सुचरिता से कोई उत्तर न पाकर हारान बाबूने स्वरको कुछ मुचायम करके गम्भीर भावसे कहा—तुम्हीं इसकी ज़िम्मेदार समझी जाओगी।

हारान बाबूने फिर यों कहना शुरू किया—तुम्हींने विनय और गोरा को अपने घरमें बिठा-बिठाकर उन्हें यहाँ तक बढ़ाया है कि वे अब तुम्हारे ब्राह्मण-समाजके किसी व्यक्ति को कुछ मनमें नहीं लाते। तुम्हारे ब्राह्मण-समाजके सभी श्रेष्ठ लोगोंकी अपेक्षा यहाँ दोनो हिन्दू युवक तुम्हारे लिए विशेष मान्य हो उठे हैं। इसका फल क्या हुआ है सो देखती हो न ? क्या मैं पहले ही से तुमको बराबर सावधान करता

नहीं आता हूँ ? आज क्या हुआ, यह आँख पसारकर देखा न ! आज ललिता को कौन रोकेगा ? तुम सोचती हो, ललिता के ऊपर से ही होकर विपत्ति की आंधी चली जायगी ! लेकिन ऐसा नहीं है । आज मैं तुमको सावधान करने आया हूँ । अब तुम्हारी बारी है । आज ललिता की दुर्घटनासे तुम जरूर ही मन ही मन पछुता रही हो, किन्तु वह दिन दूर नहीं जिस दिन तुम अपने अधःपतन पर ज़रा भी न पछुताओगी । किन्तु अब भी सँभलने का समय है । सुबह का भूना अगर शाम को घर आ जाय तो वह भूना नहीं कहलाता । एक बार तुम सोच देखो, एक दिन कितनी बड़ी आशाके भीतर हम तुम दोनों पड़े थे । हम लोगोंके कितने ही शुभ सङ्कल्प थे और हमने कितने ही काम की बातें सोच रखी थी । क्या वे सब नष्ट हो गई हैं ! कभी नहीं । हमारी उस आशाकी क्यारी अब भी वैसी ही लहलहा रही है । सिर्फ़ एक बगर तुम मुह फेरकर देखो, जिवर जा रही हो उधरसे एक बार लौट आओ ।

सुचरिता तब तेल में तरकारी भून रही थी चूल्हे परसे कड़ाही को नीचे उतार मुह फिराकर दृढ़ता भरे स्वर में बोली—मैं हिन्दू हूँ ।

हारान बाबूने एकदम हतबुद्धि होकर कहा—तुम हिन्दू हो ?

सुचरिता—जी हाँ, मैं हिन्दू हूँ हिन्दू !

यह कहकर वह फिर कड़ाहीको चूल्हे पर चढ़ाकर बार-बार तरकारी को उलटाने-रलटाने लगी ।

हारान बाबू कुछ देर तक इस चोटको किसी तरह बरदाश्त करके तीव्र स्वर में बोले—मालूम होता है, इसीसे गोरा बाबू सबेरे-शाम आकर तुमको मन्त्र देते हैं ?

सुचरिता नज़र नीची किये ही बोली—हाँ, मैंने उन्हींसे मन्त्र लिया है, वही मेरे गुरु हैं ।

हारान बाबू इतने दिन तक अपने ही को सुचरिता का गुरु जानता था । किन्तु उसका गुरुत्व-अधिकार आज गोरा ने छीन लिया है, सुचरिता के मुह से यह बात उसको बरछी की तरह छिदने लगी ।

उमने कहा—तुम्हारे गुरु चाहे जितने बड़े लोग हों, क्या तुम समझती हो कि हिन्दू-समाज तुमको ग्रहण करेगा ? •

सुचरिता—यह बात मैं नहीं जानती, समाजको भी नहीं जानती । मैं सिर्फ यही जानती हूँ कि मैं हिन्दू हूँ ।

हारान बाबूने कहा—तुम जान रखो कि इतने दिन तक तुम कुँवारी रही । अब तक तुम्हारा विवाह नहीं हुआ । इतने ही से तुम हिन्दू-समाजमें अग्राह्य हो गई, तुम्हारी जाति जा चुकी है ।

सुचरिता ने कहा—इसका आर वृथा शोच न करें किन्तु मैं आपसे फिर कहती हूँ—मैं हिन्दू हूँ ।

हारान बाबू ने कहा—परेश बाबूसे जो धर्म-शिक्षा पाई थी, वह भी तुमने अपने नये गुरु के पैरों-तले विसर्जन कर दी !

सुचरिता—मेरा धर्म क्या है सो अन्तर्यामी जानता है । उस बात पर मैं किसीके साथ कोई आलोचना करना नहीं चाहती । आप जान लीजिए, मैं हिन्दू हूँ ।

हारान बाबू आपसे बाहर होकर बोल उठा—तुम चाहे जितनी बड़ी हिन्दू ही क्यों न बनो, उससे कोई फल न होगा । यह मैं तुमसे कहे जाता हूँ । गोरा को तुम विनय न समझो । तुम अपनेको हिन्दू-हिन्दू कहकर गला फाड़कर मर भी जाओगी तो भी गौर बाबू तुमको ग्रहण करें, ऐसी आशा तुम स्वप्न में भी न करो । शिष्यको लेकर गुरुआई करना सहज है किन्तु इससे वे तुमको ले जाकर गृहिणी बनावे, इस बात की कभी मन में कल्पना भी न करना ।

खाना पकाना सब भूलकर सुचरिता विद्युत-वेग से खड़ी होकर बोली—आप यह क्या कह रहे हैं ?

हारान बाबू—यही कह रहा हूँ कि गौर बाबू कभी तुमसे व्याह न करेंगे ।

सुचरिता की आँखें लाल हो गईं । वह बोली—विवाह ! मैंने आपसे कहा नहीं है कि वे मेरे गुरु हैं ?

हारान सो तो कहा है। किन्तु जो नहीं कहा है, वह भी तो हम अपने बुद्धिबल से जान सकते हैं।

सुचरिता—आप अभी यहाँ से चले जायँ। मेरा अग्रमान न करें। नैग, अब आप ऐसी बात न बोलें। यह बात मैं आज आपसे कह रखती हूँ कि आजसे मैं आपके सामने बाहर न हूँगी।

हारान—हमारे आगे अब किस विरते पर निकलोगी? अब तुमने कलेवर जो बदल डाला है! अब तुम हिन्दू रमणी! सूर्य भी तुम्हें नहीं देख सकेगा, मैं किस गिनती में हूँ। परेश बाबू के पाप का वड़ा भर गया। वे इस ढलती उम्र में अपनी करनी का फल भोगें। हम जाते हैं।

सुचरिता—खूब जोर से रसोई-घर का द्वार बन्द करके बैठ रही और आँचल का कपड़ा मुँह में ठूँसकर रोने की आवाज़ को दम साधकर रोकने लगी। हारान बाबू चले गये।

हरिमोहिनी दोनों का कथोपकथन सुन रही थी। आज उसने सुचरिता के मुँह से जो सुना वह सुनने की उसे आशा न थी। उसका हृदय हर्ष से फूल उठा? वह बोली—नहीं होगा! मैं जा एकाग्र मनसे अपने गोपीवल्लभ की पूजा करती हूँ वह क्या सब बूझा जायगी!

हरिमोहिनीने तुरन्त अपने पूजा-गृहमें जाकर अपने ठाकुरजी को साष्टाङ्ग प्रणाम किया और आजसे उनका भोग कुछ और बड़ा देने की प्रतिज्ञा की। इतने दिन उसकी पूजा शोक के शान्तवना रूपमें शान्त भावसे होती थी; आज वह स्वार्थ का साधन रूप होते ही अत्यन्त उग्र, उत्तप्त और लुभावुर हो गई।

सुचरिताके सामने खुलकर मन लगकर जैसे गोरा ने बातकी है, से और किसीके आगे नहीं ।

किन्तु आज हरिमोहिनीकी बातें सुन कर एकाएक उसे खयाल प्रा गया कि ऐसी ही सुगता देखकर एक दिन उसने विनय को यथेष्ट तेरस्कार किया था, उसकी दिलजगी उड़ाई थी । आज वह अज्ञात भाव से अपनेको उसी अवस्थाके बीच खड़े होते देखकर चौंक उठा ।

गोरा जब घर पहुँचा तब देखा मां क्रशं पर बैठी आँखों पर चश्मा बढ़ाये एक कापी लिये हुये कोई फर्द बना रही हैं । गोराको देखकर, चश्मा उतार कर कापी बन्द कर, उन्होंने कहा—बैठो ।

गोराके बैठने पर आनन्दमयीने कहा—तुम्हारे साथ मुझे एक सलाह करनी है । विनयके ब्याहकी खबर तो सुन चुके हो ।

गोरा चुप रहा । आनन्दमयीने कहा—विनयके चाचा नाराज हो गये हैं, वे लोग कोई न आवेंगे । उधर परेश बाबूके घरमें भी इस ब्याहके होनेमें सन्देह है । विनय को ही दोनों ओरका सारा बन्दोबस्त करना होगा । इसीसे मैं कह रही थी कि हमारे उत्तर के हिस्सेका घर तो किराये पर उठा हुआ है—उसके ऊपरी खण्डका किरायेदार उठ गया है । वही दूसरे खंडमें अगर विनयके ब्याह का प्रबन्ध किया जाय तो बड़ी सुविधा होगी !

गोरा—व्या सुविधा होगी ।

आनन्द०—मैं न रहूंगी, तो उसके ब्याहमें सब देखे सुनेगा कौन । वह तो बड़ी आफत में पड़ जायगा । उस घर में अगर ब्याहका ठीक हो जाय तो मैं इसी घरसे सब ठीक ठीक इन्तजाम कर दे सकती हूँ—कुछ झंझट न करना होगा ।

गोरा—यह न होगा माँ ।

आनन्द०—क्यों न होगा ? उन (पति) को मैंने राजी कर लिया है ।

गोरा—नहीं माँ यह व्याह यहाँ न हो सकेगा—मैं कहता हूँ मेरी बात सुनो ।

आनन्द०—क्यों, विनय तो उन लोगोंके मतसे व्याह नहीं कर रहा है ।

गोरा—ये सब बहसकी बातें हैं । समाजके साथ वकालत नहीं चलेगी । विनयकी जो खुशी हो सो करे—हम इस व्याहको नहीं मान सकते । कलकत्ता शहर इतना बड़ा है—यहाँ घरों की तो कमी नहीं है । उसका अपना डेरा ही खाली है ।

आनन्दमयी यह जानती थीं कि घर बहुत मिल सकते हैं । किन्तु उनको यह बात खटक रही थी कि विनय आत्मीय बन्धु सबसे परित्यक्त हो कर बिल्कुल बन्धुबान्धव हीन बदनसीब आदमी की तरह किसी तरह अपने डेरेमें बैठकर व्याह की रस्म पूरी कर लेगा । इसी कारण उन्होंने अपने घर के उस जुदे हिस्सेमें जो किराये पर उठाया जाता है विनयका व्याह करने का विचार मनमें पक्का कर चुकी थी । इससे यह होगा कि समाजके साथ कोई झगड़ा न खड़ा करके वह अपने ही घर में इस शुभ कर्मका अनुष्ठान करके सन्तुष्ट हो सकेगी ।

गोरा की दृढ़ आपत्ति देखकर लम्बी साँस छोड़ कर उन्हींसे कहा—तुम लोगोंको अगर इतना नासन्द है तो दूसरी ही जगह किराये का घर ठोक करना होगा । लेकिन उससे मेरी बड़ी खींचतान होगी । खैर जब यह हो ही नहीं सकता तब इसके लिये सोच करना वृथा ।

गोराने कहा—माँ, इस व्याह में तुम शामिल होगी तो बात नहीं बनेगी ।

आनन्द—यह कैसी बात है गोरा, तू कइता क्या है अरने विनयके व्याहमें मैं न शामिल हूँगी, तो और कौन होगा।

गोरा—यह किसी तरह न हो सकेगा मा।

आनन्द०—गोरा, विनयके साथ तेरा मत न मिजे तो कोई बात नहीं लेकिन इसीके लिये क्या उसके साथ शत्रुता करनी चाहिए!

गोरा कुछ उत्तेजित हो उठकर कइने लगा—मा, यह तुम अन्यायकी बात कह रही हो। आज जो मैं विनय के व्याह में हूँ सी खुशीके साथ शामिल नहीं हो सकता यह मेरे लिए सुखकी बात नहीं है विनयको मैं कितना चाहता हूँ यह बात और कोई भले ही न जाने तुम तो जानती हो! किन्तु माँ, यह स्नेहकी बात नहीं है—इसके भीतर शत्रुता मित्रता रत्ती भर नहीं है। विनय इसके सब फलाफलको जान बूझकर ही काम करने जा रहा है। हमने उसे नहीं छोड़ा उसीने हम लोगो को छोड़ दिया है। अतएव इस समय जे विच्छेद हुआ है उससे उसे ऐसी कोई चोट न पहुँचेगी जो उसकी प्रत्याशासे परे हो।

आनन्द०—गोरा, यह ठीक है कि विनय जानता है कि इस व्याहमें तुम्हारे साथ उसका किसी तरह का सम्बन्ध नहीं रहेगा। किन्तु यह भी वह निश्चय जानता है कि इस शुभ कर्ममें मैं उसको किसी तरह त्याग न कर सकूँगी। उसकी स्त्रीको मैं आशीर्वाद करके घरमें न लाऊँगी—यह बात अगर विनय समझता, तो, मैं सच कहती हूँ वह प्राण निकल जाने पर भी यह व्याह न कर सकता मैं क्या विनयके मनको जानती नहीं।

यह कहकर आनन्दमयीने आँखके किनारेसे एक बूँद आँसू पोछ डाला विनयके लिये गोराके मन में जो गहरी वेदना थी, वह उन्मथित हो उठी। तथापि उसने कहा—माँ, तुम समाजमें हो, और समाजके निकट ऋणी हो—यह बात तुम्हें याद रखनी होगी।

आनन्द०—गोरा, मैं तो तुमसे बार-बार कह चुकी हूँ कि समाजके साथ मेरा सम्बन्ध बहुत दिनसे टूट चुका है। उसके लिए समाज मुझे घृणा करता है, और मैं भी उससे दूर रहती हूँ।

गोरा — मां, तुम्हारी इस बातसे मुझे सबसे अधिक चोट पहुँचती है ।

आनन्दमयीने अपनी अश्रुभाराकांत स्निग्ध दृष्टिसे गोराके सारे शरीर को छूकर कहा — बच्चा, ईश्वर जानते हैं, तुम्हें इस आघातसे बचानेकी शक्ति मुझमें नहीं है ।

गोराने उठ खड़े होकर कहा — तो फिर मुझे क्या करना होगा, मो तुमसे कहूँ ? मैं विनयके पास जाता हूँ — उससे कहूँगा — तुमको अपने व्याहृके मामलेमें लपेट कर वह समाजके साथ तुम्हारे विच्छेदको और भी न बढ़ावे । क्योंकि यह उसका अत्यन्त अन्याय और स्वार्थपरताका काम होगा ।

आनन्दमयीने हँसकर कहा — अच्छा तू जो कर सके वह कर । उससे जाकर कह, उसके बाद मैं देख लूंगी ।

गोराके चले जाने पर आनन्दमयी बहुत देर तक बैठी बैठी सोचती रहती । उसके बाद धीरे-धीरे उठकर अपने स्वामीके रहनेके स्थानको चली गई ।

आनन्दमयीको देखकर वह व्यस्त हो उठे । आनन्दमयी उनसे कफ़ी फासले पर कोठरीकी चौखट पर बैठकर बोलती — देखो, बड़ा अन्याय हो रहा है ।

कृष्णदयाल सांसारिक न्याय अन्यायके बाहर पहुँच चुके थे । इसीलिये लापरवाहीके साथ पृच्छा — क्या अन्याय ?

आनन्द० — गोराको अब एक दिन भी बहलाकर रखना उचित न होगा । धीरे धीरे बात बहुत बढ़ती जाती है ।

गोराने जिस दिन प्रायश्चित्तका प्रसंग उठाया था उसी दिन कृष्णदयालके मनमें यह बात आई थी । उसमें बाद योग साधनाकी विविध प्रक्रियाओंमें उलझ पड़नेसे उन्हें इस बात पर विचार करनेका अवकाश नहीं मिला ।

आनन्दमयीने कहा — गणेशमुखीके व्याहृकी बात-चीत हो रही है ।

जान पड़ता है, इसी फागुनके महीनेमें होगा। अब तक घरमें जितनी दफ्तें कुछ सामाजिक काम काज हुआ है, मैं किसी-न-किसी बहानेसे गोरा को लेकर और जगह चली गई हूँ। वैसा बड़ा कोई काम-काज भी तो इस बीचमें नहीं हुआ। लेकिन अबकी शशीके ब्याहमें उसके लिए क्या प्रबन्ध करोगे ? अन्याय रोज़ ही बढ़ता जा रहा है। मैं भगवानके आगे दोनों बेला हाथ जोड़कर क्षमा-प्रार्थना करतो हूँ—वह जो दण्ड देना चाहें, सो मुझीको दें किन्तु मुझे डर लगता है कि अब गोरा को रोका न जा सकेगा—उसे लेकर ज़रूर मुश्किल होगी। अब मुझे आज्ञा दो, मेरे भाग्यमें जो बड़ा होगा, सो होगा, मैं उससे सब हाल ख़ुजासा करके कह दूँ !

कृष्णदयालने कहा—तुम क्या पागल हो गई हो ! यह बात आज ज़ाहिर होनेसे मुझे कठिन जवाबदेहीका सामना करना पड़ेगा—पेंशन तो बंद हो ही जायगी, शायद पुत्तीस भी आफ़त मचावे। जो हो गया, सो हो गया, जहाँ तक जितना सँभालकर चल सकों वहाँ तक संभालो। अगर न संभाल सकों, तो उसमें भी विशेष दोष न होगा।

कृष्णदयालने ठोकर रखी था कि उनकी मृत्युके बाद जो होना हो, सो हो। वह तो फिर स्वतंत्र हो जायेंगे। मरनेके बाद वह न जान सकेंगे कि औरों पर क्या गुज़ारी। फिर उन्हें उन सब बातों पर दूषित करनेकी, या घबरानेकी, कुछ दरकार न होगी।

बया करना चाहिए, यह कुछ भी निश्चित न कर सकनेके कारण उदास मुँह लिये आनन्दमयी उठ कर चली आई।

प्रातःकाल संध्या पूजा करके गोराने अपनी बैठकमें जाते ही देखा, परेश बाबू बैठे हैं। उसके हृदयके भीतर जैसे एक बिजली की लहर दौड़ गई। गेराकी नस-नस तक यह बात माने बिना न रह सकी कि परेशके साथ किसी एक सूत्रसे उसके जीवन की एक निगूढ़ आत्मीयताका योग है। गोराने परेशके प्रणाम किया।

परेशने कहा—विनयके व्याहकी बात तुमने अवश्य सुनी होगी।
गेरा—हां।

परेश—बहु ब्रह्म मतसे व्याह करनेको तैयार नहीं है।

गेरा—तब तो उसे यह व्याह करना ही मुनासिब नहीं है।

परेश ज़रा हंस दिये इस बातको लेकर कुछ बहस नहीं की। उन्होंने कहा—हमारे समाजका कोई आदमी इस व्याहमें शरीक न होगा। सुनता हूँ, विनयके आत्मीयोंमेंसे कोई नहीं आने वाला है। अपनी कन्या की ओर केवल मैं हूँ, और विनयकी ओर जान पड़ता है, तुम्हारे सिवा और कोई नहीं है। इसीलिए इस बारेमें तुम्हारे साथ सलाह करने आया हूँ !

गेराने सिर हिला कर कहा—इस बारेमें मेरे साथ सलाह किस तरह होगी ! मैं तो इसके बीचमें नहीं हूँ।

परेशने विस्मित होकर गेराके मुखकी ओर चण भर देखते रह कर कहा—तुम नहीं हो !

परेशके इस विस्मयके दम भरके लिए गेराको संकोच मालूम हुआ। मगर संकोच मालूम पड़नेके कारण ही उसी दम दूनी दूढ़ताके साथ उलने कहा—मैं इस व्याहमें कैसे रह सकता हूँ।

परेश—मैं जानता हूँ कि तुम उसके मित्र हो। इस समयका मित्र का प्रयोजन सबसे अधिक नहीं है।

गोरा—मैं उसका मित्र अवश्य हूँ, किन्तु वही तो संसारमें मेरा एक मात्र बन्धन और सबसे बड़ कर बन्धन नहीं है !

परेश—गौर बाबू, तुम्हारी समझमें क्या विनयके आचरणमें कुछ अन्याय या अधर्म प्रकट हो रहा है ?

गोरा—धर्मके दो पहलू हैं ! एक नित्य और एक लौकिक। धर्म जिस जगह समाजके नियममें प्रकट होता है, वहां भी उसको अवहेलना नहीं की जा सकती वैसा करनेसे संसार का विनाश हो जायगा।

परेश—नियम तो असंख्य हैं, तो क्या यही मान लेना होगा कि सभी नियमोंमें धर्म प्रकट हो रहा है ?

यह कह कर परेशबाबू उठ खड़े हुए—गोरा भी कुर्सी छोड़ कर उठा। परेशने कहा—मैंने सोचा था, ब्राह्म समाजके अनुरोधसे मुझे शायद इस विवाहसे जरा अलग रहना होगा—तुम विनयके मित्रताके नाते सब काम सुसम्पन्न कर दोगे। इसी जगह पर आत्मीय की अपेक्षा मित्रके जिए जरा सुबीता है, उसे समाजका आघात नहीं सहना पड़ता; किन्तु तुम भी जब विनयको छोड़ देनाही कर्त्तव्य समझते हो, तब मेरे ही ऊपर सब भार आ पड़ा है—यह काम मुझीको अकेले निबाहना होगा।

उस समय गोरा यह नहीं जानता था कि 'अकेले' का अर्थ यहाँ केवल परेश बाबूके डीलसे ही है। वरदासुन्दरी उसके विरुद्ध खड़ी थीं, घरकी और स्त्रियाँ भी प्रसन्न न थी, हरिमोहिनीकी आपत्तिकी आशङ्का करके परेश बाबूने सुचरिताको इस व्याहकी सलाहमें भी नहीं बुलाया था। उधर ब्राह्म समाजके सभी लोग उनके ऊपर खङ्ग-हस्त हो उठे थे और विनयके चाचाकी ओरसे उन्होंने जो दो पत्र पाये थे, उनमें उन्हें कुटिल कुचक्री, लड़केको फुसला लेनेवाला आदि कहकर खूब गालियाँ दी गई थीं।

परेशके नाते ही अविनाश और गोराके दलके और भी दो एक आदिमियोंने गोराके बैठकखानेमें प्रवेश कर परेश बाबूको लक्ष्य बरके हंसी-दिल्लीगीका उपक्रम किया । गोरा कह उठा—जो भक्तिके पात्र हैं, उनको भक्ति करनेकी समता अगर न हो तो कम-से-कम उनकी दिल्लीगी करनेकी क्षुद्रतासे अपनी रक्षा करो ।

गोराको मजबूरन फिर अपने दलके लोगोंके साथ पहलेके अभ्यस्त काममें लग जाना पड़ा । किन्तु फीका सब फीका ! यह कुछ भी नहीं है । इसे कोई काम ही नहीं कहा जा सकता है । इसमें कही भी जान नहीं है । इस तरह केवल लिख-पढ़ कर लेवचर देकर, बातें और बहस करके दल बांध कर तो कोई काम नहीं होता, बल्कि बहुत कुछ बेकारके काम जमा हो रहे हैं ।

इधर प्रायश्चित्त की सभा का आयोजन चल रहा था । इस आयोजना में गोराको जरा विशेष उत्साह मालूम पड़ा है । वह प्रायश्चित्त केवल जेलखानेकी अपवित्रताका प्रायश्चित्त नहीं है । इस प्रायश्चित्तके द्वारा सभी ओर सम्पूर्ण रूपसे समता त्याग कर फिर एक बार जैसे नई देह लेकर अपने कर्म-क्षेत्रमें वह नया जन्म प्राप्त करना चाहता है । प्रायश्चित्त का विधान ले लिया गया है, दिन भी ठीक हो गया है । अविनाशने गुप्त रूपसे अपने दलके लोगोंके साथ सलाहकी है कि उस दिन सभामें सब पण्डितोंके द्वारा धान्य, दूर्वा, फूज चन्दन आदि विविध उपचारोंसे अर्चा करा कर गोराको हिन्दूधर्म प्रदीपकी उपाधि दी जायगी ।

इस तरह उस दिनकी कार्य-प्रणालीको अत्यन्त हृदयप्राही और फलप्रद बना देनेके लिये गोरासे छिपाकर उसके दलके लोगोंमें परस्पर नित्य-परामर्श चलने लगा ।

(६५)

हरिमोहनीको उसके देवर कैलाशका पत्र मिला । वह लिखता है—
 आपकी चरणोंकी कृपासे यहाँ कुशल है, आर अपने कुशल-समाचारसे
 हमारी चिन्ता दूर कीजिए ।” कहना व्यर्थ है कि हरिमोहनीने जबसे
 उनका घर छोड़ा है तबसे वे इस चिन्ताको बराबर सहन करते आये हैं,
 तथापि कुशल समाचार जाननेके लिये आज तक उन लोगोंने कभी कोई
 चेष्टा नहीं की थी । किन्तु हरिमोहनीसे इस व्याहकी बात सुनते ही अब
 उनकी चिन्ता असह्य हो उठी है । कैलासने घर भरके लोगोंकी ओरसे
 प्रणाम और कुशल-प्रश्न लिखकर अन्तमें लिखा था—आप जिस लड़की
 की बात लिखती हैं उसका सब हाल सुनासा लिखिये । आपने कहा है,
 उसकी उम्र १२-१३ वर्ष की होगी । जान पड़ता है, लड़की बदनहार है,
 देखनेमें कुछ बड़ी मालूम होती होगी । इससे कोई विशेष हानि नहीं ।
 उसकी जो सम्पत्तिकी बात लिखी है, उसमें उसका स्वन्व कैसा है यह
 जांचकर लिखिये तो मैं अपने बड़े भाईको सूचित कर उनकी सलाह
 लूँगा । शायद उनकी असम्मति न होगी । लड़कीकी हिन्दू-धर्ममें निष्ठा
 सुनकर निश्चय हुआ । किन्तु इतने दिन तक वह ब्राह्म घरमें पड़ी है
 इसलिए ऐसा करना जिसमें यह बात जाहिर न हो । यह बात आप भी
 किसी से न कहें । आगामी पूर्णिमाको चन्द्रग्रहण पर गङ्गा-स्नान करने
 का विचार है । यदि फुरसत मिलेगी तो उसी समय आकर लड़की को
 देख लूँगा ।

हरिमोहनीने इतने दिन किसी तरह कलकत्तेमें रहकर समय बिताया
 था । किन्तु जब उसके मनमें ससुराल देखनेकी आशा अंकुरित हुई तब
 एकदम अधीर हो उठी । विदेश का रहना उसे अत्यन्त बलेशकर मालूम
 होने लगा । दिन-रात यही चाहती थी कि कब यहाँ से भागूँ । वह इस

चेष्टा में लगी कि अब सुचरिता को किसी तरह राजी करके ब्याहका दिन चुपचाप नियत कर ऊपर ही ऊपर काम निकाल लूँगी तो भी झटपट कोई काम करने का साहस उसको न हुआ।

सुचरिताने देखा, गोरा का आना जाना एकाएक बन्द हो गया। वह समझ गई कि हरिमोहिनी ने उससे जरूर कुछ कहा है। उसने मन में कहा, नहीं आये तो क्या ! वही मेरे गुह हैं, वही मेरे गुह हैं।

किन्तु गोरा की वह तेजस्विनी मूर्ति देखने और गम्भीरता पूर्ण वाक्य सुनने की उसकी तृष्णा या किसी तरह मिट सकती थी ? इस चिन्ता से उसका शरीर दिन-दिन सूखने लगा।

इसी बीच एक दिन दोपहर के बाद ललिताने आकर बड़े प्यार से सुचरिता को गले लगाया और गद्गद् कण्ठ से कहा—सुचरिता बहन !

सुचरिता—कहो बहन, क्या हाल है ?

ललिता—सब ठीक हो गया।

सुचरिता—कौन दिन नियत हुआ है ?

ललिता—सोमवार।

सुचरिता—मण्डप कहाँ होगा ?

ललिताने सिर हिलाकर कहा—मैं नहीं जादती, पिताजी जानते हैं।

सुचरिताने ललिता को गले लगा करके कहा—खुश हो न !

ललिता—खुश क्यों न हूँगी !

सुचरिता—जो तुमने चाहा था सो सब मिल गया। अब किसी के साथ झगड़ा करने की बात न रही। इसीसे डरती हूँ, पीछे तुम्हारा उत्साह कम न हो जाय। उत्सास न रहने से किसके साथ झगड़ोगी ?

ललिताने हँसकर कहा—क्यों, क्या झगड़ा करनेवालों का अभाव है ? अब बाहर खोजना न पड़ेगा।

सुचरिताने ललिता के गाल में उँगली गड़ाकर कहा—हाँ, समझ गई। अभी से कलहका सब सामान दुरुस्त हो रहा है। मैं बिनय से कह दूँगी। अभी समय है बेचारा सावधान हो जाय।

ललिता ने कहा—तुम्हारे बेचारेको को अब आवधान होने का समय नहीं। अब उसके छूटनेका कोई उपाय नहीं। जन्म-कुण्डलीमें जो कष्ट लिखा था वह फलित हुआ। अब फिर पीटना और रोना मात्र है।

सुचरिताने गम्भीर भावसे कहा—मैं किननी खुश हुई हूँ सो तुमसे क्या कहूँ। विनयके सदृश स्वामी पाकर तुम उसके योग्य हो सको, यही मेरी ईश्वर से प्रार्थना है।

ललिता—मैं किसीके योग्य होऊँ इसके लिए तो प्रार्थना और मेरे योग्य कोई हो इसके लिए प्रार्थना नहीं! वाह! इस सम्बन्धमें एक बार उनसे बात करके देखो, उनका मत क्या है सो सुन रखो। नहीं तो तुम्हारे मनमें भी अनुताप होगा कि इतने बड़े अटनूत मनुष्य का आदर इतने दिन तक हमसे कुछ क्यों न हो सका। तुम अपनी इस अज्ञानता पर अब भी बिना पछताये न रहोगी।

सुचरिताने कहा—जो हो, इतने दिन पर तो उसे तुम्हारा जैसा एक जौहरी मिला है। उस अनमोल रत्नके मूल्यमें जो तुम सर्वस्व देना चाहती हो उसमें अब पछताने की कोई बात नहीं। मेरे सदृश गवर्नरसे आदर पानेकी उसे अब ज़रूरत ही न होगी।

“होगी नहीं न्यूव होगी!” यह कहकर ललिताने खुब जोरसे सुचरिता का गाल मल दिया। वह “हिस” कर उठी। ललिताने फिर हँसकर कहा—मुझ पर तुम्हारा आदर बराबर बना रहना चाहिए। यह न होगा कि मुझे धोखा देकर किसी और का आदर करने लग जाओ।

सुचरिता ने ललिताके गाल पर गाल रखकर कहा—किसी को नहीं, किसी को न दूँगी—तुम चाहे जिसे दो।

ललिताने कहा—किसी को नहीं! एक दम किसी को नहीं!

सुचरिता सिर्फ अस्वीकार-बोधक सिर हिलाया। तब ललिता ज़रा हटकर बैठी और बोली—देखो बहन, तुम तो जानती हो, तुम

और किसीको आदर देती तो मैं कदापि सह्य न कर सकती। इतने दिन तक मैंने तुमसे न कहा था, आज कहती हूँ। जब गोर बाबू मेरे घर आते थे तब—वहन, मुझे जो कुछ कहना है, आज अवश्य कहूँगी। मैंने तुमसे कभी कोई बात नहीं छिपाई। किन्तु नहीं जानती, यह एक बात मैंने तुमसे कभी क्यों नहीं कही। इसके लिए मेरे मनमें बड़ा ही कष्ट है। वह बात आज बिना कहे मैं तुम्हारे पाससे बिदा न हो सकूँगी। जब गोर बाबू मेरे घर आते थे तब मुझे बड़ा क्रोध होता था। क्रोध क्यों होता था? तुम समझती थी कि मैं कुछ जानती ही नहीं! मैंने देखा, तुम मेरे आगे उनका नाम भी न लेती थी। इससे मेरे मन में और भी क्रोध होता था। तुम जो मुझसे बढ़कर उनको प्यार करती थी यह मुझे असह्य मालूम होता था। नहीं बहन, आज मुझे वह बात कहने दो, उसके निमित्त मैंने कितना कष्ट पाया है उसे मैं क्या कहूँ। आज भी तुम मुझसे वह बात न कहोगी, यह मैं जानती हूँ किन्तु आज न कहनेसे अब मुझे क्रोध न होगा। मैं बहुत खुश हूँगी, अगर तुम्हारा—

मुचरिता ने भट्ट ललिताका मुँह बन्द करके कहा—तुम्हारे पैरों पड़ते हैं, वह बात मुँह पर न लाओ। वह बात मुननेसे मैं धरती में समा जाना चाहती हूँ।

ललिता—क्यों वहन, वे क्या—

मुचरिता व्याकुल होकर बोल उठी—नहीं, नहीं ललिता, पागलकी तरह बात न कह; जो बात मनमें न समा सके वह मुँह में न ला।

ललिताने मुचरिताके इस सङ्कोचसे खिसियाकर कहा—बहन, यह तुम्हारी सरासर भूल है। मैंने खूब सोचकर देखा है, मैं तुमसे सच कहती हूँ—

ललिताका हाथ छुड़ाकर मुचरिता कोठेसे बाहर हो गई। ललिता उसके पीछे दौड़कर उसे पकड़ लाई और वाली—अच्छा, अच्छा, अब मैं न कहूँगी।

मुचरिता—फिर कभी !

ललिता—मैं इतनी बड़ी प्रतिज्ञा न कर सकूँगी । यदि मेरा दिन आवेगा तो कहूँगी नहीं तो नहीं । यह बात आज यहीं तक रही ।

इधर कई दिनोंसे हरिमोहिनी छिपे-छिपे मुचरिता पर नज़र रखती थी, और बराबर उसके पास ही पाम फिरा करती थी । मुचरिता इस बातको समझ गई थी और हरिमोहिनीकी यह सन्देह-पूर्ण सतर्कता उसके हृदय पर बोझ सी मालूम हो रही थी । भीतर ही भीतर वह कुड़ती थी, परन्तु कुछ बोल न सकती थी ।

ललिताके चले जाने पर मुचरिता अत्यन्त क्लान्त-चित्त होकर टेबलके ऊपर दोनों हाथोंके बीच सिर रखकर रोने लगी । तब हरिमोहिनी ऊपरसे नीचे उतर आई और मुशीलाके घर में जाकर बोली—राधा रानी !

मुचरिता भट आँखें पोंछकर उठ खड़ी हुई ।

हरिमोहिनी—क्या हो रहा है ?

मुचरिताने इसका कुछ उत्तर न दिया ।

हरिमोहिनीने कठोर स्वरमें कहा—यह सब क्या हो रहा है ? मेरा तो समझमें ही नहीं आता ।

मुचरिता—मोसी, तुम दिन-रात मेरे ऊपर ऐसी सतर्क दृष्टि क्यों रखती हो ?

हरिमोहिनी—क्यों रखती हूँ सो क्या तुम नहीं जानती ? तुम न कुछ खाती हो न पीती हो, मुँह मूँदकर रोती रहती हो । यह कैसा लक्षण है ? मैं बच्ची नहीं हूँ, क्या मैं इतना भी नहीं समझ सकती ?

मुचरिता—सच पूछो तो तुम कुछ नहीं समझती । तुम ऐसी भयानक भूल समझ रही हो, ऐसा नासमझीका काम कर रही हो, जो अब मुझमें किसी तरह बरदाश्त नहीं होता ।

हरिमोहिनी—प्रच्छा, अगर मैं ग़लत समझती हूँ तो तुम अच्छी तरह समझाकर क्यों नहीं कहती ?

सुचरिता ने सब सङ्कोच हटाकर कहा—अच्छा तो मैं कहती हूँ । मैंने अपने गुरुसे एक ऐसी शक्ति पाई है जो मेरे लिए बिल्कुल नई है, उसको पूर्ण रूपसे ग्रहण करने के लिए विशेष शक्ति की आवश्यकता है । मुझमें वह शक्ति नहीं है, इसीकी मुझे चिन्ता है । मैं और किसी बातके लिए कुछ नहीं सोचती । किन्तु तुम हमारे सम्बन्ध को बुरी दृष्टिसे देखती हो, तुमने मेरे गुरुको अपमानित करके बिदा कर दिया है, तुमने उनसे जो कुछ कहा है सब तुम्हारी भूल है । तुम मेरे विषय में जो सोचती हो, सब भूठ है । तुम अन्याय कर रही हो । उनके सदृश महान् पुरुषको तुम लाञ्छित कर सको ऐसा तुम्हारा सामर्थ्य नहीं । किन्तु तुमने मुझ पर ऐसा अत्याचार क्यों किया है ? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ?—यह कहते कहते उसका गला भर आया । वह वहाँसे उठकर दूसरे कोठेमें चली गई ।

हरिमोहिनी हतबुद्धि हो वहीं बैठी रही । उसने मन ही मन कहा—अरे दादा ! ऐसी बात तो मैंने सात जन्म में भी न सुनी थी ।

सुचरिता को कुछ ठण्डी होनेका समय देकर कुछ देर बाद हरिमोहिनी उसे खाने के लिए बुला ले गई । जब वह खानेको बैठी तब हरिमोहिनी ने कहा—देखो राधा रानी, मेरी उम्र कम नहीं, मेरे सब बाल पक गये । अब मैं बुढ़िया हुई । हिन्दू-धर्म में जो-जो काम करना चाहिए वह बालपनसे ही करती आती हूँ और बहुत कुछ देखा-सुना भी है । तुम यह सब कुछ नहीं जानती । इसीलिए गोरा तुम्हारा गुरु बनकर तुम्हें ठग रहा है ! उसकी बातें कुछ-कुछ सुनी हैं । उनमें कहीं शास्त्र-सम्बन्धी विषय का लेश नहीं । वह सब अपने बनाये शास्त्रकी बातें करता है । मेरे पास उसकी सब कलई खुल गई है । तुम कलकी लड़की हो, यह सब बातें क्या जानोगी ! मैंने सच्चे गुरु से उपदेश पाया है । मैं तमसे कहे देती हूँ, तुमको यह कुछ न करना होगा । जब समय आवेगा तब सब कुछ आप ही हो जायगा । मेरे जो गुरु हैं वे ऐसे धूर्त नहीं हैं । वे तुमको मन्त्र देंगे । तुम डरो मत, जैसे होगा मैं

तुमको हिन्दू समाज में ले आऊंगी। तुम ब्राह्म-घर में थी या न थी, यह कौन जानता है ! तुम्हारी उम्र कुछ अधिक हो गई, इससे क्या ऐसी बड़ी-नड़ी तो लड़कियाँ हैं। तुम्हारी जन्मपत्री तो किसी ने देखी नहीं है ! और जब तुम्हारे पास रुपया है तब किसी तरह का कोई विघ्न न होगा। सब हो जायगा। तुम घबराओ मत। मल्लाहके लड़के को कायस्थ बनकर समाज में चलते मैंने अपनी आँख से देखा है। मैं हिन्दू-समाज में ऐसे कुलीन ब्राह्मके घर तुमको चला दूंगी कि किसी को मजाल नहीं, जो कुछ बोल सके। वही समाज के मुखिया हैं। इसके लिए तुमको इतनी असाध्य सावना, इतनी गुरु-भक्ति न करनी होगी। इतना रो-धोकर मरना न होगा।

हरिमोहिनी जब ये बातें विशद रूपसे कह रही थी, तब सुचरिता को भोजन जहर सा मालूम हो रहा था। वह मुँहमें कौर देती थी, परन्तु निगला नहीं जाता था। उसने बड़ी मुश्किलसे बरजोरी कुछ खाया जो न खाती तो हरिमोहिनी फिर खसके खाने पर टीका-टिप्पणी करने लग जाती, जो कि उसे किसी तरह सध्य न होती।

हरिमोहिनी ने जब सुचरिता से कोई उत्तर न पाया तब उसने मन में कहा—यह बड़े गुरु की चेली है, यह मेरा कहा न मानेगी। इधर हिन्दू-हिन्दू कहकर रोती है—उधर उतने बड़े सुयोगकी बात पर ध्यान तक नहीं देती। न प्रायश्चित्त करना होगा, न कोई कैफियत देनी होगी, भिन्न इधर-उधर थोड़ा-बहुत रुपया खर्च करके अनायास ही समाजमें मिल जायगी। इसमें भी जिसको उत्साह नहीं, वह अपने को हिन्दू कहती है, ब्राह्म होकर हिन्दू बननेका बड़ा शोक है। गोरा कितना बड़ा धूर्त है और वह सुचरिता पर कितना बड़ा प्रभाव डाले हुए है, यह सब हरिमोहिनी बखूबी समझ गई।

सुचरिता के पास जो कुछ धन सम्पत्ति है, उसीको हरिमोहिनीने अनर्थका मूल समझा। अभी जिस जालमें सुचरिता फँसी है उसका परिणाम पीछे क्या होगा, यह भी हरिमोहिनी की दृष्टि पर चढ़ गया।

हरिमोहिनी इस धूर्तके हाथमे सम्पत्ति-पहित किसी तरह छुड़ाकर अपने देवरके हाथ सौंप देने ही में कुशल मम भूने लगी। किन्तु सुचरिता का मन कुछ सुलायम हुए बिना काम न चलेगा, यह सोच उसके हृदयको पिचलानेकी आशामे वह दिन-रात सुचरिता को अपनी समुलल और अपने देवरका सुपश सुनाने लगी।

इधर कई दिनोंसे परेश बाबू अनेक प्रकारकी चिन्ताओं और कामों में फँस जानेके कारण सुचरिता क यहाँ न जा सके। सुचरिता रोज़ ही उनके आनेकी राह देखती थी और उसके मनमें कुछ कष्ट और सङ्कोच भी होता था। परेश बाबू के साथ जो एक धार्मिक शुभ सम्बन्ध है वह कभी टूट नहीं सकता, यह वह निश्चय जानती थी किन्तु बाहरके दो-एक बड़े-बड़े सूत्रोंमें खिच जानेकी वेदना भी उसे चैन नहीं देता थी। इधर हरिमोहिनी उसे दिन-रात तङ्ग किये रहती है, इसलिए सुचरिता आज परेश बाबूके घर गई। उस समय सूर्य पश्चिमकी ओर बहुत नीचे उतर पड़े, जिससे तिमझिले मकानकी छाया दूर तक फैल गई थी। उसी छायामे परेश बाबू फिर मुझाये अपने बाग़की सड़क पर धीरे-धीरे अकेले टहल रहे थे। सुचरिता उनके पास जा खड़ी हुई और बोली—
रिताजी, आप कैसे हैं ?

परेश बाबूने सहसा अपनी चिन्तामें गवा पाकर कुछ देर तक खड़े हो सुचरिताके मुँहकी ओर देखा, और कहा—राधा, मैं अच्छी तरह हूँ।

दोनों घूमने लगे। परेश बाबूने कहा—सोमवारको ललिताका ब्याह होगा।

सुचरिता सोच रही थी कि इस विवाहमें किसी सलाह या सहायता के लिए मेरी बुलाहट क्यों न हुई और यह बात वह उनसे पूछना चाहती थी, परन्तु पूछनेका साहस न होता था, क्योंकि उसकी ओर भी इस दफे कोई बाधा आ पड़ी थी। नहीं तो वह बुलानेकी अपेक्षा न रखती।

सुचरिता के मनमें जिस बातका सोच हो रहा था, परेश बाबूने ठीक उसी बातका उत्थान किया। कहा—राधा, इस दफे मैं तुमको बुला न सका।

सुचरिता—क्यों नहीं बुला सके ?

सुचरिता के इस प्रश्नका कोई उत्तर न देकर परेश बाबू उसके मुह की ओर देखने लगे। सुचरिता अब स्थिर न रह सकी; वह ज़रा भिर भुझाकर बोली—यह साचकर कि मेरे मतमें कुछ परिवर्तन हो गया है।

परेश—हाँ, यही सांच रहा था। मैं तुमसे अनुरोध कर तुम्हें सङ्कोचमें डालना नहीं चाहता था।

सुचरिता—मैंने आपसे सब बातें कहनेका निश्चय किया था, किन्तु आपके दर्शन भी दुर्लभ हो गये, कहती किससे। इसी लिए आज मैं यहाँ आई हूँ। मैं अपने मनका भाव स्पष्ट रूपसे आपके निकट प्रकट कर सकूँ, यह योग्यता मुझमें नहीं है। मुझे इसीका डर है, वदचित सब बातें आपके सामने मुझसे ठीक-ठीक न कहीं जा सकें।

परेश—मैं जनता हूँ, ये सब बातें स्पष्ट कहना सहज नहीं है। तुमने जिस पदार्थको अपने मनमें केवल भावके भीतर पाया है उसको तुम अनुभव मात्र कर सकती हो किन्तु वाक्य द्वारा उसका स्वरूप नहीं दरसा सकती।

सुचरिता ने सन्तोष पाकर कहा—हाँ, यही ठीक है। किन्तु मेरा अनुभव ऐसा प्रबल है कि आपसे क्या कहूँ। मालूम होता है, जैसे मैंने नया जीवन पाया हो, नई चेतना पाई हो, इस तरह मैंने कभी आज तक अपने को नहीं देखा था। इतने दिन मानों मेरे साथ मेरे देश के व्यतीत और भविष्य कालका कोई सम्बन्ध ही न था। किन्तु वह विश्व-व्यापी सम्बन्ध कितना बड़ा सत्य है, यह ज्ञान मैंने आज अपने हृदयमें ऐसे अद्भुत रूपसे पाया है कि अब उसे किसी तरह भुन नहीं सकती। मैं आपसे सच कहती हूँ, मैं हिन्दू हूँ, यह बात पहले किसी तरह मेरे मुह से नहीं निकल सकती थी। किन्तु अब मेरा मन बड़ी दृढ़ताके

माथ निःसङ्काच हो कह रहा है, मैं हिन्दू हूँ ! इससे मैं एक विशेष आनन्दका अनुभव कर रही हूँ ।

इसी समय एक आदमीने आकर परेश बाबू के हाथ में एक चिट्ठी दी । परेश बाबूने कहा चशमा नहीं है, कुछ अँधेरा भी हो गया है । सुचरिता तुम्हीं चिट्ठी पढ़ो ।

सुचरिता ने चिट्ठी पढ़कर उन्हें सुना दी । ब्राह्म-समाज की एक कमेटीसे उनके पास यह पत्र आया है, उसके नीचे अनेक ब्राह्म-समाजियों के हस्ताक्षर हैं । पत्रका सारांश यही है कि परेशबाबू ने ब्राह्म-मतके प्रतिकूल अपनी कन्याके विवाह में सम्मति दी है और वे उस विवाहमें भी योग देनेको प्रस्तुत हुए हैं । ऐसी अवस्था में ब्राह्म-समाज किसी तरह उन्हें सम्म-श्रेणी में नहीं रख सकता । यदि उनको इस विषय में कुछ कहना हो तो आगामी रविवारके पहले ही उनके हाथका पत्र सभा के पास आना चाहिए । उस दिन उस पर विचार करके अविकाश लोगोंके मतमें अन्तिम निश्चय होगा ।

परेशबाबूने चिट्ठी लेकर पाकेट में रख ली । वे फिर धीरे-धीरे टङ्गलने लगे सुचरिता भी उनके पीछे-पीछे घूमने लगी । क्रमशः सँभका अँधेरा घना हो उठा । वाग के दाहिने पास की गली में रोशनी बलती देख पड़ी । सुचरिता ने कोमल स्वर में कहा—आपके उपासना करनेका समय हो गया है । आज मैं आपके साथ उपासना करूँगी ।—यह कहकर सुचरिता उनका हाथ पकड़ उन्हें उपासना-गृहमें ले गई । वहाँ पड़ले ही से आसन बिछा था और एक मोम-बत्ती जल रही थी । परेशबाबू ने आज बड़ी देर तक चुपचाप उपासना की । अन्त में एक छोटी सी प्रार्थना करके वे आसन से उठ पड़े । बाहर आते ही देखा, उपासना-गृहके दर्वाजे के पास बाहर ललिता और विनय चुपचाप बैठे हैं । उन दोनोंने भट उनके पैर छूकर प्रणाम किया । परेशबाबूने उनके सिर पर हाथ रख मन ही मन आशीर्वाद दिया ।

फिर सुचरिता से कहा—बेटी मैं कल तुम्हारे यहाँ आऊँगा। आज कुछ काम करना है। यह कहकर वे अपने कोठे में चले गये।

उस समय सुचरिता की आँखोंसे आँसू गिर रहे थे। वह चित्रवत् निश्चेष्ट हो चुपचाप वरामदेके अन्धकारमें खड़ी रही। ललिता और विनय भी देर तक कुछ न बोले।

सुचरिता जब जानेको उद्यत हुई तब विनयने उसके सामने आकर मीठे स्वरमें कहा—बहन, तुम हमें आशीर्वाद न दोगी? यह कहकर ललिताको साथ ले विनयने सुचरिता को प्रणाम किया। सुचरिताने गद्गद कण्ठसे जो कहा वह उसके अन्तर्यामीके सिवा और किसी ने न सुना।

परेश बाबूने अपने कोठेमें आकर ब्राह्म-समाजकी कमिटीको पत्र लिखा। उसमें उन्होंने लिखा, ललिताके विवाहका काम मुझीको सम्पादन करना होगा। इससे यदि समाज मुझे त्याग दे तो यह उसका अनुचित विचार न होगा। अब ईश्वरके निकट मेरी यही एकमात्र प्रार्थना है कि वे सब समाजोंके आश्रयसे निकालकर मुझे अपने चरणों में शरण दें।

(६६)

सुचरिता ने परेश बाबू के मुँहसे जो कुछ ज्ञानकी धातें सुनीं वे गोग से कहनेके लिए उसका मन व्याकुल हो उठा । जिस भारतवर्ष की ओर गोग ने अपनी दृष्टिको प्रसारित और चित्तको प्रवल प्रेमसे आकृष्ट किया है, वह भारतवर्ष क्षयके मुँहमें प्रवेश करने चला है । क्या गोग इस बात को न सोचता हागा ! इतने दिन भारतवर्षने अपनी आभ्यन्तरिक व्यवस्थाके बलसे अपनेको बचा रक्खा है । इसके लिए भारवासियों को सावधान होकर चेष्टा करनेकी तादृश आवश्यकता न थी । क्या अब उस तरह निश्चिन्त हो बैठनेसे भारतवर्षकी रक्षा हो सकती है ? क्या अब पहलेका तरह केवल पुरानी व्यवस्थाके भरोसे घर के भीतर बैठ रहनेसे भारतका रोग दूर हो सकता है !

सुचरिता सोचने लगी, इसके भीतर मेरा भी तो एक काम है । वह काम क्या है ! गोग को इस समय मेरे सामने आकर आदेश करना और पथ दिखाना देना उचित था । वे मुझे इस तरह त्याग दें यह कभी न होगा ! मेरे पास उनको आना ही हागा । मेरी खोज-खबर उनको लेनी ही होगी । उनको सारी लोक-सज्जा से हाथ धोना ही पड़ेगा । वे चाहे जितने बड़े शक्तिमान् पुरुष क्यों न हों, उनको मेरा प्रयोजन है, यह बात उन्होंने अपने मुँहसे मेरे आगे कही थी । आज एक साधारण बातमें पड़कर वे उसको कैसे भूल गये ।

सतीश दौड़कर सुचरिता के पास आया और उसके बदनसे सटकर बोला—बहन ! सोमवारको ललिता बहनका ब्याह है । मैं अब कई दिन उनके घर में ही रहूँगा । उन्होंने मुझको बुलाया है ।

सुचरिता यह बात मौसी से कही है ?

सतीशने कहा—मौसीसे कहा था । उसने क्रोध करके कहा कि मैं यह कुछ नहीं जानती । अपनी बहनसे जाकर कह, वह जो समझेगी वही होगा । बहन, तुम मुझे रोको मत; मेरे पढ़ने-लिखनेमें कोई बाधा न होगी । मैं रोज़ पढ़ूँगा । विनय बाबू मुझे पाठ पढ़ा देंगे ।

सुचरिता—तुम काम-काजके घरमें जाकर अपनी चाल से सबको हैरान कर दोगे ।

सतीशने व्यग्र होकर कहा—नहीं बहन, मैं कोई उपद्रव न करूँगा ।

इसी समय आनन्दमयी उस घरमें आई । सुचरिता का हृदय प्रफुल्ल हो उठा । उसने आनन्दमयीको प्रणाम किया ।

आनन्दमयी ने सुचरितासे कहा—बेटी, मैं तुम्हारे साथ कुछ सलाह करने आई हूँ । तुम्हें छोड़ और कोई ऐसी नहीं दीखती जिससे कुछ पूछूँ । विनयने कहा विवाह मेरे ही घरमें होगा । मैंने कहा, यह कभी न होगा । तुम बड़े नवाब बने हो ! हमारी लड़की योंही सीधे तुम्हारे घर जाकर ब्याह कर आवेगी ! यह न होगा ।—मैंने एक मकान ठीक किया है, वह तुम्हारे इस घरके पास ही है । मैं अभी वहीं से आ रही हूँ । परेश बाबूसे कहकर तुम उन्हें राज़ी कर लेना ।

सुचरिता—पिताजी राज़ी हो जायँगे ।

आनन्दमयी—इसके बाद, तुमको भी वहाँ जाना होगा । इसी सोमवारको ब्याह है । इसके भीतर ही हमें सब बातों का ठीक-ठाक करना होगा । समय तो अब अधिक नहीं है । मैं अकेली ही सब काम सँभाल सकती हूँ; किन्तु वहाँ तुम्हारे न रहनेसे विनयको बड़ा दुःख होगा । वह मुँह खोलकर तुमसे अनुरोध नहीं कर सकता । यहाँ तक कि वह मेरे पास भी सङ्कोच-वश तुम्हारा नाम नहीं लेता । इसीसे मैं समझती हूँ कि तुम पर उसका मानसिक आग्रह बहुत है । और ललिता के मनमें भी बड़ा खेद होगा ।

सुचरिता ने कुछ आश्चर्यके साथ कहा—हाँ, तुम इस ब्याहमें सम्मिलित हो सकोगी ?

आनन्दमयी—सम्मिलित होनेको बात क्या कहती हो। मैं क्या बाहर की हूँ जो शरीर होऊँगी। यह तो आने वर का है। सब काम मुझीको करना होगा। विनय क्या मेरा दूसरा है ? किन्तु मैंने उससे कह रक्खा है कि इस विवाहमें सब काम मैं लड़की की ओर से करूँगी। वह मेरे घरमें ललितामें ब्याह करने आ रहा है।

मौ होकर भी वरदा सुन्दरी ने अपनी प्यारी बेटा ललिता को इस शुभ कर्ममें त्याग दिया है, इसी से आनन्दमयी का हृदय दयामें परिपूर्ण हो गया है। इसी कारण वह ऐसी चेष्टा कर रही है जिससे इस विवाहमें किसी तरहकी कोई त्रुटि न होने पावे। वह ललिताकी माँका आसन ग्रहण कर विवाह-मण्डपमें लावेगी। यदि दो चार निमन्त्रित व्यक्ति आवेंगे तो उनके आदर-सत्कार में किसी तरह की त्रुटि न हो, इसकी देख-भाल करेगी। और इस नये घरको ऐसे ढंग से सजावेगी जिससे ललिताके मनमें मकानकी सजावट पर कोई खेद न रह जाय।

सुचरिता—इससे आपके घरमें कोई विरोध तो उपस्थित न होगा ?

महिम जिह पकड़े हुए है, उसे स्मरण करके आनन्दमयी कहा—
ऐसा हो सकता है, परन्तु उससे क्या होगा। कुछ बखेड़ा तो होगा ही।
चुपचाप सह लेनेसे कुछ दिनमें सब उपद्रव शान्त हो जायगा।

आनन्दमयी के आनेकी खबर हरिमोहिनी पा गई थी। वह अपने हाथका काम सँवारकर धीरे-धीरे उस कोठे में आई, और बोली—बहन, आप अच्छी तो हैं ? न कभी दर्शन देती हो, न खबर ही लेती हो।

आनन्दमयी ने कहा—तुम्हारी बहनोती को लेने आई हूँ।

यह कहकर उसने अपना अभिप्राय प्रकट किया। हरिमोहिनी कुछ देर मुँह फुलाये चुप रही, पीछे बोली—मैं तो इस कार्य में न जा सकूँगी।

आनन्दमयी—नहीं बहन, तुम क्यों जाओगी ! मैं तुमको चलने के लिए नहीं कहती। सुचरिताके लिए तुम कोई चिन्ता न करो, मैं तो उसके साथ ही रहूँगी।

हरिमोहिनी—तो मैं कहती हूँ, सुनो; राधा रानी तो लोगों से कहती है, मैं हिन्दू हूँ। अब उमकी मति गति हिन्दूधर्म की ओर फिर गई है। यदि वह हिन्दूसमाज में आना चाहे तो उसे सावधान होकर रहना पड़ेगा। अभी से तो कितनी कच्ची-पक्की बातें लोग बोलेंगे परन्तु मैं उनकी बात चलने न दूँगी। तो भी अबसे इसे सँभलकर चलना चाहिए। लोग तो पहले यही पूछ बैठेंगे कि इतनी बड़ी उम्र हो गई, अब तक इसका ब्याह क्यों न हुआ ? इस बातको किसी तरह छिपा देने से हिन्दूसमाज मान लेगा, अच्छा वर खोजने से न मिलेगा यह भी नहीं। किन्तु यह यदि फिर अपनी पुरानी चाल पकड़ेगी तो मैं क्या करूँगी, कहाँ तक सभालूँगी ! तुम तो हिन्दू घर की स्त्री हो, तुम तो सब जानती हो, तुम ऐसी बात किस मुह से कहती हो ? अगर तुम्हारी अपनी होती तो क्या तुम उसे इस विवाह में जाने देती ? तुमको तो दिन रात इसी बात की चिन्ता लगी रहती कि लड़की का ब्याह कब कैसे होता।

आनन्दमयी ने विस्मित होकर सुचरिता के मुहकी ओर देखा। उसका मुह क्रोधसे लाल हो गया था।

आनन्दमयी ने कहा—मैं कोई ज़ोर देना नहीं चाहती, अगर सुचरिता को जाने में उम्र हो तो मैं—

हरिमोहिनी बोल उठी—तुम लोगोंका भाव कुछ भी मेरी समझ में नहीं आता। तुम्हारा ही बेटा तो इसे हिन्दू मत में लाया है। और तुम कुछ जानती ही नहीं ! जैसे तुम आकाशसे उतर आई हो !

जो हरिमोहिनी परेश बाबूके घरमें अनाभिनीकी तरह डरकर रहती थी, जो किसी को अपनी ओर कुछ भी अनुकूल पाकर उसे एकान्त आग्रह के साथ रहती थी वह हरिमोहिनी आज कहाँ है ? अपने अधिकारको सुरक्षित रखने के लिए वह आज बाधिनकी तरह खड़ी है। उसकी सुचरिता को उसके पाससे छीन लेनेके लिए चारों ओर भौंति-भौंति की शक्तियाँ लगाई जा रही हैं, इस सन्देहसे वह बराबर चौकन्नी रहती है। कौन हित है, कौन अनहित, यह भी वह नहीं समझती। इस

कारण उसके मनमें आज और भी हलचल मच गई है। पहले जिसने सारे संसार को सूना देखकर श्री गोपीरमणजीकी सेवामें अपने व्यकुल चित्तको समर्पित कर दिया था उन देव पूजा में भी आज उमका जी नहीं लगता। इधर कुछ ही दिनोंमें हरिमोहिनी के मुह और आँखोंकी भाव-भङ्गी तथा वचन-व्यवहारमें इस अभावनीय परिवर्तनका लक्षण देख आनन्दमयी एकदम भौंक्क सी हो रही। सुचरिता के लिए उसके कोमल हृदयमें परिताप होने लगा। अगर वह जानती कि सुचरिता एक छिपे हुए सङ्कट-जालमें फंसी है तो वह कभी उसे बुलाने न आती। अब किस उपाय से सुचरिता को इस आघात से बचा सकेगी, यह उसके लिए एक अत्यन्त शोचनीय विषय हो गया।

गोरा को लक्ष्य करके हरिमोहिनी ने जब बात की तब सुचरिता सिर नीचा करके चुपचाप कोठेसे चली गई।

आनन्दमयी ने कहा—बहन, तुम डरो मत; मैं पहले न जानती थी। मैं उसे वहाँ जानेके लिए विवश न करूंगी। तुम भी अब उससे कुछ मत कहो। वह पढ़ी लिखी है, उस पर अधिक दबाव डालोगी तो शायद वह न सह सके।

आनन्दमयी जब जाने लगी तब सुचरिता ने अपने कोठेसे निकल उसे प्रणाम किया। आनन्दमयी ने स्नेह और दया के साथ उसका सिर छू करके कहा—बेटी, मैं आऊंगी, तुमको सब खबर दे जाऊंगी। कोई विघ्न न होगा। ईश्वर की कृपा से यह शुभ कर्म सम्पन्न हो जायगा।

सुचरिता कुछ न बोली।

दूसरे दिन सबेरे जब आनन्दमयी लछमिनियाको साथ ले नये मकानके विर-सञ्चित कूड़े-करकट को साफ़ कराने गई और वह अपने हाथ में भी भाड़ने-बुझाने लगी, उसी समय सुचरिता आ पहुँची। आनन्दमयी ने भट्ट भाड़ू फेंक उसे छाती से लगा लिया।

इसके बाद धर आगन साफ़ करनेकी धूम मच गई। कोई भाड़ने-
 ड़हारने, कोई पानी लाने, कोई गायके गोबरसे लीपने और कोई दीवान
 साफ़ करने लगी। जो मज़दूरिनें काम करने को आई थीं, उन सबों में
 सुचरिता ने काम बाँट दिये। वे अपने-अपने काम में लग गई। आनन्द-
 ययी और सुचरिता बड़ी मुस्तेदीके साथ काम कराने लगीं। परेश बाबूने
 खर्च के लिए सुचरिता के हाथ में कुछ रखा दिया था, यह रखा लेकर
 दोनों खर्च का चिट्ठा तैयार करने लगीं।

कुछ ही देर के बाद ललिता को साथ ले परेश बाबू स्वयं वहा
 उपस्थित हुए। ललिता को अपना घर असह्य हो गया था। कोई उससे
 बोलता न था। बोलनेकी बात दूर रहे, कोई उसकी ओर प्रसन्न दृष्टि
 से देखता न था। उन लोगोंकी यह उदासीनता पग-पग पर उसे चोट
 पहुँचाने लगी। आखिर वादासुन्दरीके साथ समवेदना प्रकट करनेके
 लिए जब भुण्ड के भुण्ड उसके बन्धु-बान्धव आने लगे तब परेश बाबू
 ने ललिता को इस मकानसे अन्यत्र ले जाना ही अच्छा समझा। ललिता
 विदा होते समय वादासुन्दरीको प्रणाम करने गई तो वह मुह फेरकर
 बैठी रही और उसके चले जाने पर आँसू गिराने लगी। ललिता के इस
 विवाहोत्सवमें लावण्य और लोलाका मन विशेष उत्सुक था। अगर वे
 किसी उपाय से छुट्टी पातीं तो दौड़कर ललिता का विवाह देखने जातीं।
 किन्तु ललिता जब चली गई तब ब्राह्म-परिवारके बठोर कतेव्वका
 स्मरण करके वे मुड़ लटकाकर चुपचाप बैठ रहीं। दाँवजे के पास ललिता
 ने सुधीरको देखा, किन्तु सुधीरके पीछे उसके समाजके और कई प्रवाण
 व्यक्त थे, इस कारण उसके साथ कोई बातचीत न हो सकी। गाड़ीमें
 बैठनेके साथ ललिता ने देखा, बेञ्चके एक कोनेमें कागज़में लपेटी कोई
 चीज़ रखी है। खोलकर देखा, ज़रमन सिलवरका एक फूलदान है।
 उस पर अगरेज़ो भापा में यह वाक्य खुदा था, “प्रसन्न दम्पतीको ईश्वर
 चिरायु करें।” और एक कार्ड पर सुधीरके नामका पहला अक्षर
 अगरेज़ी में लिखा था। ललिता ने आज छातीको पत्थर कर प्रण किया

था कि मैं आँसू न गिराऊँगी, किन्तु पिताके घरसे बिदा होते समय अपने बाल्य सहचरका यह स्नेहोपहार हाथ में लेते ही उसकी आँखोंसे भर-भरकर आँसू गिरने लगे। परेश बाबू आँखें मूँदे स्थिर बैठे रहे। कुछ देरमें गाड़ी नये मकान के फाटक पर जा पहुँची।

“आओ बेटी, आओ,” कहकर आनन्दमयी ललिताके दोनों हाथ पकड़ बड़े प्यारसे घरके भीतर ले आई। मानों वह उनके आनेकी प्रतीक्षा में ही बैठी थी।

परेश बाबू ने सुचरिताको बुलाकर कहा—“ललिता मेरे घरसे एक दम बिदा होकर आई है।” यह कहते समय उनका कंठस्वर कम्पित हो गया।

सुचरिता ने गम्भीर स्वर में कहा—यह उसे किसी तरह की तकलीफ न होगी।

परेश बाबू जब जानेको उद्यत हुए तब आनन्दमयी ने धूँधट डाल कर उनके सामने आ उन्हें नमस्कार किया। परेश बाबूने भी सिर नवाया। आनन्दमयी ने कहा—ललिताके लिए आप कुछ भी चिन्ता न करें। आप जिसके हाथमें ललिता को सौंप रहे हैं उसके द्वारा वह कभी कोई दुःख न पावेगी। भगवानने इतने दिन बाद मेरे एक अभाव को दूर कर दिया। मेरे लड़की न थी, वह मुझे मिली। विनय की वृत्ति के कारण मेरे कन्या न रहने का दुःख मिटेगा, मैं बहुत दिनोंसे इस आशा में बैठी थी। यदि ईश्वर ने देर करके मेरा मनोरथ पूरा किया तो उसने ऐसी लड़की दी और ऐसी अद्भुत रीतिसे दी जो सब प्रकार मेरे मनके अनुकूल हुई। मेरा ऐसा भाग्य होगा, यह मैंने कभी सोचा भी न था।

ललिताके विवाहका आन्दोलन आरम्भ होनेके बाद यहीं पहले पहल परेश बाबूके चित्त ने संसार में एक जगह एक किनारा देखा और सच्ची सान्त्वना पाई।

जेलखानेसे निकल कर आनेके बादसे गोराके पास दिन भर इतने लोग आने जाने लगे कि गोराके लिये घरमें रहना असह्य और असाध्य हो उठा । इसी कारण गोराने फिर पहलेकी तरह दिहातमें घूमना शुरू कर दिया ।

सवेरे कुछ खा-पीकर वह घरसे निकल जाता था, और एकदम रात को घर आता था । रूँत पर बैठकर कलकत्तेके आस पास किसी एक स्टेशनमें उतर कर वह दिहातमें चला जाता ।

गाँवोंमें इस तरह घर-घर घूमता, लोगोंके सुख दुःखकी खबर लेता है, यह उन लोगोंकी समझमें कुछ भी न आता था । यहाँ तक कि उन लोगोंके मनमें तरह-तरहके सन्देह उत्पन्न हुआ करते थे । किन्तु गोरा उनके सारे सन्देह सङ्कोचको ठेककर उनके बीचमें विचरण करने लगा । बीच-बीचमें उसे अप्रिय बातें भी सुननी पड़ीं, पर वह उससे भी निरस्त नहीं हुआ ।

उसने जितना ही उन लोगोंके भीतर प्रवेश किया उतना ही केवल एक ही बात उसके मनके भीतर घूमने फिरने लगी । उसने देखा, इन सब दिहातोंमें समाजका बन्धन शिथिल भद्र समाजकी अपेक्षा अधिक है । प्रत्येक घरका खाना-पीना सोना-बैठना काम-काज सब कुछ समाजके निर्निमेष नेत्रोंके आगे दिन-रात विद्यमान है ! हर एक आदमीको ही लोकाचारके ऊपर एक अत्यन्त सहज विश्वास है—उसके सम्बन्धमें वे लोग जरा-सी भी बहस नहीं करते । किन्तु समाजका बन्धन और आचार निष्ठा इन लोगोंको कर्म क्षेत्रमें कुछ भी बल नहीं देती । इन लोगोंके समान ऐसे भयभीत, असहाय, अपने हिताहितका विचार करनेमें अक्षम अपाहिज जीव जगत्में कहीं हैं या नहीं, इसमें सन्देह है । आचारका पालन करके

चलनेके अलावा और किसी मङ्गलको ये लोग सम्पूर्ण मनके साथ पहि-
चानते नहीं; समझानेसे भी नहीं समझते ।

गोरा यह देखे बिना नहीं रह सका कि इस आचारके अन्तसे मनुष्य
मनुष्यके रक्तको चूस कर उसे निष्ठुर भावसे निःस्व और निःस्वत्व बना
रहा है । कितनी ही बार उसने देखा है, समाजमें काम-काजमें कोई
किसी पर कुछ भी दया नहीं करता । एक आदमीका बाप बहुत दिनसे
रोगमें भोग रहा था, उस बापकी दवा दरमत्त और पथ्यमें लड़के बेचारेका
सर्वस्व स्वाहा हो गया, पर इस मामलेमें किसीके भी निकटसे कुछ भी
सहायता उसे नहीं मिली ।

किन्तु दिहातोंमें जहाँ बाहरकी शक्तियोंका संघात उस तरह काम
नहीं करता, वहाँकी निश्चेष्टताके बीच गोराने स्वदेशकी गम्भीरता दुर्ब-
लता की जो मूर्ति है, वहाँ देख पाई । जो धर्म सेवा रूपसे, प्रेम रूपसे
करुणा रूपसे आत्म-त्याग और मनुष्यके प्रति श्रद्धाके रूपसे सबको शक्ति
देता है, प्राण देता है, कल्याण देता है वह कहीं पर भी नहीं देख पड़ता ।
जो आचार केवल बीचमें रेखा खींचता है, त्याग करता है, पीड़ा पहुँचाता
है, जो बुद्धिको भी कहीं अमल नहीं देना चाहता, जो प्रीतिको भी दूर
खेद रखता है, वही सबको चलते फिरते उठते बैठते सभी मामलोंमें केवल
बाधा देता रहता है । दिहातके भीतर इस मूढ़ बाध्यताका अनिष्ट कर
कुलल इतने स्पष्ट रूपसे इतने भिन्न भिन्न प्रकारोंसे गोराकी आँखोंके आगे
आने लगा — वह मनुष्यके स्वास्थ्य ज्ञान, धर्म बुद्धि और कर्मके ऊपर इतने
प्रकारोंसे आक्रमण कर चुका है, यह मालूम पड़ा — कि अपनेको भावुकता
के इन्द्रजालमें भुजा रखना गोराके लिये असम्भव हो उठा ।

गोराने पहले ही देखा, गाँवकी नीच जातियोंके बीच स्त्रियोंकी संख्या
कम होनेके कारण अथवा अन्य चाहे जिस कारणसे हो बहुत रुपये खर्च
करने पर मर्दोंको ब्याहके लिये स्त्री मिलती है । अनेक मर्दोंको जीवन
भर और अनेकको अधिक अवस्था तक अविवाहित रहना पड़ता है ।
उधर विधवा विवाहके सम्बन्धमें कठिन नियम है । इससे घर घर समाज

का स्वास्थ्य दूषित हो उठ रहा है, और इसके अनिष्ट तथा असुविधाका अनुभव समाजका हर एक मनुष्य ही करता है। इस अकल्याणको चिर-काल तक लाद कर चलनेके लिये सभी बाध्य हैं; किन्तु इसका प्रतिकार करनेका उपाय कहीं किसीके भी हाथमें नहीं है। शिल्पि समाजमें जो गोरा आचारको कहीं भी शिथिल नहीं होने देना चाहता, उसी गोराने यहाँ आचारको आघात किया। उसने इस आचारके पुरोहितोंको वशमें किया किन्तु समाजके लोगोंकी सम्मति किसी तरह न पा सका। वे गोरा के ऊपर क्रुद्ध होकर कहने लगे—अच्छा तो है, ब्राह्मण लोग जब विधवाओंका ब्याह करेंगे तब हम लोग भी करेंगे।

उनके क्रोधका प्रधान कारण यही है कि उन्होंने समझा, गोरा उन्हें हीन जाति जानकर उनका अनादर करता है—गोरा यही प्रचार करने आया है कि उनके जैसे लोगोंके लिये अत्यन्त हीन आचारको ग्रहण करना ही श्रेय है।

गांवोंमें विचार कर गोराने यह भी देखा कि मुसलमानोंके भीतर वह वस्तु है, जिसके सहारे उन लोगोंको एक करके खड़ा किया जाता है। गोराने ध्यान देकर देखा है कि गांवमें कोई आपद-विपद उपस्थित होने पर मुसलमान लोग जैसी वनिष्टताके साथ परस्पर एक दूसरेके पास आ कर जमा हो जाते हैं, हिन्दू लोग वैसा नहीं करते। गोराने बार बार सोचकर देखा है कि इन दोनों निकटतम परोसी समाजोंके बीच इतना बड़ा अन्तर क्यों हुआ? जो उत्तर इसका उसके मनमें उदित होता है, उसे माननेके लिए किसी तरह उसका जो नहीं चाहता। यह बात स्वीकार करते उसका सारा हृदय व्यथित हो उठने लगा कि धर्मके सूत्र से मुसलमान एक है, केवल आचारसे नहीं।

शिष्टा-समाजमें गोराने जब लेख लिखा है, बहसकी है, व्याख्यान दिया है, तब वह औरोंके समझानेके लिए, औरोंको अपनी राहमें लानेके

लिए स्वभावतः ही अपनी बातोंको उसने कल्पनाके द्वारा मनोहर वर्णसे रंजित किया है। उसने स्थूलको सूक्ष्म, व्याख्यासे ढका है, अनावश्यक भगनावशेष मात्रको भी भावकी चन्द्रिकामें मोहमय चित्रकी तरह बनाकर दिखलाया है। देशके लोगोंका एक दल देशके प्रति विमुख है, वे देशकी बातों और वस्तुओंको बुरी दृष्टिसे देखते हैं, यही समझ कर, गोराने स्वदेशके प्रति अपने प्रबल अनुरागके कारण, उस ममत्व-विहीन दृष्टि पातके अपमानसे बचानेके लिए, स्वदेशकी सभी बातों और वस्तुओंको अति उज्ज्वल भावके आवरणसे ढक रखनेकी दिन रात चेष्टाकी है। यही गोराको अभ्यस्त हो गया था।

दूसरका कोट पहिने, कन्धे पर डुगटा डाले और हाथमें एक बैग लट-काये स्वयं कैलासचन्द्रने आकर हरिमोहिनीको प्रणाम किया। उसकी उम्र पैंतीस सालके लगभग होगी। क्रुद मझोला है, चेहरा देखनेसे बदन मजबूत मालूम होता है। हजामत बनवाये कुछ दिन हो जानेसे दाढ़ीमें कुशाग्रकी भाँति बाल निकल आये हैं।

हरिमोहिनी मुदतके बाद ससुरालके आत्मीयको देख हर्षित होकर बोली “अच्छा, कैलाश बाबू हैं। आइए। आइए, बैठिए।” यह कहकर उसने भट एक कम्बल बिछा दिया हाथ-पैर धोनेको लोटेमें पानी लाकर रख दिया।

कैलासने कहा—अभी इसकी ज़रूरत नहीं। आपकी तबियत तो अच्छी है ?

तबियतका अच्छा रहना एक अपवाद जानकर हरिमोहिनीने कहा—“तबिअत अच्छी क्या रहेगी, देह तो दिन रात बिना ही आगके जला करती है,” यह कहकर वह नाना प्रकारकी व्याधियों का नाम गिनाने लगी फिर बोली—ऐसे निकम्मे शरीरका न रहना ही अच्छा है। इतना दुःख पाने पर भी मरण नहीं होता।

जीवनके प्रति ऐसी उपेक्षामें कैलासने आपत्तिकी और ये बातें बना कर उसके हृदयको गद्गद कर दिया कि यद्यपि बड़े भाई संसारमें नहीं हैं तथापि तुम्हारे रहनेसे हमें उनके न रहनेका दुःख नहीं है; हम सब तुम्हारा पूरा भरोसा रखते हैं और प्रमाणमें यह भी कहा—यही क्यों नहीं देखती कि आप यहाँ हैं, इसीसे कलकत्ते आना हुआ; नहीं तो यहाँ खड़े होनेको भी कहीं जगह न मिलती।

घर और गाँवका सब कुशल-समाचार आद्योपान्त सुनाकर कैलासने चारों ओर देखकर पूछा—मालूम होता है, यह मकान उसीका है।

हरिमोहिनी—हाँ।

कैलास—मकान पक्का है।

हरिमोहिनीने उसके उत्साहको बढ़ाकर कहा—पक्का क्या, बिल्कुल पक्का है।

कैलास—क्यों भाभी, सात-हज़ार रुपया तो इसके बनवानेमें लगा ही होगा ?

हरिमोहिनीने कैलासकी देहाती बुद्धि पर विश्मय प्रकट करके कहा—बाबू, यह क्या कहते हो ! सात-आठ हज़ार रुपया क्या ! बीस हज़ारसे एक कौड़ी कम खर्च नहीं हुई।

कैलास फिर भी चारों ओर रक्खे हुए सामानको ध्यानसे देखने लगा। अब ज़रा सम्मति-सूचक सिर हिलाने ही से मैं इतनी बड़ी इमारतका मालिक हो सकता हूँ, यह सोचनेसे उसको बड़ी तृप्ति हुई। पूछा—सब तो हुआ, लड़की कहाँ है ?

हरिमोहिनी झट बोली—फूफ़ीके घरसे उसे नेवता आया था। वहाँ गई है, दो-चार दिनोंमें लौट आवेगी।

कैलास—तो उसको देखूँगा किस प्रकार ? मेरा एक मुक़दमा है, कल ही जाना होगा।

हरिमोहिनी—अभी उस मुक़दमेको मुलतवी रक्खो। यहाँका काम हुए बिना तुम नहीं जा सकते।

कैलासने कुछ सोचकर निश्चय किया कि मुहलत न लेनेसे मुद्दईको एक तरफ़ दिगरी मिलेगी। अच्छा पीछे देखा जायगा। यहाँ उस क्षतिके पूर्ण होनेका पूरा सामान है।

कैलासने तब कन्याका रूप जाननेकी उत्सुकता प्रकटकी।

हरिमोहिनीने कहा—उसे तो देखने हीसे जानोगे। पर तो भो मैं

इतना कह सकती हूँ कि तुम्हारे घरमें ऐसी रूपवती बहू आज तक न आई होगी ।

कैलास—यह क्या कहती हो ! हमारी मंझली भाभी —

हरिमोहिनीने कहा—क्या कहा ! भला तुम्हारी मंझली भाभी कब उसकी बराबरी कर सकती है । जो इसके पैरमें रूप है वः उसके चेहरेमें न होगा । तुम चाहे जो कहो, मंझली बहूसे मेरी सुचरिता कहीं बढ़कर सुन्दरी है ।

मंझली बहू और नई बहूके सौंदर्यकी तुलनामें कैलास कुछ विशेष उत्साहका अनुभव न कर मन ही मन एक अपूर्व रूपाकी कल्पना करने लगा ।

हरिमोहिनीने देखा, इस पक्षकी अवस्था आशाजनक है । उसके मन में यहाँ तक भरोसा हुआ कि कन्या पक्षमें जो गुह्यतर सामाजिक त्रुटियाँ हैं उनसे भी इस व्याहर्में कोई बाधा नहीं पहुँच सकती ।

विनय जानता था कि गोरा आजकल सवेरे ही घरसे चल देता है । इसलिए वह सोमवारको बड़े तड़के उठकर गोराके घर उसके ऊपर वाले शयनभ्रममें एकाएक जा पहुँचा ।

विनयने कहा—भाई आज सोमवार है ।

गोरा—हां ज़रूर ही सोमवार है ।

विनय—तुम तो शायद न जाओगे; शायद क्या, नहीं ही जाओगे; किन्तु आज एक बार बिना तुमसे कहे मैं इस काममें प्रवृत्त न हो सकूँगा, इसीसे आज इतने सवेरे उठकर पहले तुम्हारे ही पास आया हूँ ।

गोरा चुपचाप बैठा रहा, कुछ बोला नहीं ।

विनय—तो तुम मेरे विवाह-मण्डपमें न आ सोगे, यही बात स्थिर रही ।

गोरा—हां, मैं न आ सकूँगा ।

विनय चुप हो रहा ।। गोराने हृदयकी वेदनाको दबाकर हँसकर कहा—मैं नहीं गया, इससे क्या ? तुम्हारी ही तो जीत हुई । तुम माँको खींचकर ले ही गये हो । मैंने चेष्टा तो बहुत की, किन्तु मैं उनको किसी तरह रोककर नहीं रख सका । वह तुम्हें न छोड़ सकीं । आखिर तुमसे मुझे हार माननी पड़ी !

विनयने कहा—भाई, मुझे दोष मत दो । मैंने उनसे जोर देकर कहा था—‘माँ, मेरे ब्याहमें तुम कभी जाने न पाओगी ।’ माँने कहा—देखो विनय तुम्हारे ब्याहमें जो न जायँगे, वे तुम्हारा निमन्त्रण पाकर भी न जायँगे और जो जानेवाले हैं वे तुम्हारे मना करने पर भी जायँगे । इसी लिए मैं तुमसे कहती हूँ कि न तुम किसीको निमन्त्रण दो, और न किसीको मना करो, चुप हो रहो ।—गोरा भाई, क्या तुमने मुझसे हार

मानी है ! तुम्हारी हार तुम्हारी माँके आगे है, हजार बार हार स्वीकार करनी पड़ेगी। ऐसी माँ क्या और कहीं है।

गोराने यद्यपि आनन्दमयीको रोकने के लिए बड़ी चेष्टा की थी, तथापि वह उसकी कोई बाधा न मान, उसके क्रोध और कष्ट की कुछ परवा न करके विनयके व्याहमें चली गई। इससे गोरा के मनमें कोई कष्ट न हुआ बल्कि उसने एक अपूर्व आनन्दका अनुभव किया था। विनय ने उसकी माताके अपरिमेय स्नेहका अंश पाया था। गोराके साथ विनयका चाहे जितना बड़ा विच्छेद हो, उसे गम्भीर स्नेह-सुधाके अंशसे उसे किसी तरह वञ्चित न करनेका निश्चय जानकर गोराके हृदयमें तृप्ति और शान्ति दोनों एक साथ उत्पन्न हुईं। और सब बातोंमें वह विनयसे बहुत दूर जा सकता है, किन्तु इस अत्यय गातृ-स्नेहके बन्धनमें अत्यन्त गुप्त रूपसे ये दोनों चिरमित्र बहुत दिनों तक एक दूसरेके अत्यन्त निकटस्थ होकर रहेंगे।

विनयने कहा—तो मैं अब जाता हूँ। अगर तुम वहाँ आना एकदम पसन्द नहीं करते, तो मत आओ। परन्तु मनमें नाराजी न रखो। इस मिलनसे मेरे जीवनने कितनी बड़ी सार्थकता प्राप्त की है, उसे यदि तुम सोचोगे तो कभी हमारे इस विवाहको अपनी मित्रताकी सीमासे बाहर न कर सकोगे। यह मैं तुमसे जोर देकर कहता हूँ।

यह कहकर विनय उठ खड़ा हुआ। गोराने कहा—विनय बैठो, इतना क्यों उकता रहे हो ? तुम्हारे व्याह का लग्न तो रातमें है। अभी से उसकी इतनी जल्दी क्या है ?

गोराके इस सस्नेह अनुरोध से द्रवितचित्त होकर विनय तुरन्त बैठ गया।

इसके बाद आज बहुत दिनोंके अनन्तर, इस भोरके समय दोनों पड़लेकी तरह धुल-धुलकर बातें करने लगे।

विनयने गोरासे कहा—मैं तुमसे सच-सच कहता हूँ, मनुष्यकी, सारी प्रकृतिको लय भरमें जाग्रत् करनेका उपाय प्रेम है। चाहे जिस

कारण से हो, हम लोगोंमें इस प्रेमकी उपज बहुत कम है। इसीसे हम अपने सम्पूर्ण सुखोंसे वञ्चित हैं। हम लोगोंके पास क्या है सो भी हम नहीं जानते। जो गुण है, उसे प्रकाशित नहीं कर सकते ! जो सञ्चित है, उसे खर्च करनेको सामर्थ्य नहीं ! इसी लिए चारों ओर ऐसा निरानन्द, ऐसी उदासीनता है। इसीसे हम लोगोंमें जो महत्त्व है वह केवल तुम्हारे सदृश बिरले ही मनुष्य जानते हैं, साधारण लोगोंके मनमें उसका ज्ञान तक नहीं है।

महिम खूब जोर से जँभाई लेकर बिछौनेसे उठकर जब मुँह धोने गया, तब उसके पैरोंकी आहट सुन विनयके उत्साह का प्रवाह बन्द हो गया। वह गोरासे जानेकी आज्ञा लेकर चला गया।

विनयके साथ आज सामाजिक विच्छेदका दिन है। आज विनयका हृदय गोराके हृदय पर एक अपूर्व सङ्गीत का भाव अङ्कित कर गया। विनय चला गया। किन्तु उसके सङ्गीत की लहर घरमें अटक रही।

गोराका मन उस लहर में बार बार गोते खाने लगा समुद्र-गामिनी दो नदियाँ एक साथ मिलनेसे जो रूप धारण करती हैं, जैसे एकका प्रवाह दूसरी नदी की धारासे टकराकर तरङ्गको शब्दायमान करता है, वैसे ही विनयकी प्रेम-धारा आज गोराके प्रेम-प्रवाह पर पतित हो तरङ्ग के द्वारा तरङ्ग को शब्दायमान करने लगी। गोरा जिसे किसी प्रकार बाधा देकर, बीचमें कोई परदा डाल, अपनी आँखोंके सामने से दूर रखनेकी चेष्टा कर रहा था, उसीने आज परदा हटाकर अपनेको स्पष्ट रूपसे सामने ला रक्खा। उसे धर्म-विरुद्ध कहकर निन्दा करे या उसे तुच्छ कहकर उपहास करे, ऐसी शक्ति आज गोराके मनमें न रही।

गोरा आज दिन भर इसी चिन्तामें पड़ा रहा जब सौंभ होनेमें थोड़ासा विलम्ब रह गया, तब वह एक चादर ओढ़कर सड़क पर घूमने चला। उसने कहा—जो मुझे हृदयसे चाहता है उसकी चाह मैं भी अवश्य करूँगा; नहीं तो संसारमें मेरा काम अधूरा पड़ा रह जायगा; सारी दुनियाके भीतर सुचरिता उसीके आह्वानकी अपेक्षा कर रही है,

इसमें गोराको जरा भी सन्देह न रहा । आज ही इसी सन्ध्या समय वह इस अपेक्षा को पूर्ण करेगा ।

लोगोंसे भरे हुए कलकत्तेके रास्तेमें गोरा इस वेगसे चला, जैसे किसी को उसने सड़क पर देखा ही न हो । उसका मन उसके शरीरको छोड़ एकाग्र हो कहीं चला गया ।

सुचरिताके घरके सामने आकर गोरा एकाएक सचेत होकर खड़ा हो गया । वह इतने दिन तक यहाँ आया है, पर कभी दरवाजा बन्द नहीं मिला । आज देखा, दरवाजा खुला नहीं है । ढकेलकर देखा भीतर बन्द था । खड़े होकर कुछ देर सोचा, फिर किवाड़ पर धक्का दे, दो चार बार पुकारा ।

एक नौकर किवाड़ खोलकर बाहर आया । उसने सन्ध्याके सूक्ष्म अन्धकारमें गोराको देखते ही पहचान लिया और उनसे किसी प्रश्नकी अपेक्षा न करके कहा—मालकिन नहीं हैं ।

“कहाँ गई हैं ?”

वे ललिता बहनके ब्याहकी तैयारीमें कई दिनोंसे वहीं रहती हैं ।

एक बार गोराने मनमें कहा, चलो, वित्तयके विवाह मण्डपमें ही जायँ । इसी समय एक अपरचित व्यक्तिने घरके भीतरसे निकलकर कहा—बया है महाशय, क्या चाहिए ?

गोराने सिरसे पैर तक उसे देखकर कहा—नहीं, कुछ नहीं चाहिए ।

कैलासने कहा—आइए, जरा बैठिए, तम्बाकू पी लीजिए तो जाइएगा ।

साथीके बिना कैलाशकी जान निकली जा रही थी । देहाती लोग जब तक किसीके साथ भर पेट गुप-सप न करें तब तक उनका खाना नहीं पचता । इसीसे वह गोराको देख खुश हुआ । दिनको वह हाथमें टूट्टा ले गलीके मोड़ पर खड़ा-खड़ा रास्ते पर लोगोंको आते-जाते देख किसी तरह जी बहला लेता था; किन्तु साँझको घरके भीतर अकेला बैठना उसके लिए असह्य हो उठता था । हरिमोहिनीके साथ जो कुछ आलोचना करनेको थी, वह खतम हो चुकी है । हरिमोहिनीमें वार्तालाप

करनेकी शक्ति बहुत कम थी। इसी कारण कैलाश नीचे, फाटकके पासवाले छोटे कमरेमें, चौकी पर हुका लेकर बैठता था और बीच बीचमें दरवानको पुकारकर उसके साथ ग़ार-सप करके समय बिताता था।

गोराने कहा—नहीं, मैं अभी नहीं बैठ सकता।

कैलाशको दुबारा अनुरोध करनेका मौका न देकर वह पलक मारते ही उस गलीसे चला गया।

गोराके मनमें यह एक दृढ़ संस्कार था कि मेरे जीवनकी अधिकांश घटनाएँ आकस्मिक नहीं हैं अथवा मेरी व्यक्तिगत इच्छाके द्वारा वे सिद्ध नहीं होतीं। मैंने अपने देशके विधाताका कोई अभिप्राय सिद्ध करनेके लिए जन्म ग्रहण किया है।

इसलिए वह अपने जीवनकी छोटी-छोटी घटनाओंका भी कोई विशेष अर्थ जाननेकी चेष्टा करता था। आज जब उसने अपने मनकी इतनी बड़ी प्रबल इच्छा की प्रेरणासे एकाएक जाकर सुचरिताके घरका दरवाजा बन्द देखा और दरवाजा खुलने पर जब सुना कि वह नहीं है, तब उसने इसे एक अभिप्रायपूर्ण घटना समझा। जो ईश्वर सुचरिताको चलायामन कर यहाँसे अन्यत्र ले गया है वही आज गोरा को निषेधकी सूचना दे रहा है। इस जीवनमें उसके लिए सुचरिता का द्वार बन्द है। सुचरिता उसके लिए नहीं है। गोरा के सदृश मनुष्यको अपनी इच्छाके अनुसार किसी वस्तु पर मुग्ध होनेसे काम न चलेगा। वह अपने सुखसे सुखी और अपने दुःखसे दुःखी होनेवाला नहीं है। वह भारतवर्ष का ब्राह्मण है, भारतवर्षकी ओरसे उसे देवता की आराधना करनी होगी। भारतवर्ष का होकर तपस्या करना ही उसका काम है। आसक्ति, विषयोपभोग उसके लिए नहीं सिरजा गया है। गोरा ने मनमें कहा—विधाताने आसक्तिका रूप स्पष्ट दिखा दिया। जो दिखाया, वह स्वच्छ नहीं, शान्त नहीं, वह मद्य जैसा लाल और वैसा ही तेज़ है। वह बुद्धको स्थिर रहने नहीं देता। वह औरको और कर दिखाता है। मैं संन्यासी हूँ, मेरी साधना में उसका स्थान नहीं।

कई दिन अनेक प्रकारकी पीड़ा भोगनेके अनन्तर इन कई दिनों में आनन्दमयी के पास सुचरिता ने जो सुख चैन पाया वैसा कभी न पाया था । आनन्दमयीने ऐसे सद्भ भावसे उसे अपना लिया है कि किसी दिन वह उसके लिए अपरिचिता थी या दूर थी इसे सुचरिता सोच भी न सकी थी । आनन्दमयी न जाने सुचरिताके मन का सब भाव कैसे जान गई ! वह कुछ न कहकर भी सुचरिताको एक गहरी सान्त्वना दे रही थी । सुचरिता “माँ” शब्द को इसके पूर्व इस प्रकार स्पष्ट और उत्कण्ठा सहित कभी उच्चारण नहीं करती थी । कोई प्रयोजन न रहने पर भी वह आनन्दमयी की केवल “माँ” कहकर पुकारनेके लिए अनेक प्रकारके बहाने रचती और बार-बार उसे “माँ” कहकर पुकारती थी । लज्जिताके व्याहका जब सब काम ठीक हो गया, तब थके शरीरसे बिछौने पर लेटकर सुचरिता यही सोचा करती थी कि मैं अब आनन्दमयी को छोड़ कैसे अपने घर जाऊँगी । वह आप ही आप कहने लगी—“माँ, माँ !” यह कहते-कहते उसका हृदय भक्तिसे भर गया और आँखोंसे आँसू बहने लगे । इसी समय उसने एकाएक देखा, आनन्दमयी मसहरी उठाकर उसके पलंग पर आ बैठी और उसके बदन पर हाथ रख पूछने लगी—तू क्या मुझे पुकार रही थी ?

तब सुचरिता को चेत हुआ कि मैं माँ, माँ पुकार रही थी । सुचरिता कोई उत्तर न दे सकी । उसकी छातीमें मुँह छिपाकर रोने लगी । आनन्दमयी कुछ न कहकर धीरे-धीरे उसके शरीर पर हाथ फेरने लगी । उस रात को वह उसीके पास सो गई ।

विनयका व्याह हो जाने पर आनन्दमयी द्रुतुरन्त विदा न हो सकी । उसने कहा, ये दोनों अभी गृहकार्य से अनभिज्ञ हैं । इनके घर का सब प्रबन्ध किये बिना मैं कैसे जाऊँगी ?

सुचरिता ने कहा—माँ, तो मैं भी तब तक तुम्हारे साथ रहूँगी ।

ललिताने उत्साहित होकर कहा—हाँ, माँ, सुचरिता बहन भी कुछ दिन हमारे साथ रहे ।

यह सलाह सुन सतीश दौड़कर आया और सुचरिताके गलेसे लिपटकर बोला—हाँ, बहन, मैं भी तुम्हारे साथ रहूँगा ।

सुचरिता ने कहा—तुम्हको जो पढ़ना है ।

सतीश—विनय बाबू मुझको पढ़ावेंगे ।

सतीश—विनय बाबू अभी तुम्हारी मास्टरी नहीं कर सकेंगे ।

विनय पासके कमरेसे बोल उठा—अच्छी तरह कर सकूँगा । मैं एक ही दिनमें क्या ऐसा असमर्थ हो गया हूँ यह मेरी समझ में नहीं आता । अनेक रातों जाग जागकर जो लिखना सीखा था, वह एक ही रातमें भूल बैठा होऊँ ऐसा तो नहीं जान पड़ता ।

आनन्दमयीने सुचरिताने कहा—तुम्हारा यहाँ रहना क्या तुम्हारी मौसी पसन्द करेगी ?

सुचरिता—मैं उनको एक चिट्ठी लिखती हूँ ।

आनन्दमयी—तुम मत लिखो, मैं ही लिखूँगी ।

आनन्दमयी जानती थी कि सुचरिता यदि रहने की इच्छा प्रकट करेगी तो हरिमोहिनी उस पर खफ़ा होगी । किंतु मैं सुचरिताको कुछ दिन अपने पास रहने देनेका अगर उससे अनुरोध करूँगी तो मुझी पर क्रोध करेगी, और इसमें कुछ हानि नहीं ।

आनन्दमयीने पत्रमें यह आशय जताया कि ललिताने नये घरका प्रबंध कर देनेके लिए कुछ दिन तम मुझे विनयके घर रहना होगा । यदि सुचरिताको भी मेरे साथ कुछ दिन और रहनेकी आज्ञा मिल जाय तो मुझे बड़ी सहायता मिलेगी ।

आनन्दमयी के पत्रसे हरिमोहिनी केवल क्रुद्ध ही न हुई, वरन् उसके मनमें बड़ा भारी सन्देह भी उपजा । उसने सोचा कि मैंने इसके बेटेको तो अपने यहाँ आनेसे रोक ही दिया है, अब 'सुचरिता को फँसानेके लिए मैं

कौशल जान बिछा रही है। इसमें माँ बेटे दोनोंकी सलाह है। आनन्दमयी किसी तरह अपने बेटे का व्याह सुचरिता के साथ कर देना चाहती है। आनन्दमयी की चेष्टा शुरूसे ही उसे अच्छी न लगती थी, यह बात भी उले याद हो आई।

अब कुछ भी बिलम्ब न कर जितना जल्द हो सके, सुचरिता को असिद्ध राय-परिवारके घर दे देने हीसे वह निश्चिन्त होगी। फिर कैलाशको भी इस तरह वहाँ कब तक बिठा रखेगी। उस बेचारे को कुछ काम न धन्धा, दिन भर बैठा-बैठा तम्बाकू पीकर घरकी दीवालें काली किया करता है। भला इस तरह रहना उसे कैसे लगेगा ?

जिस दिन हरिमोहिनीको चिट्ठी मिली, उसके दूसरे दिन सबरे ही पालकी करके, नौकर को साथ ले, स्वयं विनयके घर गई। तब नीचेके कमरे में सुचरिता, ललिता और आनन्दमयी रसोई-पानीकी तैयारी कर रही थीं।

हरिमोहिनीको आनन्दमयी विप्रेय आदरके साथ पालकीसे उतार लाई। वह उन शिष्टाचारों पर ध्यान न देकर एकाएक बोली—मैं राधा-रानीको लेने आई हूँ।

आनन्दमयीने कहा—अच्छी बात हैं, ले जाओ; जरा बैठो भी तो।

हरिमोहिनी—नहीं, मेरा पूजा-पाठ सभी पढ़ा है। नित्य कृत्य करके नहीं आई हूँ। मैं अभी यहां न बैठ सकूंगी।

सुचरिता चुपचाप कदू खील रही थी। हरिमोहिनीने उसे पुकार कर कहा—सुनती हो चलो अब वक्त हो गया।

ललिता और आनन्दमयी चुपचाप बैठी रही। सुचरिता अपना काम छोड़ दृष्ट खड़ी हुई और बोली—मौसी आओ।

हरिमोहिनीको पालकीकी ओर जाते देख सुचरिताने उसका हाथ पकड़कर कहा—चलो एक बार इस कमरेमें चलो।

सुचरिताने हरिमोहिनीको घरके भीतर ले जाकर दृढ़ता-पूर्वक कहा—जब तुम मुझको लेने आई हो तब सब लोगोंके सामने तुमको खाली हाथ

न लौटाऊंगी मैं तुम्हारे साथ चलूंगी किन्तु आज ही दोपहरको फिर मैं यहाँ लौट आऊंगी ।

हरिमोहनीने मुंह फुलाकर कहा—तो यह क्यों नहीं कहती कि यहीं रहना चाहती हो ।

सुचरिता—हमेशा तो न रह सकूंगी । हाँ जब तक माँ यहाँ रहेगी मैं भी उसके साथ रहूंगी । उसे छोड़कर न जाऊंगी ।

यह बात सुनतेही हरिमोहनीका सर्वाङ्ग जल उठा । किन्तु अभी कोई बात कहना उसे ठीक न समझा ।

आनन्दमयीके पास आकर सुचरिता मुस्कराती हुई बोली—माँ मैं जरा घर हो आऊँ ।

आनन्दमयीने और कुछ न पूछ कर कहा—अच्छा हो आओ ।

सुचरिताने ललिताके कानमें कहा—मैं आज ही दोपहरको लौट आऊंगी ।

पालकीके सामने खड़ी होकर सुचरिताने कहा—सतीश ।

हरिमोहनीने कहा—सतीशको यहीं रहने दो न ।

सतीश जो घर जायगा तो विघ्न स्वरूप हो सकता है यह सोचकर उसने सतीशको दूर रखना ही पसन्द किया ।

दोनों जब पालकीमें बैठीं और कहार पालकी ले चले तब हरिमोहनी ने भूमिका बांधनेकी चेष्टा कर कहा—“ललिताका तो ब्याह हो गया । यह अच्छा ही हुआ । एक लड़कीसे तो परेश बाबू निश्चय हुए ।” इसके बाद उसने कहा—घरमें कुंवारी लड़की बहुत बड़ी विपदकी वस्तु है पिताके लिये वह बड़ी ही दुश्चिन्ताका कारण है ।

मैं तुमसे क्या कहूँ, मेरे मन में भी दिन-रात यही चिन्ता लगी रहती है । जब भगवानका नाम लेने लगती हूँ तब भी यही चिन्ता मनमें रहती है । मैं तुमसे सच कहती हूँ कि ठाकुरजी की सेवामें आनन्दमयी पहलेकी तरह जी नहीं लगता ।—मैं एक ऐसे घरानेमें तेरा सम्बन्ध पक्का कर दूंगी कि जिसका सुयश सर्वत्र छाया हुआ है । ए

ऐसा अवसर प्राप्त हो गया है जिसके कारण तू बड़े-बड़े कुलों-नों के घर एक पंक्ति में बैठकर भोजन करेगी और कोई चूँ तक न कर सकेगा।

भूमिका समाप्त न होने पाई थी कि पालकी दर्वाजे के पास आ पहुँची। दानों पालकीसे उतरकर घरके भीतर आईं। ऊपर जाते समय सुचरिता को दृष्टि एकाएक दर्वाजेके समीपवाले कमरेमें एक अपरिचित व्यक्ति पर पड़ी। देखा, वह एक नौकरसे तेजको मालिश जोरसे करा रहा है। उसने सुचरिता को देखकर कुछ सझोच न किया बल्कि बड़े कुतूहल के साथ उसकी ओर निहारने लगा।

ऊपर जाकर हरिमोहिनीने अपने देवरके आने का सवाद सुचरिता को सूचित किया। हरिमोहिनीने उसको समझानेकी चेष्टाकी कि घर पर एक मेहमान आया है, उसे ऐसी अवस्थामें छोड़ आज ही दोपहर को चला जाना तुम्हारे लिए उचित न होगा, वरन् शिष्टाचार के सर्वथा विरुद्ध होगा।

सुचरिता ने बड़े जोरसे सिर हिलाकर कहा—वहीं मोसो, मुझे जाना ही होगा।

हरिमोहिनी—ग्रच्छा आज के दिन रह जाओ, कल चली जाना।

सुचरिता—मैं अभी स्नान करके परेश बाबूके घर भोजन करने जाऊँगी और वहींसे ललिता के पास जाऊँगी।

तब हरिमोहिनी ने स्पष्ट कहा—तुम्हीं को देखने आये हैं।—इसमें क्या हानि है सिर्फ पाँच ही मिनटमें देखा-सुनी हो जायगी।

सुचरिता—नहीं।

यह “नहीं” शब्द इतना प्रबल और साफ था कि हरिमोहिनीको फिर उसे दुहराने का साहस न हुआ। उसने कहा—ग्रच्छा न मही। देखनेकी उतनी जरूरत भी नहीं है। यह तो अपने घरकी बात है। परन्तु कैलास आज-कल का लिखा-पढ़ा लड़का है, तुम्हीं लोगोंकी तरह वह भी कुछ नहीं मानता। कहता है, कन्या को अपनी आँख से देखूँगा। तुम लोग सबके सामने जाती-आती हो, इसी से कहा।

देखना तो कोई बड़ी बात नहीं है। किसी दिन तुमसे उसकी भेंट कराऊंगी। अभी तुम लजानी हो, तो भले हा उससे भेंट न करो। यह कहकर वह कैलास का वर्णन करने लगी। उसके शील-स्वभावके बारे में उसने बहुत कहना फ़जूल समझा। इतना ही कहा, स्त्रीके मरने पर वह किसी तरह दूसरा व्याह करना नहीं चाहता था। घरके लोगोंने जब उसे बहुत तङ्ग किया तब वह लाचार होकर केवल गुरुजनकी आज्ञा पालन करने को प्रवृत्त हुआ है। इस प्रस्ताव पर राजी करनेके लिए उसीको क्या कम क्लेश उठाना पड़ता है। क्या कैलास ऐसी साधारण बात पर ध्यान देना चाहता था। उसका वंश बड़ा ही उच्च है। समाजमें उसकी बड़ी प्रतिष्ठा है।

मुचरिता ने किसी तरह उनकी प्रतिष्ठा को बिगाड़ना नहीं चाहा। हरिमोहिनी के प्रस्ताव पर वह किसी तरह राजी नहीं हुई।

तब वह मनकी कोषाग्निमें प्रज्वलित हो बार-बार गोरा को लक्ष्य करके कटु वाक्योंका प्रयोग करने लगी। उसने कहा—गोरा अपनेको चाहे जितना बड़ा हिन्दू कहकर अपनी बड़ाई करे परन्तु हिन्दू समाजमें उसे पूछता कौन है। उसे कौन जानता है? यदि वह लोभ में पड़कर ब्राह्मण की किसी रुपये-पैसेवाली लड़कीसे ब्याह करेगा तो समाजके शासनसे फिर उद्धार कैसे पावेगा। दस लोगोंके मुँह बन्द करनेके लिए रुपये फूकने पड़ेंगे। तो भी समाज उसे ग्रहण करेगा या नहीं, इसमें सन्देह है।

मुचरिता:—मीसी, तुम ये बातें क्यों कह रही हो? तुम जानती हो, ये बिलकुल बे सिर पैर की बातें हैं।

हरिमोहिनी ने कहा—मैं बूढ़ी हुई, मुझे कोई बातोंमें कैसे ठगोगा? मेरे आँख-कान खुले हैं। मैं सब कुछ देखती-सुनती हूँ, परन्तु समझ-बूझकर चुप हो रहती हूँ।

सुचरिता का स्वभाव बड़ा ही सहिष्णु था, तथापि वह अब की बार उकताकर बोली—तुम जिनकी बात कह रही हो उन्हें मैं गुरु मानती हूँ, उन पर मेरी हार्दिक भक्ति और श्रद्धा है। उनके साथ मेरा कैसा भाव है, यह जब तुम किसी तरह नहीं समझती तब कोई उपाय नहीं। मैं अब यहाँ से जाती हूँ। जब तुम शान्त होगी तब मेरे हृदय को पहचानोगी, और तुम्हारे साथ अकेली रहने का अवसर होगा तब मैं फिर यहाँ आऊँगी।

हरिमोहिनी—गोरा को यदि तुम दूसरी दृष्टिसे देखती हो, यदि उसके साथ तुम्हारा ब्याह न होगा, तो ऐसी अवस्था में तुम ऐसे योग्य वर (कैलास) का निषेध क्यों करती हो ? तुम कुंवारी तो रहोगी नहीं।

सुचरिता—क्यों न रहूँगी ! मैं ब्याह न करूँगी।

हरिमोहिनीने आँखें फाड़कर कहा—यह कहो, तो बुढ़ापे तक यों ही रहोगी ?

सुचरिता—हाँ, मृत्युपर्यन्त।

[७१]

इस आघातसे गोराके मनका भाव बदल गया । सुचरिताके द्वारा जो गोराका मन आक्रान्त हुआ था, उसने उसका कारण सोचकर देखा वह उन लोगोंके साथ हिल-मिल गया है, कब कैसे उन लोगोंके साथ इस तरह मिल गया, इसका ज्ञान उसे न रहा । जो निपेक्षकी सीमा थी, उसे गोरा भूलसे लाँघ गया है । यह हमारे देशकी रीति नहीं है । कोई अपनी सीमाकी रक्षा न कर सकने पर, जानकर या न जानकर, केवल अपना ही अनिष्ट नहीं कर डालता वरन् दूसरेका हित करने की शक्ति भी उसकी चाली जाती है । हृदय की वृत्ति संसर्ग से प्रबल होकर ज्ञान, निष्ठा और शक्तिको मलिन कर देती है । निर्मल बुद्धि भी संसर्ग से विगड़ जाती है ।

केवल ब्राह्म-घरकी लड़कियोंके साथ मिलने जाकर गोरा अपनेको भूल गया हो, सो नहीं; वह जा आस-पासके गाँवोंमें साधारण लोगोंके साथ मिलने गया था, वहाँ भी वह मानों एक भ्रम-जालमें पड़कर अपने को भूल सा गया था । क्योंकि उसको पग-पग पर दया उपजती थी । इसी दयाके बश होकर वह केवल यही सोचता था कि यह काम बुरा है, यह अन्याय है, इसको दूर कर देना ही उचित है । किन्तु यह दयावृत्ति क्या भले-बुरे के सुविचार की योग्यताको विकृत नहीं करती ? दया करने की भौक जितनी ही बढ़ उठती है, उतनी ही निर्विकार भावसे सत्यको देखनेकी हमारी शक्ति क्षीण पड़ जाती है । दया-बश हम अयुक्त विचार करनेको बाध्य हो पड़ते हैं ।

इसलिए जिसके ऊपर देशके समस्त हितका भार है, उसको सबसे निर्लिप्त होकर रहने का विधि हमारे देशमें चली आती है । प्रजाके साथ अनिष्ट भावसे मिलने ही पर राजा प्रजाका पालन कर सकता है, यह

बात सर्वथा अमूलक है। प्रजा के सम्बन्ध में राजा को जिस ज्ञानकी आवश्यकता है वह प्रजाके विशेष सम्पर्क से दूषित हो जाता है। इस कारण प्रजा आप ही अपने राजासे दूर रहकर उसकी आज्ञाका पालन करती है। अगर राजा प्रजा का सहचर हो जाय तो उसकी ज़रूरत ही न रहे।

ब्राह्मण को भी उसी तरह सबसे दूरस्थ और निलीन रहना चाहिए। ब्राह्मणको बहुतोंका मङ्गल करना पड़ता है इसलिए वह बहुतों के संसर्ग से बचकर रहे इसीमें कुशल है।

गोरा ने कहा—मैं भारतवर्षका वही ब्राह्मण हूँ। किन्तु जो ब्राह्मण दस लोगोंके साथ सम्पर्क रखते हैं और व्यवसाय के कीचड़ में लोट, धनके लोभमें पड़, शूद्रत्वकी रस्सी गलेमें बांधकर मरनेको तैयार हैं उनकी गणना गोराने स्वदेशके सजीव पदार्थोंमें नहीं की। उन्हें शूद्रसे भी नीच समझा। क्योंकि शूद्र अपने शूद्रत्वकी रक्षा करके जीवित है, किन्तु ये ब्राह्मणत्व के अभावसे मृतप्राय हैं। इसी लिए ये अपवित्र और शक्तिहीन हैं। भारतवर्षे इन्हीं के कारण आज ऐसा दीन होकर अशौच में है।

इसके पूर्व गोरा का मन कभी देव-पूजामें नहीं लगता था। जब ने उसका हृदय इन बातों को सोचकर क्षुब्ध हो उठा है तब से उसकी कुछ और ही धारणा हो गई है। सभी काम उसे निस्सार मालूम होते हैं। इस असार संसार का विचार कर जब उसने कुछ पार न पाया तब देव-पूजा में मन लगानेका ही निश्चय किया। कुछ दिनसे वह देवमूर्तिके सामने बैठकर उस मूर्तिमें अपने मनको एकदम निविष्ट कर देना चाहता है। परन्तु वह किसी उपायसे अपनी चित्त-वृत्ति को उस मूर्तिमें स्थिर नहीं कर सकता। वह बुद्धि के द्वारा देवता की व्याख्या करता है, उसकी महिमा गाता है। परन्तु कलित मूर्तिकेआगे उससे भक्ति करते नहीं बनता। आध्यात्मिक दृष्टिसे मूर्ति-पूजा नहीं की जाती। मन्दिरमें बैठकर मूर्ति-पूजा की कोई चेष्टा न करके जब वह घर बैठकर किसी के साथ आध्यात्मिक आलोचना करता था या एकान्त

में बैठकर अपने मन और वाणीको भावके स्नातमें बहा देता था तब उसके हृदयमें आनन्द और भक्तिरस का सञ्चार हो आता था। यह समझकर भी उसने मूर्ति-पूजा करना न छोड़ा। वह नित्य नियमपूर्वक पूजा पर बैठने लगा। इसे उसने अपना नित्य का नियम मान लिया और यह कहकर मन को समझाया कि जहाँ भाव की प्रबलता नहीं वहाँ नियम ही प्रधान है, वहाँ नियम से ही काम लेना चाहिए।

गोरा जब गाँवमें जाता था तब वहाँके देवालयमें जाकर मन ही मन ध्यान करके कहता था, यही मेरे साधन का विशेष स्थान है, एक ओर देवता और एक ओर भक्ति, इन दोनोंके बीचमें ब्राह्मण सेतु-स्वरूप होकर दोनोंको परस्पर मिला रहे हैं। क्रमशः गोरा के मन में यह खयाल भी पैदा हुआ कि ब्राह्मण के लिए भक्ति की आवश्यकता नहीं। भक्ति साधारण मनुष्योंकी ही विशेष सम्पत्ति है। इस भक्त और भक्ति के बीच का जो मार्ग है वही ज्ञान का मार्ग है। यह जैसे दोनों की योगरक्षा कर रहा है, वैसे दोनोंकी सीमा का भी पालन कर रहा है। भक्त और देवताके बीच यदि निर्मल ज्ञान परदेकी तरह न रहे तो सब बातें बिगड़ जायँ। इसलिए भक्तिमें तन्मय होना ब्राह्मणके मुखकी सामग्री नहीं।

गङ्गा के किनारे एक बाग में प्रायश्चित्त-सभा की तैयारी होने लगी ।

अविनाश के मन में एक त्रुटि यह मालूम हो रही थी कि कलकत्ते के बाहर जो प्रायश्चित्त का अनुष्ठान हो रहा है, वहां लोगों की दृष्टि, जैसी चाहिए, आकृष्ट न होगी । वह जानता था कि गोरा को अपने लिए प्रायश्चित्त की कोई आवश्यकता नहीं । आवश्यकता है, देश के लोगों के लिए । इसलिए लोगों की भीड़-भाड़ में ही यह काम होना चाहिए ।

किन्तु गोरा राज़ी न हुआ । वह वेद-मन्त्र पढ़कर जैसा वृहत् होम करके यह काम करना चाहता है, वैसा कलकत्ता शहर के भीतर होने की सम्भावना नहीं । इसके लिए तो तपोवन का प्रयोजन है । वेदाध्ययन से प्रतिध्वनित, होमाग्नि से प्रदीप्त गङ्गा के शान्त तट में दुनिया के गुरु पुराने भारतवर्ष को गोरा जगावेगा, और गङ्गाजल में स्नान करके पवित्र हो उससे नये जीवन की दीक्षा ग्रहण करेगा । गोरा नैतिक प्रभाव के लिए व्याकुल नहीं है ।

अविनाश ने तब अन्य कोई उपाय न देख समाचारपत्रों का सहारा लिया । उसने गोरा से छिपाकर इस प्रायश्चित्त की बात सब समाचार पत्रों में छपवा दी केवल यही नहीं, उसने सम्पादकीय कालम में बड़े-बड़े निबन्ध लिख भेजे । उनमें उसने विशेषकर यही बात जताई कि गोरा के समान तेजस्वी पवित्र ब्राह्मण को कोई दोष स्पर्श नहीं कर सकता । तां भी वे साम्प्रतिक पतित भारतवर्ष के समस्त पातकों का भार अपने ऊपर लेकर सारे देश की ओर से प्रायश्चित्त कर रहे हैं । हमारा देश आज जैसे अपने पाप के फल से विदेशीय के हाथ क़ैद

होकर दुःख पा रहा है, वैसे गोरा ने भी अपने जीवन में क़ैदी बन क़ैदखाने का दुःख भेजना स्वीकार कर लिया है। इस प्रकार जैसे उन्होंने देश का दुःख अपने ऊपर ले लिया है वैसे ही देशके अनाचार का प्रायश्चित्त भी वे आप ही करने को तैयार हुए हैं। इसलिए हे भारत के पचास करोड़ दुःखी सन्तानो ! तुम लोग इस प्रायश्चित्तकर्त्ता को—इत्यादि ।

गोरा इन लैलोंको पढ़कर ख़फ़ा हो उठा। किन्तु अविनाश किसी तरह दबनेवाला न था। गोरा उसे गाली भी देता तो भी वह मनमें कुछ न लाता था बल्कि खुश होता था। वह समझता था कि मेरे गुरु (गौरमोहन) का भाव बहुत ऊँचे दर्जेका है। वे संसारसे सम्बन्ध रखनेवाली बातों को कुछ भी नहीं समझते।

अविनाश की चेष्टा से गोरा के प्रायश्चित्त के विषय में चारों ओर ख़ासी धूम मच गई। गोराको देखनेके लिए उसके साथ बातें करनेके लिए, भुण्डके भुण्ड लोग उसके घर आने लगे। पहलेसे भी लोगोंकी भीड़ बढ़ गई। रोज़-रोज़ उसके पास चारों ओरसे इतनी चिट्ठियाँ आने लगीं कि उनका पढ़ना भी बन्द कर दिया गया। गोरा को मालूम होने लगा, जैसे इस देशव्यापिनी आलोचनाके द्वारा उसके प्रायश्चित्तकी सात्विकता नष्ट हो गई हो। यह एक राजस कर्म हो गया। यह भी कालका ही दोष है।

कृष्णदयाल आजकल समाचार-पत्रोंको हाथसे छूते तक न थे। किन्तु यह बात लोगोंके मुँहसे उनके कानोंमें भी जा पहुँची। उनका योग्य पुत्र गोरा बड़े समागोहके साथ प्रायश्चित्त करने बैठा है, और वह अपने पिता के हा पद-चिह्न का अनुसरण करके किसी समय उन्हींकी भाँति सिद्ध पुरुष हो जायगा, यह सवाद और आशा कृष्णदयाल के कृपापत्रोंने उनके आगे बड़े गौरवके साथ प्रकट की।

गोरा के कांठेमें कृष्णदयालने बहुत दिनों से पैर न रक्खा था। आज वे अपना रेशमी वस्त्र उतारकर, सूती कपड़े पहिरकर, एकाएक

उसके कोठे में गये। वहाँ उन्होंने गोरा को नहीं देखा। नौकर में पूछने पर मालूम हुआ कि वह ठाकुरजी के घर में है।

कृष्णदयाल ने चकित होकर फिर नौकर से पूछा—ऐं ! ठाकुरजी के कमरेमें उसका क्या काम है ?

“वे पूजा करते हैं।”

कृष्णदयालने हड़बड़ाकर ठाकुरजीके घरके पास जाकर देखा कि यथार्थ ही गोरा पूजा पर बैठा है।

कृष्णदयालने बाहरसे पुकारा—गोरा।

गोरा अपने पिताके आगमन से आश्चर्ययुक्त होकर उर खड़ा हुआ।

तब कृष्णदयाल ने कहा—गोरा, एक बात और सुनता हूँ। तुम प्रायश्चित्त करोगे, इसके लिए क्या सब परिश्रमों को निमन्त्रित किया है ?

गोरा—जी हाँ !

कृष्णदयालने अत्यन्त उत्तेजित होकर कहा—मैं अपने जीते जी यह कभी न होने दूँगा।

गोरा अब अपने मनको न रोक सका। उसने पूछा—क्यों ?

कृष्णदयाल—मैंने तुमसे एक दिन और कहा था कि तुम प्रायश्चित्त न कर सकोगे।

गोरा—कहा तो था, किन्तु कारण तो आपने कुछ बताया नहीं।

कृष्णदयाल—कारण बतानेकी मैं कोई आवश्यकता नहीं देखता। हम तो तुम्हारे गुरुजन हैं, मान्य हैं, शास्त्रीय क्रियाकर्म हमारी अनुमति के बिना तुम नहीं कर सकते। उसमें पितरों का श्राद्ध करना पड़ता है, सो जानते हो न !

गोरा ने विस्मित होकर कहा—इसमें हानि क्या है ?

कृष्णदयालने क्रुद्ध होकर कहा—बड़ी हानि है। वह मैं कभी न होने दूँगा।

गोरा ने हृदयमें आघात पाकर कहा—देखिए, यह मेरा निजी काम है। मैंने अपनी पवित्रताके ही लिए यह आयोजन किया है। इस पर आप वृथा आलोचना करके क्यों कष्ट पा रहे हैं ?

कृष्णदयाल—देखो, तुम बात-बातमें तर्क करना छोड़ दो। यह तर्क का विषय नहीं है। ऐसे बहुत से विषय हैं जो अब भी तुम्हारे समझने योग्य नहीं। मैं फिर भी तुमसे कहा हूँ कि तुम हिन्दूधर्म में प्रवेश कर सके हो, इसीका तुमको गर्व है, किन्तु यह तुम्हारी वित्तकुल भूल है। तुम कभी हिन्दू हो नहीं सकते। तुम्हारे शोषितका प्रत्येक कण तुम्हारे सिर से पैर तक उस धर्म के प्रतिकूल है। हिन्दू होनेकी तुममें कोई योग्यता नहीं। इच्छा करनेसे भी तुम हिन्दू नहीं होगे। इसके लिए जन्म-जन्मान्तर का पुण्य चाहिए।

गोरा का मुँह लाल हो गया। उसने कहा—मैं जन्म-जन्मान्तर की बात नहीं जानता, किन्तु आपके वंशस्त्री रक्त-धारा में जो अधिकार प्रवाहित होता आया है, क्या उस पर भी मैं कोई दावा नहीं कर सकता !

कृष्णदयाल—फिर भी विवाद ! मेरे मुँह पर प्रतिवाद करते तुम्हें सङ्कोच नहीं होता। अनेको हिन्दू कहते हो, परन्तु विज्ञायनी बोली कहाँ जायगी। मैं जो कहता हूँ उसे मानो, यह सब करना छोड़ दो।

गोरा सिर झुकाकर चुप हो रहा। कुछ देर बाद बोला—यदि मैं प्रायश्चित्त न करूँगा तो शशिमुखीके ब्याह में मैं सबके साथ बैठकर भोजन नहीं कर सकूँगा।

कृष्णदयाल उत्साहित होकर बोले—अच्छा, तो इसमें दर्ज ही क्या है। तुम अलग ही बैठकर खा लेना। तुम्हारे लिए अलग आसन रखवा दिया जायगा।

गोरा—तो समाजमें मुझे अलग होकर रहना पड़ेगा।

कृष्णदयाल—यह तो अच्छा ही होगा। अपने इस उत्साह से गोरा को विस्मित होते देख उन्होंने कहा—देखते नहीं हो, मैं किसी के

साथ भोजन नहीं करता, निमन्त्रण होने पर भी किसीके हाथका छूआ नहीं खाता। समाज के साथ मेरा क्या सम्पर्क है? तुम जिस सार्विक भावने जीवन बिताना चाहते हो उसके लिए तुम्हें भी इसी मार्ग का अवलम्बन करना उचित है। इसीमें तुम्हारा मङ्गल है।

कृष्णदयालने दोपहरके समय अविनाशको बुलाकर कहा—मालूम होता है, तुम्हीं सबने मिलकर गोराको नचाने का सामान किया है

अविनाश—यह आप क्या कहते हैं। आप ही का गोरा हम लोगोको नचा रहा है, वह आप तो कम ही नाचता है।

कृष्णदयाल—परन्तु मैं तुमसे कहता हूँ कि तुम लोगो का प्रायश्चित्त न होगा। मेरी उसमें सम्मति नहीं है। अभी सब रोक दो।

अविनाश मोचने लगा, बूढ़े की यह कैसी ज़िद है। इतिहास में ऐसे बहुत लोग पाये जाते हैं, जो अपने पुत्रके महत्व से एकदम अपरिचित्त थे। हमारे कृष्णदयाल भी उसी श्रेणी के हैं। यदि ये दिन-रात संन्यासियों के पास न रहकह अपने बेटेसे शिक्षा ग्रहण करते तो इनका विशेष उपकार होता।

अविनाश बड़ा चतुर आदमी था। जहाँ वाद-प्रतिवाद में कोई फल न देखता था, यहाँ तक कि “नैतिक प्रभाव” की भी सम्भावना कम देखने पर वह वृथा विवाद न करता था। उसने कहा—अच्छा, जो आपकी सम्मति नहीं है तो न होगा। पर बात यह है कि उसका सब आयोजन हो चुका है, निमन्त्रण पत्र भी जहाँ तहाँ भेजे जा चुके हैं। इनमें अब विलम्ब भी नहीं है, न हो तो एक काम किया जाय। गोग अलग रहे, हमी लोग प्रायश्चित्त करले। देशीय लोगोके पापका तो अभाव नहीं है।

अविनाशके इस आश्वासन-वाक्यसे कृष्णदयाल निश्चिन्त हुए।

कृष्ण बात परग दयाल को गोराली विशेष श्रद्धा कभी नहीं थी, आज भी उसने उनके आदर्शको हृदयसे स्वीकार न किया। यद्यपि वह देशोपकारके आगे माँ बापके हुक्मकी पाबन्दीको नहीं मानता था,

तो भी आज दिन भर उसके मन में पिताके निषेध वाक्य पर दुःख होता रहा। कृष्णदयाल की सब बातोंमें उसे एक छिपे हुए सत्य रहस्यकी धुँधली छाया मालूम होती थी। जितना ही वह सोचता था उतना ही उसका सन्देह दृढ़ होता जाता था। मानों जागने पर वह एक दुःस्वप्नका दुःख पा रहा था। उसे मालूम होने लगा जैसे कोई उसे चारों ओरसे ढकेलकर पंक्तिसे बाहर फेंक देने की चेष्टा कर रहा हो। आज उसको अपनी एकाकिता एक वृहत् रूप धारण किये दिखाई दी। उसके आगे कर्मक्षेत्र बहुत लम्बा-चौड़ा है, काम भी बहुत बड़ा है, किन्तु वह अकेला खड़ा है, उसके पास और कोई नहीं है।



[७३]

कल प्रायश्चित्तकी सभा होगी, और आज रातसे ही गोरा उस बाग में जाकर रहेगा, जहां प्रायश्चित्त होनेवाला है, यही तय हुआ था। जिस समय गोरा वहां जानेको तैयार था, उसी समय हरिमोहिनी आकर उपस्थित हुई। उन्हें देख कर गोराके मनको कुछ प्रसन्नता नहीं हुई। गोराने कहा—आप आई हैं, लेकिन मुझे तो अभी जाना है। मां भी कई दिनसे घरमें नहीं हैं। अगर उनसे कुछ प्रयोजन हो, तो...

हरिमोहिनीने कहा—ना भैया, मैं तुम्हारे ही पास आई हूँ। ज़रा बैठ जाओ, मैं तुम्हारा बहुत समय न लूँगी।

गोरा बैठ गया। हरिमोहिनीने सुचरिता का जिक्र छेड़ा। कहा—तुम्हारी दी हुई शिक्षासे उसका बड़ा उपकार हुआ है। यहा तक कि आज कल वह हर एक के हाथका पानी भी नहीं पीती, और सभी बातोंमें उसकी सुमतिका परिचय मिलता है। हरिमोहिनी कहने लगी—भैया, उसके बारेमें मुझे क्या कम चिन्ता थी उसे सुमार्ग पर लाकर तुमने जो मेरा उपकार किया है, उसका बखान मैं एक मुखसे नहीं कर सकती।

इसके बाद हरिमोहिनीने फिर कहना शुरू किया कि सुचरिता की अवस्था अब अधिक हो चुकी है। उसका ब्याह अब बहुत जल्दी हो जाना चाहिए, यहा तक कि उसमें एक दिनकी भी देर होना अब मुनासिब नहीं है। हिन्दू के घरमें अगर वह होती, ब्राह्म परिवार में न रहती, तो अब तक बाल-बच्चोंसे उसकी गोद भर गई होती। ब्याहमें देर कर के कितना बड़ा अवैध कार्य हुआ है, इस बारे में निश्चय ही तुम भी सहमत होगे। मैं बहुत समय तक सुचरिताके विवाहके बारेमें असह्य उद्वेग सहन करने के बाद, अन्तको बहुत कुछ साध्य-साधना और अनुनय-विनयके उपरान्त अपने देवर कैलासको राज़ी करके कल-

कत्ते में बुला सकी हूँ। उन्होंने पहले जिन सब गुरुतर विधन-बाधाओं की आशंका की थी, वे सब ईश्वरकी इच्छासे दूर हो गई हैं। सब कुछ पक्का और ठीक हो गया है, वर-वत्तके लोग एक पैसा भी दहेज न लेंगे और सुचरित्तके पूर्व इतिहास पर भी कुछ आपत्ति नहीं करेंगे। मैंने इन सब समस्याओं को हल कर दिया है। इसी समय—सुन कर तुमको आश्चर्य होगा—नुसरिता एकदम खिलाफ हो बैठी है, वह ब्याह करनेको राजी नहीं होती। उसके मनका क्या भाव है, नहीं जान पड़ता। मालूम नहीं, किसी ने उसको भड़का कर बहंका दिया है, या और किसीको वह चाहती है। भगवान ही यह जाने। लेकिन भैया, तुमसे मैं खुशामा हो कहे देती हूँ, वह लड़की तुम्हारे योग्य नहीं है ! दिहातमें उसका ब्याह हो जायगा तो कोई उसका पहलेका हाल जान भी नहीं सकेगा, और किसी तरह काम चल जायगा। लेकिन तुम लोग शहरमें रहते हो; तुम अगर उससे ब्याह करोगे, तो शहर के लोगोंको मुद्द नहीं दिवा सकोगे।

गोराने क्रुद्ध होकर कहा—आप यह सब क्या बक रही हैं ! किसने आपसे कहा है कि मैं उससे ब्याह करने के लिए तैयार हूँ या मैंने उससे इस बारेमें कुछ कहा सुना है।

हरिमोहिनीने कहा—मैं क्या जानूँ भैया, अखबार में छप गया है और वही सुन कर मैं लज्जाके मारे मरी जा रही हूँ !

गोरा समझा, हारान बाबूने या उनके दलके किसी आदमीने, अखबारमें इस विषयकी आलोचना की है। गोराने क्रोध से मुट्ठी बाव कर कहा—ब भूठ है !

हरिमोहिनी उसके गर्जन-शब्दसे चौंक उठी। बाली मैं भी तो यही जानती हूँ। अब तुम्हें भेरे एक अनुरोधकी रत्ता करनी होगी। तुम राधारानीके पास ज़रा हो आओ।

गोराने पूछा—क्यों ?

हरिमोहिनी—तुम एक बार चलकर उसे समझा दो।

गोराका मन इस उपलक्षसे एक बार सुचरिताके पास जानेके लिए उसी समय उद्यत हो उठा। उसके हृदयने कहा—चलो आज एक बार आखिरी मुलाकात कर आओ। कल तुम्हारा प्रायश्चित्त है, उसके उपरान्त तो तुम तस्वी हो जाओगे। आज केवल यही एक रात्रि भरका समय है; इसीमें केवल कुछ मिनटोंके लिए मिल लो! कुछ अश्राव न होगा। और अगर होगा भी तो वह कल प्रायश्चित्तमें भस्म हो जायगा।

गोराने दम भर चुप रह कर पूछा—उनको क्या समझाना होगा, बतलाइए।

हरिमोहिनीने कहा—और कुछ नहीं, केवल यही कि हिन्दू आदर्श के अनुसार सुचरिता जैसी सयानी लड़कीको शीघ्र व्याह कर लेना चाहिए, यही उसका कर्तव्य है। और हिन्दू-समाजमें कैलास जैसे सत्पात्रका लाभ सुचरिताकी अवस्थाकी लड़कीके लिए अचिन्तनीय सौभाग्य है।

गोराके हृदयमें जैसे कोई भाले भोकने लगा। जिस आदमीको उस दिन सुचरिताके घरमें द्वार पर देखा था उसे स्मरण करके गोगके जैसे हजारों बिच्छूडक मारने लगे! सुचरिताको वह पावेगा ऐसी कल्पना करना भी गोराके लिए असत्य है। उसका मन बज्र-नादने कहने लगाना यह कभी नहीं हो सकता।

और किसीके साथ सुचरिताका मिलन होना असंभव है; बुद्धि प्रेमी और भावकी गम्भीरतासे परिपूर्ण सुचरिता का गंभीर निस्तब्ध हृदय पृथ्वी पर गोराके सिवा दूसरे किसी आदमीके सामने इस तरह स्पष्ट-रूपसे प्रकाशित नहीं हुआ था, और अन्य किसीके आगे किसी दिन उस तरह प्रकाशित भी नहीं हो सकता। वह हृदय कैसा अद्भुत है! कैसा सुन्दर है! रहस्य निवेतनकी अन्तरतम ड्योड़ीमें वह कौन अनिर्वचनीय सत्ता देखी गई है! मनुष्यको इस तरह कितनी दफे देखा जाता है और कितने आदमियोंको देखा जाता है! देवसंयोगसे ही जिस आदमीने सुचरिताको ऐसे गहरे सत्य-रूपमें देख पाया है, अपनी संपूर्ण प्रकृतिके द्वारा

उसका अनुभव किया है, उसीने तो सुचरिताको प्राप्त किया ! और कोई कभी उसे इस तरह कैसे पावेगा ?

हरिमोहिनीने कहा—एधारानी क्या सदा इसी तरह क्वारी रहेगी ! यह भी कभी क्या हो सकता है ! या होना चाहिए !

यह भी तो ठीक है ! गोरा तो कल प्रायश्चित्त करने जा रहा है ! उसके बाद तो वह सम्पूर्ण रूपसे पवित्र होकर ब्राह्मण बनेना ! तो फिर क्या सुचरिता सदा अविवाहित ही रहेगी ! ऊपर यह चिर-जीवन-व्यापी दुर्वह भार लादनेका अधिकार किसको है ! स्त्री जातिके लिए इतना बड़ा बोझ और क्या हो सकता है !

हरिमोहिनी न जानें क्या बातें बकती चली जा रही थीं, उनका एक अक्षर भी गोराने कानोंमें नहीं पहुंचता था । गोरा सोचने लगा— पिताजी जो इस तरह जोर देकर मुझे प्रायश्चित्त करनेसे रोक रहे हैं, सो उनके इस निषेधका क्या कुछ भी मूल्य नहीं है ?

मैं अभी पिताजी के पास जाऊँ । आज अभी इसी सन्ध्याकालमें मैं उनसे जोर देकर पूछूँ कि उन्होंने मुझमें ऐसा क्या देख पाया है ? प्रायश्चित्तकी राह भी मेरे लिए बन्द है, ऐसी बात उन्होंने क्यों कही ? अगर वह मुझे यह बात अच्छी तरह समझा दे सकें, तो उधरम में छुट्टी पा जाऊंगा ।

हरिमोहिनीसे गोराने कहा—आप ज़रा ठहरिए, मैं अभी आता हूँ !

गोरा कुर्तीके साथ अपने पिताके पास गया । उसे जान पड़ा कृष्णदयाल अभी उसे छुटकारा दे सकते हैं ।

साधनाश्रमका द्वार बन्द था ! गोराने दो एक बार धक्का दिया, मगर नही खुला । कोई बोला भी नहीं । भीतर से धूप की खुशबू आ रही थी । कृष्णदयाल आज सब दरवाजे बन्द करके संयासी के साथ अत्यन्त गूढ़ और अत्यन्त दुरुह एक योग की प्रणाली का अभ्यास कर रहे थे ।

गोरा जैसे ही हरिमोहिनीके सामने आया वैसे ही वह कठ उठी—
भैया, तुम एकबार मेरे साथ चलो ! तुम्हारे जाने से ही, तुम्हारे एक
बार अपने मुखसे कुछ कह देनेसे ही, सब काम बन जायगा ।

गोराने कहा—मैं क्यों जाऊँ ! सुचरिताके साथ मेरा क्या सम्बन्ध
है ! कुछ भी नहीं !

हरिमो०—वह तुम्हें देवताके समान मानती है, भक्ति करती है
तुम्हें अपना गुरु मानती है !

गोराके हृदय-पिण्डमें एक तरफसे दूसरी तरफ तक जैसे बिजलीकी
आगसे गर्मकी हुई सुई किसीने भोंक दी !

गोराने कहा—मुझे वहां अपने जानेका कुछ प्रयोजन नहीं देख
पड़ता । सुचरिताके साथ मेरी भेंट होने की कोई संभावना नहीं है ।

हरिमोहिनीने खुश होकर कहा—सो तो है ही । इतनी बड़ी
सयानी लड़कीसे तुम्हारा मिलना-जुलना तो बेशक अच्छा नहीं है ।
लेकिन भैया, आज मेरा इतना काम कर दिये बिना तो मैं तुमको
छोड़ूंगी नहीं । उसके बाद अगर फिर कभी तुमको बुलाऊँ, तो तभी
कहना ।

गोराने बार-बार सिर हिलाकर इस आह्वानको अस्वीकार कर
दिया । अब नहीं, किसी तरह नहीं । सब ख़तम होगया । उसने अपने
विधाताको सब अर्पण कर दिया है । अपनी पवित्रता में अब वह
किसी तरहका दाग नहीं लगा सकेगा । अब वह सुचरिता से मिलने
नहीं जायगा ।

हरिमोहिनीने जब गोराने भावसे यह निश्चय समझ लिया कि
उसे डिगाना असंभव है, तब उन्होंने कहा—अगर नहीं ही जा सकते,
तो एक काम करो भैया ! एक चिट्ठी उसे लिख दो !

गोराने फिर सिर हिलाया। यह भी नहीं हो सकता ! चिट्ठी पत्री कुछ नहीं।

हरिमोहिनीने कहा—अच्छा, तुम मुझको दो लाइन लिख दो ! तुम तो सभी शास्त्र जानते हो; मैं तुमसे व्यवस्था लेने आई हूँ।

गोराने पूछा—काहेकी व्यवस्था ?

हरिमो०—हिन्दूके घरकी लड़कीके लिये ब्याह के लायक अवस्थामें ब्याह करके गृहस्थाश्रम का पालन करना ही सबसे बढ़कर धर्म है कि नहीं—इसी की।

गोराने कुछ देर चुप रहकर कहा—देखिए, आप इन सब बातों में मुझको न लपेटिए। व्यवस्था देनेके लायक मैं पण्डित नहीं हूँ, और न यह मेरा काम है।

तब हरिमोहिनीने जरा तीव्र भावसे ही कहा—तो फिर अपने मनके भीतरकी बात खोलकर ही क्यों नहीं कह देते ! शुरूसे गुत्थी तुम्हींने डाली है, अब खोलनेके समय कहते हो कि मुझे न लपेटिये ! इसके क्या माने ! असल बात यह है कि तुम नहीं चाहते कि सब मामला साफ हो जाय—सुलभ जाय।

और कोई समय हांता, तो गोरा इतने ही में आग बबूना हो उठता। ऐसे अपवाद को वह किसी तरह भी सह न सकता। किन्तु आज उसका प्रायश्चित्त शुरू हो गया है; इससे उसने क्रोध नहीं किया। उसने अपने मन के भीतर डूबकर टटोल कर देखा, हरिमोहिनी सत्य ही कह रही हैं। वह सुचरिता के साथ अपने बड़े बन्धन को काटने के, लिए अवश्य निर्मम हो उठा है, किन्तु एक सूक्ष्म सूत्रको जैसे उसने देख ही नहीं पाया—इस तरह वह बनाये रखना चाहता है। वह सुचरिताके साथ सम्बन्धको अब भी सम्पूर्ण रूप से त्याग नहीं कर सका।

किन्तु कुपणता दूर ही करनी होगी। एक हाथसे दान करके दूसरे हाथसे उसे पकड़े रहनेसे काम नहीं चलेगा।

उसने उसी समय कागुज निकाल कर खूब ज़ोर के साथ, बड़े-बड़े अक्षरों में, लिखा कि “विवाह ही नारी के जीवन की साधना का मार्ग है; गृह-धर्म ही उसका प्रधान धर्म है। यह विवास इच्छा-पूर्ति के लिए नहीं, कल्याण-साधन के लिए है। गृहस्थाश्रम चाहे सुखका हो, चाहे दुःखका, एकाग्र मनसे उसी गृहस्थाश्रमको ग्रहण करके, सती, साध्वी और पवित्र होकर धर्म को ही घर में मूर्तिमान करके रखना रमणी का कर्तव्य है। यही स्त्रियोका व्रत है।”

हरिमोहिनी ने कहा—इसके साथ ही कैलासके बारे में भी कुछ लिख देते, तो अच्छा होता भैया।

गोरा—ना, मैं उनकी नहीं जानता। उनके लिए सिकारिश नहीं कर सकूंगा।

हरिमोहिनीने उस कागुज को प्रामिसरी नोटकी तरह बड़े यत्न से मोड़कर अपने आंचलमें बाँव लिया, और घर को लौट गईं।

सुचरिता उस समय भी आनन्दनयीके निकट ललिता के ही घर में थी। वहाँ इस प्रसंगकी आलोचनामें सुविधा न होगी। और ललिता तथा आनन्दमयी के मुख से विरुद्ध बातें सुन कर सुचरिताके मनमें दुविधा पैदा हो सकती है, यह आशंका करके हरिमोहिनी वहाँ नहीं गईं। उन्होंने सुचरिताको घरमें ही बुला भेजा। कहला भेजा कि वह दूसरे दिन दोपहर को उनके पास आकर भोजन करे, एक बहुत ज़रूरी और खास बात है। तासरे ही पहर वह फिर चली जा सकती है।

दूसरे दिन दोपहरको सुचरिता अपना मन कठिन करके ही आकर उपस्थित हुई। वह जानती थी कि उस की मौसी उससे व्याह की बात ही फिर और किसी प्रकार से कहेंगी। उसका यह दृढ़ संकल्प था कि आज वह बहुत कड़ा जवाब देकर इस प्रसंग को आज ही एकदम खत्म कर देगी।

सुचरिताका भोजन समाप्त हो जाने पर हरिमोहिनी ने कहा—कल सन्ध्याके समय मैं तुम्हारे गुरु के घर गई थी।

सुचरिताका अन्तःकरण कुण्ठित हो गया। मौसी फिर क्या गोरा की कोई बात उठाकर उसका अपमान कर आई हैं ?

हरिमोहिनीने कहा—डरो नहीं राधारानी, मैं उनके साथ लड़ने-भिड़ने नहीं गई थी। अकेली थी, सोचा जाऊँ। उनके पास, दो-चार अच्छी बातें सुन आऊँ। बातों-ही-बातों में मुझ्दारा ज़िक्र उठ खड़ा हुआ मैंने देखा, उनकी भी वही राय है। स्त्री-जातिका बहुत दिन क़ांगी रहना वह भी अच्छा नहीं बताते। वह कहते हैं, शास्त्र के मतसे वह अधर्म है। वह साहब लोगों के यहाँ चल सकती है, हिन्दू के यहाँ नहीं। मैंने उनसे अपने कैलाशके सम्बन्ध की बात भी खोलकर कही थी। मैंने देखा, गौरमोहन बाबू बेशक शानी आदमी हैं।

लज्जा और अप्रिय प्रसङ्ग उठने के कष्ट से सुचरिता जैसे मरी जा रही थी। हरिमोहिनी ने कहा—तुम तो उन्हें अपना गुरु समझ कर मानती हो ! उनकी आज्ञाका तो पालन तुम्हें करना होगा !

सुचरिता चुप रही। हरिमोहिनीने फिर कहा—मैंने उनसे कहा—मैया, तुम खुद चलकर उसे समझा दो; वह हम लोगोकी बात तो मानती ही नहीं। उन्होंने कहा—ना, उन से अब फिर भेंट करना उचित न होगा। उसके लिए हमारा हिन्दू-समाज रोकता है। तब मैंने कहा—फिर अब और उगाय क्या है ! इस पर गौरमोहन बाबू ने अपने हाथसे यह लिख दिया है—**इह देखो !**

इतना कह कर हरिमोहिनीने धीरे धीरे वही कागज़ अपने आंचल से खोला। उसे खोल कर सुचरिता के सामने उन्होंने रख दिया !

सुचरिताने पढ़ा। उसका दम जैसे घुटने लगा, वह काठ की पुतली की तरह जड़ होकर बैठी रही।

उस लिखावटके भीतर ऐसी कोई बात न थी, जो नई या असंगत हो। यह भी न था कि उन बातोंके साथ सुचरिताका मत न मिलता हो। किन्तु हरिमोहिनीके हाथ से विशेष करके अपना यह सुचरिताके पास भेज देने का जो मतलब निकलता था, वही सुचरिता को तरह-

तरह से घोर कष्ट देने लगा । गोरा की ओर से आज यह आज्ञा क्यों है ? अवश्य ही सुचरिता के लिए भी ऐसा समय उपस्थित होगा, उसको भी एक दिन ब्याह करना ही होगा—किन्तु 'जैसे' के लिए गोरा को इतनी शीघ्रता करने का क्या कारण हुआ है, उसके सम्बन्ध में गोरा का काम क्या बिल्कुल ही समाप्त हो गया, वह क्या गोरा के कर्तव्य में कुछ हानि कर रही है, उसके जीवन के मार्ग में कोई बाधा डाल रही है ? उसके लिए गोरा को देने का या उससे प्रत्याशा करने का क्या कुछ भी नहीं है ? उसने लेकिन इस तरह से सोचा नहीं था, वह इस समय भी तो गोरा की प्रतीक्षा कर रही थी । सुचरिता अपने भीतर के इस असत्य कष्ट के विरुद्ध युद्ध करने के लिए प्राण-पण से चेष्टा करने लगी; किन्तु उसने मन में कहीं भी कुछ भी सान्त्वना नहीं पाई ।

हरिमोहिनी ने सुचरिता को सोचने के लिए बहुत-सा समय दिया । उन्होंने नित्य-नियम के अनुसार कुछ देर तक सो भी लिया । नींद खुलने पर सुचरिता के कमरे में आकर उन्होंने देखा, वह जैसे बैठी थी, वैसे ही अब तक चुपचाप बैठी हुई है ।

हरिमोहिनी ने कहा—राधू, भला तू इतना सोच-विचार क्यों कर रही है ? इसमें इतना सोचने की ऐसी कौन सी बात है ? क्यों, गौर-मोहन बाबू ने इसमें क्या कुछ अन्याय की बात लिखी है ?

सुचरिता ने शान्त स्वर में कहा—ना, उन्होंने ठीक ही लिखा है ।

हरिमोहिनी अत्यन्त आश्चर्य हो कर कह उठी—तो फिर अब और देर करके क्या होगा बेटी ?

सुचरिता—ना, मैं देर करना नहीं चाहती । मैं ज़रा बाबू जी के पास जाऊँगी ।

हरिमोहिनी—देखो राधू, तुम्हारे बाबूजी यह कभी नहीं चाहेंगे कि तुम्हारा ब्याह हिन्दू-समाज में हो । किन्तु तुम्हारे जो गुरु हैं, वह...

सुचरितासे अधिक सहा नहीं गया। वह कह उठी—मौसी, तुम क्यों बार बार यही एक बात पकड़ कर पीछे पड़ गई हो ? ब्याहके बारे में मैं बाबूजी से कोई बात कहने नहीं जा रही हूँ। मैं यों ही एक बार उनके पास जाऊँगी।

परेश बाबूके निकट ही सुचरिताके लिए सान्त्वना का स्थान था। परेशके घर जा कर सुचरिताने देखा, वह एक लकड़ीके बक्समें अपने कपड़े लत्ते रखने में लगे हुए हैं।

सुचरिताने पूछा बाबू जी यह क्या है ?

परेशने ज़रा हँस कर कहा—बेटी, मैं ज़रा शिमले पर सैर करने जा रहा हूँ, कल सबेरेकी गाड़ीसे जाऊँगा।

परेशकी इस ज़रा-सी हंसीके भीतर एक भारी विप्लवका इतिहास छिपा हुआ था, और वह सुचरिता की तोक्षण बुद्धिसे छिपा नहीं रहा। घरमें उनकी स्त्री कन्या आदि और बाहर उनके बन्धु-बान्धव लोग उन को तनिक भी शान्तिसे रहने नहीं देते थे। कुछ दिनके लिए भी अगर दूर जाकर कुछ समय बिता आवे तो उनकी जान बचे। तब वरमें उन्हें केन्द्र करके केवल एक आवर्त (क्वण्डर) घूमता रहेगा। कल उन्होंने विदेश जानेका इरादा किया है, और आज उनका कोई अपना आदमी उनके कपड़े तक रख देनेको निकट नहीं आया, उन्हें अपने हाथसे ही यह काम करना पड़ रहा है; यह दृश्य देख कर सुचरिताके हृदयको बड़ी चोट पहुँची। वह परेश बाबूको हटा कर आप ही वह काम करने लगी। पहले उसने सन्दूकके सब कपड़े बाहर निकाल डाले, उसके बाद विशेष यत्न के साथ कपड़ों को तहाकर बाक़ायदे सन्दूक के भीतर रखना शुरू किया। सुचरिता ने कपड़ों के ऊपर परेश बाबूकी सदा पढ़नेकी किताबें इस तरह रखीं, जिसमें उन्हें निकालने में कुछ असुविधा न हो, और कपड़े भी उलझने न पड़े। इस तरह बक्स को भरते-भरते धीरे-धीरे सुचरिताने पूछा—बाबू जी, तुम क्या अकेले ही जाओगे ?

सुचरिताके इस प्रश्नके भीतर बेदना का आभास पाकर परेशने कहा—उससे तो मुझे कुछ बच न होगा राधे !

सुचरिताने कहा—ना बाबूजी, मैं भी तुम्हारे साथ चलूंगी ।

परेश बाबू सुचरिताके मुखकी ओर ताक रहे थे । सुचरिताने कहा—बाबू जी, मैं तुमको कुछ दिक्र नहीं करूंगी ।

परेश—यह तुम क्यों कहती हो ? तुमने कब दिक्र किया है राधे ?

सुचरिता—तुम्हारे पास न रहनेसे मेरा भला न होगा बाबूजी । बहुत-सी बातें ऐसी हैं, जिन्हे मैं समझ नहीं पाती । तुम मुझे समझा न दोगे, तो मैं कुछ निर्णय न कर सकूंगी । बाबूजी, तुम मुझे से अपनी बुद्धि पर भरोसा करने को कहते हो, लेकिन मुझ में वैसी बुद्धि नहीं है, और मैं अपने मन में वह ज़ोर भी नहीं देख पाती । तुम मुझे अपने साथ ले चलो बाबू जी !

इतना कह कर, परेश की ओर पीठ करके, बहुत ही सिर झुका कर सुचरिता सन्दूक के कपड़े संभालने लगी । उसकी आँखोने टप टप करके आसू गिरने लगे ।

गोराने जब वह कागज़ लिखकर हरिमोहिनीके हाथमे दिया तब उसे जान पड़ा, जैसे उसने सुचरिताके सम्बन्धमें त्याग-पत्र लिख दिया हो। किन्तु व्यवस्था लिख देने ही से तो बात तय नहीं हो जाती। उसके हृदयने उस व्यवस्था को एकदम अप्राप्त्य कर दिया। उस व्यवस्था पर केवल गोरा का नाम अङ्कित था, उसके हृदय का दस्तखत तो उसमें न था। इसीसे उसका हृदय अबाध्य हो रहा। ऐसी अबाध्यता कि उसकी प्रेरणासे उसी रातको गोरा को एक बार सुचरिताके घरकी ओर दौड़ लगानी पड़ी। किन्तु ठीक उसी समय गिर्जाघर की घड़ी में दस बज गये, इससे गोराको होश हो आया कि अब किसीके घर जाकर भेंट करने का समय नहीं। उस रातको वह उस बाग में, जहाँ प्रायश्चित्त की आयोजना की गई थी, न जा सका। उसने कल ग्यूस तड़के वहाँ हाज़िर होने की खबर भेज दी।

गोरा बड़े तड़के उठकर गङ्गाके तट पर उस बागमें गया। किन्तु मनको जैसा पवित्र और बलशाली करके प्रायश्चित्त करने की बात स्थिर की थी, वैसी उसके मन की अवस्था न रही।

कितने ही पण्डित और अध्यापक लोग आये हैं और कितने ही अभी आनेको हैं; गोरा यथाक्रम सबका स्वागत कर आया। उन्होंने गोरा का सनातन धर्म पर अचल विश्वास देख बार-बार उसकी प्रशंसा की।

बाग धीरे-धीरे लोगोंसे भर गया। गोरा चारों ओर घूम-घूमकर सबकी खोज-खबर लेने लगा। किन्तु इतनी भीड़ के बीच गोरा के अन्तःकरण में मानों कोई कह रहा था—अन्याय करते हो, अन्याय करते हो। क्या अन्याय? यह उस समय सोचकर देखने का समय न था। किन्तु वह किसी तरह अपने गम्भीर हृदयका मुँह बन्द नहीं कर सका।

प्रायश्चित्त अनुष्ठान की विपुल आयोजनाके बीच उसका हृदयवासी कोई एक गृह-शत्रु उसके विरुद्ध आज कह रहा था—अन्याय—घोर अन्याय ! यह नियम की त्रुटि नहीं, मन्त्रका भ्रम नहीं, शास्त्र का विरुद्धता नहीं—यह अन्याय प्रकृति के भीतर है । इसीलिए गोरा का अन्तःकरण इस अनुष्ठानके उद्योगसे विमुख हो पड़ा । वह जो कुछ कर रहा था ऊपरके मन से । भीतर उसका मन अनेक आशङ्काओं से भरा था ।

समय समीप आया । शामियांना खड़ा करके सभास्थान प्रस्तुत किया गया । गोरा गङ्गास्नान करके कपड़ा बदलने लगा । इसी समय लोगों की भीड़में एक प्रकारकी चञ्चलता फैल गई । मानों चारों ओर क्रमशः एक उद्वेगका स्रोत उमड़ पड़ा । आखिर अविनाशने मुँह उदास करके गोरा से कहा—आपके घर से खबर आई है कि कृष्ण-दयाल बाबूके मुँहसे रक्त जा रहा है ! उन्होंने आपको बहुत जल्द ले आने के लिए गाड़ी के साथ आदमी भेजा है ।

गोरा झट गाड़ी पर सवार हो उनको देखने गया अविनाश उनके साथ जानेको उद्यत हुआ । गोराने कहा—तुम सबके स्वागत-सत्कार करने को यहीं रहो । तुम्हारे जानेसे यहाँका काम न चलेगा ।

गोराने कृष्णदयालके कमरेमें जाकर देखा, वे बिछौने पर लेटे हैं और आनन्दमयी उनके पायताने बैठो धीरे-धीरे उनके पैर दाब रही है । गोरा ने उद्विग्न होकर दानोंके मुँह की ओर देखा । कृष्णदयालने उसे पास ही रखी हुई एक कुर्सी पर बैठने का इशारा किया । गोरा बैठ गया ।

उसने माँ से पूछा—अब कैसी तबीअत है ?

आनन्दमयी—अब कुछ अच्छे हैं । एक आदमी अँगरेज़ डाक्टर को बुलाने गया है ।

कोठेमें शशिमुखी और एक नौकर था । कृष्णदयालने हाथ धिक्काकर उन दोनों को कोठे से जाने का सङ्केत किया ।

जब देखा कि सब चले गये तब उन्होंने चुपचाप आनन्दमयी के मुँह की ओर देखा और कोमल स्वर में गोरा से कहा—मेरा समीप अब समीप आ गया। इतने दिन तक मैंने जो बात तुमसे छिपा रक्खी थी, वह आज न कड़ने से मेरे सिर का भार मेरे साथ ही जायगा। मैं मुक्त न हो सकूँगा।

गोरा का मुँह मलीन हो गया। वह स्थिर होकर बैठ गया। बड़ी देर तक कोई कुछ न बोला।

पीछे कृष्णदयाल ने कहा—गोरा, तब मैं कुछ न मानता था। इसी लिए इतनी बड़ी भूल मुझसे हुई। सच तो यह है कि उसके बाद मेरे लिए भूल सुधारनेका कोई मार्ग भी न था।

यह कह वे फिर चुप हो रहे। गोरा भी कोई प्रश्न न करके चुपचाप बैठा रहा।

कृष्णदयाल—मैंने समझा था कि कभी तुमसे कर्नेकी आश्यकता न होगी। जैसे चल रहा है, चला जायगा। किन्तु अब देखता हूँ, न निभेगा। मेरी मृत्यु के अनन्तर तुम मेरा श्राद्ध कैसे करोगे!—यह कहते समय कृष्णदयालका हृदय मानों काँप उठा।

इस असल बात जाननेके लिये गोरा अधोर हो उठा था। उसने आनन्दमयीकी ओर देखकर कहा—माँ, तुम्हीं कहो बात क्या है! क्यों मुझे श्राद्ध करनेका अधिकार नहीं है?

आनन्दमयी इतनी देर सिर नीचा लिये चुपचाप बैठी थी—गोराका प्रश्न सुनकर उसने सिर उठाया और गोराके मुँहकी ओर दृष्टि स्थिर करके कहा—नहीं बेटा, नहीं है।

गोराने चकित होकर पूछा—मैं इनका बेटा नहीं हूँ?

आनन्दमयी—नहीं।

जैसे ज्वालामुखी पहाड़से आगका गोला निकलता है, वैसे ही गोराके मुँहसे यह शब्द निकला—क्या तुम मेरी माँ भी नहीं हो?

आनन्दमयीका कलेजा फट गया। उसने रुँधे हुए कण्ठसे कहा—

बेटा, तुम मुझ पुत्रहीनाके पुत्र हो, तुम गर्भके बालकसे भी बढ़कर मेरे प्यारे हो ।

गोराने तब वृष्णदयालके मुँहकी ओर देखकर कहा—तो आपने मुझको कहाँ पाया ?

कृष्णदयाल—जब सिपाही-विद्रोह हुआ था, उस समय हम इटावेमें थे । तुम्हारी माने बागो सिपाहियोंके डरसे भागकर रातको हमारेघरमें आश्रय लिया था । तुम्हारे बाप उसके पहले ही लड़ाईमें मारे गये थे, उनका नाम था—

गोराने गरजकर कहा— नाम बतानेकी ज़रूरत नहीं । मैं नाम जानना नहीं चाहता ।

गोराकी उस उत्तेजनासे विस्मित होकर कृष्णदयाल ठहर गये । पीछे बोले—वे आयरिश थे । तुम्हारी माँ उसी रात तुमको प्रसव कर मर गई । तबसे तुम बराबर पुत्रकी भाँति मेरे घरमें पाले-पोसे गये ।

एक ही क्षणमें गोराको अपना जीवन एक अद्भुत स्वप्नकी भाँति झीखने लगा । बाढ़यावस्थासे अब तक उसके जीवनकी जो दोवार तैयार होती आ रही थी वह एक बारगी नष्ट हो गई । मैं कौन हूँ, कहाँ हूँ, उसका यह ज्ञान जाता रहा । इतने दिन तक मैंने अपनेको क्या मानकर क्या किया और अब क्या करूँगा, उसके लिए एक कठिन समस्या हो गई । कहाँ तो वह अपनेको आनन्दमयीका पुत्र मान हिन्दू धर्मका प्रचारक बन बैठा था और कहाँ अब वह एक आयरिशका मातृ पितृ हीन बालक है । मानो उसके लिए सृष्टि ही बदल गई, उसके माँ नहीं, बाप नहीं, जाति नहीं, नाम नहीं, गोत्र नहीं, देवता नहीं ! उसके पास नहींके सिवा और कुछ भी नहीं । अब मैं क्या करूँ, किस धर्मका अवलम्बन करूँ, किस ओर अपना लक्ष्य स्थिर करूँ,—यह कुछ भी वह निश्चय न कर सका । वह अपनेको एक दिशाहीन अद्भुत शून्यके भीतर समग्रान देख हक्का-बक्का सा हो गया । उसका मुँह देख कोई उससे और बात कहनेका साहस न कर सका ।

इसी समय एक पूर्व परिचित बंगाली चिकित्सकके साथ अंगरेज डाक्टर सिविल सर्जन आ पहुँचा । डाक्टरने जैसे रोगीकी ओर देखा वैसे गोराकी ओर भी देखे बिना न रह सका, सोचा, यह आदमी कौन है ! तब भी गोरा के सिरमें मिट्टीका तिलक था और स्नानके बाद जो रेशमी वस्त्र धारण किये था, वह भी पहिरे ही आया था । बदनमें कोई कुरता ना था सिर्फ एक चादर कंधे पर थी और उसका सारा विशाल शरीर खुला हुआ था ।

अपना परिचय पानेके पूर्व यदि गोरा अंगरेज डाक्टरको देख पाता तो उसके मनमें विद्वेष उत्पन्न हुए बिना न रहता । आज डाक्टर जब रोगी की परीक्षा कर रहा था तब गोराने बड़ी उत्सुकताके साथ उसकी ओर देखा । वह बार-बार अपने मनसे पूछने लगा, क्या यही आदमी यहाँ सबकी अपेक्षा मेरा आत्मीय है ।

डाक्टरने परीक्षा करके और पूछकर कहा—कोई वैसा बुरा लक्षण तो दिखाई नहीं देता । नाड़ीकी गति भी शङ्काजनक नहीं, हृत्पिण्डमें भी कोई विकार मालूम नहीं होता । जो उपद्रव हुआ है, सावधान होकर औषधि सेवन करनेसे फिर न होगा ।

डाक्टरके चले जाने पर गोरा कुछ न बोल कर कुर्सीसे उठनेको उद्यत हुआ ।

डाक्टरके आनेसे आनन्दमयी पासके कमरेमें चली गई थी । वह दौड़कर आई और गोराका हाथ पकड़कर बोली—बेटा ! तू मुझ पर क्रोध मत कर, क्रोध करेगा तो मैं प्राण छोड़ दूंगी ।

गोरा—तुमने इतने दिन तक मुझसे सब हाल कौन न कहा ? कह देती तो तुम्हारी कोई क्षति न होती ।

आनन्दमयीने सब दोष अपने ऊपर लेकर कहा—तुझको कहीं खो न बैठूँ, इस भयसे मैंने यह अपराध किया है । आखिर यदि वही हो, अगर तू मुझे आज छोड़कर चला जाय; तो मैं किसीको दोष न दूंगी !

तुम्हारा जाना मेरे लिए प्राण दण्ड होगा । तू जैसे पहले मेरे पास था तैसे अब भी रह ।

गोरा सिर्फ “माँ” कहकर चुप हो रहा ।

गोराके मुँहसे वह माँ सम्बोधन सुनकर इतनी देरके बाद आनन्दमयीके रुके हुए आँसू टपक पड़े ।

गोराने कहा—माँ, मैं एक बार परेश बाबूके घर जाऊँगा ।

आनन्दमयीके हृदयका बोझ हल्का हो गया । उसने आँसू पोंछकर कहा—जाओ बेटा !

इनके शीघ्र मरनेकी आशङ्का नहीं, उधर गोराके निकट बात भी प्रकट हो गई, इससे कृष्णदयाल बड़े भयभीत हो गये । आखिर उन्होंने बड़े कातर भावसे कहा—देखो गोरा, इस बातको किसीके आगे प्रकट करनेकी आवश्यकता नहीं । केवल तुम समझ बूझकर काम करो तो जैसे चला जाता था वैसे चला जायगा । कोई कुछ न जानेगा ।

गोरा इसका कुछ जवाब न देकर चला गया । कृष्णदयाल से उसका कोई सम्बन्ध नहीं, यह जानकर वह खुश हुआ ।

महिमको आफिससे एकाएक गैरहाजिरी होने का कोई उपाय न था वह डाक्टर लाने का सब प्रबन्ध करके एक बार केवल साहबसे छुट्टी लेने गया था गोरा ज्योंही घर से बाहर निकला त्योंही महिम सामने मिल गया । उसने पूछा—गोरा कहाँ जा रहे हो ?

गोरा—समाचार अच्छा है । डाक्टर आये थे कहा, कोई डर नहीं, शीघ्र आराम हो जायगा ।

महिमने बड़ी तसल्ली पाकर कहा—परसों अच्छा सुदुर्घ है—शशिसुखीका ब्याह उसी दिन कर दूँगा । तुमको कुछ उद्योग करना पड़ेगा । और देखो विनयको पहले ही सावधान कर देना जिसमें वह उस दिन न आवे । अविनाश पक्का हिन्दू है । उसने समझाकर कह दिया है जिसमें उसके ब्याहमें वैसे लोग न आने पावें । एक बात और तुमसे

अभी कह सकता हूँ । मैं उस दिन अपने आफिसके बड़े साहबको नेवत देकर लाऊँगा । तुम उनसे जरा सादगीके साथ पेश आना और कुछ नहीं, सिर्फ जरा सिर नवाकर गुडईवनिंग सर कहनेसे तुम्हारा हिन्दू शास्त्र दूषित न होगा बल्कि तुम पाण्डितोंसे व्यवस्था ले लेना । समझते हो न, वे हमारे राजा के सजातीय हैं उनके आगे अपना अहङ्कार कुछ कम करनेसे तुम्हारा अपमान न होगा ।

महिम की बात का वोई उत्तर न देकर गोरा चला गया ।



सुचरिता जिस समय आंखोंके आँसू छिपानेके लिये भंदूके ऊपर एकदम झुक पड़कर कपड़े रखनेमें लगी हुई थी, उसी समय खबर आई कि गोरा बाबू आये हैं।

सुचरिता फौरन आँसू पोछ कर हाथका काम छोड़कर उठ खड़ी हुई वैसे ही गोराने भी वहाँ प्रवेश किया।

गोराके ललाट में उस समय भी तिलक लगा हुआ था इसका उसे होश ही नहीं था। शरीर पर भी वही पिताम्बर और चादर थी। ऐसे वेशसे साधारणतः कोई किसीके घर मुलाकात करने नहीं जाता। वही पहले पहल जब गोरासे भेंट हुई थी, उस दिनका खयाल सुचरिताको हो आया। सुचरिता जानती थी कि उस दिन गोरा विशेष करके युद्धके वेशसे आया था। तो फिर क्या आज भी यह युद्धका न्साज है ?

गोराने आते ही एकदम जमीन में सिर रखकर परेश को प्रणाम किया और उनके चरणों की रज मस्तक में लगाई पेशने व्यस्त होकर उसे उठाया और कहा—आओ, आओ भैया बैठो ?

गोरा कह उठा—परेश बाबू; मुझे अब कोई बन्धन नहीं है !

परेशने विस्मित होकर पूछा—काहेका बन्धन ?

गोरा—मैं हिन्दू नहीं हूँ ?

परेश—हिन्दू नहीं हो ?

गोरा—ना, मैं हिन्दू नहीं हूँ ; आज खबर मिली है कि मैं गदर के समयका पाया हुआ लड़का हूँ मेरे पिता आयरिश सैन थे। भारत वर्ष के उत्तरसे दक्षिण तक सब देव मन्दिरों का द्वार आज मेरे लिए बंद हो गया है। आज सारे देश भरमें किसी पंक्ति में किसी भी जगह मेरे भोजनके लिए आसन नहीं है।

परेश और सुचरिता, दोनों सञ्चाटेमें आकर बैठे रहे। परेशको न सूझा कि वह गोरासे क्या कहें।

गोराने कहा—आज मैं मुक्त हूँ परेश बाबू मुझे अब भय नहीं है कि मैं किसी कामसे पतित हो जाऊँगा अब मुझे पग पग पर जमीन की तरफ देखकर पवित्रताकी रक्षा करके चलना न होगा।

सुचरिता गोरानेके प्रदीप्त उज्ज्वल मुखकी ओर एक टक्से ताकने लगी।

गोराने कहा परेश बाबू इतने दिनों तक भारतवर्ष को पानेके लिए मैंने संपूर्ण हृदय से — मन, वाणी कायासे — साधनाकी मगर एक न एक जगह जाकर रुकावट पड़ती ही गई। उन सब बाधाओंको अपनी श्रद्धा का मेल करनेके लिए मैं जीवन भर दिन रात केवल चेष्टा करता आया हूँ उसी श्रद्धाकी नींवको खूब मजबूत बनानेकी चेष्टामें फंसे रह कर मैं और कोई काम ही नहीं कर सका, वही मेरी एक मात्र साधना थी इसी कारण यथार्थ भारतवर्षकी ओर सच्ची दृष्टि फैलाकर उसकी सेवा करने जाकर मैं बार बार दरसे लौट आया हूँ — मैंने एक निष्कण्टक निर्विकार भावके भारत वर्षको गढ़कर उसी अभेद्य दुर्गसे अपनी भक्ति को सम्पूर्ण निरापद भावसे सुरक्षित करनेके लिए अब तक अपने चारों ओरकी वस्तुओंके साथ बहुत बड़ा युद्ध किया है। आज एक दम भरमें ही मेरा वह भाव दुर्ग स्वप्नकी तरह गायब होगया है। मैं एक दम छुट कारा पाकर अचानक एक बहुत बड़े सत्यके बीचमें आ पड़ा हूँ ? समग्र भारतवर्षका भला बुरा सुख-दुख ज्ञान अज्ञान एकदम बिलकुल मेरे हृदयके निकट आकर पहुँच गया है आज मैं वास्तवमें उसकी सेवाका अधिकारी हो गया हूँ यथार्थ कर्म क्षेत्र मेरे सामने आकर उपस्थित हुआ है। वह मेरे मनके भीतरका कल्पनामय क्षेत्र नहीं है वह इन बाहर के करोड़ों मनुष्योंके यथार्थ कल्याणका क्षेत्र है।

गोराकी इस नव लब्ध अनुभूतिके प्रबल उत्साहका वेग परेशबाबू को भी जैसे हिलाने लगा। उनसे बैठे नहीं रह गया वह कुर्सी छोड़कर उठ खड़े हुये।

गोराने कहा—मेरी बातें क्या आपकी समझमें ठीक ठीक आरहो है ? मैं दिन रात जो कुछ होना चाहता था मगर हो नहीं पाता था वही मैं आज आप हीसे हो गया हूँ । मैं आज भारतीय हूँ मेरे हृदयमें आज हिन्दू मुसलमान, इसाई आदिके किसी समाजसे कोई विरोध विद्वेष नहीं है । आज इस भारतकी सभी जातियाँ मेरी जाति हैं सभीका अन्न मेरा अन्न है ? किसीसे रोटी बेटीका सम्बन्ध करनेमें मुझे कोई संकोच या एतराज नहीं है ! देखिये मैं बंगालके अनेक जिलोंमें घूमा हूँ खूब नीच जातियोंकी बस्ती में जाकर उनका भो अतिथि हुआ हूँ यह न समझियेगा कि मैंने केवल शहर की सभाओंमें व्याख्यान भर दिये हैं—किन्तु किसी तरह सभी लोगोंके पास जाकर बैठ नहीं सका । अब तक अपने साथ ही साथ एक अदृश्य व्यवधान लेकर घूमा हूँ किसी तरह उसे नाघ नहीं सका । उसके कारण मेरे मनके भीतर एक बहुत बड़ी शून्यता थी ! उस शून्यता को विविध उपायोंसे अस्वीकार करनेकी ही मैंने चेष्टाकी है—उस शून्यताके ऊपर तरह तरहके कारुकार्य करके उसीको और भी विशेष रूपसे सुन्दर बना डालनेकी ही कोशिश करता आया हूँ कारण मैं भारतवर्षके प्राणोंसे भी बढ़कर प्यार करता हूँ—मैं उसे जिस अंश में देख पाता था उस अंशके किसी स्थल पर कुछ भो अभियोग का अवकाश बिलकुल ही देख या सह नहीं सकता था आज उस सारे कारुकार्यके बनाने की वृथा चेष्टासे छुटकारा पाकर मुझे बड़ा आराम मिजा है परेश बाबू !

परेशने कहा—सत्यको जब हम पाते हैं, तब वह अपने सम्पूर्ण अभाव और अपूर्णताके रहते भी हमारी आत्माको तृप्ति देता है, तब उसे मिथ्या उपकरणके द्वारा सजाने की इच्छा ही नहीं होती ।

गोराने कहा—देखिये परेश बाबू कल रातको मैंने बिधातासे प्रार्थनाकी थी कि आज सबेरे मैं नवीन जीवन प्राप्त करूँ ! लड़कपन से एतने दिनों तक जो कुछ 'मिथ्या' जो कुछ अपवित्रता मुझे लगे या घरे हुए थे वह आज सब क्षय हो गई है और मैंने नया जन्म

पाया है। मैं ठीक कल्पनाकी सामग्री मांग रहा था, मगर ईश्वरने मेरी उस प्रार्थनाको नहीं सुना, उन्होंने अपना साथ अकस्मात एकदम मेरे हाथमें ला देकर मुझे विस्मित कर दिया है ! मैंने स्वपनमें भी नहीं सोचा था कि वह इस तरह मेरी अपवित्रताको मिटा देंगे। आज मैं ऐसा पवित्र हो उठा हूँ कि अब चण्डालके घरमें भी मुझे अपवित्र होनेका भय नहीं रहा ! परेशबाबू, आज प्रातः काल सम्पूर्ण अनाश्रित चित्तको लेकर मैं भारतवर्षकी गोदमें भूमिष्ठ हुआ हूँ—माताकी गोद किसे कहते हैं, इसको सम्पूर्ण उपलब्धि इतने दिनके बादमें कर सका हूँ।

परेशने कहा—गोरा, अपनी माताकी गोदमें तुमने जो अधिकार पाया है उसी अधिकारके भीतर तुम हम लोगोंको भी बुला कर ले चलो !

गोराने कहा—आप जानते हैं आज मुक्ति पाकर पहले ही आपके पास क्यों आया हूँ।

परेश—क्यों ?

गोरा—आपके पास ही इस मुक्तिका मन्त्र है, इसी लिए आज आपने किसी समाजके भीतर स्थान नहीं पाया। मुझे अपना शिष्य कर लीजिए ! आप आज मुझे उन्हीं देवताका मन्त्र दीजिए, जो हिन्दू, मुसलमान, ईसाई ब्राह्मण आदि सभीके हैं—जिनके मन्दिरका द्वार किसी जातिके लिए, किसी व्यक्ति के लिए कभी बन्द नहीं होता—जो केवल हिन्दुओंके ही देवता नहीं हैं, जो भारतवर्ष भरके देवता हैं !

परेश बाबूके मुख-मण्डल पर एक भक्तिके गहरे माधुर्यसे स्निग्ध झलक दौड़ गई—वह आँखें नीची करके चुप चाप खड़े रहे।

इतनी देरके बाद गोराने सुचरिताकी ओर फिर कर देखा। सुचरिता अपनी कुर्सी पर स्तब्ध होकर बैठी हुई थी।

गोराने हँस कर कहा—सुचरिता अब मैं तुम्हारा गुरु नहीं हूँ, मैं यह कहकर तुम्हारे आगे प्रार्थना करता हूँ कि तुम मेरा हाथ पकड़कर मुझे भी अपने इन गुरुदेवके पास ले चलो !

यह कहकर गोरा सुचरिताकी ओर अपना दहिना हाथ बढ़ाकर
अग्रसर हुआ । सुचरिताने कुर्सी परसे उठकर गोराके हाथमें अपना हाथ
दे दिया । तब गोराने सुचरिताके साथ परेश बाबूको प्रणाम किया ।

परिशिष्ट

गोराने सन्ध्याके उपरान्त घरमें खोद कर देखा, आनन्दमयी अपनी दाढ़ानके सामने बरामदेमें चुपका बैठी हुई है ।

गोराने आते ही उनके दोनों पैर पकड़ कर उन पर अपना सिर रख दिया । आनन्दमयी ने दोनों हाथोंसे उसका सिर उठा कर चूम लिया ।

गोराने कहा—मां, तुम्हीं मेरी माता हो ! जिस माताको मैं ढूँढ़ता फिर रहा था, वही मेरे घरमें आकर बैठी हुई थीं । तुममें जाति नहीं है, विचार नहीं है, घृणा नहीं है ।—तुम केवल कल्याणकी प्रतिमा हो ! तुम्हीं मेरी भारतमाता हो !—मां, अब ज़रा अपनी लछमिनियाको बुलाओ, उससे कह दो, मेरे लिए जल ला दे ।

तब आनन्दमयीने गोराके कानके पास मुंह ले जा कर अश्रु-गद्गद् कोमल स्वरमें कहा—गोरा, अब ज़रा बिनथको बुला भेजूं !

समाप्त

